भारतकी नद-नदियां, तालाब-सरोवर, प्रपात, समुद्र आदिकी सनातन

जीवनलीला

काकासाहब कालेलकर

अनुवादक

रवीन्द्र केळेकर

विश्वस्य मातरः सर्वाः
सर्वाश् चैव महाफलाः।
अित्येताः सरितो राजन्!
समाख्याता यथास्मृति॥

—भीष्मपर्व, ९–३७

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर

अहमदाबाद

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–१४

साहित्य अकादमी, दिल्लीकी ओरसे सूचित गुजराती आवृत्ति परसे

पहली आवृत्ति ५०००, सन् १९५८

तीन रुपये

फरवरी, १९५८

जीवनलीला

१

मैंने कहीं पर लिखा ही है कि मेरे भारत-यात्राके वर्णन केवल साहित्य-विलास नहीं हैं, बल्कि भारत-भक्तिका और पूजाका अेक प्रकार हैं। भगवानके गुण गाना जिस तरह नवधा भक्तिका अेक प्रकार है, अुसी तरह भारतकी भूमि, अुसके पहाड़ और पर्वतश्रेणियां, नदियां और सरोवर, गांव और शहर, अुनमें बसे हुअे लोग और अुनका पुरुषार्थ, अुनके आश्रयमें रहनेवाले ग्राम्य पशु-पक्षी और अुनके साथ असहयोग करके आजादीका आनंद लेनेवाले वन्य पशु-पक्षी — आदि सबका वर्णन करके अुनका परिचय बढ़ाना भारत-भक्तिका अेक अत्यंत आनंददायी प्रकार है। यह भक्ति अेकांतमें भी की जा सकती है और लोकांतमें भी। जब कभी नवयुवकोंकी कोअी घुमक्कड़ टोली मुझसे मिलने आती है और कहती है कि 'आपकी यात्राकी पुस्तकें पढ़कर हम भारतकी यात्रा करनेके लिअे निकल पड़े हैं' तब मुझे बड़ा आनन्द होता है, और मैं अुनकी ओर अैसी कृतज्ञ-बुद्धिसे देखता हूं, मानो वे मुझ पर अुपकार करनेके लिअे ही निकले हों।

मेरे अिन यात्रा-वर्णनोंमें से अैसे सब वर्णन, जिनमें मैंने भारतकी नदियोंको भक्ति-कुसुमोंकी अंजलि अर्पित की है, अेकत्र करके 'लोकमाता'* के नामसे गुजराती तथा मराठीमें जनताके सामने बहुत पहले मैंने रख दिये हैं। महाभारतकारने हमारी नदियोंको 'विश्वस्य मातरः' कहा है। अिन स्तन्यदायिनी माताओंका वर्णन करते हुअे हमारे पूर्वज कभी नहीं थके। और मेरा अनुभव है कि अिन्हीं

---

* हिन्दीमें अिनमें से सिर्फ सात नदियोंके वर्णन 'सप्त-सरिता' के नामसे दिल्लीके सस्ता-साहित्य-मंडलकी ओरसे प्रकाशित किये गये थे।

नदियोंके नये प्रकारके स्तोत्र यदि लोगोंके सामने रखे जायें तो अुनका आजके लोग भी प्रेमपूर्वक स्वागत करते हैं।

अब स्वराज्य सरकारकी ओरसे हालमें स्थापित हुअी 'साहित्य अकादमी' (भारत-भारती-परिषद्) ने सूचना की कि 'लोकमाता' में दूसरे और कुछ प्रवास-वर्णन मिलाकर अेक पुस्तक मैं तैयार करूं; 'साहित्य अकादमी' हिन्दुस्तानकी प्रमुख भाषाओंमें अुसका अनुवाद करवाकर प्रकाशित करेगी।

अिस अनुग्रहको स्वीकार करते समय मैंने सोचा कि अुसमें किसी भी स्थानके यात्रा-वर्णन जोड़नेके बदले नदी, प्रपात और सरोवरोंके साथ मेल खा सकें वैसे सागर, सागर-संगम और सागर-तटकी विविध लीलाका ही वर्णन यदि दूं, तो पंचमहाभूतोंमें से अेक अत्यन्त आह्लादक तत्त्वकी लीलाका वर्णन अेक स्थान पर आ जायेगा और अिस नअी पुस्तकमें अेक प्रकारकी अेकरूपता भी रहेगी। यह विचार मित्रोंको और 'साहित्य अकादमी' के गुजराती सलाहकारों तथा संचालकोंको पसन्द आया। अतः 'लोकमाता' 'जीवनलीला' के रूपमें पाठकोंकी सेवा करनेके लिअे निकल पड़ी।

'लोकमाता' में केवल नदियोंके ही वर्णन होनेसे अुसके मुख-पृष्ठ पर महाभारतका 'विश्वस्य मातरः' वाला श्लोक ठीक मालूम होता था। अब अुसने व्यापक 'जीवनलीला' का रूप धारण किया है, अतः अिस श्लोकका अुपयोग करनेमें अव्याप्तिका दोष आ जाता है। फिर भी परंपराकी रक्षाके लिअे यह श्लोक अिस पुस्तकमें भी भक्तिभावसे रहने दिया है।

'जीवनलीला' की गुजराती आवृत्तिने लोकसेवाकी यात्रा शुरू की और तुरन्त अुसके हिन्दी अनुवादका सवाल खड़ा हुआ। नवजीवन प्रकाशन मंदिरने अपनी नीतिके अनुसार हिन्दी आवृत्ति प्रकाशित करनेका भार स्वयं अुठाया और मेरी सूचनाके अनुसार अनुवादका काम दर्वोंमें मेरे पास रहे हुअे श्री रवीन्द्र केळेकरको सौंपा। अुन्होंने बड़ी योग्यता और प्रेमके साथ यह अनुवाद समय पर कर दिया। सारा अनुवाद मैं देख चुका हूं और मुझे अुससे संतोष है।

गुजराती आवृत्तिके लिअे जो टिप्पणियां अध्यापक श्री नगीनदास पारेखने तैयार की थीं, अुन्हींका अुपयोग अिस आवृत्तिके लिअे किया गया है। हमारे देशमें जहां संदर्भ-ग्रंथोंकी कमी है और अच्छे पुस्तकालय भी बहुत कम जगह पर पाये जाते हैं, विद्यार्थियोंके लिअे ही नहीं, किन्तु सामान्य संस्कार-रसिक पाठकोंके लिअे भी टिप्पणियां लाभदायक होती हैं।

अनुवाद और टिप्पणियां देखकर मेरे अन्तेवासी श्री नरेश मंत्रीने अपने ही अुत्साहसे 'जीवनलीला' की सूची बनाकर दी। आजकलके जमानेमें सूचीकी आवश्यकता अनुक्रमणिकासे कम नहीं मानी जाती। पाठक तो सूची बनानेवालेको धन्यवाद दे ही देंगे, क्योंकि अनुक्रमणिका और सूची ग्रंथकी दो आंखें मानी जाती हैं।

मेरी अिस किताबके लिअे अिस तरह टिप्पणियां और सूची देनेका अुत्साह दिखाकर नवजीवन प्रकाशन मंदिरने विद्यानुरागी पाठकोंके धन्यवाद अवश्य ही हासिल किये हैं।

जब तक मेरी यात्रा चलती है और भक्तियुक्त स्मृति काम देती है, मेरी किताबोंका कलेवर बढ़नेवाला ही है। गुजराती 'जीवनलीला' के प्रकट होनेके बाद जीवनलीलासे संलग्न दसेक मौलिक हिन्दी लेख और तैयार हो गये, जिनको अिस हिन्दी आवृत्तिमें स्थान देकर मेरी 'जीवन'-भक्तिको मैंने अद्यतन (up-to-date) बनाया है। अैसे नये लेखोंको अनुक्रमणिकामें तारंकाकित किया गया है। अब अिस विषयमें ज्यादा लिखनेका अुत्साह नहीं है; किन्तु भारतके नद-नदी, तालाब-सरोवर, प्रपात और समुद्र-तट, वार्षिक जल-प्रलय और मरुभूमिके मृगजल आदिका विविध वर्णन नये जमानेके नयी प्रतिभावाले अुदीयमान लेखकोंकी कलमसे निकले हुअे लेखोंमें पढ़नेकी अिच्छा या लालसा है। पं० बनारसीदासजीने हिन्दी लेखकोंका ध्यान अिस क्षेत्रकी ओर कबका आकर्षित किया है।

२६–१–'५८ काका कालेलकर

स्वातंत्र्यका गणतंत्र-दिन

२

वस्तुतः पंचमहाभूतोंके संयोगसे ही जीवन अस्तित्वमें आता है। फिर भी हमारे लोगोंने केवल पानीको ही जीवन कहा, जिसमें बड़ा रहस्य छिपा हुआ है। पृथ्वीके आसपास चाहे अुतना वायुमंडल घिरा हुआ हो, और जिस 'वातके आवरण' के विना हम भले अेक क्षण भी जी न सकें; फिर भी पृथ्वीका महत्त्व है अुसको घेरकर रहनेवाले अुदावरण (पानीका आवरण) के ही कारण। अुदकमें जो ताजगी है, जो जीवन-तत्त्व है, वह न तो अग्निकी ज्वालामें है, न पवन या आंधी-तूफानमें है। पानी जहां वहता है वहां शीतलता प्रदान करता है; रेगिस्तानको भी वह अुपवन वनाता है; और प्राणिमात्र अनेक प्रकारके जीवन-प्रयोग कर सकें अैसी सुविधायें प्रदान करता है। जलका स्वभाव चंचल है, तरल है, अूर्मिल है। और जिससे भी विशेष, वत्सल है।

प्रकृतिके निरीक्षणका आनंद अनुभव करते हुअे पहाड़, खेत, वादल और अुनके अुत्सवरूप सूर्योदय तथा सूर्यास्तके रंग-चमत्कार मैंने देखे हैं। हरेककी खूवी अलग, हरेककी चमत्कृति अनोखी होती है; फिर भी पानीके प्रवाह या विस्तारमें से जो जीवन-लीला प्रकट होती है अुसके असरके समान दूसरा कोअी प्राकृतिक अनुभव नहीं है। पहाड़ चाहे जितना अुत्तुंग या गगनभेदी हो, जब तक अुसके विशाल वक्षको चीरकर कोअी वड़ा या छोटा झरना नहीं कूदता, तब तक अुसकी भव्यता कोरी, सूनी और अलोनी ही मालूम होती है।

संस्कृतमें 'डलयोः सावर्ण्यम्' न्यायसे जलको जड़ भी कहते होंगे। किन्तु सच पूछा जाय तो जलको जड़ कहनेवालेकी वुद्धि ही जड़ होनी चाहिये। जड़ताका यदि कहीं अभाव है तो वह जलमें ही है।

पहाड़को देखते ही अुसके शिखर तक चढ़नेका दिल होगा और संभव हुआ तो शिखर तक पैर चलेंगे भी। पानीकी भी यही वात है। मनुष्य जब तक नदीका अुद्गम और मुख नहीं ढूंढ़ता, तब तक अुसे संतोष नहीं होता। पानीको देखते ही अुसके समीप जानेका दिल होता ही है। वह यदि पेय हो तो प्यास न होते हुअे भी अुसको

चखनेका मन होता है। स्नानसे बाह्य शरीर और पानसे शरीरके अंदरका भाग पावन किये वगैर मनुष्यको तृप्ति ही नहीं होती। अन्य सहूलियत न हो तो वह पानीका आचमन करेगा, अथवा कमसे कम पानीकी दो बूंदें आंखोंकी पलकों पर जरूर लगायेगा।

हिमालयके ठंडे प्रदेशमें जहां कपड़े अुतारना भी मुश्किल है वहां हमारे धर्मनिष्ठ लोग पंचस्नानी करते हैं! पानीमें अंगुलियां डुबो-कर अुनसे माथेको छूने पर अेक स्नान पूरा हुआ!! दो आंखोंको छूने पर दूसरे दो स्नान हो गये। फिर वही पानीकी बूंदें दो कर्ण-मूलोंको लगानेसे पंचस्नानी पूरी होती है! पानीके स्पर्शके बिना मनुष्यको अैसा नहीं लगता कि वह पवित्र हो गया है।

मनुष्य जब मर जाता है, तब अुसके शरीरको जिस पृथ्वीसे वह आया अुसीके अुदरमें दफना देनेकी प्रथा सभी जगह है। किन्तु हम लोगोंने अिसमें संशोधन किया। शरीरको सड़ने देनेके बजाय अुसका अग्नि-संस्कार करना हम अधिक श्रेयस्कर मानते हैं। अग्निको हम पावक कहते हैं। पावक यानी पवित्र करनेवाला। कोअी वस्तु चाहे जितनी गंदी हो, सड़ी हुअी हो या अपवित्र हो, अग्नि-संस्कार होने पर वह पावन हो जाती है। अिसीलिअे हम अुपले, लकड़ियां, चंदन, धूप और कपूर जैसे ज्वालाग्राही पदार्थ अेकत्र करके शरीरका अग्नि-संस्कार करते हैं।

यहां तक तो सब ठीक है; किन्तु जीवननि० संस्कृतिको अितनेसे संतोष नहीं हुआ। अग्नि-संस्कारके अंतमें जो अस्थियां और भस्म बच जाते हैं, अुन अवशेषोंका जब हम पवित्र जलाशयोंमें विसर्जन करते हैं, तभी हमें परम संतोष होता है।

महात्माजीकी अस्थियों और चिताभस्मको हमने सारे देशमें जहां भी पवित्र जलाशय हैं वहां पहुंचा दिया। हिमालयके अुस पार कैलाशके मार्गमें फैले हुअे मानस-सरोवरमें भी कुछ अवशेष छोड़ दिये गये। प्रयाग जैसे यज्ञस्थानमें विसर्जित करनेके बाद कुछ अवशेष समुद्र-किनारे भी ले गये; और खास तौर पर ध्यानमें रखनेकी बात तो यह है कि जिस अफ्रीका खंडमें गांधीजीने सत्याग्रह जैसे दैवी बलकी खोज की और

अपना जीवन-कार्य शुरू किया, अुस अफ्रीकामें नील नदीके अुद्गमके प्रवाहमें भी अिन अस्थियोंका विसर्जन किया और अिस प्रकार पानीकी सर्वोपरि पवित्रताको स्वीकार किया।

अैसे पानीके पवित्र दर्शनका आनंद जिनमें छलकता हो, अैसे ही वर्णन अिस संग्रहमें लिये गये हैं।

संग्रह करते समय मेरी 'स्मरण-यात्रा' में से अेक छोटासा अध्याय सिर अूंचा करके पूछने लगा, "क्या आप मुझे अिसमें नहीं लेंगे?" अनवधानके लिअे अुससे माफी मांगकर मैंने कहा, "जरूर, जरूर; तेरा भी जीवनलीलामें स्थान होगा।" मानसिक सृष्टि, कल्पना-सृष्टि और मायावी सृष्टि भी अंतमें पार्थिव सृष्टिके साथ सृष्टि तो है ही। अतः मनुष्यकी आंखोंको और मृगोंकी आंखोंको जो जलके समान मालूम होता है और जिसका प्रवाह अिन दोनोंको अपनी ओर खींचता है, वह भले प्राणवायु तथा अुद्जन-वायुके संयोगसे बना हुआ न हो, फिर भी जीवनलीलामें अुसका स्थान होना ही चाहिये — यों सोचकर छुटपनमें यात्रा करते समय देखा हुआ 'तेरदालका मृगजल' नामक वर्णन भी अिसमें ले लिया गया है।

सहाराके रेगिस्तानके आसपास दोपहरके समय यदि गया होता, तो अुस विराट् रेगिस्तानका और वहांके मृगजलका वर्णन अिसमें जरूर शामिल करता। किन्तु पश्चिम अफ्रीकासे अुत्तरकी ओर जाते हुअे समय और जान बचानेके लिअे सहाराका पूरा रेगिस्तान मैंने पार किया रातके अंधेरेमें; और वह भी हवाअी जहाजकी मददसे। पश्चिम अफ्रीकाकी मध्ययुगीन नगरी 'कानो' से चलकर मध्यरात्रिके बाद ट्रिपोली पहुंचा तब तक सारे समय टकटकी लगाकर मैंने सहाराको देखा। किन्तु अुस रात अंधेरेमें अंधेरेसे भिन्न कुछ दिखाअी नहीं दिया। सहाराका रेगिस्तान पार करने पर भी वहांका मृगजल नहीं देखा जा सका! जब हवाअी जहाजसे अुतरा, तब अितना ही कह सका :

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवांजनम् नभः।

हमारे संस्कृत कवियोंके नदी-वर्णन और स्तोत्रों पर मैं मुग्ध हूं। अिन स्तोत्रोंमें सबसे अधिक तो भक्ति ही नजर आती है। अुनका

शब्द-लालित्य असाधारण होता है। भाषा-प्रवाह मानो नदीके प्रवाहके साथ होड़ करता है। कहीं कहीं अेकाध शब्दमें या समासमें सुंदर वर्णन भी आ जाता है। किन्तु कुल मिलाकर ये स्तोत्र वर्णन नहीं होते, बल्कि केवल माहात्म्य ही होते हैं।

आज हमें यथार्थ वर्णनोंकी और शब्दचित्रोंकी भूख है। अुनके साथ थोड़ा माहात्म्य और चाहे अुतना काव्य आ जाय तो वह अिष्ट ही होगा। किन्तु वर्णन पढ़ते समय नदी या सरोवरके प्रत्यक्ष दर्शनका थोड़ा-बहुत संतोष तो मिलना ही चाहिये। वरना जैन पुराणोंमें दिये गये नगरियोंके वर्णन जैसी बात होगी। ये वर्णन कहींसे अुठाकर किसी भी शहरके साथ जोड़ दें तो कुछ बिगड़ेगा नहीं। अक्सर लेखक वर्णनकी दो-चार पंक्तियां लिखकर अीमानदारीके साथ कहते हैं कि अमुक कहानीमें अमुक नगरीका जो वर्णन आता है अुसीको अुठाकर यहां रख दें। अैसे वर्णन न तो यथार्थ चित्रण माने जा सकते हैं, न माहात्म्य ही माने जा सकते हैं।

अेक पुराने हिन्दी कविने अेक पहाड़ी किलेका वर्णन किया है। अुसमें अश्वशालाके साथ गजशालाका भी वर्णन है। भोले कविको संदेह नहीं हुआ कि महाराष्ट्रके पहाड़ पर हाथी जायेंगे किस तरह! दूसरे अेक स्थान पर बगीचेके वर्णनमें ठंडे मुल्कके और गरम मुल्कके, समुद्र-तटके और पहाड़ परके सब फल और फूलोंके पेड़-पौधोंको अेकत्र कर दिया गया है! और अिसमें खूबी यह कि अिन तमाम फूलोंके अेकसाथ खिलनेमें और फलोंके अेकसाथ पकनेमें महीनों या ऋतुओंकी कोअी कठिनाअी नहीं खड़ी हुअी!

सौभाग्यसे अैसे साहित्य-प्रकार अब बंद हो गये हैं। फिर भी आजके लेखक प्रत्यक्ष परिचयके अभावमें केवल सामान्य वर्णन लिखते हैं: 'आकाशमें तारे चमक रहे थे', 'बगीचेमें तरह तरहके फूल खिले थे', 'जंगलमें वृक्ष-लताओंकी घनी बस्ती थी।' अैसे सामान्य वर्णन लिखकर ही वे संतोष मानते हैं। लेखक आकाशको और वहांके तारोंको पहचानता न हो, अुनके नाम न जानता हो, कौनसे फूल किस ऋतुमें खिलते हैं यह न जानता हो, किन जंगलोंमें किस तरहके

पेड़ अुगते हैं और किस तरहके नहीं अुगते आदि जानकारी अुसे न हो, तो फिर वह क्या करे? शब्द-वैभवको फैलाकर अनुभव-दारिद्रय छिपानेका वह चाहे जितना प्रयत्न करे, फिर भी दारिद्रय प्रकट हुअे विना नहीं रहता।

हमारे देशमें अव यात्राके सावन काफी वढ़ गये हैं और दिनों-दिन वढ़ते जा रहे हैं। फोटोग्राफीकी कलाकी अितनी वृद्धि हुअी है कि अव वह ललित-कलाकी कोटिको पहुंचनेका प्रयत्न कर रही है। देश-विदेशकी भाषाओंके यात्रा-वर्णन पढ़कर हमारी कल्पना अुद्दीपित हो सकती है, तो अव हम भारतीय भाषाओंमें पाया जानेवाला केवल यात्रा-वर्णनका दारिद्रय दूर क्यों न करें?

हमारे प्रिय-पूज्य देशको हम साहित्य द्वारा और दूसरे अनेक प्रकारोंसे सजायेंगे और नयी पीढ़ीको भारत-भक्तिकी दीक्षा देंगे।

देशका मतलव केवल जमीन, पानी और अुसके अूपरका आकाश ही नहीं है, वल्कि देशमें वसे हुअे मनुष्य भी हैं। यह जिस तरह हमें जानना चाहिये, अुसी तरह हमारी देशभक्तिमें केवल मानव-प्रेम ही नहीं वल्कि पशु-पक्षी जैसे हमारे स्वजनोंका प्रेम भी शामिल होना चाहिये।

नदी, पहाड़, पर्वतश्रेणी और अुसके अुत्तुंग शिखरोंसे तथा अिन सवके अूपर चमकनेवाले तारोंसे परिचय वढ़ाकर हमें भारत-भक्तिमें अपने पूर्वजोंके साथ होड़ चलानी चाहिये। हमारे पूर्वजोंकी सावनाके कारण गंगाके समान नदियां, हिमालयके समान पहाड़, जगह जगह फैले हुअे हमारे वर्मक्षेत्र, पीपल या वड़के समान महावृक्ष, तुलसीके समान पौवे, गायके जैसे जानवर, गरुड़ या मोरके जैसे पक्षी, गोपीचंदन या गेरूके जैसे मिट्टीके प्रकार — सव जिस देशमें भक्ति और आदरके विषय वन गये हैं, अुस देशमें संस्कारोंकी और भावनाओंकी समृद्धिको वढ़ाना हमारे जमानेका कर्तव्य है।

दादाभाअी नौरोजी पुण्यतिथि, काका कालेलकर
वम्वअी, १–६–'५६

सरिता-संस्कृति

जो भूमि केवल वर्षाके पानीसे ही सींची जाती है और जहां वर्षाके आधार पर ही खेती हुआ करती है, अुस भूमिको 'देव-मातृक' कहते हैं। अिसके विपरीत, जो भूमि अिस प्रकार वर्षा पर आधार नहीं रखती, बल्कि नदीके पानीसे सींची जाती है और निश्चित फसल देती है, अुसे 'नदी-मातृक' कहते हैं। भारतवर्षमें जिन लोगोंने भूमिके अिस प्रकार दो हिस्से किये, अुन्होंने नदीको कितना महत्त्व दिया था, यह हम आसानीसे समझ सकते हैं। पंजाबका नाम ही अुन्होंने सप्तसिंधु रखा। गंगा-यमुनाके बीचके प्रदेशोंको अंतर्वेदी (दोआब) नाम दिया। सारे भारतवर्षके 'हिन्दुस्तान' और 'दक्खन' जैसे दो हिस्से करनेवाले विन्ध्याचल या सतपुड़ेका नाम लेनेके बदले हमारे लोग संकल्प बोलते समय 'गोदावर्याः दक्षिणे तीरे' या 'रेवायाः अुत्तरे तीरे' अैसे नदीके द्वारा देशके भाग करते हैं। कुछ विद्वान ब्राह्मण-कुलोंने तो अपनी जातिका नाम ही अेक नदीके नाम पर रखा है — सारस्वत। गंगाके तट पर रहनेवाले पुरोहित और पंडे अपने-आपको गंगापुत्र कहनेमें गर्व अनुभव करते हैं। राजाको राज्यपद देते समय प्रजा जब चार समुद्रोंका और सात नदियोंका जल लाकर अुससे राजाका अभिषेक करती, तभी मानती थी कि अब राजा राज्य करनेके लिअे अधिकारी हो गया। भगवानकी नित्यकी पूजा करते समय भी भारतवासी भारतकी सभी नदियोंको अपने छोटेसे कलशमें आकर बैठनेकी प्रार्थना अवश्य करेगा :

गंगे! च यमुने! चैव गोदावरि! सरस्वति!।
नर्मदे! सिंधु! कावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

भारतवासी जब तीर्थयात्राके लिअे जाता है, तब भी अधिकतर वह नदीके ही दर्शन करनेके लिअे जाता है। तीर्थका मतलब है नदीका पैछल या घाट। नदीको देखते ही अुसे अिस बातका होश नहीं रहता कि जिस नदीमें स्नान करके वह पवित्र होता है अुसे अभिषेककी क्या आवश्यकता है? गंगाका ही पानी लेकर गंगाको अभिषेक किये बिना अुसकी भक्तिको संतोष नहीं मिलता। सीताजी जब रामचंद्रजीके साथ

वनवासके लिअे निकल पड़ीं, तब वे हर नदीको पार करते समय मनौती मनाती जाती थीं कि वनवाससे सही-सलामत वापस लौटने पर हम तुम्हारा अभिषेक करेंगे। मनुष्य जब मर जाता है, तब भी अुसे वैतरणी नदीको पार करना पड़ता है। थोड़ेमें, जीवन और मृत्यु दोनोंमें आर्योंका जीवन नदीके साथ जुड़ा हुआ है।

अुनकी मुख्य नदी तो है गंगा। वह केवल पृथ्वी पर ही नहीं, बल्कि स्वर्गमें भी बहती है और पातालमें भी बहती है। अिसीलिअे वे गंगाको त्रिपथगा कहते हैं।

पाप धोकर जीवनमें आमूलाग्र परिवर्तन करना हो, तब भी मनुष्य नदीमें जाता है और कमर तक पानीमें खड़ा रहकर संकल्प करता है, तभी अुसको विश्वास होता है कि अब अुसका संकल्प पूरा होनेवाला है। वेदकालके ऋषियोंसे लेकर व्यास, वाल्मीकि, शुक, कालिदास, भवभूति, क्षेमेंद्र, जगन्नाथ तक किसी भी संस्कृत कविको ले लीजिये, नदीको देखते ही अुसकी प्रतिभा पूरे वेगसे बहने लगती है। हमारी किसी भी भाषाकी कविताअें देख लीजिये, अुनमें नदीके स्तोत्र अवश्य मिलेंगे। और हिन्दुस्तानकी भोली जनताके लोकगीतोंमें भी आपको नदीके वर्णन कम नहीं मिलेंगे।

गाय, बैल और घोड़े जैसे अुपयोगी पशुओंकी जातियां तय करते समय भी हमारे लोगोंको नदीका ही स्मरण होता है। अच्छे अच्छे घोड़े सिंधुके तट पर पाले जाते थे; अिसलिअे घोड़ोंका नाम ही सैंधव पड़ गया। महाराष्ट्रके प्रख्यात टट्टू भीमा नदीके किनारे पाले जाते थे, अतः वे भीमथड़ीके टट्टू कहलाये। महाराष्ट्रकी अच्छा दूध देनेवाली और सुंदर गायोंको अंग्रेज आज भी 'कृष्णावेली ब्रीड' कहते हैं।

जिस प्रकार ग्राम्य पशुओंकी जातिके नाम नदी परसे रखे गये हैं, अुसी प्रकार कओी नदियोंके नाम पशु-पक्षियों परसे रखे गये हैं। जैसे : गो-दा, गो-मती, साबर-मती, हाथ-मती, वाघ-मती, सारस्वती, चर्मण्वती आदि।

महादेवकी पूजाके लिअे प्रतीकके रूपमें जो गोल चिकने पत्थर (बाण) अुपयोगमें लाये जाते हैं, वे नर्मदाके ही होने चाहिये। नर्मदाका

माहात्म्य अितना अधिक है कि वहांके जितने कंकर अुतने सब शंकर होते हैं। और वैष्णवोंके शालिग्राम गंडकी नदीसे आते हैं।

तमसा नदी विश्वामित्रकी वहन मानी जाती है, तो कालिन्दी यमुना प्रत्यक्ष कालभगवान यमराजकी वहन है।

प्रत्येक नदीका अर्थ है संस्कृतिका प्रवाह। प्रत्येककी खूबी अलग है। मगर भारतीय संस्कृति विविधतामें से अेकताको अुत्पन्न करती है। अतः सभी नदियोंको हमने सागर-पत्नी कहा है। समुद्रके अनेक नामोंमें अुसका सरित्पति नाम वड़े महत्त्वका है। समुद्रका जल अिसी कारण पवित्र माना जाता है कि सब नदियां अपना अपना पवित्र जल सागरको अर्पण करती हैं। 'सागरे सर्व तीर्थानि'।

जहां दो नदियोंका संगम होता है, अुस स्थानको प्रयाग कहकर हम पूजते हैं। यह पूजा हम केवल अिसीलिअे करते हैं कि संस्कृतियोंका जव मिश्रण या संगम होता है तव अुसे भी हम शुभ-संगम समझना सीखें। स्त्री-पुरुषके वीच जब विवाह होता है तब वह भिन्न-गोत्री ही होना चाहिये, अैसा आग्रह रखकर हमने यही सूचित किया है कि अेक ही अपरिवर्तनशील संस्कृतिमें सड़ते रहना श्रेयस्कर नहीं है। भिन्न भिन्न संस्कृतियोंके वीच मेलजोल पैदा करनेकी कला हमें आनी ही चाहिये। 'लंकाकी कन्या घोघा (सौराष्ट्र) के लड़केके साथ विवाह करती है', तभी अुन दोनोंमें जीवनके सब प्रश्नोंके प्रति अुदार दृष्टिसे देखनेकी शक्ति आती है। भारतीय संस्कृति पहलेसे ही संगम-संस्कृति रही है। हमारे राजपुत्र दूर दूरकी कन्याओंसे विवाह करते थे। केकय देशकी कैकेयी, गांधारकी गांधारी, कामरूपकी चित्रांगदा, ठेट दक्षिणकी मीनाक्षी मीनलदेवी, विलकुल विदेशसे आयी हुअी अुर्वशी और महाश्वेता — अिस तरह कभी मिसालें वताअी जा सकती हैं। आज भी राजा-महाराजा यथासंभव दूर दूरकी कन्याओंसे विवाह करते हैं। हमने नदियोंसे ही यह संगम-संस्कृति सीखी है।

अपनी अपनी नदीके प्रति हम सच्चे रहकर चलेंगे, तो अंततः समुद्रमें पहुंच जायेंगे। वहां कोअी भेदभाव नहीं रह सकता। सब कुछ अेकाकार, सर्वाकार और निराकार हो जाता है। 'सा काष्ठा सा परा गतिः'।

नदी-मुखेनैव समुद्रम् आविशेत्

सुबह या शामके समय नदीके किनारे जाकर आरामसे बैठने पर मनमें तरह तरहके विचार आते हैं। वालूका शुभ्र विशाल पट हमेशा वहीका वही होता है; फिर भी वहांका हरअेक कण पवन या पानीसे स्थानभ्रष्ट होता है। अितनी सारी वालू कहांसे आती है और कहां जाती है? वालूके पट पर चलनेसे अुसमें पांवोंके स्पष्ट या अस्पष्ट निशान बनते हैं। किन्तु घड़ी दो घड़ी हवा बहने पर अुनका 'नामोनिशान' भी नहीं रहता। दो किनारोंकी मर्यादामें रहकर नदी बहती है; वह कभी रुकती नहीं। पानी आता है और जाता है, आता है और जाता है। छुटपनमें मनमें विचार आता था कि 'मध्यरात्रिके समय यह पानी सो जाता होगा और सुबह सबसे पहले जागकर फिरसे बहने लगता होगा। सूरज, चांद और अनगिनत तारे जिस प्रकार विश्रांति लेनेके लिअे पश्चिमकी ओर अुतरते हैं, अुसी प्रकार यह पानी भी रातको सो जाता होगा। विश्रांतिकी हरेकको आवश्यकता रहती है।' बादमें देखा, नहीं, नदीके पानीको विश्रांतिकी आवश्यकता नहीं है। वह तो निरन्तर बहता ही रहता है।

नदीको देखते ही मनमें विचार आता है—यह आती कहांसे है और जाती कहां तक है? यह विचार या यह प्रश्न सनातन है। नदीका आदि और अंत होना ही चाहिये। नदीको जितनी बार देखते हैं, अुतनी ही बार यह सवाल मनमें अुठता है। और यह सवाल ज्यों ज्यों पुराना होता जाता है, त्यों त्यों अधिक गंभीर, अधिक काव्यमय और अधिक गूढ़ बनता जाता है। अंतमें मनसे रहा नहीं जाता, पैर रुक नहीं पाते। मन अेकाग्र होकर प्रेरणा देता है और पैर चलने लगते हैं। आदि और अंत ढूंढ़ना—यह सनातन खोज हमें शायद नदीसे ही मिली होगी। अिसीलिअे हम जीवन-प्रवाहको भी नदीकी अुपमा देते आये हैं। अुपनिषद्कार और अन्य भारतीय कवि, मैथ्यू आर्नोल्ड जैसे युरोपियन कवि और रोमां रोलां जैसे अुपन्यासकार जीवनको नदीकी ही अुपमा

देते हैं। अिस संसारका प्रथम यात्री है नदी। अिसीलिअे पुराने यात्री लोगोंने नदीके अुद्‌गम, नदीके संगम और नदीके मुखको अत्यंत पवित्र स्थान माना है।

जीवनके प्रतीकके समान नदी कहांसे आती है और कहां तक जाती है? शून्यमें से आती है और अनंतमें समा जाती है। शून्य यानी अत्यल्प, सूक्ष्म किन्तु प्रबल; और अनंतके मानी हैं विशाल और शांत। शून्य और अनंत, दोनों अेकसे गूढ़ हैं, दोनों अमर हैं। दोनों अेक ही हैं। शून्यमें से अनंत — यह सनातन लीला है। कौशल्या या देवकीके प्रेममें समा जानेके लिअे जिस प्रकार परब्रह्मने बालरूप धारण किया, अुसी प्रकार कारुण्यसे प्रेरित होकर अनंत स्वयं शून्यरूप धारण करके हमारे सामने खड़ा रहता है। जैसे जैसे हमारी आकलन-शक्ति बढ़ती है, वैसे वैसे शून्यका विकास होता जाता है और अपना ही विकास-वेग सहन न होनसे वह मर्यादाका अुल्लंघन करके या अुसे तोड़कर अनंत बन जाता है — बिंदुका सिंधु बन जाता है।

मानव-जीवनकी भी यही दशा है। व्यक्तिसे कुटुंब, कुटुंबसे जाति, जातिसे राष्ट्र, राष्ट्रसे मानव्य और मानव्यसे भूमा विश्व — अिस प्रकार हृदयकी भावनाओंका विकास होता जाता है। स्व-भाषाके द्वारा हम प्रथम स्वजनोंका हृदय समझ लेते हैं और अंतमें सारे विश्वका आकलन कर लेते हैं। गांवसे प्रान्त, प्रान्तसे देश और देशसे विश्व, अिस प्रकार हम 'स्व' का विकास करते करते 'सर्व' में समा जाते हैं।

नदीका और जीवनका क्रम समान ही है। नदी स्वधर्म-निष्ठ रहती है और अपनी कूल-मर्यादाकी रक्षा करती है, अिसीलिअे प्रगति करती है। और अंतमें नामरूपको त्यागकर समुद्रमें अस्त हो जाती है। अस्त होने पर भी वह स्थगित या नष्ट नहीं होती; चलती ही रहती है। यह है नदीका क्रम। जीवनका और जीवन्मुक्तिका भी यही क्रम है।

क्या अिस परसे हम जीवनदायी शिक्षाके क्रमके बारेमें बोध लेंगे?

१९२२

अुपस्थान*

भिन्न भिन्न अवसरों पर भारतवर्षकी जिन नदियोंके दर्शन मैंने किये, अुनमें से कुछ नदियोंका यहां स्मरण किया गया है। यहां मेरा अुद्देश भूगोलमें दी जानेवाली जानकारीका संग्रह करनेंका नहीं है, न नदियोंका हमारे व्यापार-वाणिज्य पर होनेवाला असर बतानेका यहां प्रयत्न है। यह तो केवल हमारे देशकी लोकमाताओंका भक्तिपूर्वक किया हुआ नये प्रकारका अुपस्थान है।

हमारे पूर्वजोंकी नदी-भक्ति लोक-विश्रुत है। आज भी वह क्षीण नहीं हुअी है। यात्रियोंकी छोटी-बड़ी नदियां तीर्थस्थानोंकी ओर बहकर यही सिद्ध करती हैं कि वह प्राचीन भक्ति आज भी जैसीकी वैसी जाग्रत है।

भक्त-हृदय भक्तिके अिन अुद्गारोंका श्रवण करके संतुष्ट हों। युवकोंमें लोकमाताओंके दर्शन करनेकी और विविध ढंगसे अुनका स्तन्यपान करके संस्कृति-पुष्ट होनेकी लगन जाग्रत हो।

*   *   *

हिन्दुस्तानके सभी सुन्दर स्थलोंका वर्णन करना मानव-शक्तिके बाहरकी बात है। खुद भगवान व्यास जब भारतकी नदियोंके नाम सुनाने बैठे, तब अुनको भी कहना पड़ा कि जितनी नदियां याद आयीं अुन्हींका यहां नाम-संकीर्तन किया गया है। बाकीकी असंख्य नदियां रह गयी हैं।

मेरी देखी हुअी नदियोंमें से बन सके अुतनी नदियोंका स्मरण और वर्णन करके पावन होनेका मेरा संकल्प था। आज जब अिस भक्ति-कुसुमांजलिको देखता हूं, तो मनमें विषाद पैदा होता है कि कृतज्ञता व्यक्त हो सके अुतनी नदियोंका भी अुपस्थान मैं कर नहीं सका हूं। जिनका वर्णन नहीं कर सका, अुन्हीं नदियोंकी संख्या अधिक है। जिस प्रांतमें मैं करीब पाव सदी तक रहा, अुस गुजरातकी नदियोंका वर्णन भी मैंने नहीं किया है। नर्मदा और साबरमतीके बारेमें तो अभी अभी कुछ लिख सका हूं। ताप्ती या तपतीके बारेमें कुछन हीं लिखा। अुसका परिताप मनमें है ही। अिस नदीका अुद्गम-स्थान मध्यप्रांतमें बैतुलके पास है। बरहानपुर और भुसावल

* मूल गुजराती पुस्तक 'लोकमाता' की प्रस्तावनासे।

होकर वह आगे बढ़ती है। अुसकी मदद लेकर अेक बार मैं सूरतसे हजीरा तक हो आया हूं। ताप्तीसे भगवान सूर्यनारायणके प्रेमके बारेमें पूछा जा सकता है और अंग्रेजोंने व्यापारके बहाने सूरतमें कोठी किस प्रकार डाली और बाजीरावने यहीं महाराष्ट्रका स्वातंत्र्य अंग्रेजोंको कब सौंप दिया, अिसके बारेमें भी पूछा जा सकता है।

गोधरा जाते समय जो छोटी-सी मही नदी मैंने देखी थी, वही खंभातसे कावी बंदरगाह तक महापंक कीचड़का विस्तार किस तरह फैला सकती है, यह देखनेका सौभाग्य भी मुझे प्राप्त हुआ है। पूर्वकी महानदी और पश्चिमकी मही नदी, दोनोंका कार्य विशेष प्रकारका है। सूर्या, दमणगंगा, कोलक, अंबिका, विश्वामित्री, कीम आदि अनेक पश्चिम-वाहिनी नदियोंका मीठा आतिथ्य मैंने कभी न कभी चखा है। अुन्हें यदि अंजलि अर्पण न करूं तो मैं कृतघ्न माना जाअूंगा। और जिस आजीके किनारे महात्माजीने छुटपनकी शरारतें की थीं, वह तो खास तौर पर मेरी अंजलिकी अधिकारिणी है। वढ़वाणकी भोगावोके बारेमें मैंने शायद कहीं लिखा होगा। किन्तु वह भोगावोकी अपेक्षा राणकदेवीके स्मरणके तौर पर ही होगा।

गुजरातके बाहर नजर घुमाकर दूसरी नदियोंका स्मरण करता हूं, तब प्रथम याद आता है सबसे बड़ा ब्रह्मपुत्र। अुसका अुद्‌गम-स्थान तो हिमालयके अुस पार मानस-सरोवरके प्रदेशमें है। हिमालयके अुत्तरकी ओर बहते हुअे पानीकी अेक अेक बूंद अिकट्ठी करके वह हिमालयकी सारी दीवार पार करता है और पहाड़ों तथा जंगलोंके अज्ञात प्रदेशोंमें बहता हुआ आसामकी ओर अुन्हें छोड़ देता है। बादमें सदिया, डिब्रुगढ़, तेजपुर, गौहाटी, ढुब्री आदि स्थानोंको पावन करता हुआ वह बंगालमें अुतरता है। और अुसे गंगासे मिलना है, अिसी कारण वह कुछ दूरी तक यमुना नाम धारण करते हुअे आगे पद्मा बनता है। 'अितिहासके अुषाकाल' से लेकर जापानियोंके अभी अभीके आक्रमण तकका सारा अितिहास ब्रह्मपुत्रको विदित है। किन्तु अिस ताजे अितिहासके कअी प्रकरण तो मणिपुरकी अिम्फाल नदी ही बता सकती है। फिर भी अिस नदीको पूछने पर वह कहेगी कि मुझसे

पूछनेके वदले यह सव आपकी अैरावतीकी सखी छिंदवीनसे ही पूछ लीजिये। और मणिपुरकी ओरसे भागकर आये हुअे लोगोंका कुछ अितिहास तो सुर्मा-घाटीकी वराक नदीसे ही पूछना होगा।

मैंने नदियां तो कअी देखी हैं। किन्तु जिसकी गूढ़-गामिता और चिंता-रहित लापरवाही पर मैं सवसे अधिक मुग्ध हुआ हूं, वह है कालीम्पोंग तरफकी तीस्ता नदी। कैसा तो अुसका अुन्माद! और कैसा अुसका आत्म-गौरवका भान!

अुत्कलमें मैं अनेक वार हो आया हूं। वहांकी महानदी, काटजुड़ी और काकपेया तो हैं ही। किन्तु वरी-कटकसे वापस लौटते समय खर-स्रोताके किनारे देखा हुआ सूर्योदय और अन्य अवसर पर सुना हुआ ऋषिकुल्या नदीका अितिहास तथा अुसके किनारेका सौंदर्य मैं भला कैसे भूल सकता हूं? जौगढ़का अशोकका प्रख्यात शिलालेख देखने गया था, तव मैंने ऋषिकुल्याके दर्शन किये थे; और यदि मैं भूलता न होअूं तो धवलीका हाथीवाला शिलालेख देखने गया था, तव अेक नदीकी दो नदियां वनती हुअी मैंने देखी थीं। दो नदियोंका संगम देखना अेक वात है। दो नदियां अिकट्ठी होकर अपनी जलराशि वढ़ाती हैं और संभूय-समुत्थानके सिद्धांतके अनुसार वड़ा व्यापार करती हैं। यह तो शक्ति वढ़ानेका प्रयास है। किन्तु अेक ही नदी दूरसे आकर जव देखती है कि दोनों ओरके प्रदेशको मेरे जलकी अुतनी ही आवश्यकता है, तव भला वह किसका पक्षपात करे? अपना जल वांटकर जव दो प्रवाहोंमें वह वहने लगती है, तव दो वच्चोंकी माताके जैसी मालूम होती है। अुसको विशेष भक्तिपूर्वक प्रणाम किये विना रहा नहीं जा सकता।

क्या आपने काली नदीके सफेद होनेकी वात कभी सुनी है? छुटपनमें कारवारमें मैंने अेक काली नदी देखी थी। वह समुद्रसे मिलती है तव तक काली ही काली रहती है। किन्तु गोवाकी ओर अेक काली नदी है, जो सागरसे मिलनेकी आतुरताके कारण पहाड़की चोटी परसे नीचे अिस तरह कूदती है कि अुसका दूधके समान काव्यमय सफेद प्रपात वन जाता है। अुसका नाम ही दूधसागर पड़ गया है। अिस दूधसागरका दृश्य अैसा है, मानो किसी लड़कीने नहानेके वाद सुखानेके

लिअे अपने वाल फैलाये हों। शरावतीके जोगके प्रपातका वर्णन मैंने तीन वार किया है, तो दूधसागरके गंभीर ललित काव्यका मनन मुझे दस वार करना चाहिये था।

हिमालय जाते समय देखी हुअी रामगंगाका और हिमालयके अुस पारसे आनेवाली सरयू घाघराका वर्णन तो रह ही गया है। किन्तु लंका (सीलोन) में देखी हुअी सीतावाका और अन्य दो तीन गंगाओंके वारेमें भी मैंने कहां लिखा है? मध्यप्रांतमें देखी हुअी धसानके वारेमें मैंने लिखा और वेत्रवतीको छोड़ दिया, यह भला कैसे चल सकता है? अुज्जयिनी जाते समय देखी हुअी शिप्रा नदीको स्मरणांजलि न दूं, तो कालिदास ही मुझे शाप देंगे। मुरादावादमें देखी हुअी गोमतीका स्मरण करते ही द्वारकाकी गोमतीका स्मरण हो आता है और अिसी न्यायसे सिंधकी सिंधुके साथ मध्यभारतकी नन्ही-सी सिंधुकी भी याद हो आती है।

काठियावाड़में चोरवाड़के पास समुद्रसे मिलने जाते जाते वीचमें ही रुक जानेवाली मेगल नदी मैंने देखी नहीं है। किन्तु अिसी प्रकारकी अेक नदी अड्यार मद्रासके पास मैंने देखी है, जिसकी समुद्रसे वनती नहीं। अड्यार नदी समुद्रकी ओर हृदय-समृद्धिका खाद या गाद लेकर आती है और समुद्र चिढ़कर अुसके सामने वालूका अेक वांध खड़ा कर देता है। खंडिताका यह दृश्य अितना करुण है कि अुसका असर वरसों तक मेरे मन पर रहा है।

अिससे तो केरलके 'वैक वॉटर' अच्छे हैं। वहां समुद्रके समानान्तर, किनारे किनारे अेक लंवी नदी फैली हुअी है, मानो समुद्रसे कह रही हो कि तुम्हारे खारे पानीके तूफान मैं भारतकी भूमि तक पहुंचने नहीं दूंगी।

अिसका अेक छोटा-सा नमूना हमें जुहूकी ओर देखनेको मिलता है। जुहूके नारियलवाले प्रदेशके पश्चिममें समुद्र है, और पूर्वकी ओर कभी कभी पानी फैला हुआ दीख पड़ता है। यही स्थिति यदि हमेशाकी हो जाये और पानी यदि अुत्तर-दक्षिणकी ओर सौ पचास मील तक फैल जाये, तो वंवअीके लोगोंको केरलके 'वैक वॉटर्स' का कुछ खयाल हो सकेगा। किन्तु केरलके अुस हिस्सेका नृष्टि-सौन्दर्य प्रत्यक्ष देखे विना ध्यानमें नहीं आयेगा।

सिंधके कमल-सुंदर मंचर सरोवरके बारेमें मैंने थोड़ा-सा लिखा है। किन्तु अुत्कलमें देखे हुअे चिल्का सरोवरके बारेमें लिखना अभी बाकी है। लॉर्ड कर्जनने अेक बार कहा था कि "हिन्दुस्तानमें श्रेष्ठ सौंदर्य-धाम यदि कोअी हो तो वह चिल्का सरोवर ही है।" स्वीडन और नार्वेकी समुद्र-शाखाके चित्र जब जब मैं देखता हूं, तब तब मुझे अेक बार देखे हुअे चिल्का सरोवरका स्मरण हुअे बिना नहीं रहता। अुत्कलके अेक कविने अिस सरोवर पर अेक सुन्दर सुदीर्घ काव्य लिखा है।

* * *

नदियों और सरोवरोंके बारेमें लिखनेके बाद जीवन-तर्पण पूरा करनेके लिअे मुझे हिन्दुस्तान, ब्रह्मदेश और सीलोनके किनारे किये हुअे विशिष्ट समुद्र-दर्शनोंका वर्णन भी लिख डालना चाहिये। कराची, कच्छ और काठियावाड़से लेकर बम्बअी, दाभोळ, कारवार या गोकर्ण तकका समुद्र-तट, अुसके बाद कालिकटसे लेकर रामेश्वरम् और कन्याकुमारी तकका दक्षिणका किनारा, वहांसे अूपर पांडिचेरी, मद्रास, मछलीपट्टम्, विजगापट्टम् आदि सूर्योदयका पूर्व किनारा और अंतमें गोपालपुर, चांदीपुर, कोणार्क और पुरी-जगन्नाथसे लेकर ठेठ हीराबंदर तकका दक्षिणाभिमुख समुद्र-तट जब याद आता है, तब कमसे कम पचास-पचहत्तर दृश्य अेक ही साथ नज़रके सामने विश्वरूप दर्शनकी तरह अद्भुत ज्वार-भाटा चलाते हैं। सीलोन और रंगूनके दृश्य तो अपना व्यक्तित्व रखते ही हैं। दिलमें यह सारा आनंद अितना भरा हुआ है कि वाणीके द्वारा अुसे अेकसाथ यदि बहा दूं, तो समुद्रसे निकलकर अनेक दिशाओंमें बहनेवाली अेक नयी अलौकिक सरस्वती पैदा हो जायगी। कुछ नहीं तो दिलको हलका करनेके लिअे ही अिन सब संस्मरणोंको गति देनी होगी।

हिन्दुस्तानके पहाड़ और जंगल, रेगिस्तान और मैदान, शहर और गांव, सब प्रतीक्षा कर रहे हैं। गांवोंका पुरस्कार करनेके हेतु मैं शहरोंकी कितनी ही निन्दा क्यों न करूं और काम पूरा होनेके पहले ही शहरोंसे भागनेकी अिच्छा भी क्यों न करूं, फिर भी शहरोंका व्यक्तित्व मैं पहचान सकता हूं। अुनके प्रति भी मैं प्रेम-भक्तिका भाव रखता हूं। क्या भारतके सब शहर मेरे देशवासियोंके पुरुषार्थके प्रतीक नहीं

हैं? क्या शहरोंमें संस्कारिताकी पेढ़ियां हमारे लोगोंने स्थापित नहीं की हैं? क्या हरेक शहरने अपना वायुमंडल, अपनी टेक, अपना पुरुषार्थ अखंड रूपसे नहीं चलाया है? शहर यदि गांवोंके भक्षक या शोषक मिटकर अुनके पोषक बन जायें, तो अुन्हें भी हरेक समाज-हितचिंतकके आशीर्वाद मिले बिना नहीं रहेंगे।

मेरी दृष्टिसे तो हिन्दुस्तानमें देखे हुअे अनेकानेक स्मशान भी मेरी भक्तिके विषय हैं। फिर वह चाहे हरिश्चंद्र द्वारा रक्षित काशीका स्मशान हो, दिल्लीके आसपासके अनेक राजधानियोंके स्मशान हों, या महायुद्धके बाद अभी आसाममें देखे हुअे मृतक हवाअी जहाजोंके अवशेष-रूप दो तीन चमकीले स्मशान हों। स्मशान तो स्मशान ही हैं। अुन्हें देखते ही मनुष्योंके तथा राजवंशोंके, साम्राज्योंके और संस्कृतियोंके जन्म-मरणके बारेमें गहरे विचार मनमें अुठे बिना नहीं रह सकते।

जिसमें खुद मुझे जाना है, अुस अेक स्मशानको छोड़कर बाकीके सब स्मशानोंका वर्णन करनेकी अिच्छा हो आती है। यह यदि संभव न हो तो जिस प्रकार युद्धमें 'काम आये हुअे' अज्ञात वीरोंको और श्राद्धके समय अज्ञात संबंधियोंको अेक सामान्य पिंड या अंजलि अर्पण की जाती है, अुसी प्रकार हरिश्चन्द्र, विक्रम, भर्तृहरि और महादेवके अुपासक असंख्य योगियोंने जिस स्मशानको अपना निवास बनाया, अुस प्रातिनिधिक 'सर्व-सामान्य स्मशान' को अेक अंजलि अर्पण करनेकी अिच्छा तो है ही।

क्या यह सब मैं कर सकूंगा? मुझे अिसकी चिंता नहीं है। अैसी बात नहीं है कि सिर्फ अीश्वर ही अवतार धारण करता है। जिस जिसके मनमें संकल्प अुठते हैं, अुस अुसको अवतार लेने ही पड़ते हैं। यह भी माननेकी आवश्यकता नहीं है कि अेक ही जीवात्मा अनेक अवतार धारण करता है। अवतार धारण करना पड़ता है अदम्य संकल्पको। अदम्य संकल्प ही सच्चा विधाता है। संकल्प पैदा हुआ कि अुसमें से सृष्टि अुत्पन्न होगी ही। फिर वह भले ब्रह्मदेवकी पार्थिव सृष्टि हो, साहित्यकी शब्द-सृष्टि हो, या केवल कल्पनाकी चित्र-सृष्टि हो।

अिस सृष्टिके द्वारा जीवन-देवता अपना अनंत-विध अुल्लास प्रकट करता ही रहता है।

अनुक्रमणिका

जीवनलीला

१

सखी मार्कण्डी

क्या हरअेक नदी माता ही होती है? नहीं। मार्कण्डी तो मेरी छुटपनकी सखी है। वह अितनी छोटी है कि में अुसे अपनी बड़ी बहन भी नहीं कह सकता।

बेलगुंदीके हमारे खेतमें गूलरके पेड़के नीचे दुपहरकी छायामें जाकर बैठूं तो मार्कण्डीका मंद पवन मुझे जरूर बुलायेगा। मार्कण्डीके किनारे में कअी बार बैठा हूं, और पवनकी लहरोंसे डोलती हुअी घासकी पत्तियोंको मैंने घंटों तक निहारा है। मार्कण्डीके किनारे असाधारण, अद्‌भुत कुछ भी नहीं है। न कोअी खास किस्मके फूल हैं, न तरह तरहके रंगोंकी तितलियां हैं। सुन्दर पत्थर भी वहां नहीं हैं। अपने कलकूजनसे चित्तको बेचैन कर डालें अैसे छोटे-बड़े प्रपात भला वहां कहांसे हों? वहां है केवल स्निग्ध शांति।

गड़रिये बताते हैं कि मार्कण्डी वैजनाथके पहाड़से आती है। अुसका अुद्‌गम खोजनेकी अिच्छा मुझे कभी नहीं हुअी। हमारे तालुकेका नकशा हाथमें आ जाय तो भी अुसमें मार्कण्डीकी रेखा में नहीं खोजूंगा। क्योंकि वैसा करनेसे वह सखी मिटकर नदी बन जायगी! मुझे तो अुसके पानीमें अपने पांव छोड़कर बैठना ही पसंद है। पानीमें पांव डाला कि फौरन अुसकी कलकल कलकल आवाज शुरू हो जाती है। छुटपनमें हम दोनों कितनी ही बातें किया करते थे। अेक-दूसरेका सहवास ही हमारे आनंदके लिअे काफी हो जाता था। मार्कण्डी क्या बता रही है यह जाननेकी परवाह न मुझे थी, न में जो कुछ बोलता हूं अुसका अर्थ समझनेके लिअे वह रुकती थी। हम अेक-दूसरेसे बोल रहे हैं, अितना ही हम दोनोंके लिअे काफी था। भाअी-बहन जब बरसों बाद मिलते हैं, तब अेक-दूसरेसे हजारों सवाल पूछा करते हैं। किन्तु अिन सवालोंके पीछे जिज्ञासा नहीं होती। वह तो प्रेम व्यक्त करनेका केवल

अेक तरीका होता है। प्रश्न क्या पूछा और अुत्तर क्या मिला, अिस ओर ध्यान दे सके अितना स्वस्थ चित्त भला प्रेम-मिलनके समय कैसे हो?

मार्कण्डीके किनारे किनारे में गाता हुआ घूमता और मार्कण्डी अुन गीतोंको सुनती जाती। सोलहवें वर्षकी आयुमें शिव-भक्तिके बल पर जिन्होंने यमराजको पीछे ढकेल दिया अुन मार्कण्डेय ऋषिका अुपाख्यान गाते समय मुझे कितना आनंद मालूम होता था!

मृकंडु ऋषिके कोअी संतान न थी। अुन्होंने तपश्चर्या की और महादेवजीको प्रसन्न किया। महादेवजीने वरदानमें विकल्प रखा।

साधू सुंदर शाहणा सुत तया सोळाच वर्षे मिती
जो कां मूढ कुरूप तो शतवरी वर्षे असे स्व-स्थिती
या दोहींत जसा मनांत रुचला तो म्यां तुतें दीधला.

(अेक लड़का साधुचरित, खूबसूरत और सयाना होगा। किन्तु अुसकी आयु सिर्फ़ सोलह सालकी होगी। दूसरा मूढ़ और बदसूरत होगा। अुसकी आयु सौ सालकी होगी। मगर वह अुम्रभर जैसाका वैसा ही रहेगा। अिन दोनोंमें से जो तुम्हें पसंद हो, सो मैं दूंगा।)

अब अिन दोनोंमें से कौनसा पसंद करें? ऋषिने धर्मपत्नीसे पूछा। दोनोंने सोचा, बालक भले सोलह वर्ष ही जिये किन्तु वह सद्गुणी हो। वही कुलका अुद्धार करेगा। दोनोंने यही वर मांग लिया। मार्कण्डेय अुम्रमें ज्यों ज्यों खिलता गया त्यों त्यों मां-बापके वदन म्लान होते चले। आखिर सोलह वर्ष पूरे हुअे।

युवक मार्कण्डेय पूजामें बैठा है। यमराज अपने पाड़े पर बैठकर आये। किन्तु शिवलिंगको भेंटे हुअे युवा साधुको छूनेकी हिम्मत अुन्हें कैसे हो? हां, ना करते करते अुन्होंने आखिर पाश फेंका। अुधर लिंगसे त्रिशूलधारी शिवजी प्रकट हुअे। और अपनी धृष्टताके लिअे यमराजको भला-बुरा बहुत कुछ सुनना पड़ा। मृत्युंजय महादेवजीके दर्शन करनेके बाद मार्कण्डेयको मृत्युका डर कैसे हो सकता है? अुसकी आयुधारा अब तक बह रही है।

आगे जाकर जब मैं कॉलेजमें पढ़ने लगा तब अिम्तहानके बाद हमारी भाओी-दूज होती। फसल काटनेके दिन होते। दो दो दिन खेतमें ही बिताने पड़ते। तब मार्कण्डी मुझे शकरकंद भी खिलाती और अमृत जैसा पानी भी पिलाती। जब यह देखनेके लिअे मैं जाता कि रातको ठंडके मारे वह कांप तो नहीं रही है, तब अपने आंगनमें वह मुझे मृगनक्षत्र दिखाती।

आज भी जब मैं अपने गांव जाता हूं, मार्कण्डीसे बिना मिले नहीं रहता। किन्तु अब वह पहलेकी भांति मुझसे लाड़ नहीं करती। जरा-सा स्मित करके मौन ही धारण करती है। अुसके सुकुमार वदन पर पहलेके जैसा लावण्य नहीं है। किन्तु अब अुसके स्नेहकी गंभीरता बढ़ गयी है।

अगस्त, १९२८

२

कृष्णाके संस्मरण

१

ग्यारसका दिन था। गाड़ीमें बैठकर हम माहुली चले। महाराष्ट्रकी राजधानी सातारासे माहुली कुछ दूरी पर है। रास्तेमें दाहिनी तरफ श्री शाहु महाराजके वफादार कुत्तेकी समाधि आती है। रास्ते पर हमारी ही तरह बहुतसे लोग माहुलीकी तरफ गाड़ियां दौड़ाते थे। आखिर हम नदीके किनारे पहुंचे। वहां अिस पारसे अुस पार तक लोहेकी अेक जंजीर अूंची तनी हुअी थी। अुसमें रस्सीसे अेक नाव लटकाअी गअी थी, जो मेरी बाल-आंखोंको बड़ी ही भव्य मालूम होती थी।

किनारेके छोटे-बड़े कंकर कितने चिकने, काले काले और ठंडे ठंडे थे! हाथमें अेकको लेता तो दूसरे पर नजर पड़ती। वह पहलेसे अच्छा

मालूम होता। अितनेमें तीसरे भीगे हुअे कंकर पर कत्थअी रंगकी लकीरें दीख पड़तीं और अुसे अुठानेका दिल हो जाता। अुस दिन कृष्णाका मुझे प्रथम दर्शन हुआ। कृष्णामैयाने भी मुझे पहली ही बार पहचाना। मैं अुसे पहचान लूं अितना बड़ा तो मैं था ही नहीं। बच्चा मांको पहचाने अुसके पहले ही मां अुसे अपना बना लेती है। हम बच्चे नंगे होकर खूब नहाये, कूदे, पानी अुछाला, नाव पर चढ़कर पानीमें छलांगें मारीं। कड़ाकेकी भूख लगे अितना कृष्णामें जलविहार किया।

जैसा नदीका यह मेरा पहला ही दर्शन था, वैसा ही नहानेके बाद नमकीन मूंगफलीके नाश्तेका स्वाद भी मेरे लिअे पहला ही था। यात्राके अवसर पर मोरपंखोंकी टोपी पहननेवाले 'वासुदेव' भीख मांगने आये थे। मंजीरेके साथ अुनका मधुर भजन भी अुस दिन पहली ही बार सुना। कृष्णामैयाके मंदिरमें थोड़ा-सा आराम करनेके बाद हम घर लौटे।

सह्याद्रिके कान्तारमें, महाबलेश्वरके पाससे निकलकर सातारा तक दौड़नेमें कृष्णाको बहुत देर नहीं लगती। किन्तु अितनेमें ही वेण्या कृष्णासे मिलने आती है। अिनके यहांके संगमके कारण ही माहुलीको माहात्म्य प्राप्त हुआ है। दो बालिकाअें अेक-दूसरेके कंधे पर हाथ रखकर मानो खेलने निकली हों, अैसा यह दृश्य मेरे हृदय पर पिछले पैंतीस सालसे अंकित रहा है।

कृष्णाका कुटुम्ब काफी बड़ा है। कअी छोटी-बड़ी नदियां अुससे आ मिलती हैं। गोदावरीके साथ साथ कृष्णाको भी हम 'महाराष्ट्र-माता' कह सकते हैं। जिस समय आजकी मराठी भाषा बोली नहीं जाती थी, अुस समयका सारा महाराष्ट्र कृष्णाके ही घेरेके अंदर आता था।

२

'नरसोबाची वाड़ी' जाते समय नाव पर गाड़ी चढ़ाकर हमने कृष्णाको पार किया, तब अुसका दूसरी बार दर्शन हुआ। यहां पर अेक ओर अूंचा कगार और दूसरी ओर दूर तक फैला हुआ कृष्णाका कछार, और अुसमें अुगे हुअे बैंगन, खरबूजे, ककड़ी और तरबूजके

अमृत-खेत! कृष्णाके किनारेके ये बैंगन जिसने अेकाध बार खा लिये, वह स्वर्गमें भी अुनकी अिच्छा करेगा। दो-दो महीने तक लगातार बैंगन खाने पर भी जी नहीं भरता; फिर भला अरुचि तो कैसे हो?

३

सांगलीके पास, कृष्णाके तट पर मैंने पहली ही बार 'रियासती महाराष्ट्र' का राजवैभव देखा। वे आलीशान और विशाल घाट, सुंदर और चमकीले बर्तनोंमें भर भर कर पानी ले जाती हुअी महाराष्ट्रकी ललनायें, पानीमें छलांग मारकर किनारे परके लोगोंको भिगानेका हौंसला रखनेवाले अखाड़ेबाज, क्षुद्र घंटिकाओंकी तालबद्ध आवाजसे अपने आगमनकी सूचना देनेवाले पहाड़ जैसे हाथी, और कर्र्र् की अेकश्रुति आवाज निकालकर रसपानका न्योता देनेवाले औखके कोल्हू— यह था मेरा कृष्णामैयाका तीसरा दर्शन।

मुझे तैरना अच्छी तरह नहीं आता था। फिर भी अेक बड़ी गागर पानीमें औंधी डालकर अुसके सहारे बह जानेके लिअे मैं अेक बार यहां नदीमें अुतर पड़ा। किन्तु अेक जगह कीचड़में अैसा फंसा कि अेक पैर निकालता तो दूसरा और भी अंदर धंस जाता। और कीचड़ भी कैसा? मानो काला काला मक्खन! मुझे लगा कि अब जंगम न रहकर अुलटे पेड़की तरह यहीं स्थावर हो जाअूंगा! अुस दिनकी घबराहट भी मैं अब तक नहीं भूला हूं।

४

चिचली स्टेशन पर पीनेके लिअे हमें हमेशा कृष्णाका पानी मिलता था। हमारे अेक परिचित सज्जन वहां स्टेशनमास्टर थे। वे हमें बड़े प्रेमसे अेकाध लोटा पानी मंगवाकर देते थे। हम चाहे प्यासे हों या न हों पिताजी हम सबको भक्तिपूर्वक पानी पीनेको कहते। कृष्णा महाराष्ट्रकी आराध्य देवी है। अुसकी अेक बूंद भी पेटमें जानेसे हम पावन हो जाते हैं। जिसके पेटमें कृष्णाकी अेक बूंद भी पहुंच चुकी है, वह अपना महाराष्ट्रीयपन कभी भूल नहीं सकता। श्रीसमर्थ

रामदास और शिवाजी महाराज, शाहु और बाजीराव, घोरपडे और पटवर्धन, नाना फडनवीस और रामशास्त्री प्रभुणे — थोड़ेमें कहें तो महाराष्ट्रका साधुत्व और वीरत्व, महाराष्ट्रकी न्यायनिष्ठा और राजनीतिज्ञता, धर्म और सदाचार, देशसेवा और विद्यासेवा, स्वतंत्रता और अुदारता, सब कुछ कृष्णाके वत्सल कुटुम्बमें परवरिश पाकर फला-फूला है। देहू और आळंदीके जल कृष्णामें ही मिलते हैं। पंढरपुरकी चंद्रभागा भी भीमा नाम धारण करके कृष्णाको ही मिलती है। 'गंगाका स्नान और तुंगाका पान' अिस कहावतमें जिसके गौरवका स्वीकार किया गया है, वह तुंगभद्रा कर्णाटकके प्राचीन वैभवकी याद करती हुअी कृष्णामें ही लीन होती है। सच कहें तो महाराष्ट्र, कर्णाटक और तेलंगण (आंध्र), अिन तीनों प्रदेशोंका अैक्य साधनेके लिअे ही कृष्णा नदी बहती है। अिन तीनों प्रान्तोंने कृष्णाका दूध पिया है। कृष्णामें पक्षपाती प्रांतीयता नहीं है।

५

कॉलेजके दिन थे। बड़ी बड़ी आशायें लेकर बड़े भाअीसे मिलने में पूनासे घर गया। किन्तु मेरे पहुंचनेसे पहले ही वे अिहलोक छोड़ चुके थे। मेरी किस्मतमें कृष्णाके पवित्र जलमें अुनकी अस्थियोंका समर्पण करना ही बदा था। बेलगांवसे मैं कूड़ची गया। संध्याका समय था। रेलके पुलके नीचे कृष्णाकी पूजा की। बड़े भाअीकी अस्थियां कृष्णाके अुदरमें अर्पण कीं। नहाया और पलथी मारकर जीवन-मरण पर सोचने लगा।

कृष्णाके पानीमें कितने ही महाराष्ट्रके वीरों और महाराष्ट्रके शत्रुओंका खून मिला होगा! वर्षाकालकी मस्तीमें कृष्णाने कितने ही किसान और अुनके मवेशियोंको जलसमाधि दी होगी! पर कृष्णाको अिससे क्या? मदोन्मत्त हाथी अुसके जलमें विहार करें और विरक्त साधु अुसके किनारे तपश्चर्या करें, कृष्णाके लिअे दोनों समान हैं। मेरे भाअीकी अस्थियों और कंकर बनी हुअी पहाड़की अस्थियोंके बीच कृष्णाके मनमें क्या फर्क है? माहुलीमें अपने कंधे पर मुझे

खड़ा करके पानीमें कूदनेके लिअे वढ़ावा देनेवाले बड़े भाअीकी अस्थियां मुझे अपने हाथों अुसी कृष्णाके जलमें समर्पण करनी पड़ीं! जीवनकी लीला कैसी अगम्य है!

६

कृष्णाके अुदरमें मेरा दूसरा अेक भाअी भी सोया हुआ है! ब्रह्मचारी अनंतवुआ मरढेकर हृदयकी भावनासे मेरे सगे छोटे भाअी थे, और देशसेवाके व्रतमें मेरे बड़े भाअी थे। स्वदेशी, राष्ट्रीय शिक्षा और गोसेवा यह त्रिविध कार्य करते करते अुन्होंने शरीर छोड़ा था। मेरे साथ अुन्होंने गंगोत्री और अमरनाथकी यात्रा की थी। किन्तु कृष्णाके किनारे आकर ही वे अमर हुअे। भक्तिकी धुनमें वे सुध-बुध भूल जाते और कअी जगह ठोकर खाते। अिस वातका मुझे हिमालयकी यात्रामें कअी वाँर अनुभव हुआ था। मैं बार बार अुनको कोसता। किन्तु वे परवाह नहीं करते। वे तो श्रीसमर्थकी प्रासादिक वाणीकी सात्त्विक मस्तीमें ही रहते। कृष्णाको भी अुन्हें कोसनेकी सूझी होगी। देव-मंदिरकी प्रदक्षिणा करते करते वे अूपरसे अेक दहमें गिर पड़े और देवलोक सिधारे। जब वाअीके पथरीले पट परसे बहती गंगाका स्मरण करता हूं, कृष्णामें हर वर्षाकालमें शिरस्नान करते देव-मंदिरके शिखरोंका दर्शन करता हूं, तब कृष्णाके पास मेरा भी यह अेक भाअी हमेशाके लिअे पहुंच गया है अिस वातका स्मरण हुअे विना नहीं रहता; साथ ही साथ अनंतवुवाकी तपोनिष्ठ किन्तु प्रेम-सुकुमार मूर्तिका दर्शन हुअे बिना भी नहीं रहता।

७

सन् १९२१ का वह साल! भारतवर्षने अेक ही सालके भीतर स्वराज्य सिद्ध करनेका वीड़ा अुठा लिया है। हिन्दू-मुसलमान अेक हो गये हैं। तेंतीस करोड़ देवताओंके समान भारतवासी करोड़ोंकी संख्यामें ही सोचने लगे हैं। स्वराज्यऋषि लोकमान्य तिलकका स्मरण कायम करनेके लिअे 'तिलक स्वराज्य फंड' में अेक करोड़ रुपये अिकट्ठे करने हैं। राष्ट्रसभाके छत्रके नीचे काम करनेवाले सदस्योंकी संख्या भी अेक

करोड़ बनाती हैं। और पट-वर्धन श्रीकृष्णके सुदर्शनके समान चरखे भी जिस धर्मभूमिमें अुतनी ही संख्यामें चलवा देते हैं। भारतपुत्र जिस कामके लिअे बेजवाड़ेमें अिकट्ठे हुअे हैं। श्री अब्बास साहब, पुणतांबेकर, गिदवाणी और मैं, अेक साथ बेजवाड़ा पहुंच गये हैं। अैसे मंगल अवसर पर श्री कृष्णाम्बिका का विराट दर्शन करनेका सौभाग्य मिला। वाअीमें जिस कृष्णाके किनारे बैठकर संध्यावंदन किया था और न्याय-निष्ठ रामशास्त्री तथा राजकाजपटु नाना फडनवीसकी बातें की थीं, अुसी नन्हीं कृष्णाको यहां अितनी बड़ी होते देखकर प्रथम तो विश्वास ही न हुआ। कहां माहुलीकी वह छोटी-सी जंजीर और कहां यूरोप-अमरीकाको जोड़नेवाले केबलके जैसा यहांका वह रस्सा! हजारों-लाखों लोग यहां नहाने आये हैं। स्थूलकाय आंध्र भाअियोंमें आज भारतवर्षके तमाम भाअी घुलमिल गये हैं। 'राष्ट्रीय' हिन्दीका वाक्‌प्रवाह जहां-तहां सुनाअी देता है। कृष्णामें जिस प्रकार वेण्या, वारणा, कोयना, भीमा, तुंगभद्रा आकर मिलती हैं, अुसी प्रकार गांव गांवके लोग ठटके ठट बेजवाड़ेमें अुमड़ते हैं। अैसे अवसर पर सबके साथ रोज कृष्णामें स्नान करनेका लुत्फ मिलता। जिस कृष्णाने जन्मकालका दूध दिया अुसी कृष्णाने स्वराज्यकांक्षी भारतराष्ट्रका गौरवशाली दर्शन कराया। जय कृष्णा! तेरी जय हो! भारतवर्ष अेक हो! स्वतंत्र हो!!

जुलाअी, १९२९

३

मुळा-मुठाका संगम

नदियां तो हमारी बहुत देखी हुअी होती हैं। पर दो नदियोंका संगम आसानीसे देखनेको नहीं मिलता। संगमका काव्य ही अलग है।

जब दो नदियां मिलती हैं तब अक्सर अुनमें से अेक अपना नाम छोड़कर दूसरीमें मिल जाती है। सभी देशोंमें अिस नियमका पालन होता हुआ दिखाअी देता है। किन्तु जिस प्रकार कलंकके बिना चंद्र नहीं शोभता, अुसी प्रकार अपवादके बिना नियम भी नहीं चलते। और कअी बार तो नियमकी अपेक्षा अपवाद ही ज्यादा ध्यान खींचते हैं। अुत्तर अमरीकाकी मिसिसिपी-मिसोरी अपना लंबा-चौड़ा सप्ताक्षरी नाम द्वंद्व समाससे धारण करके संसारकी सबसे लंबी नदीके तौर पर मशहूर हुअी है। सीता-हरणसे लेकर विजयनगरके स्वातंत्र्य-हरण तकके अितिहासको याद करती तुंगभद्रा भी तुंगा और भद्राके मिलनसे अपना नाम और बड़प्पन प्राप्त कर सकी है। पूनाको अपनी गोदमें खेलाती मुळामुठा भी मुळा और मुठाके संगमसे बनी है।

सिंहगढ़की पश्चिम ओरकी घाटीसे मुठा आती है। खडक-वासला तककी मुंडी टेकरियां अुसका रक्षण करती हैं। खडक-वासलाके बांधने तन्वंगी मुठाका अेक सुदीर्घ सरोवर बनाया है। अिस सरोवरके किनारे न तो कोअी पेड़ हैं, न मंदिर। दिनमें बादल और रातके समय तारे अपने चिंताजनक प्रतिबिंब अिस सरोवरमें डालते हैं। यहींकी मुठासे नहरके रूपमें दो जबरदस्त महसूल लिये जाते हैं, जिनसे पूना और खडकीकी बस्ती जी भरके पानी पीती है। मुठाके किनारे गन्नेकी खेती बढ़ती जा रही है। वसंत ऋतुमें जहां देखें वहां अीखके कोल्हू बांग पुकार पुकार कर लोगोंको रसपानकी याद दिलाते हैं। लकड़ी-पुलके नामसे परिचित किन्तु पत्थरके बने हुअे पुलके नीचेसे नदी आगे जाती है और दगड़ी-पुलके नामसे परिचित किन्तु पत्थरके पक्के बांधको पार करती है।

जिसके बाद ही मुठाका अुसकी बहन मुळासे संगम होता है। लकड़ी-पुलसे ऑंकारेश्वर तक चाहे जितने शव जलते हों, लेकिन संगमके समय अुसका विषाद मुठाके चेहरे पर दिखाअी नहीं देता।

अितना शांत संगम शायद ही और कहीं होगा। अिसी संगम पर कॅप्टन मॅलेट पेशवाओंकी अंतघड़ीकी राह देखता हुआ पड़ाव डाल-कर बैठा था। आज तो संस्कृत भाषाका संशोधन युरोपियन पंडितोंके हाथसे वापिस छीन लेनेके लिअे मथनेवाले आर्य पंडित भांडारकरजीका संगमाश्रम ही यहां विराजमान है। संस्कृत विद्याके पुनरुद्धारके लिअे संस्थापित पाठशालाका रूपान्तर करके पुराने और नयेका संगम करनेवाला डेक्कन कॉलेज भी अिस संगमके पास ही विराजमान है। यहां गोरे लोगोंने नौका-विहारके लिअे नदी पर बांध बांधकर पानी रोका है, और मच्छरोंके विशाल कुलको भी यहां आश्रय दिया है। नजदीककी टेकरी पर गुजरातके अेक लक्ष्मीपुत्रकी अुत्तुंग-शिरस्क किन्तु नम्र-नामधेय 'पर्णकुटी' है। मानवकी स्वतंत्रताका हरण करनेवाला यरवडाका कैदखाना और प्राणहरपटु लश्करी बारूदखाना भी अिस संगमसे अधिक दूरी पर नहीं है। न मालूम कितनी विचित्र वस्तुओंका संगम मुळामुठाके किनारे पर होता होगा और होनेवाला होगा! बांधके पासके बंड-गार्डनमें लक्षाधीश और भिक्षाधीशोंका संगम हर शामको होता है, यह भी अिसीकी अेक मिसाल है।

आखिरी बांध परसे हाश् करके छटकती मुळामुठा यहांसे आगे कहां तक जाती है, यह भला कौन बता सकेगा? अिस बातकी जान-कारी किसके पास होगी?

महाराष्ट्रकी नदियोंमें तीन नदियोंसे मेरी विशेष आत्मीयता है। मार्कण्डी मेरी छुटपनकी सखी, मेरे खेतिहर जीवनकी साक्षी, और मेरी बहन आक्काकी प्रतिनिधि है। कृष्णाके किनारे तो मेरा जन्म ही हुआ। महाबलेश्वरसे लेकर बेजवाड़ा और मछलीपट्टम तकका अुसका विस्तार अनेक ढंगसे मेरे जीवनके साथ बुना हुआ है। और तीसरी है मुळा-मुठा। बचपनमें हम सब भाओ शिक्षाके लिअे पूनामें रहे थे, अुस समयसे मुळा और मुठाका संगम मेरे बाल्यकालका साक्षी रहा है।

कॉलेजके दिनोंमें हमने जिन क्रांतिकारी विचारोंका सेवन किया था अुन्हें भी मुळामुठा जानती है। किन्तु अिन सब संस्मरणोंसे बढ़ जाते हैं महात्मा गांधीके साथ व्यतीत किये हुअे अुसके किनारे परके वे दिन! लेडी ठाकरसीकी पर्णकुटी, दिनशा मेहताका निसर्गोपचार भवन और सिंहगढ़का निवास, सब अेक ही साथ याद आते हैं।

और आख़िर आखिरके दिनोंमें अंग्रेज सरकारने गांधीजीको जहां गिरफ्तार करके रखा था वह आगाखां महल भी मुळामुठाके किनारे पर ही है। और यहीं गांधीजीके दो जीवन-साथियोंने स्वराज्यके यज्ञमें अपनी अंतिम आहुति दी थी। कस्तूरबा और महादेवभाअीने जिसके किनारे शरीर छोड़ा वह मुळामुठा भारतवासियोंके लिअे, खास करके हम आश्रमवासियोंके लिअे तो तीर्थस्थान है।

और जब आजकी मुळामुठाके बारेमें सोचता हूं तब सिंहगढ़के दामनमें खडक-वासला सरोवरके किनारे जिस राष्ट्र-रक्षा-विद्यालयकी स्थापना हुअी है अुसका स्मरण हुअे बिना नहीं रहता। अिस संस्थाका नाम युद्ध-महाविद्यालय रखनेके बदले राष्ट्रीय रक्षा-विद्यालय रखा गया, यह बात भी ध्यान खींचे बिना नहीं रहती। जिस सरोवरके किनारे अिस विद्यालयकी स्थापना हुअी है अुसका नाम भी महाराष्ट्रके अितिहासके अनुरूप ही होना चाहिये। अैसे सरोवरको किसी अंग्रेजका नाम न देकर नरवीर तानाजी मालुसरेका नाम देना चाहिये। अपनी जान देकर जब तानाजीने छत्रपति शिवाजीके लिअे कोंडाणा गढ़ जीत दिया तब शिवाजीने कहा 'गड आला पण सिंह गेला — गढ़ तो जीत लिया किन्तु मैंने अपना शेर खो दिया।' और अुस दिनसे अिस गढ़का नाम सिंहगढ़ पड़ा।

अिस सरोवरको हम या तो तानाजी सरोवर कहें या सिंह सरोवर।

१९२६–२७
संशोधित, १९५६

४

सागर-सरिताका संगम

छुटपनमें भोज और कालिदासकी कहानियां पढ़नेको मिलती थीं। भोज राजा पूछते हैं, "यह नदी अितनी क्यों रोती है?" नदीका पानी पत्थरोंको पार करते हुअे आवाज करता होगा। राजाको सूझा, कविके सामने अेक कल्पना फेंक दें; अिसलिअे अुसने अूपरका सवाल पूछा। लोककथाओंका कालिदास लोकमानसको जंचे अैसा ही जवाब देगा न? अुसने कहा, "रोनेका कारण क्यों पूछते हैं, महाराज? यह बाला पीहरसे ससुराल जा रही है। फिर रोयेगी नहीं तो क्या करेगी?" अुस समय मेरे मनमें आया, "ससुराल जाना अगर पसन्द नहीं है तो भला जाती क्यों है?" किसीने जवाब दिया, "लड़कीका जीवन ससुराल जानेके लिअे ही है।"

नदी जब अपने पति सागरसे मिलती है तब अुसका सारा स्वरूप बदल जाता है। वहां अुसके प्रवाहको नदी कहना भी मुश्किल हो जाता है। साताराके पास माहुलीके नजदीक कृष्णा और वेण्याका संगम देखा था। पूनामें मुळा और मुठाका। किन्तु सरिता-सागरका संगम तो पहले पहल देखा कारवारमें — अुत्तरकी ओरके सरोंके (कॅश्युरीनाके) वनके सिरे पर। हम दो भाअी समुद्र-तटकी बालू पर खेलते खेलते, घूमते-घामते दूर तक चले गये थे। हमेशासे काफी दूर गये और यकायक अेक सुन्दर नदीको समुद्रसे मिलते देखा। दो नदियोंके संगमकी अपेक्षा नदी-समुद्रका संगम अधिक काव्यमय होता है। दो नदियोंका संगम गूढ़-शांत होता है। किन्तु जब सागर और सरिता अेक-दूसरेसे मिलते हैं तब दोनोंमें स्पष्ट अुन्माद दिखाअी देता है। अिस अुन्मादका नशा हमें भी अचूक चढ़ता है। नदीका पानी शांत आग्रहसे समुद्रकी ओर बहता जाता है, जब कि अपनी मर्यादाको कभी न छोडनेके लिअे विख्यात समुद्रका पानी चंद्रमाकी अुत्तेजनाके अनुसार कभी नदीके लिअे रास्ता बना देता है, कभी सामने हो जाता है। नदी और सागरका

जब अेक-दूसरेके खिलाफ सत्याग्रह चलता है, तब कअी तरहके दृश्य देखनेको मिलते हैं। समुद्रकी लहरें जब तिरछी कतराती आती हैं तब पानीका अेक फुहारा अेक छोरसे दूसरे छोर तक दौड़ता जाता है। कहीं कहीं पानी गोल गोल चक्कर काटकर भंवर बनाता है। जब सागरका जोश बढ़ने लगता है तब नदीका पानी पीछे हटता जाता है। अैसे अवसर पर दोनों ओरके किनारों परका अुसका थपेड़ा बड़ा तेज होता है। नदीकी गतिकी विपरीत दशाको देखकर अुससे फायदा अुठानेवाली स्वार्थी नावें पुरजोशमें अंदर घुसती हैं। अुन्हें मालूम है कि भाग्यके अिस ज्वारके साथ जितना अंदर जा सकेंगे अुतना ही पल्ले पड़नेवाला है। फिर जब भाटा शुरू होता है और सागरकी लहरें विरोधकी जगह बाहु खोलकर नदीके पानीका स्वागत करती हैं, तब मतलबी नावोंको अपनी त्रिकोनी पगड़ी बदलते देर नहीं लगती। पवन चाहे किसी भी दिशामें चलता रहे, जब तक वह प्रत्यक्ष सामने नहीं होता तब तक अुसमें से कुछ न कुछ मतलब साधनेकी चालाकी अिन वैश्यवृत्तिवाली नावोंमें होती ही है। अुनकी पगड़ीकी यानी पालकी बनावट भी अैसी ही होती है।

हम जिस समय गये थे अुस समय नावें अिसी प्रकार नदीके अंदर घुस रही थीं। किन्तु समुद्रके अिन पतंगोंको निहारनेमें हमें कोअी दिलचस्पी नहीं थी। हम तो संगमके साथ सूर्यास्त कैसा फबता है यह देखनेमें मशगूल थे। सुनहरा रंग सब जगह सुन्दर ही होता है। किन्तु हरे रंगके साथकी अुसकी बादशाही शोभा कुछ और ही होती है। अूंचे अूंचे पेड़ों पर संध्याके सुवर्ण किरण जब आरोहण करते हैं तब मनमें संदेह अुठता है कि यह मानवी सृष्टि है, या परियोंकी दुनिया है? समुद्र अैसी तो भव्य सुन्दरता दिखाने लगा मानो सुवर्ण रसका सरोवर अुमड़ रहा हो। यह शोभा देखकर हम अघा गये या सच कहें तो जैसे जैसे यह शोभा देखते गये वैसे वैसे हमारा दिल अधिकाधिक बेचैन होता गया। सौंदर्यपानसे हम व्याकुल होते जा रहे थे।

सूर्यास्तके बाद ये रंग सौम्य हुअे। हम भी होशमें आये और वापस लौटनेकी बात सोचने लगे। किन्तु पानी अितना आगे बढ़ गया था कि

वापस लौटना कठिन हो गया। परिणामस्वरूप हम नदीके किनारे किनारे अुलटे चले। यहां पर भी नदीका पानी दोनों ओरसे फूलता जा रहा था — जैसे भैंसेकी पीठ परकी पखाल भरते समय फूलती जाती है। जैसे जैसे हम अुलटे चलते गये वैसे वैसे पानीमें शांति बढ़ती गयी। अंधेरा भी बढ़ता जा रहा था। अिस पारसे अुस पार तक आने जानेवाली अेक नन्ही-सी नाव अेक कोनमें पड़ी थी। और देहातके चंद मजदूर लंगोटीकी डोरीमें पीछेकी ओर लकड़ीका अेक चक्र खोंसकर अुसमें अपने 'कोयते' लटकाये जा रहे थे। ('कोयता' हंसियेके जैसा अेक औजार होता है, जो नारियल छीलनेमें काम आता है या सामान्य तौरसे जिसका कुल्हाड़ीकी तरह अुपयोग किया जाता है।) अिन लोगोंकी पोशाक बस अेक लंगोटी और अेक जाकिट होती है। नदीको पार करते समय जाकिट निकालकर सिर पर ले लिया कि बस। प्रकृतिके बालक! जमीन और पानी अुनके लिअे अेक ही है।

घर जानेकी जल्दी सिर्फ हमें ही नहीं थी। अैसा मालूम होता था कि अिन देहाती लोगोंको भी जल्दी थी। और नदीके किनारे दौड़ते छोटे छोटे केकड़ोंको भी हमारी ही तरह जल्दी थी। रात पड़ी और हम जल्दीसे घर लौटे। किन्तु मनमें विचार तो आया कि किसी दिन अिस नदीके किनारे किनारे काफी अूपर तक जाना चाहिये।

प्याज या कॅबेज (पत्तागोभी) हाथमें आने पर फौरन अुसकी सब पत्तियां खोलकर देखनेकी जैसे अिच्छा होती है, वैसे ही नदीको देखने पर अुसके अुद्गमकी ओर चलनेकी अिच्छा मनुष्यको होती ही है। अुद्गमकी खोज सनातन खोज है। गंगोत्री, जमनोत्री और महाबलेश्वर या त्र्यंबककी खोज अिसी तरह हुअी है।

बचपनकी यह अिच्छा कुछ ही वर्ष पहले बर आअी। श्री शंकरराव गुलवाड़ीजी मुझे अेक सेवाकेंद्र दिखानेके लिअे नदीकी अुलटी दिशामें दूर तक ले गये। अिस प्रतीप-यात्राके समय ही कवि बोरकरकी कविता सुनी थी, अिस बातका भी आनंददायी स्मरण है।

१९३४

५

गंगामैया

१

गंगा कुछ भी न करती, सिर्फ देवव्रत भीष्मको ही जन्म देती, तो भी आर्यजातिकी माताके तौर पर वह आज प्रख्यात होती। पितामह भीष्मकी टेक, भीष्मकी निःस्पृहता, भीष्मका ब्रह्मचर्य और भीष्मका तत्त्वज्ञान हमेशाके लिअे आर्यजातिका आदरपात्र ध्येय बन चुका है। हम गंगाको आर्यसंस्कृतिके अैसे आधारस्तंभ महापुरुषकी माताके रूपमें पहचानते हैं।

२

नदीको यदि कोअी अुपमा शोभा देती है, तो वह माताकी ही। नदीके किनारे पर रहनेसे अकालका डर तो रहता ही नहीं। मेघराजा जब धोखा देते हैं तब नदीमाता ही हमारी फसल पकाती है। नदीका किनारा यानी शुद्ध और शीतल हवा। नदीके किनारे किनारे घूमने जायें तो प्रकृतिके मातृवात्सल्यके अखंड प्रवाहका दर्शन होता है। नदी बड़ी हो और अुसका प्रवाह धीरगंभीर हो, तब तो अुसके किनारे पर रहनेवालोंकी शानशौकत अुस नदी पर ही निर्भर करती है। सचमुच नदी जनसमाजकी माता है। नदी-किनारे बसे हुअे शहरकी गली गलीमें घूमते समय अेकाध कोनेसे नदीका दर्शन हो जाय, तो हमें कितना आनंद होता है! कहां शहरका वह गंदा वायुमंडल और कहां नदीका यह प्रसन्न दर्शन! दोनोंके बीचका अंतर फौरन मालूम हो जाता है। नदी अीश्वर नहीं है, बल्कि अीश्वरका स्मरण करानेवाली देवता है। यदि गुरुको वंदन करना आवश्यक है तो नदीको भी वंदन करना अुचित है।

यह तो हुअी सामान्य नदीकी बात। किन्तु गंगामैया तो आर्य-जातिकी माता है। आर्योंके बड़े बड़े साम्राज्य अिसी नदीके तट पर स्थापित हुअे हैं। कुरु-पांचाल देशका अंगवंगादि देशोंके साथ गंगाने

जी—२

ही संयोग किया है। आज भी हिन्दुस्तानकी आबादी गंगाके तट पर सबसे अधिक है।

जब हम गंगाका दर्शन करते हैं तब हमारे ध्यानमें फसलसे लहलहाते सिर्फ खेत ही नहीं आते, न सिर्फ मालसे लदे जहाज ही आते हैं; किन्तु वाल्मीकिका काव्य, बुद्ध-महावीरके विहार, अशोक, समुद्रगुप्त या हर्ष जैसे सम्राटोंके पराक्रम और तुलसीदास या कबीर जैसे संतजनोंके भजन — अिन सबका अेक साथ स्मरण हो आता है। गंगाका दर्शन तो शैत्य-पावनत्वका हार्दिक तथा प्रत्यक्ष दर्शन है।

किन्तु गंगाके दर्शनका अेक ही प्रकार नहीं है। गंगोत्रीके पासके हिमाच्छादित प्रदेशोंमें अिसका खिलाड़ी कन्यारूप, अुत्तरकाशीकी ओर चीड़-देवदारके काव्यमय प्रदेशमें मुग्धारूप, देवप्रयागके पहाड़ी और संकरे प्रदेशमें चमकीली अलकनंदाके साथ अुसकी अठखेलियां, लक्ष्मण-झूलेकी विकराल दंष्ट्रामें से छूटनेके बाद हरद्वारके पास अुसका अनेक धाराओंमें स्वच्छंद विहार, कानपुरसे सटकर जाता हुआ अुसका अिति-हास-प्रसिद्ध प्रवाह, प्रयागके विशाल पट पर हुआ अुसका कालिन्दीके साथका त्रिवेणी संगम — हरेककी शोभा कुछ निराली ही है। अेक दृश्य देखने पर दूसरेकी कल्पना नहीं हो सकती। हरेकका सौंदर्य अलग, हरेकका भाव अलग, हरेकका वातावरण अलग, हरेकका माहात्म्य अलग।

प्रयागसे गंगा अलग ही स्वरूप धारण कर लेती है। गंगोत्रीसे लेकर प्रयाग तककी गंगा वर्धमान होते हुअे भी अेकरूप मानी जा सकती है। किन्तु प्रयागके पास अुससे यमुना आकर मिलती है। यमुनाका तो पहलेसे ही दोहरा पाट है। वह खेलती है, कूदती है, किन्तु क्रीड़ा-सक्त नहीं मालूम होती। गंगा शकुंतला जैसी तपस्वी कन्या दीखती है। काली यमुना द्रौपदी जैसी मानिनी राजकन्या मालूम होती है। शर्मिष्ठा और देवयानीकी कथा जब हम सुनते हैं, तब भी प्रयागके पास गंगा और यमुनाके बड़ी कठिनाअीके साथ मिलते हुअे शुक्ल-कृष्ण प्रवाहोंका स्मरण हो आता है। हिन्दुस्तानमें अनगिनत नदियां हैं, अिसलिअे संगमोंका भी कोअी पार नहीं है। अिन सभी

संगमोंमें हमारे पुरखोंने गंगा-यमुनाका यह संगम सबसे अधिक पसन्द किया है, और अिसीलिअे अुसका 'प्रयागराज' जैसा गौरवपूर्ण नाम रखा है। हिन्दुस्तानमें मुसलमानोंके आनेके बाद जिस प्रकार हिन्दुस्तानके अितिहासका रूप बदला, अुसी प्रकार दिल्ली-आगरा और मथुरा-वृंदावनके समीपसे आते हुअे यमुनाके प्रवाहके कारण गंगाका स्वरूप भी प्रयागके बाद बिलकुल बदल गया है।

प्रयागके बाद गंगा कुलवधूकी तरह गंभीर और सौभाग्यवती दीखती है। अिसके बाद अुसमें बड़ी बड़ी नदियां मिलती जाती हैं। यमुनाका जल मथुरा-वृंदावनसे श्रीकृष्णके संस्मरण अर्पण करता है, जब कि अयोध्या होकर आनेवाली सरयू आदर्श राजा रामचंद्रके प्रतापी किन्तु करुण जीवनकी स्मृतियां लाती है। दक्षिणकी ओरसे आनेवाली चंबल नदी रंतिदेवके यज्ञयागकी बातें करती है, जब कि महान कोलाहल करता हुआ शोणभद्र गजग्राहके दारुण द्वंद्व-युद्धकी झांकी कराता है। अिस प्रकार हृष्ट-पुष्ट बनी हुअी गंगा पाटलीपुत्रके पास मगध साम्राज्य जैसी विस्तीर्ण हो जाती है। फिर भी गंडकी अपना अमूल्य कर-भार लाते हुअे हिचकिचाअी नहीं। जनक और अशोककी, बुद्ध और महावीरकी प्राचीन भूमिसे निकलकर आगे बढ़ते समय गंगा मानो सोचमें पड़ जाती है कि अब कहां जाना चाहिये। जब अितनी प्रचंड वारिराशि अपने अमोघ वेगसे पूर्वकी ओर बह रही हो, तब अुसे दक्षिणकी ओर मोड़ना क्या कोअी आसान बात है? फिर भी वह अुस ओर मुड़ गअी है सही। दो सम्राट् या दो जगद्गुरु जैसे अेकाअेक अेक-दूसरेसे नहीं मिलते, वैसा ही गंगा और ब्रह्मपुत्राका हाल है। ब्रह्मपुत्रा हिमालयके अुस पारका सारा पानी लेकर आसामसे होती हुअी पश्चिमकी ओर आती है और गंगा अिस ओरसे पूर्वकी ओर बढ़ती है। अुनकी आमने-सामने भेंट कैसे हो? कौन किसके सामने पहले झुके? कौन किसे पहले रास्ता दे? अंतमें दोनोंने तय किया कि दोनोंको दाक्षिण्य धारणकर सरित्पतिके दर्शनके लिअे जाना चाहिये और भक्ति-नम्र होकर, जाते जाते जहां संभव हो, रास्तेमें अेक-दूसरेसे मिल लेना चाहिये।

६

यमुनारानी

हिमालय तो भव्यताका भंडार है। जहां तहां भव्यताको बिखेर कर भव्यताकी भव्यताको कम करते रहना ही मानो हिमालयका व्यवसाय है। फिर भी अैसे हिमालयमें अेक अैसा स्थान है, जिसकी अूर्जस्विता हिमालयवासियोंका भी ध्यान खींचती है। यह है यमराजकी बहनका अुद्‌गम-स्थान।

अूंचाअीसे बर्फ पिघलकर अेक बड़ा प्रपात गिरता है। अिर्दगिर्द गगनचुंबी नहीं, बल्कि गगनभेदी पुराने वृक्ष आड़े गिरकर गल जाते हैं। अुत्तुंग पहाड़ यमदूतोंकी तरह रक्षण करनेके लिअे खड़े हैं। कभी पानी जमकर बर्फ बन जाता है, और कभी बर्फ पिघलकर अुसका बर्फके जितना ठंडा पानी बन जाता है। अैसे स्थानमें जमीनके अंदरसे अेक अद्‌भुत ढंगसे अुबलता हुआ पानी अुछलता रहता है। जमीनके भीतरसे अैसी आवाज निकलती है मानो किसी बाष्पयंत्रसे क्रोधायमान भाप निकल रही हो। और अुन झरनोंसे सिरसे भी अूंची अुड़ती बूंदें अितनी सरदीमें भी मनुष्यको झुलसा देती हैं। अैसे लोक-चमत्कारी स्थानमें असित ऋषिने यमुनाका मूल स्थान खोज निकाला। अिस स्थानमें शुद्ध जलसे स्नान करना असंभव-सा है। ठंडे पानीमें नहायें तो हमेशाके लिअे ठंडे पड़ जायेंगे और गरम पानीमें नहायें तो वहींके वहीं आलूकी तरह अुबल कर मर जायंगे। अिसीलिअे वहां मिश्र जलके कुंड तैयार किये गये हैं। अेक झरनेके अूपर अेक गुफा है। अुसमें लकड़ीके पटिये डालकर सो सकते हैं। हां, रातभर करवट बदलते रहना चाहिये, क्योंकि अूपरकी ठंड और नीचेकी गरमी, दोनों अेकसी असह्य होती हैं।

दोनों बहनोंमें गंगासे यमुना बड़ी है, प्रौढ़ है, गंभीर है, कृष्ण-भगिनी द्रौपदीके समान कृष्णवर्णा और मानिनी है। गंगा तो मानो बेचारी मुग्ध शकुंतला ही ठहरी, पर देवाधिदेवने अुसका स्वीकार किया अिसलिअे यमुनाने अपना बड़प्पन छोड़कर गंगाको ही अपनी

सरदारी सौंप दी। ये दोनों बहनें अेक-दूसरेसे मिलनेके लिअे बड़ी आतुर दिखाअी देती हैं। हिमालयमें तो अेक जगह दोनों करीब करीब आ जाती हैं। किन्तु अीर्प्यालु दंडाल पर्वतके बीचमें विघ्नसंतोषीकी तरह आड़े आनेसे अुनका मिलन वहां नहीं हो पाता। अेक काव्य-हृदयी ऋषि वहां यमुनाके किनारे रहकर हमेशा गंगास्नानके लिअे जाया करता था। किन्तु भोजनके लिअे वापिस यमुनाके ही घर आ जाता था। जब वह बूढ़ा हुआ — ऋषि भी अंतमें बूढ़े होते हैं — तब अुसके थकेमांदे पांवों पर तरस खाकर गंगाने अपना प्रतिनिधिरूप अेक छोटासा झरना यमुनाके तीर पर ऋषिके आश्रममें भेज दिया। आज भी वह छोटासा सफेद प्रवाह अुस ऋषिका स्मरण कराता हुआ बह रहा है।

देहरादूनके पास भी हमें आशा होती है कि ये दोनों नदियां अेक-दूसरेसे मिलेंगी। किन्तु नहीं, अपने शैत्य-पावनत्वसे अंतर्वेदीके समूचे प्रदेशको पुनीत करनेका कर्तव्य पूरा करनेके पहले अुन्हें अेक-दूसरेसे मिलकर फुरसतकी बातें करनेकी सूझती ही कैसे? गंगा तो अुत्तरकाशी, टेहरी, श्रीनगर, हरिद्वार, कन्नौज, ब्रह्मावर्त, कानपुर आदि पुराण-प्रसिद्ध और अितिहास-प्रसिद्ध स्थानोंको अपना दूध पिलाती हुअी दौड़ती है; जब कि यमुना कुरुक्षेत्र और पानीपतके हत्यारे भूमि-भागको देखती हुअी भारतवर्षकी राजधानीके पास आ पहुंचती है। यमुनाके पानीमें साम्राज्यकी शक्ति होनी चाहिये। अुसके स्मरण-संग्रहालयमें पांडवोंसे लेकर मुगल-साम्राज्य तकका और गदरके जमानेसे लेकर स्वामी श्रद्धानंदजीकी हत्या तकका सारा अितिहास भरा पड़ा है। दिल्लीसे आगरे तक अैसा मालूम होता है, मानो बाबरके खानदानके लोग ही हमारे साथ बातें करना चाहते हों। दोनों नगरोंके किले साम्राज्यकी रक्षाके लिअे नहीं, बल्कि यमुनाकी शोभा निहारनेके लिअे ही मानो बनाये गये हैं। मुगल-साम्राज्यके नगारे तो कबके बंद हो गये; किन्तु मथुरा-वृन्दावनकी बांसुरी अब भी बज रही है।

मथुरा-वृंदावनकी शोभा कुछ अपूर्व ही है। यह प्रदेश जितना रमणीय है अुतना ही समृद्ध है। हरियानेकी गौअें अपने मीठे, सरस, सकस

दूधके लिअे हिन्दुस्तान भरमें मशहूर हैं। यशोदामैयाने या गोपराजा नंदने खुद यह स्थान पसंद किया था, अिस बातको तो मानो यहांकी भूमि भूल ही नहीं सकती। मथुरा-वृन्दावन तो है बालकृष्णकी क्रीड़ा-भूमि, वीरकृष्णकी विक्रमभूमि। द्वारकावासको यदि छोड़ दें तो श्रीकृष्णके जीवनके साथ अधिकसे अधिक सहयोग कालिंदीने ही किया है। जिस यमुनाने कालियामर्दन देखा अुसी यमुनाने कंसका शिरच्छेद भी देखा। जिस यमुनाने हस्तिनापुरके दरबारमें श्रीकृष्णकी सचिव-वाणी सुनी, अुसी यमुनाने रण-कुशल श्रीकृष्णकी योगमूर्ति कुरुक्षेत्र पर विचरती निहारी। जिस यमुनाने वृन्दावनकी प्रणय-बांसुरीके साथ अपना कलरव मिलाया, अुसी यमुनाने कुरुक्षेत्र पर रोमहर्षण गीतावाणीको प्रतिध्वनित किया। यमराजकी बहनका भाअीपन तो श्रीकृष्णको ही शोभा दे सकता है।

जिसने भारतवर्षके कुलका कअी बार संहार देखा है, अुस यमुनाके लिअे पारिजातके फूलके समान ताजबीबीका अवसान कितना मर्मभेदी हुआ होगा? फिर भी अुसने प्रेमसम्राट् शाहजहांके जमे हुअे आंसुओंको प्रतिबिंबित करना स्वीकार कर लिया है।

भारतीय कालसे मशहूर वैदिक नदी चर्मण्वतीसे करभार लेकर यमुना ज्यों ही आगे बढ़ती है, त्यों ही मध्ययुगीन अितिहासकी झांकी करानेवाली नन्ही-सी सिन्धु नदी अुससे आ मिलती है।

अब यमुना अधीर हो अुठी है। कअी दिन हुअे, बहन गंगाका दर्शन नहीं हुआ है। कहने जैसी बातें पेटमें समाती नहीं हैं। पूछनेके लिअे असंख्य सवाल भी अिकट्ठे हो गये हैं। कानपुर और कालपी बहुत दूर नहीं हैं। यहां गंगाकी खबर पाते ही खुशीसे वहांकी मिश्रीसे मुंह मीठा बनाकर यमुना अैसी दौड़ी कि प्रयागराजमें गंगाके गलेसे लिपट गअी। क्या दोनोंका अुन्माद! मिलने पर भी मानो अुनको यकीन नहीं होता कि वे मिली हैं। भारतवर्षके सबके सब साधु-संत अिस प्रेमसंगमको देखनेके लिअे अिकट्ठे हुअे हैं। पर अिन बहनोंको अिसकी सुधबुध नहीं है। आंगनमें अक्षयवट खड़ा है। अुसकी भी अिन्हें परवाह नहीं है। बूढ़ा अकबर छावनी डाले पड़ा है, अुसे कौन

पूछता है? और अशोकका शिलास्तंभ लाकर वहां खड़ा करें तो भी क्या ये बहनें अुसकी ओर नजर अुठाकर देखेंगी?

प्रेमका यह संगम-प्रवाह अखंड बहता रहता है, और अुसके साथ कवि-सम्राट् कालिदासकी सरस्वती भी अखंड बह रही है!

क्वचित् प्रभा-लेपिभिर्‌िन्द्रनीलैर् मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा।
अन्यत्र माला सित-पंकजानाम् अिन्दीवरैर् अुत्खचितान्तरेव॥
क्वचित् खगानां प्रिय-मानसानां कादंब-संसर्गवतीव पंक्तिः।
अन्यत्र कालागरु-दत्तपत्रा भक्तिर् भुवश्‌चन्दन-कल्पितेव॥
क्वचित् प्रभा चांद्रमसी तमोभिश्छायाविलीनैः शबलीकृतेव।
अन्यत्र शुभ्रा शरद्‌अभ्रलेखा-रन्ध्रेष्विवालक्ष्यनभःप्रदेशा॥
क्वचित् च कृष्णोरग-भूषणेव भस्मांग-रागा तनुर् अीश्वरस्य।
पश्यानवद्यांगि! विभाति गंगा भिन्नप्रवाहा यमुनातरंगैः॥

[हे निर्दोष अंगवाली सीते! देखो जिस गंगाके प्रवाहमें यमुनाकी तरंगें घंसकर प्रवाहको खंडित कर रही हैं। यह कैसा दृश्य है! कहीं मालूम होता है, मानो मोतियोंकी मालामें पिरोये हुअे अिन्द्रनील मणि मोतियोंकी प्रभाको कुछ धुंधला कर रहे। कहीं अैसा दीखता है, मानो सफेद कमलके हारमें नील कमल गूंथ दिये हों। कहीं मानो मानसरोवर जाते हुअे श्वेत हंसोंके साथ काले कादंब अुड़ रहे हों। कहीं मानो श्वेत चंदनसे लीपी हुअी जमीन पर कृष्णागरुकी पत्र-रचना की गयी हो। कहीं मानो चंद्रकी प्रभाके साथ छायामें सोये हुअे अंधकारकी क्रीड़ा चल रही हो। कहीं शरदऋतुके शुभ्र मेघोंके पीछेसे अिधर अुधर आसमान दीख रहा हो। और कहीं अैसा मालूम होता है, मानो महादेवजीके भस्मभूषित शरीर पर कृष्ण सर्पोंके आभूषण धारण करा दिये हों।]

कैसा सुंदर दृश्य! अूपर पुष्पक विमानमें मेघ-श्याम रामचंद्र और धवल-शीला जानकी चौदह सालके वियोगके पश्चात् अयोध्यामें पहुंचनेके लिअे अधीर हो अुठे हैं, और नीचे अिंदीवर-श्यामा कालिंदी और सुधा-जला जाह्नवी अेक-दूसरेका परिरंभ छोड़े बिना सागरमें नामरूपको छोड़कर विलीन होनेके लिअे दौड़ रही हैं।

अिस पावन दृश्यको देखकर स्वर्गसे सुमनोंकी पुष्पवृष्टि हुअी होगी और भूतल पर कवियोंकी प्रतिभा-सृष्टिके फुहारे अुड़े होंगे।

सितंबर, १९२९

७

मूल त्रिवेणी

ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों मिलकर जिस तरह दत्तात्रेयजी बनते हैं, अुसी तरह अलकनंदा, मंदाकिनी और भागीरथी मिलकर गंगामैया बनती हैं। ये तीनों गंगाकी बहनें नहीं हैं, बल्कि गंगाके अंग हैं। भागीरथी भले गंगोत्रीसे आती हो, तो भी मंदाकिनीका केदारनाथ और अलकनंदाका बदरीनारायण भी गंगाके ही अुद्गम हैं।

ब्रह्मकपालसे होकर जो अलकनंदा बहती है और वहां अेक बार श्राद्ध करनेसे जो अशेष पूर्वजोंको अेकसाथ हमेशाके लिअे मुक्ति दे देती है, अुस अलकनंदाका अुद्गम-स्थान क्या गंगोत्रीसे कम पवित्र है? ब्रह्मकपाल पर अेक बार श्राद्ध करनेके बाद फिर कभी श्राद्ध किया ही नहीं जा सकता। यदि मोहवश करें तो पितरोंकी अधोगति होती है। कितना जाग्रत स्थान है वह!

बदरीनारायणके गरम कुंडोंका पानी लेकर अलकनंदा आती है, जब कि मंदाकिनी गौरीकुंडके अुष्ण जलसे थोड़ी देर कवोष्ण होती है। केदारनाथका मंदिर बनावटकी दृष्टिसे अन्य सब मंदिरोंसे अलग प्रकारका है। अंदरका शिवलिंग भी स्वयंभू, बिना आकृतिका है। वह अितना अूंचा है कि मनुष्य अुस पर झुककर अुससे हृदयस्पर्श कर सकता है। मंदिरोंकी जितनी विशेपता है अुतनी ही मंदाकिनीकी भी विशेपता है। यहांके पत्थर अलग प्रकारके हैं, यहांका बहाव अलग प्रकारका है, और यहां नहानेका आनंद भी अलग प्रकारका है।

गंगोत्री तो गंगोत्री ही है। अिन तीनों प्रवाहोंमें भागीरथीका प्रवाह अधिक वन्य और मुग्ध मालूम होता है। यह नहीं है कि गंगामें सिर्फ यही तीन प्रवाह हैं। नीलगंगा है, ब्रह्मगंगा है, कअी

गंगायें हैं। हिमालयसे निकलनेवाले सभी प्रवाह गंगा ही तो हैं! जिन जिनका पानी हरिद्वारके पास हरिके चरणोंका स्पर्श करता है वे सब प्रवाह गंगा ही हैं। वाल्मीकिने भी जब गंगाको आकाशसे हिमालयके शिखररूपी महादेवजीकी जटाओं पर गिरते और वहांसे अनेक धाराओंमें निकलते देखा तब अुनकी आर्ष दृष्टिने सात अलग अलग प्रवाह गिनाये थे।

तस्यां विसृज्यमानायां सप्त स्रोतांसि जज्ञिरे।
ह्लादिनी, पावनी चैव, नलिनी च तथैव च॥
सुचक्षुश्चैव, सीता च, सिन्धुश्चैव, महानदी।
सप्तमी चान्वगात् तासां भगीरथ-रथं तदा॥

१९३४

८

जीवनतीर्थ हरिद्वार

त्रिपथगा गंगाके तीन अवतार हैं। गंगोत्री या गोमुखसे लेकर हरिद्वार तककी गंगा अुसका प्रथम अवतार है। हरिद्वारसे लेकर प्रयागराज तककी गंगा अुसका दूसरा अवतार है। प्रथम अवतारमें वह पहाड़के बंधनसे — शिवजीकी जटाओंसे — मुक्त होनेके लिअे प्रयत्न करती है। दूसरे अवतारमें वह अपनी बहन यमुनासे मिलनेके लिअे आतुर है। प्रयागराजसे गंगा यमुनासे मिलकर अपने बड़े प्रवाहके साथ सरित्पति सागरमें विलीन होनेकी चाह रखती है। यह है अुसका तीसरा अवतार। गंगोत्री, हरिद्वार, प्रयाग और गंगासागर, गंगापुत्र आर्योंके लिअे चार बड़ेसे बड़े तीर्थस्थान हैं। जितना अूपर चढ़ें अुतना तीर्थका माहात्म्य अधिक, अैसा माना जाता है। अेक प्रकारसे यह सही भी है। किन्तु मेरी दृष्टिसे तो भारत-जातिके लिअे अत्यंत आकर्षक स्थान हरिद्वार ही है। हरिद्वारमें भी पांच तीर्थ प्रसिद्ध हैं। पुराणकारोंने हरेकके माहात्म्यका वर्णन श्रद्धा और रससे किया है। किन्तु यह महत्त्व कुछ भी न जानते

हुअे भी मनुष्य कह सकता है कि 'हरिकी पैड़ी' में ही गंगाका माहात्म्य कहें तो माहात्म्य और काव्य कहें तो काव्य अधिक दिखाअी देता है।

यों तो हरेक नदीकी लंबाअीमें काव्यमय भूमिभाग होते ही हैं। मेरा कहनेका यह आशय नहीं है कि गंगाके किनारे हरिद्वारसे अधिक सुंदर स्थान हो ही नहीं सकते। हरिकी पैड़ीके आसपास बनारसकी शोभाका सौवां हिस्सा भी आपको नहीं मिलेगा। फिर भी यहां पर प्रकृति और मनुष्यने अेक-दूसरेके वैरी न होते हुअे गंगाकी शोभा बढ़ानेका काम सहयोगसे किया है। गंगाका वह सादा और स्वच्छ प्रवाह; मंदिरके पासका वह दौड़ता घाट; घाटके नीचेका वह छोटासा टेढ़ामेढ़ा दह; अिस तरफ हजारों लोग आसानीसे बैठ सकें अैसा नदीके पट जैसा घाट, अुस तरफ छोटे बेटके जैसा टुकड़ा और दोनों बाजुओंको सांधनेवाला पुराना पुल; सभी काव्यमय है। किनारे परके मंदिरों और धर्मशालाओंके सादे शिखर गंगाकी तरफ चिपका हुआ हमारा ध्यान अपनी तरफ नहीं खींचते। फिर भी वे गंगाकी शोभामें वृद्धि ही करते हैं। बनारसके बाजारमें बैठनेवाले आलसी बैल अलग हैं और शांतिसे जुगाली करनेवाले यहांके बैल अलग हैं। यहां गंगामें कहीं पर भी कीचड़का नामोनिशान आपको नहीं मिलेगा। अनंतकालसे अेक-दूसरेके साथ टकरा टकरा कर गोल बने हुअे सफेद पत्थर ही सर्वत्र देख लीजिये।

हरिकी पैड़ीमें सबसे आकर्षक वस्तुकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। हम अुसका सहज असर ही अनुभव करते हैं। वह है यहांकी हवा। हिमालयके दूर दूरके हिमाच्छादित शिखरों परसे जो पवन दक्षिणकी ओर बहते हैं, वे सबसे पहले यहांकी ही मनुष्यबस्तीको स्पर्श करते हैं। अितना पावन पवन अन्यत्र कहां मिले? हरिकी पैड़ीके पास पुल पर खड़े रहिये, आपके फेफड़ोंमें और दिलमें केवल आह्लाद ही भर जायगा। अुन्मादक नहीं बल्कि प्राणदायी; फिर भी प्रशम-कारी।

जितनी बार मैं यहां आया हूं, अुतनी बार वही शांति, वही आह्लाद, वही स्फूर्ति मैंने अनुभव की है। चंद लोग बम्बअीकी चौपाटीके

साथ जिस घाटका मुकाबला करते हैं। आत्यंतिक विरोधका सादृश्य जिन दोनोंके बीच जरूर है। यहां यात्री लोग मछलियोंको आहार देते हैं, जब कि वहां मछुअे आहारके लिअे मछलियोंको पकड़ने जाते हैं।

हरिकी पैड़ी देखनी हो तो शामको सूर्यास्तके बाद जाना चाहिये। चांदनी है या नहीं, यह सोचनेकी आवश्यकता नहीं है। चांदनी होगी तो अेक प्रकारकी शोभा मिलेगी, नहीं होगी तो दूसरे प्रकारकी मिलेगी। जिन दोनोंमें जो पसंदगी करने बैठेगा वह कला-प्रेमी नहीं है। संध्याकाशमें अेकके बाद अेक सितारे प्रकट होते हैं, और नीचेसे अेकके बाद अेक जलते दीये अुनका जवाब देते हैं। जिस दृश्यकी गूढ़ शांति मन पर कुछ अद्‌भुत असर करती है। अितनेमें मंदिरसे टींग टांग, टींग टांग करते घंटे आरतीके लिअे न्यौता देते हैं। जिस घंटनादका मानो अंत ही नहीं है। टींग टांग, टींग टांग चलता ही रहता है। और भक्तजन तरह तरहकी आरतियां गाते ही रहते हैं। पुरुष गाते हैं, स्त्रियां गाती हैं, ब्रह्मचारी गाते हैं और संन्यासी भी गाते हैं; स्थानिक लोग गाते हैं और प्रांत-प्रांतके यात्री भी गाते हैं। कोअी किसीकी परवाह नहीं करता। कोअी किसीसे नहीं अकुलाता। हरेक अपने अपने भक्तिभावमें तल्लीन। सनातनी स्तोत्र गाते हैं, आर्य-समाजी अुपदेश देते हैं। सिख लोग ग्रंथसाहबके अेकाध 'महोल्ले' में से आसा-दि-वार जोरसे गाते हैं। गोरक्षा-प्रचारक आपको यहां बतायेंगे कि संसारमें सफेद रंग अिसलिअे है कि गायका दूध सफेद है। गायके पेटमें तेंतीस कोटि देवता हैं; सिर्फ वहां पेटभर घास नहीं है। चंद नास्तिक जिस भीड़का फायदा अुठाकर प्रमाणके साथ यह सिद्ध कर देते हैं कि अीश्वर नहीं है। और अुदार हिन्दूधर्म यह सब सद्‌भावपूर्वक चलने देता है। गंगामैयाके वातावरणमें किसीका भी तिरस्कार नहीं है। सभीका सत्कार है। लाल गेरुवा पहनकर मुक्त होनेका दावा करनेवाले मुक्तिफौजके मिशनरी भी यहां आकर यदि हिन्दूधर्मके विरुद्ध प्रचार करें तो भी हमारे यात्री अुनकी बात शांतिसे सुनेंगे और कहेंगे कि भगवानने जैसी बुद्धि दी है वैसा बेचारे बोलते हैं; अुनका क्या अपराध है?

हिन्दू समाजमें अनेक दोष हैं और अिन दोषोंके कारण हिन्दू समाजने काफी सहा भी है। किन्तु अुदारता, सहिष्णुता और सद्भाव आदि हिन्दू समाजकी विशेषतायें हरगिज दोषरूप नहीं हैं। यह कहनेवाले कि अुदारताके कारण हिन्दू समाजने बहुत कुछ सहा है, हिन्दू धर्मकी जड़ ही काट डालते हैं।

अब भी वह घंटा बज रहा है और आलसी लोगोंको यह कहकर कि आरतीका समय अभी बीता नहीं है, जीवनका कल्याण करनेके लिअे मनाता है।

और वे बालायें खाखरेके पत्तोंके बड़े बड़े दोनोंमें फूलोंके बीच घीके दीये रखकर अुन्हें प्रवाहमें छोड़ देती हैं, मानो अपने भाग्यकी परीक्षा करती हों। और ये दोने तुरन्त नावकी तरह डोलते डोलते — अिस तरह डोलते हुअे मानो अपने भीतरकी ज्योतिका महत्त्व जानते हों, जीवन-यात्रा शुरू कर देते हैं।

चली! वह जीवन-यात्रा चली! अेकके बाद अेक, अेकके बाद अेक, ये दीये अपनेको और अपने भाग्यको जीवन-प्रवाहमें छोड़ देते हैं। जो बात मनुष्य-जीवनमें व्यक्तिकी होती है वही यहां दीयोंकी होती है। कोअी अभागे यात्राके आरंभमें ही पवनके वश हो जाते हैं और चारों ओर विषाद फैलाते हैं। कुछ काफी आशायें दिखाकर निराश करते हैं। कुछ आजन्म मरीजोंकी तरह डगमग करते करते दूर तक पहुंचते हैं। कभी कभी दो दोने पास पास आकर अेक-दूसरेसे चिपक जाते हैं और बादमें यह जोड़ा-नाव दंपतीकी तरह लंबी लंबी यात्रा करती है। अुनको गोल गोल चक्कर काटते देखकर मनमें जो भाव प्रकट होते हैं अुन्हें व्यक्त करना कठिन है। कअी तो जीवन-ज्योति बुझनेसे पहले ही दृष्टिसे ओझल हो जाते हैं। मृत्यु और अदृष्ट दोनों मनुष्य-जीवनके आखिरी अध्याय हैं। अिनके सामने किसीकी चलती नहीं, अिसीलिअे मनुष्यको अीश्वरका स्मरण होता है। मरण न होता तो शायद अीश्वरका स्मरण भी न होता।

हिंमत हो तो किसी दिन सुबह चार बजे अकेले अकेले अिस घाट पर आकर बैठिये। कुछ अलग ही किस्मके भक्त आपको यहां दिखाअी

देंगे। सुबह तीन बजेसे लेकर सूर्योदय तक विशिष्ट लोग ही यहां आयेंगे। वाजिनीवती अुषा सूर्यनारायणको जन्म देती है और तुरन्त व्यावहारिक दुनिया अिस घाट पर कब्जा कर लेती है। अुसके पहले ही यहांसे खिसक जाना अच्छा है। आकाशके सितारे भी खुश होंगे।

मार्च, १९२६

९

दक्षिणगंगा गोदावरी

१

बचपनमें सुबह अुठकर हम भूपाली* गाते थे। अुनमें से ये चार पंक्तियां अब भी स्मृतिपट पर अंकित हैं:

'अुठोनियां प्रात:काळीं। वदनीं वदा चंद्रमौळी।
श्रीबिंदुमाधवाजवळी। स्नान करा गंगेचें। स्नान करा गोदेचें।।

*   *   *

कृष्णा वेण्या तुंगभद्रा। शरयू कालिंदी नर्मदा।
भीमा भामा गोदा। करा स्नान गंगेचें।।

गंगा और गोदा अेक ही हैं। दोनोंके माहात्म्यमें जरा भी फर्क नहीं है। फर्क कोअी हो भी तो अितना ही कि कलिकालके पापके कारण गंगाका माहात्म्य किसी समय कम हो सकता है; किन्तु गोदावरीका माहात्म्य कभी कम हो ही नहीं सकता। श्री रामचंद्रके अत्यंत सुखके दिन अिस गोदावरीके तीर पर ही बीते थे, और जीवनका दारुण आघात भी अुन्हें यहीं सहना पड़ा था। गोदावरी तो दक्षिणकी गंगा है।

कृष्णा और गोदावरी अिन दो नदियोंने दो विक्रमशाली महाप्रजाओंका पोषण किया है। यदि हम कहें कि महाराष्ट्रका स्वराज्य

---

* प्रभातियां।

और आंध्रका साम्राज्य अिन्हीं दो नदियोंका ऋणी है, तो अिसमें जरा-सी भी अत्युचित नहीं होगी। साम्राज्य बने और टूटे, महाप्रजायें चढ़ीं और गिरीं; किन्तु अिस अैतिहासिक भूमिमें ये दो नदियां अखंड बहती ही जा रही हैं। ये नदियां भूतकालके गौरवशाली अितिहासकी जितनी साक्षी हैं अुतनी ही भविष्यकालकी महान आशाओंकी प्रेरक भी हैं। अिनमें भी गोदावरीका माहात्म्य कुछ अनोखा ही है। वह जितनी सलिल-समृद्ध है अुतनी ही अितिहास-समृद्ध भी है। गोपाल-कृष्णके जीवनमें जिस तरह सर्वत्र विविधता ही विविधता भरी हुअी है, अेकसा अुत्कर्ष ही अुत्कर्ष दिखाअी देता है, अुसी तरह गोदावरीके अति दीर्घ प्रवाहके किनारे सृष्टि-सौंदर्यकी विविधता और विपुलता भरी पड़ी है। ब्रह्मदेवकी अेक कल्पनामें से जिस तरह सृष्टिका विस्तार होता है, वाल्मीकिकी अेक कारुण्यमयी वेदनामें से जिस तरह रामायणी सृष्टिका विस्तार हुआ है, अुसी तरह त्र्यंबकके पहाड़के कगारसे टपकती हुअी गोदावरीमें से ही आगे जाकर राजमहेंद्रीकी विशाल वारिराशिका विस्तार हुआ है। सिंधु और ब्रह्मपुत्राको जिस तरह हिमालयका आलिंगन करनेकी सूझी, नर्मदा और ताप्तीको जिस तरह विंध्य-शतपूड़ाको पिघलानेकी सूझी, अुसी तरह गोदावरी और कृष्णाको दक्षिणके अुन्नत प्रदेशको तर करके अुसे धनधान्यसे समृद्ध करनेकी सूझी है। पक्षपातसे सह्याद्रि पर्वत पश्चिमकी ओर ढल पड़ा, यह मानो अिन्हें पसन्द नहीं आया। अैसा ही जान पड़ता है कि अुसे पूर्वकी ओर खींचनेका अखंड प्रयत्न ये दोनों नदियां कर रही हैं। अिन दोनों नदियोंका अुद्गम-स्थान पश्चिमी समुद्रसे ५०–७५ मीलसे अधिक दूर नहीं है; फिर भी दोनों ८००–९०० मीलकी यात्रा करके अपना जलभार या कर-भार पूर्व-समुद्रको ही अर्पण करती हैं। और अिस कर-भारका विस्तार कोअी मामूली नहीं है। अुसके अन्दर सारा महाराष्ट्र देश आ जाता है, हैदराबाद और मैसूरके राज्योंका अंत-र्भाव होता है, और आंध्र देश तो साराका सारा अुसीमें समा जाता है। मिश्र संस्कृतिकी माता नाअिल नदी हमारी गोदावरीके सामने कोअी चीज ही नहीं है।

त्र्यंबकके पास पहाड़की अेक बड़ी दीवारमें से गोदाका अुद्गम हुआ है। गिरनारकी अूंची दीवार परसे भी त्र्यंबककी अिस दीवारका पूरा खयाल नहीं आयेगा। त्र्यंबक गांवसे जो चढ़ाअी शुरू होती है वह गोदामैयाकी मूर्तिके चरणों तक चलती ही रहती है। अिससे भी अूपर जानेके लिअे बाअीं ओर पहाड़में विकट सीढ़ियां बनायी गयी हैं। अिस रास्ते मनुष्य ब्रह्मगिरि तक पहुंच सकता है। किन्तु वह दुनिया ही अलग है। गोदावरीके अुद्गम-स्थानसे जो दृश्य दीख पड़ता है वही हमारे वातावरणके लिअे विशेष अनुकूल है। महाराष्ट्रके तपस्वियों और राजाओंने समान भावसे अिस स्थान पर अपनी भक्ति अुंड़ेल दी है। कृष्णाके किनारे वाअी सातारा और गोदाके किनारे नासिक पैठण महाराष्ट्रकी सच्ची सांस्कृतिक राजधानियां हैं।

२

किन्तु गोदावरीका अितिहास तो सहन-वीर रामचंद्र और दुःख-मूर्ति सीतामाताके वृत्तांतसे ही शुरू होता है। राजपाट छोड़ते समय रामको दुःख नहीं हुआ; किन्तु गोदावरीके किनारे सीता और लक्ष्मणके साथ मनाये हुअे आनंदका अंत होते ही रामका हृदय अेकदम शतधा विदीर्ण हो गया। बाघ-भेड़ियोंके अभावमें निर्भय बने हुअे हिरण आर्य रामभद्रकी दुःखोन्मत्त आंखें देखकर दूर भाग गये होंगे। सीताकी खोजमें निकले देवर लक्ष्मणकी दहाड़ें सुनकर बड़े बड़े हाथी भी भय-कंपित हो गये होंगे। और पशुपक्षियोंके दुःखाश्रुओंसे गोदावरीके विमल जल भी कषाय हो गये होंगे। हिमालयमें जिस तरह पार्वती थीं, अुसी तरह जनस्थानमें सीता समस्त विश्वकी अधिष्ठात्री थीं। अुसके जाने पर जो कल्पांतिक दुःख हुआ वह यदि सार्वभौम हुआ हो, तो अुसमें आश्चर्य ही क्या है?

राम-सीताका संयोग तो फिर हुआ। किन्तु अुनका जनस्थानका वियोग तो हमेशाके लिअे बना रहा। आज भी आप नासिक-पंचवटीमें घूमकर देखें, चाहे चौमासेमें जाये या गरमीमें, आपको यही मालूम होगा मानो सारी पंचवटी जटायुकी तरह अुदास होकर 'सीता, सीता'

पुकार रही है। महाराष्ट्रके साधु-संतोंने यदि अपनी मंगल-वाणी यहां फैलाअी न होती, तो जनस्थान मानो भयानक अुजाड़ प्रदेश हो गया होता। गरमीकी धूपको टालनेके लिअे जिस तरह तृणसृष्टि चारों ओर फैल जाती है, अुसी तरह जीवनकी विषमताको भुला देनेके लिअे साधु-संत सर्वत्र विचरते हैं, यह कितने बड़े सौभाग्यकी बात है! जब जब नासिक-त्र्यंबककी ओर जाना होता है, तब तब वनवासके लिअे अिस स्थानको पसन्द करनेवाले राम-लक्ष्मणकी आंखोंसे सारा प्रदेश निहारनेका मन होता है। किन्तु हर बार कंपित तृणोंमें से सीतामाताकी कातर तनु-यष्टि ही आंखोंके सामने आती है।

रामभक्त श्रीसमर्थ रामदास जब यहां रहते थे तब अुनके हृदयमें कौनसी अूर्मियां अुठती होंगी! श्रीसमर्थने गोदावरीके तीर पर गोबरके हनुमानकी स्थापना किस हेतुसे की होगी? क्या यह बतानेके लिअे कि पंचवटीमें यदि हनुमान होते तो वे सीताका हरण कभी न होने देते? सीतामाताने कठोर वचनोंसे लक्ष्मण पर प्रहार करके अेक महासंकट मोल ले लिया। हनुमानको तो वे अैसी कोअी बात कह नहीं पातीं! किन्तु जनस्थान और किष्किंधाके बीच बहुत बड़ा अंतर है, और गोदावरी कोअी तुंगभद्रा नहीं है।

* * *

रामकथाका करुण रस द्वापर युगसे आज तक बहता ही आया है। अुसे कौन घटा सकता है? अिसलिअे हम अंत्यज जातिके माने गये पाड़ेके मुंहसे वेदोंका पाठ करवानेवाले श्री ज्ञानेश्वर महाराजसे मिलने पैठण चलें। गोदावरी जिस तरह दक्षिणकी गंगा है, अुसी तरह अुसके किनारे पर बसी हुअी प्रतिष्ठान नगरी दक्षिणकी काशी मानी जाती थी। यहांके दशग्रंथी ब्राह्मण जो 'व्यवस्था' देते थे, अुसे चारों वर्णोंको मान्य करना पड़ता था। बड़े बड़े सम्राटोंके ताम्रपत्रोंसे भी यहांके ब्राह्मणोंके व्यवस्थापत्र अधिक महत्त्वके माने जाते थे। अैसे स्थान पर शास्त्रधर्मके सामने हृदयधर्मकी विजय दिखानेका काम सिर्फ ज्ञानराज ही कर सकते थे। पैठणमें ज्ञानेश्वरको यज्ञोपवीतका

अधिकार नहीं मिला। संन्यासी शंकराचार्यके अूपर किये गये अत्याचारोंकी स्मृतिको कायम रखनेके लिअे जिस तरह वहांके राजाने नांबुद्री ब्राह्मणों पर कअी रिवाज लाद दिये थे, अुसी तरह संन्यासी-पुत्र ज्ञानेश्वरका यदि कोअी शिष्य राजपाटका अधिकारी होता तो वह महाराष्ट्रीय ब्राह्मणोंको सजा देता और कहता कि ज्ञानेश्वरको यज्ञोपवीतका अिनकार करनेवाले तुम लोग आगेसे यज्ञोपवीत पहन ही नहीं सकते।

हाथकी अुंगलियोंका जिस तरह पंखा बनता है, अुसी तरह बड़ी बड़ी नदियोंमें आकर मिलनेवाली और आत्म-विलोपनका कठिन योग साधनेवाली छोटी नदियोंका भी पंखा बनता है। सह्याद्रि और अजिंठाके पहाड़ोंसे जो कोना बनता है अुसमें जितना पानी गिरता है अुस सबको खींच खींच कर अपने साथ ले जानेका काम ये नदियां करती हैं। धारणा और कादवा, प्रवरा और मुळाको यदि छोड़ दें तो भी मध्यभारतसे दूर दूरका पानी लानेवाली वर्धा और वैनगंगाको भला कैसे भूल सकते हैं? दो मिलकर अेक बनी हुअी नदीका जिसने प्राणहिता नाम रखा, अुसके मनमें कितनी कृतज्ञता, कितना काव्य, कितना आनंद भरा होगा! और ठेठ अीशान कोणसे पूर्व-घाटका नीर ले आनेवाली अप्टवक्रा अिंद्रावती और अुसकी सखी श्रमणी तपस्विनी शबरीको प्रणाम किये बिना कैसे चल सकता है?

गोदावरीकी संपूर्ण कला तो भद्राचलम्‌से ही देखी जा सकती है। जिसका पट अेकसे दो मील तक चौड़ा है अैसी गोदावरी जब अूंचे अूंचे पहाड़ोंके बीचमें से होकर अपना रास्ता बनाती हुअी सिर्फ दो सौ गजकी खाअीमें से निकलती है तब वह क्या सोचती होगी? अपनी सारी शक्ति और युक्ति काममें ले कर नाजुक समयमें अपनी महाप्रजाको आगे ले चलनेवाले किसी राष्ट्रपुरुषकी तरह और संसारको विस्मयमें डालनेवाली गर्जनाके साथ वह यहांसे निकलती है। नदीमें आनेवाले घोड़ा-पूर और हाथी-पूर जैसे भारी पूरोंकी बातें हम सुनते हैं; किन्तु अेकदम पचास फुट जितना अूंचा पूर क्या कभी कल्पनामें भी आ सकता है? पर जो कल्पनामें संभव नहीं है, वह गोदावरीके प्रवाहमें

संभव है। संकड़ी खाओीमें से निकलते हुअे पानीके लिअे अपना पृष्ठभाग भी सपाट बनाये रखना असंभव-सा हो जाता है। अर्घ्य देते समय जिस प्रकार अंजलिकी छोटी नाली-सी बन जाती है, अुसी प्रकार खाओीमें से निकलनेवाले पानीके पृष्ठभागकी भी अेक भयानक नाली बनती है। किन्तु अद्‌भुत रस तो अिससे भी आगे अधिक है। अिस नालीमें से अपनी नावको ले जानेवाले साहसी नाविक भी वहां मौजूद हैं! नावके दोनों ओर पानीकी अूंची अूंची दीवारोंको नावके ही वेगसे दौड़ते हुअे देखकर मनुष्यके दिलमें क्या क्या विचार अुठते होंगे?

भद्राचलम्‌से राजमहेन्द्री या धवलेश्वर तक अखंड गोदावरी बहती है। अुसके बाद 'त्यागाय संभृतार्थानाम्' का सनातन सिद्धांत अुसे याद आया होगा। यहांसे गोदावरीने जीवन-वितरण करना शुरू कर दिया है। अेक ओर गौतमी गोदावरी, दूसरी ओर वसिष्ठ गोदा-वरी; बीचमें कओी द्वीप और अंतर्वेदी जैसे प्रदेश हैं; और अिन प्रदेशोंमें गोदाके सरस जलसे और काली चिकनी मिट्टीसे पैदा होनेवाले सोनेके जैसे शालिधान्य पर परिपुष्ट होकर वेदघोष करनेवाले ब्राह्मण रहते आये हैं। अैसे समृद्ध देशको स्वतंत्र रखनेकी शक्ति जब हमारे लोग खो बैठे, तब डच, अंग्रेज और फ्रेंच लोग भी गोदावरीके किनारे पड़ाव डालनेको अिकट्ठे हुअे। आज * भी यानानमें फ्रांसका तिरंगा झंडा फहरा रहा है।

३

मद्राससे राजमहेन्द्री जाते समय बेजवाड़ेमें सूर्योदय हुआ। वर्षा-ऋतुके दिन थे। फिर पूछना ही क्या था? सर्वत्र विविध छटाओं-वाला हरा रंग फैला हुआ था। और हरे रंगका अिस तरह जमीन पर पड़ा रहना मानो असह्य लगनेसे अुसके बड़े बड़े गुच्छ हाथमें लेकर अूपर अुछालनेवाले ताड़के पेड़ जहां तहां दीख पड़ते थे। पूर्वकी ओर अेक नहर रेलकी सड़कके किनारे किनारे बह रही थी। पर किनारा अूंचा होनेके कारण अुसका पानी कभी कभी ही दीख पड़ता था। सिर्फ तितलियोंकी

* सौभाग्यसे आज यह परिस्थिति नहीं है।

तरह अपने पाल फैलाकर कतारमें खड़ी हुअी नौकाओं परसे ही अुस नहरका अस्तित्व ध्यानमें आता था। बीच बीचमें पानीके छोटे बड़े तालाब मिलते थे। अिन तालाबोंमें विविधरंगी बादलोंवाला अनंत आकाश नहानेके लिअे अुतरा था, अिसलिअे पानीकी गहराअी अनंत गुनी गहरी मालूम होती थी। कहीं कहीं चंचल कमलोंके बीच निस्तब्ध बगुलोंको देखकर प्रभातकी वायुका अभिनंदन करनेका दिल हो जाता था। अैसे काव्यप्रवाहमें से होकर हम कोव्वूर स्टेशन तक आ पहुंचे। अब गोदावरी मैयाके दर्शन होंगे अैसी अुत्सुकता यहींसे पैदा हुअी। पुल परसे गुजरते समय दायीं ओर देखें या बायीं ओर, अिसी अुधेड़बुनमें हम पड़े थे। अितनेमें पुल आ ही गया और भगवती गोदावरीका सुविशाल विस्तार दिखाअी पड़ा।

गंगा, सिंधु, शोणभद्र, अैरावती जैसे विशाल वारि-प्रवाह मैंने जी भरकर देखे हैं। बेजवाड़ेमें किये हुअे कृष्णामाताके दर्शनके लिअे मैंने हमेशा गर्व अनुभव किया है। किन्तु राजमहेन्द्रीके पासकी गोदावरीकी शोभा कुछ अनोखी ही थी। अिस स्थान पर मैंने जितना भव्य काव्यका अनुभव किया है, अुतना शायद ही और कहीं बहता देखा होगा। पश्चिमकी ओर नजर डाली तो दूर दूर तक पहाड़ियोंका अेक सुन्दर झुंड बैठा हुआ नजर आया। आकाशमें बादल घिरे होनेसे कहीं भी धूप न थी। सांवले बादलोंके कारण गोदावरीके धूलि-धूसर जलकी कालिमा और भी बढ़ गअी थी। फिर भवभूतिका स्मरण भला क्यों न हो? अूपरकी और नीचेकी अिस कालिमाके कारण सारे दृश्य पर वैदिक प्रभातकी सौम्य सुन्दरता छाअी हुअी थी। और पहाड़ियों पर अुतरे हुअे कअी सफेद बादल तो बिलकुल ऋषियोंके जैसे ही मालूम होते थे। अिस सारे दृश्यका वर्णन शब्दोंमें कैसे किया जा सकता है?

अितना सारा पानी कहांसे आता होगा? विपत्तियोंमें से विजयके साथ पार हुआ देश जैसे वैभवकी नयी नयी छटायें दिखाता जाता है और चारों ओर समृद्धि फैलाता जाता है, वैसे ही गोदावरीका प्रवाह पहाड़ोंसे निकलकर अपने गौरवके साथ आता हुआ दिखाअी देता था। छोटे बड़े जहाज नदीके बच्चों जैसे थे। माताके स्वभावसे परिचित होनेके कारण अुसकी गोदमें चाहे जैसे नाचें तो अुन्हें कौन

रोकनेवाला था? किन्तु बच्चोंकी अुपमा तो अिन नावोंकी अपेक्षा प्रवाहमें जहां तहां पैदा होनेवाले भंवरोंको देनी चाहिये। वे कुछ देर दिखाअी देते, बड़े तूफानका स्वांग रचते, और अेकाध क्षणमें हंस देते। और टूट पड़ते। चाहे जहांसे आते और चाहे जहां चले जाते या लुप्त हो जाते।

अितने बड़े विशाल पटमें यदि द्वीप न हों तो अुतनी कमी ही मानी जायगी। गोदावरीके द्वीप मशहूर हैं। कुछ तो पुराने धर्मकी तरह स्थिर रूप लेकर बैठे हैं। किन्तु कअी-अेक तो कविकी प्रतिभाके समान हर समय नया नया स्थान लेते हैं और नया नया रूप धारण करते हैं। अिन पर अनासक्त बगुलोंके सिवा और कौन खड़ा रहने जाय? और जब बगुले चलने लगते हैं तब वे अपने पैरोंके गहरे निशान छोड़े बगैर थोड़े ही रहते हैं। अपने धवल चरित्रका अनुसरण करनेवालोंको दिशा-सूचन न करा दें तो वे बगुले ही कैसे!

नदीका किनारा यानी मानवी कृतज्ञताका अखंड अुत्सव। सफेद सफेद प्रासाद और अूंचे अूंचे शिखर तो अेक अखंड अुपासना हैं ही। किन्तु अितनेसे ही काव्य संपूर्ण नहीं होता। अतः भक्त लोग हर रोज नदीकी लहरों परसे मंदिरके घंटनादकी लहरोंको अिस पारसे अुस पार तक भेजते रहते हैं।

संस्कृतिके अुपासक भारतवासी अिसी स्थान पर गंगाजलके कलश आधे गोदामें अुंड़ेलते हैं और फिर गोदाके पानीसे अुन्हें भरकर ले जाते हैं। कितनी भव्य विधि है! कितना पवित्र भावप्रधान काव्य है! यह भक्तिरव प्रत्येक हृदयमें भरा हुआ है। वह घंटनाद और वह भक्तिरव पूर्वस्मृतिने ही सुनाया। दरअसल तो केवल अेंजिनकी आवाज ही सुनाअी देती थी। आधुनिक संस्कृतिके अिस प्रतिनिधिके प्रति अपनी घृणाको यदि हम छोड़ दें तो रेलके पहियोंका ताल कुछ कम आकर्षक नहीं मालूम होता। और पुल पर तो अुसका विजयनाद संक्रामक ही सिद्ध होता है।

पुल पर गाड़ी काफी देर चलनेके बाद मुझे खयाल आया कि पूर्व दिशाकी ओर तो देखना रह ही गया। हम अुस ओर मुड़े। वहां

बिलकुल नयी ही शोभा नजर आयी। पश्चिमकी ओर गोदावरी जितनी चौड़ी थी, अुससे भी विशेष चौड़ी पूर्वकी ओर थी। अुसे अनेक मार्गों द्वारा सागरसे मिलना था। सरित्पतिसे जब सरिता मिलने जाती है तब अुसे संभ्रम तो होता ही है। किन्तु गोदावरी तो धीरोदात्त माता है। अुसका संभ्रम भी अुदात्त रूपमें ही व्यक्त हो सकता है। अिस ओरके द्वीप अलग ही किस्मके थे। अुनमें वनश्रीकी शोभा पूरी-पूरी खिली हुअी थी। ब्राह्मणोंके या किसानोंके झोंपड़े अिस ओरसे दिखाअी नहीं पड़ते थे। बहते पानीके हमलेके सामने टक्कर लेनेवाले अिन द्वीपोंमें किसीने अूंचे प्रासाद बनाये होते तो शायद वे दूरसे ही दीख पड़ते। प्रकृतिने तो केवल अूंचे अूंचे पेड़ोंकी विजय-पताकायें खड़ी कर रखी थीं। और बायीं ओर राजमहेंद्री और धवलेश्वरकी सुखी बस्ती आनंद मना रही थी। अैसे विरल दृश्यसे तृप्त होनेके पहले ही नदीके दायें किनारे पर अुन्मत्तताके साथ बहता हुआ कांसकी सफेद कलगियोंका स्थावर प्रवाह दूर दूर तक चलता हुआ नजर आया। नदीके पानीमें अुन्माद था, किन्तु अुसकी लहरें नहीं बनी थीं। कलगियोंके अिस प्रवाहने पवनके साथ षड्यंत्र रचा था, अिसलिअे वह मनमानी लहरें अुछाल सकता था। जहां तक नजर जा सकती थी वहां तक देखा। और नजरकी पहुंच यहां कम क्यों हो? किन्तु कलगियोंका प्रवाह तो बहता ही जा रहा था। गोदावरीके विशाल प्रवाहके साथ भी होड़ करते अुसे संकोच नहीं होता था। और वह संकोच क्यों करता? माता गोदावरीके विशाल पुलिन पर अुसने माताका स्तन्यपान क्या कम किया था?

माता गोदावरी! राम-लक्ष्मण-सीतासे लेकर वृद्ध जटायु तक सबको तूने स्तन्यपान कराया है। तेरे किनारे शूरवीर भी पैदा हुअे हैं, और तत्त्वचिंतक भी पैदा हुअे हैं। संत भी पैदा हुअे हैं और राजनीतिज्ञ भी। देशभक्त भी पैदा हुअे हैं और अीश-भक्त भी। चारों वर्णोंकी तू माता है। मेरे पूर्वजोंकी तू अधिष्ठात्री देवता है। नयी नयी आशायें लेकर मैं तेरे दर्शनके लिअे आया हूं। दर्शनसे तो कृतार्थ हो गया हूं। किन्तु मेरी आशायें तृप्त नहीं हुअी हैं। जिस प्रकार तेरे किनारे रामचंद्रने दुष्ट

रावणके नाशका संकल्प किया था, वैसा ही संकल्प मैं कबसे अपने मनमें लिये हुअे हूं। तेरी कृपा होगी तो हृदयमें से तथा देशमें से रावणका राज्य मिट जायेगा, रामराज्यकी स्थापना होते मैं देखूंगा और फिर तेरे दर्शनके लिअे आअूंगा। और कुछ नहीं तो कांसकी कलगीके स्थावर प्रवाहकी तरह मुझे अुन्मत्त बना दे, जिससे बिना संकोचके अेक-ध्यान होकर मैं माताकी सेवामें रत रह सकूं और बाकी सब कुछ भूल जाअूं। तेरे नीरमें अमोघ शक्ति है। तेरे नीरके अेक बिंदुका सेवन भी व्यर्थ नहीं जायेगा'।

अक्तूबर, १९३१

१०

वेदोंकी धात्री तुंगभद्रा

जलमग्न पृथ्वीको अपने शूलदंतसे बाहर निकालनेवाले वराह भगवानने जिस पर्वत पर अपनी थकान दूर करनेके लिअे आराम किया, अुस पर्वतका नाम वराह-पर्वत ही हो सकता है। भगवान आराम करते थे तब अुनके दोनों दंतोंसे पानी टपकने लगा और अुसकी धारायें पैदा हुअीं। बायें दंतकी धारा हुअी तुंगा नदी और दाहिने दंतसे निकली भद्रा नदी। आज अिस अुद्गम-स्थानको कहते हैं गंगामूल और वराह-पर्वतको कहते हैं बाबाबुदान। बाबाबुदान शायद वराह-पर्वत नहीं है, लेकिन अुसका पड़ोसी है। तुंगाके किनारे शंकराचार्यका शृंगेरी मठ है। मैंने तुंगाके दर्शन किये थे तीर्थहळ्ळीमें। (कन्नड़ भाषामें हळ्ळीके मानी हैं ग्राम।) तीर्थहळ्ळीमें मैं शायद अेक घंटे जितना ही ठहरा था। लेकिन वहांकी नदीके पात्रकी शोभा देखकर खुश हुआ था। तीर्थहळ्ळीका माहात्म्य तो मैं नहीं जानता, लेकिन कन्नड़ भाषाकी अेक छोटीसी लघुकथामें मैंने तीर्थहळ्ळीका वर्णन पढ़ा था। वही मेरे लिअे तीर्थहळ्ळीका स्मरण कायम करनेके लिअे काफी है। तुंगाके किनारे शिमोगा शहरके पास किसी

समय महात्मा गांधीके साथ मैं घूमने गया था। अिस कारण भी यह नदी स्मृतिपट पर अंकित है।

भद्राके किनारे बँकिपुर आता है। यहांकी भाषामें अग्निको बैंकि कहते हैं। क्या भद्राका पानी बैंकिपुरकी आग बुझानेके लिअे काफी नहीं था?

तुंगा और भद्राका संगम होता है कूडलीके पास। शायद अिसी संगमके महादेवके भक्त थे श्री बसवेश्वर, जो अेक राजाके प्रधानमंत्री होने पर भी लिंगायत पंथकी स्थापना कर सके। बसवेश्वरके काव्यमय गद्यवचनोंके अंतमें 'कूडल-संगम देवराया' का जिक्र बार बार आता है। अुसे पढ़कर 'मीराके प्रभु गिरधर नागर' का स्मरण हुअे बिना नहीं रहता। कूडलीके पास जो तुंगभद्रा बनती है वह आगे जाकर कुर्नूलके पास मेरी माता कृष्णासे मिलती है। अिस बीच कुमुद्वती, वरदा, हरिद्रा और वेदावति जैसी नदियां तुंगभद्रासे मिलती हैं। (वेदावति भी तुंगभद्राके जैसी जुड़ नदी है। वेद और अवति मिलकर वह बनती है)। अिस प्रदेशमें तुल्यबल जुड़ संस्कृतिका ही बोलबाला होगा। क्योंकि तुंगभद्राके किनारे ही हरिहर जैसी पुण्यनगरीकी स्थापना हुअी है। शैव और वैष्णवोंका झगड़ा मिटानेके लिअे किसी हृदय-भक्तने हरि और हर दोनोंको मिला कर अेक मूर्ति बना दी। अुसके मंदिरके आसपास जो शहर बसा अुसका नाम हरिहर ही पड़ा।

तुंगभद्राका पात्र पथरीला है। जहां देखें गोल-मटोल बड़े बड़े पत्थर नदीके पात्रमें स्नान करते पाये जाते हैं। अैसे पत्थर कभी कभी अिस प्रदेशमें टेकरियोंके शिखर पर भी अेकके अूपर अेक विराजमान पाये जाते हैं। अिन्हीं पत्थरोंके बीच अेक प्रचंड विस्तार पर विजयनगर साम्राज्यकी राजधानी थी।

विजयनगरके खंडहर देखनेके लिअे जब मैं होस्पेटसे विरुपाक्ष गया था तब अिन भीमकाय चट्टोंका या चट्टानोंका दर्शन किया था। विजयनगरके अप्रतिम कारीगरीके भग्न मंदिरोंका दर्शन करते करते मेरा हृदय सम्राट् कृष्णरायका श्राद्ध कर रहा था। रातको विरुपाक्षके मंदिरमें हम सो गये तब तीन सौ साल जिसकी कीर्ति कायम रही अुस साम्राज्यके

वैभवके ही स्वप्न मैंने देखे। दूसरे दिन ब्राह्म मुहूर्तमें अुठकर हम नजदीकके मातंग पर्वतके शिखर पर जा पहुंचे। वहां हमें अरुणोदयका और बादमें अुतने ही काव्यमय सूर्योदयका दृश्य देखना था। मातंग पर्वतकी चोटी परसे तुंगभद्राका दर्शन करके हम धीरे धीरे लेकिन कूदते कूदते नीचे अुतरे।

जब रावण सीतामाताको अुठाकर गगनमार्गसे जा रहा था तब सीताके वल्कलका अंचल यहांकी चट्टानोंको घिस गया था। अुसकी रेखाअें आज भी यहांके पत्थरों पर पाअी जाती हैं।

अभी अभी चार साल पहले मैंने कुर्नूलके पास तुंगभद्राको अपना समस्त जीवन कृष्णाको अर्पण करते देखा; और अुसके पाससे स्वार्पणकी दीक्षा ली।

सुनता हूं कि अब अिस तुंगभद्रा पर बांध बांधकर अुसके अिकट्ठा किये हुअे पानीसे सारे मुल्कको समृद्धि पहुंचायी जायेगी और अुसी पानीसे बिजली पैदा करके अुसकी शक्तिसे अुद्योगोंका विकास किया जायेगा। माताकी सेवाकी भी कभी कोअी मर्यादा हो सकती है?

नदीके प्रवाहमें ये हाथीके जैसे बड़े बड़े पत्थर बादमें आकर पड़े हैं या हाथीके जैसे पत्थरोंमें से ही नदीने अपना रास्ता खोज निकाला है, अिसकी खोज कौन कर सकता है? दक्षिणमें वैदिक संस्कृतिके विजयका सूचन करनेवाला विजयनगरका साम्राज्य अिसी नदीके किनारे निर्माण हुआ। और अिसी नदीके किनारे वह कच्चे घड़ेके समान टूट गया। विजयनगरके साम्राज्यकी कीर्ति-पताका त्रिखंडमें फहराती थी। चीनका सम्राट्, बगदादका बादशाह और विजयनगरका महाराजाधिराज, तीनोंका वैभव सबसे बड़ा माना जाता था। अुस समय क्या तुंगभद्रा आजके जैसी ही दिखाअी देती होगी? नहीं तो कैसी दिखाअी देती होगी? नदी क्या मनुष्यकी कृति है, जिससे अुसके वैभवमें अुत्कर्ष और अपकर्ष हो?

मुळा और मुठा मिलकर जैसे मुळामुठा नदी बनी है, वैसे ही तुंगा और भद्राके संगमसे तुंगभद्रा बनी है। 'द्वंद्वः सामासिकस्य च' के न्यायसे अिन दोनों नदियोंमें अुच्चनीच भाव तनिक भी नहीं है। दोनों

नाम समान भावसे साथ साथ वहते हैं। अिस नदीके पानीकी मिठास और अुपजाअूपनकी तारीफ प्राचीन कालसे होती आयी है। सभी नदी-भक्तोंने स्वीकार किया है कि गंगाका स्नान और तुंगाका पान मनुष्यको मोक्षके रास्ते ले जाता है। मोटरकी यात्रा यदि न होती तो तुंगभद्राको मैं अनेक स्थानों पर अनेक तरहसे देख लेता। तुंगभद्रा अेक महान संस्कृतिकी प्रतिनिधि है। आज भी वेदपाठी लोगोंमें तुंगभद्राके किनारे वसे हुअे ब्राह्मणोंके अुच्चारण आदर्श और प्रमाणभूत माने जाते हैं। वेदोंका मूल अध्ययन भले सिंधु और गंगाके किनारे हुआ हो, परन्तु अुनका यथार्थ सादर रक्षण तो सायणाचार्यके समयसे तुंगभद्राके ही किनारे हुआ है।

१९२६–'२७

११

नेल्लूरकी पिनाकिनी

नेल्लूर यानी धानका गांव। दक्षिण भारतके अितिहासमें नेल्लूरने अपना नाम चिरस्थायी कर दिया है। वेजवाड़ेसे मद्रास जाते हुअे रास्तेमें नेल्लूर आता है।

भारत सेवक समाजके स्व० हणमंतरावने नेल्लूरसे कुछ आगे पल्लीपाडु नामक गांवमें अेक आश्रमकी स्थापना की है। अुसे देखनेके लिअे जाते समय सुभग-सलिला पिनाकिनीके दर्शन हुअे। श्रीमती कनकम्माके पवित्र हाथोंसे काते हुअे सूतकी धोतीकी भेंट स्वीकार करके हम आश्रम देखनेके लिअे चले। कुछ दूर तक तो वगीचे ही वगीचे नजर आये। जहां तहां नहरोंमें पानी दौड़ता था, और हरियाली ही हरियाली हंसती दिखाअी देती थी।

वादमें आयी रेत। आगे, पीछे, दायें, वायें रेत ही रेत। पवन अपनी अिच्छाके अनुसार जहां तहां रेतके टीले वनाता था, और दिल वदलने पर अुतनी ही सहजतासे अुन्हें विखेर देता था। अैसी रेतमें

शांतिसे गुजर करनेवाले तुंगकाय ताड़वृक्ष आनंदके साथ डोल रहे थे। धूपसे अकुलाकर वे खुद अपने ही अूपर चमर डुलाते थे या हमारे जैसे पथिकों पर तरस खाकर पंखा करते थे, यह भला ताड़ोंने कभी स्पष्ट किया है? दोपहरकी धूप कर्मकांडी ब्राह्मणोंके समान कठोरतासे तप रही थी। पांव जलते थे। सिर तपता था। और शरीरके बीचके हिस्सेको सम-वेदना देनेके लिअे प्यास अपना काम करती थी।

अिस प्रकार त्रिविध तापसे तप्त होकर हम आश्रममें पहुंचे। वहां मैं अेक बड़े टेकरे पर जा चढ़ा। और अेकाअेक पिनाकिनीका तरल प्रवाह आंखोंमें बस गया। कितना शीतल अुसका दर्शन था! गेहूंके रवेके जैसी सफेद रेत पर स्फटिक जैसा पानी बहता हो, और अूपरसे चंड भास्करके प्रतापी किरण बरसते हों, अैसी शोभाका वर्णन कैसे हो सकता है? मानों चांदीके रसकी कोठी भट्टीका ताप सहन न कर सकनेके कारण टूट गयी है, और अंदरका रस जिस ओर मार्ग मिले अुस ओर दौड़ रहा है! पवनने दिशा बदली और पिनाकिनी परसे बहकर आनेवाला ठंडा पवन सारे शरीरको आनंद देने लगा। पासकी अमराअीके अेक पेड़ पर चढ़कर दो डालियोंके बीच आरामकुर्सी जैसा स्थान ढूंढ़कर मैं बैठ गया। दूर ताड़वृक्ष डोल रहे थे। वयोवृद्ध आम्रवृक्ष छांव फैला रहे थे। और पिनाकिनी शीतल वायु फूंक रही थी। क्या नंदनवनमें भी अिससे अधिक सुख मिलता होगा?

नदी-किनारेके अिस काव्यका पान करके आंखें तृप्त हुअीं और मुंदने लगीं। स्वर्गीय अस्थिर आम्रासनसे भ्रष्ट होनेका डर यदि न होता तो जाग्रतिके अिस काव्यसे तुलना हो सके अैसा स्वप्नकाव्य मैं वहां जरूर अनुभव कर लेता।

पिनाकिनीका पट बहुत बड़ा है। सुना है कि वर्षाऋतुमें वह रुद्रावतार धारण करती है। अुसकी अिस लीलाके वर्णनोंकी शैली परसे मालूम हुआ कि पिनाकिनीके प्रति यहांके लोगोंकी कुछ अनोखी ही भक्ति है। असलमें पिनाकिनी दो हैं। जिसे मैं देख रहा था वह है अुत्तर पिनाकिनी अथवा पेन्नेर। यह ठेठ नंदीदुर्गसे आती है। वहांसे

आते आते वह जयमंगली, चित्रावती और पापघ्नीका पानी ले आती है। मानवन अिन नदियोंके स्तन्यसे बहुत लाभ अुठाया है। और अब तो तुंगभद्राका भी कुछ पानी पेन्नारको मिलेगा। और वह सब धान अुगानेके काममें आयेगा।

१९२६–'२७

१२

जोगका प्रपात

ठेठ बचपनसे ही, मैं पश्चिम समुद्रके किनारे कारवारमें था तबसे, गिरसप्पाके बारेमें मैंने सुना था। अुस समय सुना था कि कावेरी नदी पहाड़ परसे नीचे गिरती है और अुसकी अितनी बड़ी आवाज होती है कि दो मीलकी दूरी पर अेकके अूपर अेक रखी हुअी गागरें हवाके धक्केसे ही गिर जाती हैं! तब फिर अुस प्रपातकी आवाज तो कहां तक पहुंचती होगी? बादमें जब भूगोल पढ़ने लगा तब मनमें संदेह पैदा हुआ कि कावेरीका अुद्गम तो ठेठ कुर्गमें है और वह पूर्व-समुद्रसे जा मिलती है। वह पश्चिम घाटके पहाड़ परसे नीचे गिर ही नहीं सकती। तब गिरसप्पामें जो गिरती है वह नदी दूसरी ही होगी। अुसे तो शीघ्रतासे होन्नावरके पास ही पश्चिम-समुद्रसे मिलना था। अिसलिअे सवा-सौ, डेढ़-सौ पुरुष जितनी अूंचाअी से वह कूद पड़ी है। अुस नदीका नाम क्या होगा?

नायगराके प्रपातके कअी वर्णन मेरे पढ़नेमें आये थे। प्रकृति माताका अमरीकाको दिया हुआ वह अद्भुत आभूषण है। दुनिया भरके लोग अुसकी यात्राके लिअे जाते हैं। कअी लोगोंने बड़े मजबूत पीपेमें बैठकर अुस प्रपातमें से पार होनेके प्रयत्न किये हैं आदि वर्णन जैसे जैसे मैं अधिक पढ़ता गया वैसे वैसे मेरा कुतूहल बढ़ता गया। अनेक दिशाओंसे लिये हुअे चित्र और अक्षिपट (Bioscopes) नायगराको नजरके सामने प्रत्यक्ष करने लगे। अिस प्रकार नायगराका अप्रत्यक्ष दर्शन जैसे जैसे बढ़ता

गया, वैसे वैसे बचपनमें सुने हुअे अुस गिरसप्पाके प्रपातकी मानसपूजा बढ़ती गयी। बादमें जब यह पता चला कि नायगरा तो सिर्फ १६४ फुटकी अूंचाअीसे गिरता है, जब कि गिरसप्पाकी अूंचाअी ९६० फुट है, तब तो मेरे अभिमानका कोअी पार न रहा। सबसे मुख्य और संसारका सबसे बड़ा पर्वत हिन्दुस्तानमें है। सिंधु, गंगा, और ब्रह्मपुत्रा जैसी नदियोंके बारेमें किसी भी देशको जरूर गर्व हो सकता है। यह सिद्ध करनेके लिअे कि सबसे लंबी नदी हमारे ही यहां है, अमरीकाको दो नदियोंकी लंबाअी मिलाकर अेक करनी पड़ी। मिसोरी और मिसिसिपीको अलग अलग गिनें तो अुनकी लंबाअी कितनी होगी? हिन्दुस्तानका अितिहास जिस तरह पृथ्वी पर सबसे पुराना है, अुसी तरह हिन्दुस्तानकी भू-रचना भी सारे संसारमें अद्भुत है।

क्या हिन्दुस्तान केवल प्रपातके बारेमें हार जायगा? सारे संसारने कबूल किया है कि अशोकके समान दूसरा सम्राट् दुनियामें नहीं हुआ है। भूगोलमें भी लोगोंको स्वीकारना चाहिये कि भव्यतामें गिरसप्पासे (अुसका सही नाम जोग है) मुकाबला हो सके अैसा दूसरा अेक भी प्रपात संसारमें नहीं है।

कारकल राजकीय परिषद्के लिअे मैं दक्षिण कर्णाटकमें गया था तब अुम्मीद रखी थी कि अगुंबा घाट चढ़कर शिमोगा होते हुअे गिरसप्पा देखनेके लिअे जाअूंगा। किन्तु वैसा नहीं हो सका।

मनसा चिंतितं कार्यं दैवेनान्यत्र नीयते।

निराशामें मैंने मान लिया कि अिस चिरसंचित आशासे आखिर मैं हमेशाके लिअे वंचित हो गया हूं और गिरसप्पाका दर्शन मुझे ध्यानके द्वारा ही करना होगा।

किन्तु अितना तो जान लिया था कि जोग मैसूर राज्यकी सीमा पर है। वहां जानेके दो रास्ते हैं। अूपरका रास्ता शिमोगा सागर होकर जाता है और दूसरा नदीके मुखकी ओरसे जाता है। अिसमें बंदर होन्नावरसे नावमें बैठकर जंगलोंको पार करके गिरसप्पा गांव तक जाना होता है और वहांसे घाट चढ़ना पड़ता है। दोनों रास्तोंसे जाकर आये हुअे लोग कहते हैं कि अेक ओरकी शोभा दूसरी ओर देखनेको

नहीं मिलती। यह तो कहा ही नहीं जा सकता कि अेक ओरकी शोभा दूसरी ओरकी शोभासे अुतरती है। अेक रास्तेसे जाअूं और दूसरी ओरका साक्षात् अनुभव न करूं, तब तक तो मुझे कबूल करना ही चाहिये कि मैंने जोगके आधे ही दर्शन किये हैं।

गुजरातमें बाढ़ आयी थी अुस समय गांधीजी अपनी बीमारीके दिन बंगलोरमें बिता रहे थे। मैं अुनसे मिलने गया था। वहांसे मैसूर राज्यमें घूमते घामते गांधीजी सागर तक पहुंचे। श्री गंगाधरराव और राजगोपालाचार्य साथमें थे। सागर पहुंचनेके बाद गिरसप्पा देखनेके लिअे न जाना तो मेरे लिअे असंभव था। मोटरसे अेक ही घण्टेका रास्ता था। शिमोगामें तुंगाके किनारे घूमने गये थे तब मैंने गांधीजीसे आग्रह किया था, "आप गिरसप्पा देखने चलिये न? लॉर्ड कर्जन सिर्फ गिरसप्पा देखनेके लिअे खास तौर पर यहां आये थे। अिस ओर आना फिर कब होगा?" गांधीजी बोले, "मुझसे अितनी भी मनमानी नहीं हो सकेगी। तुम जरूर हो आओ। तुम देख आओगे तो विद्यार्थियोंको भूगोलका अेकाध पाठ पढ़ा सकोगे।" मैंने दलील पेश की: "मगर यह संसारका अेक अद्‌भुत दृश्य है। नायगरासे जोग छः गुना अूंचा है। ९६० फुट अूपरसे पानी गिरता है। आपको अेक बार अुसे देखना ही चाहिये।"

अुन्होंने पूछा, "बारिशका पानी आकाशसे कितनी अूंचाअीसे गिरता है?" और मैं हार गया। मनमें कहा: "स्थितधीः किं प्रभाषेत? किमासीत? व्रजेत किम्?"

मुझे मालूम था कि गांधीजीको संगीतकी तरह सृष्टि-सौंदर्यका भी बड़ा शौक है। घूमने जाते हुअे सूर्यास्तकी शोभाकी ओर या बादलोंमें से झांकते हुअे किसी अकेले सितारेकी ओर अुन्होंने मेरा ध्यान किसी समय खींचा न हो अैसी बात नहीं थी। किन्तु प्रजाकी सेवाका व्रत लिये हुअे गांधीजी जैसे सेवक महात्मा मनमानी किस तरह कर सकते हैं?

कुलशिखरिणः क्षुद्रा नैते न वा जलराशयः।

अेक बात अिस तरह समाप्त हुअी अिसलिअे मैंने दूसरी बात शुरू कर दी: "आप नहीं आते अिसलिअे महादेवभाअी भी नहीं आते। आप अुनसे कहेंगे तो ही वे आयेंगे।"

"अुसकी अिच्छा हो तो वह भले तुम्हारे साथ जाये। मैं मना नहीं करूंगा। किन्तु वह नहीं आयेगा। मैं ही अुसका गिरसप्पा हूं।"

बाकीके हम सब ठहरे दुनियवी आदर्शके लोग! पहाड़ परसे गिरता हुआ प्रपात चर्मचक्षुसे न देखें तब तक हमें तृप्ति नहीं हो सकती थी। अिसलिअे भोजनके पहले ही हम सागरसे रवाना हुअे और मोटरकी मददसे जंगल पार करने लगे। पहाड़ोंको कुरेदकर रेलवेवाले जब खोह या सुरंग बनाते हैं तब हमें बहुत आश्चर्य होता है। किन्तु बम्बअीकी बस्तीसे भी घने सह्याद्रिके जंगलोंमें से रास्ता तैयार करना अुससे भी अधिक कठिन है। यहां आपका डायनेमाअिट (सुरंग) नहीं चलेगा। तनेको काटनेके बाद भी अेक अेक पेड़को शाखाओंके जालसे मुक्त करना हिन्दू-मुसलमानोंके झगड़ोंको निबटाने जितना कठिन काम है। खंडाला घाटकी गहरी खोहके बीचोंबीच जाने पर आदमी जिस भयानक रमणीयताका अनुभव करता है, अुसी तरहकी स्थितिका अनुभव अिन जंगलोंमें होता है। अैसे जंगलोंमें हाथी, बाघ या अजगर जैसे प्राणी ही शोभा देते हैं। अिनमें मनुष्य तो बिलकुल तुच्छ प्राणी मालूम होता है। लगता है, यह अैसे जंगलमें कहांसे आ गया!

खैर; हम जंगल पार करके शरावतीके किनारे पहुंचे। अिस ओर अुसे भारंगी भी कहते हैं। भारंगी यानी बारहगंगा। यहांके लोग यदि यह मानते हों कि गंगा नदीसे अिस नदीका माहात्म्य बारह गुना अधिक है, तो हम अुनसे झगड़ा नहीं करेंगे। हरेक बच्चेको अपनी ही मां सर्वश्रेष्ठ मालूम होती है न? पानी रिमझिम बरस रहा था। यहां गगनभेदी महावृक्ष भी थे, और छोटे-बड़े झाड़-झंखाड़ भी थे। अमर घास भी थी और जमीन तथा पेड़ोंकी बूढ़ी छाल पर अुगनेवाली शैवाल (काअी) भी थी। अुस पारके छोटे-बड़े पेड़ नदीका पानी कितना ठंडा या गहरा है यह जांचनेके लिअे अपने पत्तोंवाले हाथ पानीमें

डालते थे। और कुहरेके चंद बादल आलसी सांड़की तरह अिधर-अुधर भटक रहे थे।

नदीको देखकर हमेशा सवाल अुठता है कि यह नदी कहांसे आती है और कहां जाती है? मेरे मनमें तो हमेशा नदी कहांसे आती है, यही सवाल प्रथम अुठता है। दूसरोंके मनमें भी यही सवाल अुठता होगा। अिसका क्या कारण है? नदी कहां जाती है, यह जांचना आसान है। नदीमें कूद पड़े कि वह हमें अनायास अपने साथ ले चलती है। अुतनी हिम्मत न हो तो अेकाध पेड़के तनेको कुरेदकर बस अुसमें बैठ जाअिये। किन्तु नदी कहांसे आती है, यह जांचनेके लिअे प्रतीप गतिसे जाना चाहिये। अैसा तो सिर्फ ऋषिगण ही कर सकते हैं। अुस दिनका दृश्य अैसा था जिससे मनमें संदेह अुत्पन्न होता था कि भारंगी या शरावतीका पानी पहाड़से आता है या बादलोंसे?

नावमें बैठकर हम अुस पार गये। किनारेकी जमीनसे कअी नन्हें नन्हें झरने कूद कूदकर नदीमें गिरते थे। अुन परसे हम सहज अनुमान लगा सके कि अगले दिन भारी बरसात होनेके कारण नदीका पानी काफी बढ़ गया था। आज वह करीब पांच फुट अुतरा था। नाव हमें नीचे अुतारकर दूसरोंको लाने वापस गअी। शांत पानीमें नाव जब डांडकी डब् डब् आवाज करती हुअी जाती या आती है अुस समयका दृश्य कितना सुंदर मालूम होता है! और जब यह नाव हमारे प्रियजनोंको अपने पेटमें स्थान देकर अुन्हें गहरे पानीकी सतह परसे खींचकर लाती है, तब चिंताका कोअी कारण न होते हुअे भी मनमें डर मालूम हुअे बिना नहीं रहता। राजगोपालाचार्य अपने पुत्र और पुत्रीको साथ लेकर नावमें बैठने जा रहे थे। मैंने अुनसे कहा, 'हमारे पुरखोंने कहा है कि अेक ही कुटुंबके सब लोग अेकसाथ अेक ही नावमें बैठें यह ठीक नहीं है। या तो पिता हमारे साथ आयें या पुत्र; दोनों नहीं।' साथी लोग अिस रिवाजकी चर्चा करने लगे। किसीको अिसमें प्रतिष्ठाकी बू आअी, किसीको और कुछ सूझा। किन्तु किसीके ध्यानमें यह बात नहीं आयी कि सर्वनाशकी संभावनाको टालनेके लिअे ही यह नियम बनाया गया है। मुझे यह अर्थ स्पष्ट करके वायुमंडलको विषण्ण नहीं बनाना

था। अिसलिअे पुरखोंकी बुद्धिकी निंदा सुनता हुआ में अुस पार पहुंचा। जब नाव मझधारमें पहुंची तब मंत्र बोलकर आचमन करना में नहीं भूला। नदीके दर्शनके साथ स्नान, पान और दानकी विधि होनी ही चाहिये। तभी कहा जायगा कि नदीका पूरा साक्षात्कार किया।

दूसरी टुकड़ी आ पहुंची और हम दाहिनी ओरके रास्तेसे चलने लगे। नदीका वह बायां किनारा था। रास्तेके बड़े बड़े पेड़ोंको मस्जिदके स्तंभोंकी तरह सीधे अूंचे जाते देखकर हमें आनंद हुआ। हमारी टोली अितनी बड़ी थी कि अिस निर्जन अरण्यमें देखते ही देखते हमारा वार्ताविनोद और हमारा अट्टहास्य चारों ओर फैल गया। मगर कितनी देर तक? हम कुछ ही दूर गये होंगे कि नदीने अपनी गंभीर ध्वनि शुरू की। अिस आवाजको किसकी अुपमा दी जाय? अितनी गंभीर आवाज और कहीं सुनी हो तभी तो अुपमा दी जा सके न? मेघगर्जना भीषण जरूर होती है, और यह भी सच है कि वह सारे आकाशमें फैल जाती है। किन्तु वह सतत नहीं होती। यहां तो आप सुन सुनकर थक जायें तो भी आवाज रुकती ही नहीं। क्या यहां बादल टूट पड़ते हैं? क्या तोपें छूटती हैं? अथवा पहाड़के बड़े बड़े पत्थरोंकी धानी फूटती है? या नदी अपना ध्यानमौन छोड़कर महारुद्रका स्तवराज बोलती है?

'अब कौनसा दृश्य आयेगा?', 'अब कौनसा दृश्य आयेगा?' अैसे कुतूहलसे आंखें फाड़कर चारों ओर देखते देखते हम मुसाफिरखाने (डाकबंगले) तक पहुंचे। जहांसे प्रपातका दर्शन सबसे सुन्दर होता है, वहीं मैसूर राज्यकी ओरसे यह अतिथिशाला बनायी गयी है। हम निरीक्षणके चबूतरे पर जा पहुंचे। मगर यह क्या! सर्वव्यापी कुहरेके अलावा और कुछ दिखायी ही नहीं देता था। और प्रपात अपनी गंभीर आवाजसे सारी घाटीको गूंजा रहा था। ठीक दोपहरको भी सूर्यके दर्शन नहीं हो पाये। जहां देखें वहां कुहरा ही कुहरा! कुहरेके घने बादल मानो कुरुक्षेत्रका महायुद्ध मचा रहे हों और जोग अपने तालसे अुनका साथ दे रहा हो। अितनी अुम्मीदके साथ आनेके बाद अिस तरहका तमाशा हमें कभी देखनेको नहीं मिला था। मिनट पर

मिनट वीतते जाते थे और हमारी निराशाके साथ कुहरा भी घना होता जाता था। आखिर हम मौन तोड़कर आपसमें वातें करने लगे। वातें करनेके लिओ कोओी खास विषय नहीं था, किन्तु निराशाकी शून्यताको भरनेके लिओ कुछ तो चाहिये था।

क्या अिंद्रदेव कुपित हो गये हैं या वरुणदेव अप्रसन्न हो गये हैं? में यह सोच ही रहा था कि अितनेमें वायुदेवने मदद की और अेक क्षणके लिओ — सिर्फ अेक ही क्षणके लिओ — कुहरेका वह घना परदा दूर हटा और जिंदगीभर जिसके लिओ तरसता रहा था वह अद्भुत दृश्य आखिर आंखोंके सामने आया! महादेवजीके सिर पर जिस तरह गंगाका अवतरण होता है, अुसी प्रकार अेक वड़ा प्रपात नीचेकी खोहसे बाहर निकले हुओ हाथी जैसे पत्थर पर गिरकर, पानीका आटा वनाकर, चारों ओर अुसकी वौछारें अुड़ा रहा है!!

नहीं। अिस दृश्यका वर्णन शब्दोंमें हो ही नहीं सकता। आश्चर्यमग्न होकर मैं वोल अुठा:

नमः पुरस्तात्, अथ पृष्ठतस् ते नमोऽस्तु ते सर्वत अेव सर्व।
अनन्त-वीर्यामित-विक्रमस् त्वम् सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः॥

तुरन्त सामनेका वह हाथीके समान पत्थर सिरसे प्रपातकी जटाओंको झाड़कर वोला:

सुदुर्दर्शम् अिदं रूपं दृष्टवान् असि यन् मम।
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शन-कांक्षिणः॥

कुहरेका परदा फिर पहलेकी तरह जम गया और हमारी स्थिति अैसी हो गयी मानो हमने जो दृश्य देखा था वह सब स्वप्न था, माया थी या मतिभ्रम था! वह विस्तीर्ण खोह, वह विशाल पात्र, वह भयानक गहराओ और अुसके बीच पानीका नहीं बल्कि आटेका — नहीं, मैंदेका — वह अद्भुत प्रपात और फव्वारा! सारा दृश्य कल्पनातीत था। यह प्रतीति दृढ़ होनेके पहले ही कि हम जो अपनी आंखोंसे देख रहे हैं वह सच्चा ही है, कुहरेका क्षीरसागर फिर फैल गया और हम सामनेके काव्यके साथ अुसमें डूब गये।

अब कोआी किसीसे बोलता नहीं था। जो देखा था अुस पर सब सोचने लगे। जहां कुछ भी नहीं था वहां अितनी बड़ी और गहरी सृष्टि कहांसे पैदा हुआी और देखते ही देखते वह कहां लुप्त हो गयी — अिसी आश्चर्यने मानो हम सबको घेर लिया।

मनमें आया, चाहे अेक क्षणके लिअे ही क्यों न हो, जो देखने आये थे अुसे हमने देख लिया। अद्‌भुत रीतिसे देख लिया। अेक क्षणके लिअे जो दर्शन हुआ अुसके स्मरण और ध्यानमें घंटों बिताये जा सकते हैं।

अितनेमें वह शुभ्र जटाधारी पत्थर फिरसे बोला:

व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस् त्वं तदेव मे रूपम् अिदं प्रपश्य।

कुहरेका आवरण फिर दूर हटा और अब तो अिस छोरसे अुस छोर तक सब कुछ स्पष्ट दीख पड़ने लगा। सामनेकी ओरसे ठेठ बायें छोर पर 'राजा' अर्धचंद्राकार पत्थर परसे नीचे कूद रहा था। अुसका पानी बारिशके कीचड़के कारण कॉफीके रंगका हो गया था। किन्तु सबसे अधिक पानी राजाको ही मिलता है। छाती फुलाता हुआ जब वह ठेठ सीधा नीचे गिरता है तब अिस बातका खयाल होता है कि प्रकृतिकी शक्ति कितनी अपरिमित है। राजा प्रपातका विस्तार भी कुछ कम नहीं है। और अुसके दोनों ओर बड़े बड़े मोतियोंके कआी हार लटकते दौड़ते हैं। सचमुच यह प्रपात राजाके नामके काबिल ही है।

अुसके पासके जिस प्रपातका दर्शन मुझे सबसे प्रथम हुआ था वह वास्तवमें तीसरा था। अुसका नाम है वीरभद्र। बीचका अेक प्रपात रुद्र अिस ओरसे स्पष्ट दिखाआी ही नहीं देता। वह कदम कदम पर जोरसे चिल्लाता हुआ आखिर राजामें मिल जाता है।

ठेठ दाहिनी ओर अेक छोटासा प्रपात है। अुसकी कमर कुछ पतली है। अिसलिअे मैंने अुसका नाम पार्वती रखा। जी भरकर देखनेके बाद हमारी बातें फिरसे शुरू हुआीं। स्वयं जो कुछ देखा हो अुसे दूसरेको दिखानेकी अुमंग जिसमें न हो वह आदमी आदमी नहीं

है। आदमी संचारशील होता है, संवादशील होता है। अुसने जो अनुभव किया वही दूसरोंको भी होता है—हो सकता है—अैसा विश्वास जब तक न हो तब तक अुसे परम संतोष नहीं होता। राजाजीने ध्यान खींचा, 'यह नीचे तो देखो! ठंडी भापके ये बादल कैसे अूपर कूद आते हैं?' देवदास कहने लगे, 'अुन पक्षियोंको तो देखो! कैसे निर्भय होकर अुड़ रहे हैं?' मणिवहनने भी अैसा ही कुछ कहा और लक्ष्मीने अपने अण्णाको तमिल भाषामें बहुत कुछ समझाकर अपना आनंद व्यक्त किया। हमारे साथ और अेक भाअी आये थे। वे रास्तेमें अकारण ही नाराज हो गये थे। हम जब अिस स्वर्गीय दृश्यके आनंदमें विभोर हो रहे थे तब अुन भाअीको अपने माने हुअे अपमानकी ही जुगाली करनी थी। चंद्रशंकरने अुनकी अिस स्थितिकी ओर मेरा ध्यान खींचा। मैं मन ही मन बोला:

पत्रं नैव यदा करीर-विटपे दोषो वसंतस्य किम्?
नोलूकोप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्?

अिस संसारमें निराशा, गलतफहमी, अप्रतिष्ठा, या वियोग सच्चे दुःख नहीं हैं। बल्कि अहंकार ही सबसे बड़ा दुःख है। अहंकारकी विकृतिको बड़े बड़े धन्वंतरि भी दूर नहीं कर सकते।

अुन भाअीकी अनेक प्रकारकी परेशानियों और विकृतियोंको मैं जानता था। अिसलिअे गिरसप्पाके जोगके सामने भी अुन्हें दो क्षण दिये बिना मुझसे रहा नहीं गया। मैंने अुनको गिरसप्पाके बारेमें थोड़ी जानकारी दी और अुन्हें प्रसन्न करनेका प्रयत्न किया।

राजा प्रपातके पीछेकी ओरकी खोहमें असंख्य पक्षी रहते हैं, और दूर दूरके खेतोंसे चुनकर लाये हुअे 'अुच्छिष्ट' और अुत्कृष्ट दानोंका संग्रह करते हैं। अेक बार किसीसे सुना था कि यह संग्रह अितना बड़ा होता है कि सरकारकी ओरसे अुसका नीलाम किया जाता है। मधुमक्खियोंका मधु लूटनेवाला मानव-प्राणी पक्षियोंके संग्रहको भी लूटे तो अुसमें आश्चर्यकी क्या बात है? जो संग्रह करता है वह लूटा जाता है, अैसी सृष्टिकी व्यवस्था ही दीख पड़ती है: 'परिग्रहो भयायैव'।

फिर कुहरेका आवरण फैला और मुझे अन्तर्मुख होकर विचारमें डूब जानेका मौका मिला। अैसे भव्य दृश्योंका रहस्य क्या है? भूगोलवेत्ता और भूस्तरशास्त्री फौरन कह देंगे 'यहांका पहाड़ 'निस्' कोटिके पत्थरके स्तरका है। घाटीमें से अेक कगार टूट गअी होगी और आसपासकी मिट्टी धुल गअी होगी। अेक बार प्रपात शुरू होने पर वह नीचेकी जमीनको अधिकाधिक गहरा खोदता जाता है और जहांसे प्रपात शुरू होता है अुस कोनेको घिसता जाता है। अूपरका वह माथा यदि सख्त पत्थरका हो, तो अूंचाअी हजारों बरसों तक कायम रह सकती है। प्रपातसे समुद्र अधिक दूर न होनेसे नदीका आगेका हिस्सा साफ हो गया है और प्रपातकी अूंचाअी कायम रही है।' किन्तु यह तो हुआ प्रपातका जड़ रहस्य। किसी आधुनिक यांत्रिकसे पूछिये तो वह कहेगा: 'अकेले गिरसप्पाके प्रपातमें अितना प्रचंड सामर्थ्य है कि मैसूर और कानड़ा (कर्णाटक) अिन दोनों जिलोंको चाहिये अुतनी शक्ति वह दे सकता है। फिर, आप अुससे बिजली लीजिये, हरेक शहर और गांवको प्रकाशित कीजिये, कल-कारखाने चलाअिये और अपने मुल्कके या दूसरोंके मुल्कके चाहे अुतने लोगोंको बेकार बना दीजिये।'

प्रकृतिसे जो कुछ फायदा मिलता है वह पृथ्वीकी सभी संतानें आपसमें समझ-बूझकर बांट लें और जीवनयात्राका बोझा हल्का कर लें, अैसी बुद्धि आदमीको जब सूझेगी तबकी बात अलग है। किन्तु आज तो मनुष्यके हाथमें किसी भी तरहकी शक्ति आ गयी कि वह फौरन अुसका अुपयोग दूसरोंसे स्पर्धा करके श्रेष्ठत्व पानेके लिअे ही करता है। फिर वह श्रेष्ठत्व अुसे भले दूसरोंको मारकर मिलता हो, गुलाम बनाकर मिलता हो, या आधे पेट पर रखकर मिलता हो।

मैसूर राज्य अेक आगे बढ़ा हुआ राज्य है। बड़े बड़े अिंजीनियरोंने दीवानपदको सुशोभित करके यहांकी समृद्धिको बढ़ानेकी कोशिश की है। यदि कहें कि सारे संसारके लिअे आवश्यक चंदनका तेल सिर्फ मैसूर राज्य ही देता है तो अिसमें अधिक अत्युक्ति नहीं होगी। हिन्दुस्तानकी बड़ीसे बड़ी सोनेकी खानें मैसूरमें ही हैं। भद्रावतीके लोहेके कल-कारखानेकी कीर्ति बढ़ती ही जा रही है। और

कृष्णसागर तालाव तो मानव-पराक्रमका अेक सुन्दर नमूना है। यह तो हो ही नहीं सकता कि अैसे मैसूर राज्यको गिरसप्पाके प्रपातको भुना-कर खानेकी बात सूझी न हो। किन्तु अब तक यह बात अमलमें नहीं आयी — अितनी बड़ी शक्तिका कौनसा अुपयोग किया जाय, यह न सूझनेसे या सीमाका कोअी झगड़ा बीचमें आनेसे या अन्य किसी कारणसे, यह मैं भूल गया हूं। मगर अिसमें कोअी शक नहीं कि गिरसप्पाकी शोभा अब भी अुतनी ही प्राकृतिक, अुदात्त और अक्षुण्ण है।

भगिनी निवेदिताकी प्रख्यात तुलनाका यहां स्मरण हो आता है। किसी भी स्थानकी रमणीयताने जब भारतवासीको आकर्षित किया है तब अुसने फौरन अुसका धार्मिक रूपान्तर कर ही दिया है। भारतका हृदय जब किसी अद्‌भुत, रमणीय या भव्य दृश्यको देखता है, तब तुरंत अुसको लगता है कि यह तो गाय जैसे बछड़ेको पुकारती है वैसे परमात्मा जीवात्माको पुकार रहा है। नायगराका प्रपात यदि हिन्दुस्तानमें गंगा-मैयाके प्रवाहमें होता तो यहांकी जनताने अुसका वायुमंडल कैसा बना डाला होता? आमोद-प्रमोद और पिकनिककी टोलियोंके बदले और रेलके यात्रियोंके बदले प्रपातकी पूजा करनेके लिअे वार्षिक या मासिक यात्रियोंकी टोलियां ही टोलियां यहां अिकट्ठा होतीं। भोगविलासके सब साधन मुहैया करनेवाले होटलोंके बदले प्रपातके किनारे या अुसके बीचोंबीच अुमड़े हुअे हृदयकी भक्ति अुंडेलनेके लिअे बड़े बड़े मंदिर बनाये गये होते। सृष्टिके वैभवको देखकर भड़कीले अैश-आराम और शान-शौकतके बदले लोगोंने यहां तप किया होता। और अितनी प्रचंड शक्तिको मनुष्यके फायदेके लिअे और सुख-चैनके लिअे कैद करनेकी बात सूझनेके बदले अुसे प्रकृतिके साथ अैक्यका अनुभव करनेवाली मस्तीमें भैरवजापके साथ पानीके प्रवाहमें अपने जीवन-प्रवाहको मिला देनेकी ही बात सूझती। स्वभाव-भिन्नतामें क्या कुछ बाकी रहता है?

मगर प्रकृतिकी भव्यताको देखकर अुसमें अपने शरीरको छोड़ देनेमें आध्यात्मिकता है क्या? नहीं। अिसमें कोअी संदेह नहीं कि शरीरके बंधन टूट जायें, 'किसी भी हालतमें जीवित रहूंगा ही' अिस तरहकी पामर जीवनाशा मनुष्य छोड़ दे, अिसमें आध्यात्मिक प्रगति

है। किन्तु यह वृत्ति स्थायी होनी चाहिये। क्षणिक अुन्मादका कोअी अर्थ नहीं है। फना होनेकी अिच्छा हरेक मनुष्यके दिलमें किसी समय पैदा होती ही है। अिश्ककी यह अेक विकृति है। अिसमें किन्हीं आध्यात्मिक तत्त्वोंकी झांकी देखकर अुस पर फिदा होना मनुष्य-जीवनकी महत्ताको शोभा नहीं देता। भगवान बुद्धने अपनी अचूक नजरसे अुसको विभव-तृष्णाका नाम देकर अुसे धिक्कारा है। विभवका अर्थ है नाश। भगवान मनुने भी यह बात साफ शब्दोंमें बताअी है:

नाभिनन्देत मरणम्; नाभिनन्देत जीवितम्।

अिसमें संदेह नहीं कि गिरसप्पाके प्रपात जैसे रोमहर्षण दृश्यके सामने यंत्रों, शक्तिके हॉर्स-पावर, बिजलीके प्रकाश या कल-कारखानोंके बारेमें सोचना आत्माको भूलकर बाहरी वैभवका ध्यान करनेके बराबर है। किन्तु आसपासका प्रदेश यदि अकालसे पीड़ित हो, लोग अनेक रोगोंके शिकार होते हों, और जनताका यह दुःख प्रपातके पानीका अन्य अुपयोग करनेसे ही दूर होता हो, तो अुस समय हमारा क्या आग्रह होगा? सृष्टि-सौंदर्यका रसपान करनेवाले हमारे चित्तके आह्लादक साधनको — प्रपातको — वैसाका वैसा रखनेका, या हमारे आपद्ग्रस्त भाअियोंको दुःखमुक्त करनेके लिअे अुसका बलिदान देनेका? जहां पर्याप्त अनाज न मिलता हो वहां अनाजकी खेतीको छोड़कर गुलाबकी खेती करने लगें, तो क्या अिससे हमारा हृदयविकास होगा? गुलाबमें काव्य है, अनाजमें कारुण्य है। दोनोंमें से हम किसे पसन्द करेंगे? अिंग्लैंडके अेक प्राचीन राजाने अनेक गांवोंको अुजाड़कर मृगयाके लिअे अेक महान अुपवन तैयार किया था। अिसमें कोअी संदेह नहीं कि यह राजा मर्दाने खेलोंका रसिया था। किन्तु सवाल यह है कि अुसे प्रजासेवक मानें या नहीं? जब कलाके सामने सेवाका सवाल खड़ा होता है, किस वृत्तिको — काव्यकी या कारुण्यकी — पोषण दें यह तय करना होता है, तब निर्णय किस कसौटी पर कसकर दिया जाय? जलते हुअे रोमको देखकर नीरोका फिडल बजाना और जलती मिथिलाको देखकर जनक राजाकी आध्यात्मिक चर्चा करना, दोनोंमें फर्क है। जनताकी सेवा जितनी बन सकती थी अुतनी सब करनेके बाद व्यर्थकी चिंतामें दिलको जलानेकी

अपेक्षा हृदयमें अंतर्यामीके स्मरणको दृढ़ करनेका प्रयत्न आर्यवृत्तिको सूचित करता है। अिनेगिने लोगोंके विलास या अैश्वर्यके लिअे प्रकृतिकी शक्तिका अुपयोग करना और प्राकृतिक सौंदर्यका नाश करना अधर्म है। किन्तु प्राणियोंके आर्तिनाशसे होनेवाले हृदयविकासको छोड़कर प्रकृतिके विभूति-दर्शनमें अुसको ढूंढ़नेकी अिच्छा रखना अुचित है या नहीं, यह विचारने जैसा है।

वे रूठे हुअे भाअी अपने कल्पित अपमानकी जलनमें सामनेका दृश्य भूल गये थे और मैं अपने तात्त्विक कल्पना-विहारमें शून्य दृष्टिसे सामने देख रहा था। दोनों अभागे थे, क्योंकि कल्पना या जलन चलानेके लिअे बादमें चाहे अुतना समय मिलता। कुहरेका आवरण फिर फैला। अब क्या प्रपात फिरसे दिखाअी देनेवाला था? राजाजीने कहा, 'गरमीके दिनोंमें जब प्रपात गिरता है तब पानीकी फुहार पर तरह तरहके अिंद्रधनुष दिखाअी देते हैं। अुस समयकी शोभा बिलकुल निराली होती है।' और यह भी नहीं कहा जा सकता कि चांदनी रातमें भी धनुष नहीं दिखाअी देते। मैसूरका सर्वसंग्रह (गॅझेटियर) लिखता है कि घासके बड़े बड़े गट्ठोंको आग लगाकर प्रपातमें छोड़ देनेसे अैसा दिखाअी देता है मानो अंधेरी रातमें सारी घाटी जल अुठी हो। चंद लोगोंने रातके समय आतिशबाजी करके भी यहां अद्भुत आनंद पाया है। अुत्पाती मानव क्या क्या नहीं करता? मुझे तो अैसी कोअी बात पसन्द नहीं है। अैसे स्थान पर प्रकृति जो खुराक परोसती है अुसकी स्वाभाविक रुचि अनुभव करनेमें ही सच्ची रसिकता है। मानवी मसाले डालनेसे स्वाद और पाचनशक्ति, दोनों खराब होते हैं।

अब हम बंगलेके भीतर पहुंचे। साथमें जो भोजन लाये थे अुसको अुदरस्थ किया। यहांका पानी पी नहीं सकते, क्योंकि फौरन मलेरिया होता है। अधिकतर लोगोंने गरम-गरम कॉफी पीकर ही प्यास बुझाअी। मैंने तो अुस दिन चातककी तरह बारिशकी कुछ बूंदें पाकर ही संतोष माना।

प्रपातका और अेक बार दर्शन करके हम वापस लौटे। अब तो सब तरहसे स्पष्ट हो चुका कि प्रपात तीन नहीं बल्कि चार हैं।

बाओीं ओरका पहला बड़ा प्रपात है राजा। अुसकी बगलकी खोहसे आक्रोश करता हुआ अुससे आ मिलनेवाला 'रोअरर' (Roarer) मेरा रुद्र है। सिर पर छूट रहे फव्वारेकी शुभ्र जटाओंवाला 'रॉकेट'। अुसे अब वीरभद्र कहनेके सिवा चारा नहीं था। और अंतमें आनेवाले प्रपातका नाम मैंने तन्वंगी पार्वती ही रखा। अंग्रेजोंने रुद्रको Roarer नाम दिया है। वीरभद्रको Rocket और पार्वतीको Lady का नाम दिया है।

अब हम वापस लौटे। पांवोंमें जोंकें चिपकनेका डर था। यहांके लोगोंने हम सबको सावधानीसे चलनेके बारेमें चेतावनी दे रखी थी। अुन्होंने कहा था, जोंकें चिपकेंगी तो मालूम ही नहीं होगा कि चिपक गयी हैं, और खून चूसा जायेगा। मैंने कहा, आप अिसकी फिक्र मत कीजिये। अंग्रेजोंको हम पहचान गये हैं, तो क्या जोंकोंसे सावधान नहीं रहेंगे? तिस पर भी करीब करीब हरेकके पांवमें अेक अेक जोंक चिपक ही गअी। हो सकता है, मेरे शरीरमें खूनका विशेष आकर्षण न होनेसे या मेरा खून कसैला होनेसे या शायद काकदृष्टिसे देख देखकर में चलता था अिससे, मैं बच गया था। हम कुछ आगे गये। किन्तु मणिबहनसे रहा नहीं गया। 'जरा ठहरिये। बन सके तो फिर अेक बार अिस ओरसे प्रपातके दर्शन कर आती हूं।' 'मगर कुहरा खुले ही नहीं तो?' 'न खुले तो कोअी हर्ज नहीं। वापस लौट आयेंगे। किन्तु अेक बार देखने तो दीजिये।'

वापस लौटते समय बीचमें अेक जगह रास्ता फूटा था। वहांसे होकर कविओंने नजदीकसे पार्वतीका दर्शन किया और वहांकी जमीन फिसलनेवाली होनेसे पार्वतीको 'वंदे मातरम्' कहकर साष्टांग प्रणिपात भी किया!

जाते समय जिस रास्तेसे अज्ञात और अननुभूत दशाका काव्य अनुभव किया था, अुसी रास्तेसे वापस लौटते समय हम संस्मरणोंके स्मृति-काव्यका अनुभव करने लगे, हालांकि वही दृश्य अुलटी दिशासे देखनेमें कम नवीनता न थी। जिन पेड़ोंके बारेमें जाते समय हमने बातें की थीं, वही पेड़ वापस लौटते समय ध्यान तो खींचेंगे ही।

अिसलिअे अिन परिचित भािअियोंसे 'क्योंजी कैसे हो?' कहकर कुशल-समाचार पूछे विना भला आगे कैसे जाया जा सकता है? और पेड़-पेड़के बीच प्रेमका पुल बांधनेवाली लतायें? अुनकी नम्रताको नमन किये विना जो आगे जाता है वह अरसिक है। हम आहिस्ता-आहिस्ता नदीके किनारे तक आ पहुंचे। अब अुसी शांत प्रवाहके अूपरसे वापस लौटना था। कुहरेके बादल बिखर गये थे। नदीके शांत पानीको आहिस्ता-आहिस्ता प्रपातकी ओर जाता हुआ देखकर मेरे मनमें बलिदानके लिअे जाते हुअे भेड़ोंके झुंडकी तस्वीर खड़ी हो गअी। मैंने अुस पानीसे कहा: 'तुम्हारे भाग्यमें कितना बड़ा अवःपतन लिखा है अिस बातका खयाल तक तुम्हें नहीं है। अिसीलिअे अितने शांत चित्तसे तुम आगे बढ़ते हो। या नहीं — मैं ही गलती कर रहा हूं। तुम जीवनधर्मी हो। तुम्हें विनाशका क्या डर है?

प्रायः कन्दुक-पातेन पतत्यार्यः पतन्नपि।

जितनी अूंचाअीसे गिरोगे अुतने ही अूंचे अुछलोगे। तुम्हारी दया खानेवाला मैं कौन हूं? शरावतीके पवित्र पानीका स्पर्श करनेके लिअे मैंने अपना हाथ लंबा किया। पानी खिलखिलाकर हंसा और बोला, 'न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात! गच्छति।' नाव अिस पार आ गअी और हमें सूझा कि मोटरको अिस ओर जरा नीचे तक दौड़ाया जाय तो अुसी प्रपातकी फिरसे दाहिनी यात्रा भी होगी। हम जिस ओर हो आये थे अुसे 'मैसूरकी तरफ' कहते हैं और दाहिनी ओरसे जानेके लिअे निकले अुसे 'बम्बअीकी तरफ' कहते हैं। क्योंकि जोग दोनों राज्यकी सीमा पर है।

यहां तो हम बिलकुल नजदीक आ पहुंचे। मैं बड़ी बड़ी शिलाओंके बीचसे दौड़ने लगा। दो सालके बीमारके रूपमें मेरी ख्याति काफी फैली हुअी थी। अिससे मुझे दौड़ते देखकर राजाजीको आश्चर्य हुआ। किसीने कहा, 'वे तो महाराष्ट्रके मावले हैं और हिमालयके यात्री भी हैं। मछलियोंको जिस तरह पानी, अुसी तरह अिन मराठोंको पहाड़ होते हैं।' अिन वचनोंको सुननेके लिअे मुझे कहां रुकना था? मैं तो दौड़ता दौड़ता राजा प्रपातकी बगलमें अुस प्रख्यात टीलेके पास

जा पहुंचा। यहांसे खड़े खड़े नीचेकी ओर देखा ही नहीं जा सकता। चक्कर खाकर आदमी गिर जाता है। कानोंमें चारों प्रपातोंकी आवाज अितनी भरी हुअी थी कि दूसरा कुछ सुननेके लिअे अुनमें गुंजाअिश ही बाकी न थी। जिस तरह प्रपातका पानी अूपरसे नीचे गिरकर फिर अूंचा अुछलता था, अुसी तरह कानमें आवाज भी अुछलती होगी। प्रथम मेरा ध्यान खींचा राजाके गंडस्थल पर लटकती मोतियोंकी लड़ियोंने और जलप्रलयसे लोगोंको बचानेके लिअे जिस तरह वीर तैराक पानीमें कूदते हैं अुसी तरह अिस ओरके प्रपातमें होकर युक्तिसे गुजरनेवाले पक्षियोंने। क्या अिन पक्षियोंको अिस प्रपातकी भीषण भव्यताका खयाल ही नहीं है, या अीश्वरने अुनके दिलमें अितनी हिम्मत भर दी है? मेरा खयाल है कि आगंतुक पक्षियोंकी अितनी हिम्मत नहीं होगी। अिन जोगवासियोंका जन्म यहीं हुआ, प्रपातके पटलकी सुरक्षिततामें अुनकी परवरिश हुअी। शेरके बच्चे शेरनीसे नहीं डरते। सागरकी मछलियां लहरोंमें आनंद मानती हैं, अुसी तरह ये जोगके बच्चे जोगके साथ खेलते होंगे।

राजा प्रपातको मैसूरकी ओरसे दूरसे देखा था, तब अुसका असर भिन्न प्रकारका हुआ था। यहां तो हम अुसके अितने नजदीक थे, मानो हाथीके गंडस्थल पर ही सोये हों। अूपरका पानी प्रपातकी ओर अैसा खिंचा चला आता था, मानो कोअी महाप्रजा जाने-अनजाने, अिच्छा-अनिच्छासे महान क्रांतिकी ओर घसीटी जाती हो। कोअी महाप्रजा जब सामाजिक और राजनीतिक प्रगतिके प्रवाहमें बहने लगती है तब आगे क्या होनेवाला है अिस बातका अुसे खयाल तक नहीं होता। और खयाल हो भी तो 'हमारे बारेमें यह सच्चा नहीं होगा, हम किसी न किसी तरह बच जायेंगे,' अैसी अंधी आशा वह रखती है। अिस बीच प्रगतिका नशा बढ़ता ही जाता है। अंतमें अुग्र लोग संयम सुझाते हैं और नरम (मॉडरेट) लोग अंधे होकर गैरजिम्मेदार लोगोंके साथ मिल जाते हैं और फिर अिच्छा होने पर भी पीछे नहीं हट सकते। या खुद पीछे हटें तो भी क्या? धनुषसे निकला हुआ तीर कभी पीछे खींचा जा सका है? जो अटल न हो वह क्रांति काहेकी?

प्रपातका पानी नीचे कहां तक जाता है यह देखना या जानना असंभव था। क्योंकि अुछलते हुअे पानीके बड़े बड़े बादल प्रपातके पांवोंसे लिपटे हुअे थे। पानीके अुन्मत्त अुत्सवको देखकर लगता था मानो महादेवजी संहारकारी तांडव-नृत्य ही कर रहे हों और सामनेका रुद्र अुसमें ताल दे रहा हो! परन्तु रोमांचकारी शोभाका परम अुत्कर्ष तो वीरभद्र ही दिखाता है। आपको यह मालूम ही नहीं होगा कि यहां पानी गिरता है और पानी अुछलता है। अैसा मालूम होता था मानो बड़ी बड़ी तोपोंसे गोलोंके सहारे कोरे आटेके फव्वारे अुड़ते हों। अुस दृश्यका वर्णन शब्दोंमें हो ही नहीं सकता, क्योंकि शब्दोंकी परवरिश 'शांति और व्यवस्था' के बीच होती है।

हमने लेटे लेटे यहांसे अिस दृश्यको जी भरकर देखा। या सच कहें तो चाहे अुतने लेटने पर भी तृप्त होना असंभव है अिस बातका यकीन हुआ तब तक देखा। आखिर हम खड़े होकर वापस लौटे। लेकिन वापस लौटना आसान न था। कोअी तो अुठता ही नहीं था। अुसे खींचकर लानेके लिअे दूसरा जाता था तो वह भी खुद अुस नयनोत्सवमें चिपक जाता था। पहला पछताकर अुठता था तो जो बुलाने जाता वह नहीं अुठता था। और जब दोनों मुश्किलसे संयम करके वापस लौटते, तब अिन पर गुस्सा होकर झगड़ा करनेके लिअे गये हुअे तीसरे भाअी अेक क्षणके लिअे आंखोंको तृप्त करने वहां खड़े हो जाते और अुन दोनोंके संयमको थोड़ा शिथिल बना देते। अुन दोनोंके मनमें आता: अितने चिढ़े हुअे समाज-नियंता जितनी छूट लेते हैं अुतनी यदि हम भी लें तो अिसमें कोअी गलती नहीं है। हम कहां अुनसे अधिक संयमी होनेका दावा करते हैं? मेरे दिलमें आया कि अुस शिला पर पहुंच जाअूंगा तो राजाके पानीमें पांव डाल सकूंगा। किन्तु नदीका पानी कुछ बढ़ता जा रहा था और अुसमें वह शिला अेक छोटे द्वीपके जैसी बन गअी थी। अिसलिअे राजाजीने मुझे मना किया। मुझे भी लगा कि अुनकी बात नहीं मानूंगा तो दूनी अुद्धतता होगी। राजाजीकी आज्ञाका अुल्लंघन कैसे किया जाय? और 'राजा' के सिर पर पांव कैसे रखा जाय?

हम वापस लौटे। भक्ति, विस्मय, मानव-जीवनकी क्षणभंगुरता, दृश्यकी भव्यता, अिस क्षणकी धन्यता — कअी वृत्तियोंके वादल हृदयमें भरे थे और वहांसे अुस वीरभद्रकी तरह सिरमें अपने तीर छोड़ते थे। विचारोंकी यह आतिशबाजी अद्‌भुत होती है। हृदयसे तीर छूटकर सीधे सिर तक पहुंचता है और वहां फूटता है तव स्वस्थ शरीर कैसा अस्वस्थ हो जाता है, अिस वातका जिसने अनुभव लिया है वही अिसके चमत्कारको जान सकता है।

अिस स्थान पर मंदिर क्यों नहीं है? हमारे मंदिर तो मानो जन्मभूमिके काव्यमय स्थान हैं। अगर पहाड़का अमुक शिखर अुत्तुंग है, तो वहां कोअी ऋषि ध्यान करनेके लिअे जाकर बैठा ही है और भक्तोंने वहां अेक मंदिर वनाया ही है। फिर वह चाहे पूनाके पासका पार्वती शिखर हो, चंपानगरके पासका पावागढ़ हो, जूनागढ़के पासका गिरनार हो या हिमालयका कैलास शिखर हो। दक्षिणकी ओर दौड़नेवाली नदी कहीं अुत्तरवाहिनी हुअी है? तो चलो, वहां अेकाध तीर्थकी स्थापना करो, करोड़ों लोग आकर पावन हो जायंगे। वड़ी वड़ी दो नदियां अेक-दूसरेसे मिलती हों तो अुस प्रयागमें हमारे संतोंने तीसरी अपनी सरस्वती वहायी ही है। सारी यात्रा पूरी करके समुद्र तक पहुंचे, तो वहां भक्तोंने जगन्नाथजीकी या सेतुवंध महादेवजीकी स्थापना की ही है। जहां जमीनका अंत दीख पड़ा वहां या तो कन्याकुमारी होगी या देवेंद्र होगा। लंवे रेगिस्तानमें अेकाध सरोवर दिखाअी दे तो वह नारायणका ही सरोवर है, अुसकी पूजा होनी ही चाहिये। और क्षीरभवानीकी स्थापना भी होनी ही चाहिये!

हमारे संत कवियोंने तीर्थस्थानोंकी स्थापना कहां कहां की है, यह खोजने चलेंगे तो हिन्दुस्तानका सारा भूगोल पूरा करना पड़ेगा। मुसलमान संतोंने और रोमन कैथलिक पादरियोंने भी हमारे देशमें अिसी तरह अद्‌भुत काव्यमय स्थान पसंद किये हैं और वहां पूजा-प्रार्थनाकी व्यवस्था की है। फिर अिस प्रपातके पास मंदिर क्यों नहीं है? क्या जीवनराशिके अितने वड़े अधःपतनको देखकर मुनि खिन्न हुअे होंगे? क्या भैरवघाटीकी तरह यहां शरीर छोड़नेका नशा पैदा

होगा, अिस खयालसे लोकसंग्रह करनेवाले मुनियोंने लोकयात्राके लिअे अिस स्थानको नापसन्द किया होगा? या दिमागको भर देनेवाली अखंड और भीषण गर्जना ध्यानके लिअे अनुकूल नहीं है, अैसा मानकर अुपासक यहांसे विमुख हुअे होंगे? या यह प्रपात ही स्वयं अभयब्रह्मकी मूर्ति है, अुसके पास ध्यान खींच सके अैसी कौनसी मूर्ति खड़ी करें, अिस अुधेड़बुनमें पड़कर अुन्होंने यह विचार छोड़ दिया? कौन बता सकता है? हमारे पुरखोंने यहां कोअी मंदिर नहीं बनाया, अिस बातका मुझे जरा भी दुःख नहीं है। किन्तु अिस स्थानको देखकर सूझे हुअे भावोंका अेकाध तांडवस्तोत्र तो अवश्य अुनको लिखना चाहिये था। पार्थिव मूर्ति जहां काम नहीं करती वहां वाङ्मयी मूर्ति जरूर अुद्दीपक हो सकती है।

यह सारी शोभा हम प्रपातके सिर परसे देख रहे थे। होन्नावरकी ओरसे आनेवाले लोग जब अुत्तर कानड़ा जिलेके महाकांतारसे आते हैं तब अुन्हें नीचेसे अिस प्रपातका आ-पाद-मस्तक दर्शन होता होगा। दोनोंमें कौनसा दर्शन ज्यादा अच्छा है, यह बिना अनुभव किये कौन बता सकेगा? और अनुभव लें भी तो क्या? प्रकृतिकी अलग अलग विभूतियोंमें किसी समय तुलना हुअी है? हिमालयकी भव्यता, सागरकी गंभीरता, रेगिस्तानकी भीषणता और आकाशकी नम्र अनंतताके बीच तुलना या पसंदगी कौन कर सकता है? अिसलिअे अेक बार होन्नावरके रास्तेसे जोगके दर्शनके लिअे आना चाहिये।

समुद्रमें जहाजी बेड़ेका अनुभव लेकर कुशल बने हुअे चंद फौजी अफसर प्रपातको नापनेके लिअे आये थे और हिंडोलेमें लटकते हुअे प्रपातकी पीछेकी ओर पहुंच गये थे। अुन्हें किस तरहका अनुभव हुआ होगा? जोगके पक्षियोंने अुनका कैसा स्वागत किया होगा? प्रपातके परदेमें से अंदर फैलनेवाला बाहरका प्रकाश अुन्हें कैसा मालूम हुआ होगा? और अंधेरी रातमें प्रपातके पीछे यदि घास जलाकर बड़ा प्रकाश किया जाय तो सारी घाटीमें किस तरहकी गंधर्वनगरी पैदा होगी, अिस बातका खयाल क्या किसीको है? जब यहां बिजलीका कल-कारखाना तैयार होगा तब कुछ कल्पनाशूर लोग अिस प्रपातके पीछे बिजलीकी बत्तियोंकी कतार जरूर लगायेंगे और संसारने कभी न

देखा हो अैसा अिंद्रजाल फैलायेंगे। अुस समय सारी घाटी अेक महान रंगभूमिके जैसी बन जायगी और चारों खंडोंके भूदेव अुसे देखनेके लिअे अवतार लेंगे। परन्तु अुस समय क्या किसीको अीश्वरका स्मरण होगा? मालूम होता है, अपनी बुद्धिशक्तिका अुपयोग अीश्वरको पहचाननेके लिअे करनेके बदले मनुष्यने अुसका अुपयोग अीश्वरको भूलनेकी युक्तियां और पद्धतियां खोजनेमें ही किया है।

शायद अैसा भी हो कि सब ओरसे परास्त होनेके बाद ही बुद्धि अीश्वरको अधिक अच्छी तरहसे समझ सकेगी।

हरेक वस्तुका अंत होता है। अिसलिअे हमारी अिस जोग-यात्राका भी अंत हुआ। अत्यंत पवित्र और मीठे संस्मरणोंके साथ हम वापस लौटे। किन्तु फिर अेक बार वहां जानेकी वासना तो रह ही गअी। अिसलिअे 'पुनरागमनाय च' अिन शास्त्रोक्त शब्दोंका अुच्चार करके हम भारत-वैभवकी अिस असाधारण विभूतिसे बिदा ले सके।

सितंबर, १९२७

१३

जोगके प्रपातका पुनर्दर्शन

हिमालय, नीलगिरी और सह्याद्रि जैसे अुत्तुंग पर्वत; गंगा, सिंधु, नर्मदा, ब्रह्मपुत्र जैसी सुदीर्घ नद-नदियां; और चिलका, वुलर तथा मंचर जैसे प्रसन्न सरोवर जिस देशमें बिराजते हों, अुस देशमें अेकाध महान, भीषण और रोमांचकारी जलप्रपात न हो तो प्रकृतिमाता कृतार्थताका अनुभव भला किस प्रकार करे? दक्षिण भारतमें कारवार जिले तथा मैसूर रियासतकी सीमा पर अेक अैसा प्रपात है, जो संसारमें अद्वितीय या सर्वश्रेष्ठ पदका अेकमात्र भोक्ता चाहे न हो, फिर भी अैसे सर्व-श्रेष्ठ प्रपातोंमें अेक जरूर है। अंग्रेज लोग अुसे 'गिरसप्पा फॉल्स' के नामसे पहचानते हैं। अुसका स्वदेशी नाम है 'जोग'।

लॉर्ड कर्जन जब भारतमें आया तब जोगका प्रपात देखनेके लिअे वह अितना अुत्सुक हुआ था कि अिस देशमें आनेके बाद पहले मौकेका

फायदा अुठाकर वह अुसे देखने गया और अुसके अद्भुत सौंदर्यसे अुसने अपनी आंखें ठंडी कीं। अुसके बाद हमारे देशमें अिस प्रपातकी प्रतिष्ठा बढ़ गअी। जहांसे लॉर्ड कर्जनने प्रपातको देखकर अपने आपको कृतार्थ किया था, वहां मैसूर सरकारने अेक चबूतरा बनवाया है। अुसको 'कर्जन सीट' कहते हैं।

प्रपातके पास ही मैसूर सरकारने अेक अतिथिशाला बनवाअी है। अुसके मेहमानोंकी सूचीमें प्रकृति-प्रेमी देशी-विदेशी यात्रियोंने समय समय पर अपने आनंदोद्गार लिख रखे हैं। अिन अुद्गारोंका ही अेक संग्रह यदि प्रकाशित करें तो वह प्रकृति-काव्यकी अेक असाधारण मंजूषा हो। यह सारा काव्य अुच्च कोटिका होता तो भी जोगके प्रत्यक्ष दर्शनसे अुसकी अपूर्णता ही सिद्ध होती और मुंहसे यकायक अुद्गार निकलते :

अेतावान् अस्य महिमा अतो ज्यायांश्च पूरुषः।

शरावती तो है अेक छोटीसी नदी। फिर भी अुसके तीन तीन नाम क्यों रखे गये होंगे? प्रथम वह भारंगी या बारहगंगाके नामसे पहचानी जाती है। बीचके हिस्सेमें अुसे शरावती कहते हैं। और जहां वह प्रौढ़तासे समुद्रमें मिलती है वहां अुसे बालेनदी कहते हैं! शरावतीके प्रवाहने यदि अिस रोमांचकारी प्रपातका रूप धारण न किया होता तो भी अुसने अपने प्राकृतिक सौंदर्यके द्वारा मनुष्योंका मन हरण किया ही होता। किन्तु तब वह हिन्दुस्तानकी अनेक सुन्दर नदियोंमें से अेक नदी ही मानी जाती। अिस प्रपातके कारण छोटीसी शरावती भारतवर्षकी अेक अद्वितीय सरिता बन गअी है।

जोगके अिस अलौकिक दृश्यका दर्शन करनेके लिअे राजाजी तथा दूसरे मित्रोंके साथ में प्रथम गया था, अुस समयके अुस अद्भुत दृश्यके दर्शनसे अेक कुतूहल तृप्त हो ही रहा था कि अितनेमें मनुष्य-स्वभावके अनुसार मनमें कुतूहलजन्य अेक नया संकल्प अुठा कि अितनी अूंचाअीसे कूदनेके बाद यह नदी आगे कहां जाती होगी, वहां कैसी मालूम होती होगी और सरित्पतिके साथ अुसका किस तरह मिलन होता होगा,

यह सब कभी न कभी जरूर देखना चाहिये। और बन सके तो बच्चा बनकर शरावतीके वक्षस्थल पर (नौका) विहार करना चाहिये। अंतरात्माकी अिस जिज्ञासाको सत्यसंकल्प अीश्वरने आशीर्वाद दिया और अेक तप (१२ वर्ष) की अवधि पूरी होनेके पहले ही जोगका दूसरी बार दर्शन करनेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। पहली बार हम अूपरकी ओरसे प्रपातकी तरफ गये थे। अिस बार नदीके मुखकी ओरसे प्रवेश करके नावमें बैठकर हमने प्रतीप यात्रा की। और नाव जहां अटक गअी वहांसे तैलवाहन (मोटर) के सहारे घाट चढ़कर हम प्रपातके सिर पर पहुंचे।

वहां शरावतीकी अुस अर्धचंद्राकार घाटीमें चार प्रपात हैं। दाअीं ओर 'राजा' नामक प्रपात है, जो अूपरसे अेकदम ९६० फुट नीचे कूदता है। अुसका 'राजा' नाम यथार्थ ही है। अुसकी जलराशि, अुसका अुन्माद और अुसकी हिम्मत किसी जगदेक-सम्राट्को शोभा दे सके अैसी है। अुसकी बाअीं ओरका महारुद्रके समान गर्जना करनेवाला 'रुद्र (Roarer) प्रपात' राजाके चरणों पर जाकर गिरता है। रुद्रकी घोर गर्जना आसपासकी टेकरियों तथा घाटीको मीलों तक निनादित करती है। अुसकी ध्वनिको न तो मेघ-गंभीर कह सकते हैं, न सागर-गंभीर। क्योंकि मेघगर्जना आकाश-विद्रावी होने पर भी क्षण-जीवी होती है और सागरकी सनातन गर्जनाको ज्वार-भाटेके अनुसार झूलना पड़ता है। रुद्रकी ध्वनि अविरत, अखंड और धारावाही होती है। अुस ध्वनिका अुन्माद विलक्षण होता है।

राजा और रुद्रको संसारमें कहीं पर भी सम्राट्की पदवी मिल सकती है। किन्तु जोगका सच्चा वैभव तो आकाशमें विविध रूपसे अुड़नेवाली वीरभद्र (Rocket) की शुभ्र जल-जटाओंके कारण है। वीरभद्रका प्रपात हाथीके गंडस्थल जैसे अेक विशाल शिलाखंड पर गिरते ही अुसमें से बारूदखानेके तीरों जैसे फव्वारे अूंचे और अूंचे अुड़ते ही चले जाते हैं। यह क्या शंकरका तांडव-नृत्य है? या महाकवि व्यासकी प्रतिभा-का नवनवोन्मेषशाली कल्पना-विलास है? या सूर्यबिंबके पृष्ठभागसे बाहर पड़नेवाली सर्वसंहारकारी किन्तु कल्पनारम्य ज्वालायें हैं? या भूमाताकी वात्सल्य-प्रेरित स्तन्यधाराओंके फव्वारे हैं? अैसी अैसी अनेक

कल्पनायें मनमें अुठती हैं। वीरभद्र सचमुच देखनेवालोंकी आंखोंको पागल बना देता है।

वीरभद्रकी बाआीं ओरकी कर्पूरगौरा, तन्वंगी और अनुदरी पर्वत-कन्या पार्वती (Lady) अपने लावण्यसे हमें आनंदित करती है।

चारों प्रपातोंकी मानो रक्षा करनेके लिअे ही अुनके दोनों ओर दो प्रचंड पहाड़ खड़े हैं। ये संतरी खड़े खड़े और क्या कर सकते हैं? प्रपातोंकी अखंड गर्जनाको प्रतिक्षण प्रतिध्वनित करते रहना, अुनके अिंद्रधनुषोंको धारण करना और विविध प्रकारकी वनस्पतिसे अपनी देहको सजा कर पुलकित रहना, यही अुनकी अविरत प्रवृत्ति हो बैठी है।

अबकी बार जब हम गये तब गरमीके दिन थे। भारंगीका पानी अच्छा खासा अुतर गया था। वीरभद्रकी जटायें कहीं भी नजर नहीं आती थीं। रुद्रकी लंबी लंबी अुछल-कूद भी कम हो गअी थी। पार्वतीने अब विरहिणीका वेश धारण कर लिया था। हमें अुम्मीद थी कि कमसे कम राजाका वैभव तो देखने लायक होगा ही। किन्तु विश्व-जित् यज्ञके अंतमें धन्यता अनुभव करनेवाला कोअी सम्राट् जिस प्रकार अकिंचन बन जाता है और अुस हालतमें भी अपने वैभवको व्यक्त करता है, ठीक वही हालत 'राजा' की हो गअी थी।

अबकी बार हम शरावतीकी दाअीं ओर यानी अुत्तरकी ओर आ पहुंचे थे। अतिथिगृहमें रुके बिना हम दौड़ते दौड़ते सीधे 'राजा' प्रपातकी बगलमें जा खड़े हुअे।

वहां अेक ओर सख्त धूप थी और दूसरी ओर नीचेसे अुड़नेवाले तुषारोंका ठंडा कोहरा था; अिन दोनोंके बीच फंसनेसे हमारी जो दशा हुअी अुसका वर्णन करना कठिन है। राजाके मुकुट जैसे शोभनेवाले गरम गरम पत्थरों पर झुककर हमने नीचे घाटीमें देखा। अूपरसे राजाकी जो धारा नीचे गिरती थी वह ठेठ जमीन तक पहुंचती ही नहीं थी। किसी मन्दोमत्त हाथीकी सूंड़के समान अेक प्रचंड स्रोत अूपरसे नीचे गिरता हुआ दीख पड़ता था। नीचे गिरते गिरते शतधा विदीर्ण होकर अुसकी सहस्र धारायें बन जाती थीं, और आगे जाकर अुन धाराओंके बड़े बड़े जलबिंदु बन जानेके कारण वे मोतीकी मालाओंकी तरह शोभा

पाने लगती थीं। अिन मोतियोंका भी आगे जाकर चूर्ण बन गया और अुसके वड़े वड़े कण नजर आने लगे। अब नीचे और आगे जाना छोड़कर अुन्होंने थोड़ा स्वच्छंद-विहार शुरू किया। ये बड़े कण भी छिन्नभिन्न हो गये, अुन्होंने सीकर-पुंजका रूप धारण किया और बादलोंके समान विहार करने लगे। मगर प्रकृति-माताको अितनेसे ही संतोष नहीं हुआ। आगे जाकर अिन वादलोंसे नीहारिकाओंका कोहरा बना और पवनकी लहरोंके साथ अुड़कर वह सारी हवाको शीतल बनाने लगा। आश्चर्यकी बात तो यह थी कि अितनी बड़ी जलधाराकी अेक बूंद भी जमीन तक पहुंच नहीं पाती थी। नीचेकी जमीन गरम और अूपरकी ठंडी! अिस स्थितिको देखकर मुझे राजाओंका वगैर किसी व्यवस्थाका दान याद आया। प्रजाजनोंको अकालसे पीड़ित देखकर हमारे राजा जब अुदार हाथोंसे पैसे देने लगते हैं तब अुनके जयनादसे सारा वायुमंडल गूंज अुठता है। किन्तु बेचारी गरीब जनताके मुंह तक अन्नका अेक दाना भी पहुंच नहीं पाता! बीचके अमले ही सब खा जाते हैं।

अलकेश्वरके दिलमें भी अीर्ष्या अुत्पन्न हो अैसी यहांके अिंद्रधनुषोंकी शोभा थी। भेद केवल यह था कि ये अिंद्रधनुष स्थायी नहीं थे। पवनकी तरंगें जैसे जैसे दिशायें बदलती जातीं, वैसे वैसे ये सीकर-पुंज भी अपने स्थान बदलते जाते। अिस कारणसे, पार्वतीके अिशारेसे जिस तरह शंकर नाचने लगते हैं, अुसी तरह ये अिंद्रधनुष भी अिधर-अुधर दौड़ते हुअे नजर आते थे। क्षणमें क्षीण हो जाते, तो दूसरे ही क्षण मयासुरके महलकी शोभा धारण करते। कर्मके साथ जिस प्रकार अुसका फल आता ही है, अुसी प्रकार हरेक धनुषके साथ अुसका प्रति-धनुष भी अपना वर्णक्रम ठीक अुलटा करके हाजिर होता ही था। हमने स्थान बदला, अिसलिअे अुन सुरधनुषोंने भी अपना स्थल बदला। सुरधनु और सुरधुनीका यह आह्लादजनक खेल हम काफी देर तक विस्मय-विमुग्ध भावसे देखते ही रहे। जितना अधिक देखते अुतनी दर्शनकी पिपासा बढ़ती जाती। हमें मालूम था कि हम घंटे दो घंटे ही यहां पर रह सकेंगे। प्रति-क्षण हमारा समयरूपी पुण्य क्षीण होता जा रहा है, और थोड़ी ही देरमें हमें मर्त्यलोकमें वापस लौटना होगा, अिस बातका हमें खयाल था।

स्वर्गलोभी देवता जिस विषादके साथ स्वर्गसुखका अुपभोग करते हैं, पराक्रमी पुरुष अपने यौवनके अुत्तरार्धमें अपने संकल्पकी पूर्तिके लिअे जितने अधीर बन जाते हैं, अुतने ही विषादसे और अुतने ही अधीर बनकर हम सब अुस गंधर्व-नगरीका आंख, कान, नाक और सारी त्वचासे सेवन करने लगे और साथ साथ हमारी कल्पनाओं द्वारा अुसी आनंदको शतगुणित करके अुसका अुपभोग करने लगे।

*   *   *

अेक दिन पहले हम तीन नावें लेकर निकले थे। बीचकी नावमें स्त्रियां और बालक थे और हम पुरुष लोग दोनों ओरकी दोनों नावोंमें बैठे थे। रातका समय था। अूपर आकाशमें चांद हंस रहा था। अुसका वह काव्य लड़कियोंने हृदयमें ग्रहण कर लिया और वहांसे वह अुनके आलापोंके रूपमें बाहर आने लगा। हरेक लड़कीने अपना प्यारा गीत नदीकी सतह पर तैरता छोड़ दिया। वह नाद कानों पर पड़ते ही किनारे परके नारियल और सुपारीके पेड़ रोमांचित हो अुठे और अपने अुन्नत सिर कुछ झुकाकर अुन आलापोंका पान करने लगे। थक जाने तक लड़कियोंने गीत गाये। फिर वे सो गअीं। चांद अस्त हुआ। सर्वत्र अंधकारका साम्राज्य प्रस्थापित हुआ। और अनंत सितारे आसपासकी टेकरियोंको अनिमेष दृष्टिसे देखने लगे। यह कहना मुश्किल था कि आसपासकी नीरव शांति जाग रही थी या वह भी निद्रामें पड़ी थी।

जब जब हम नींदमें से जग जाते तब तब कभी पतवारकी आवाज, कभी खलासियोंके बांसके साथ कुश्ती खेलते हुअे पानीकी आवाज, और कभी खलासियोंकि अेक-दूसरेको पुकारनेकी तीक्ष्ण आवाज सुनाअी देती। आखिर पौ फटी। पंछियोंने अपना कलरव शुरू किया। मेरे मनमें आया: बीचकी नावमें सोयी हुअी कोयलें भी यदि जग जायें तो कितना अच्छा हो! मेरे गद्य निमंत्रणका अुन्होंने आलापोंसे ही अुत्तर दिया। वृक्षोंने भी रातके समय सुने हुअे आलापोंको याद करके, अेक-दूसरेको यह बतानेके लिअे कि 'यही तो रातका संगीत है' अपने सिर हिलाना शुरू किया। रातका जलविहार सचमुच सात्त्विक, शांतिमय और यौवनमय था।

अुषःकालका जलविहार भी अुतना ही सात्त्विक, शांतिमय और यौवन-प्रसन्न था, जब कि प्रपातका यहांका दर्शन तो अद्‌भुत-भीषण और रोम-हर्षण था। अब अुन लड़कियोंके चेहरों पर प्रातःकालकी मुग्ध प्रसन्नता नहीं रही थी। 'अितने अद्‌भुत दृश्यका सर्जन किस प्रकार हुआ होगा? सचमुच हम पृथ्वीतल पर हैं या स्वप्नसृष्टिमें?' अिसका विस्मय अुनके चेहरों पर स्पष्ट रूपसे नजर आता था। वे अेक-दूसरेकी आंखोंकी ओर देखकर अपना विस्मय बढ़ाती जा रही थीं। और अुनके अिस विस्मयको देखकर हमें अिस प्रकारका गर्व मालूम होता था, मानो हम ही अिस काव्यमय सृष्टिके विधाता हों।

भोजनका समय हो चुका था। नौकायें छोड़कर हम अेक गांवके नजदीक आ पहुंचे। वहां चावल कूटनेकी अेक चक्की थी। भक् भक् भक् करती हुअी यह चक्की गरीब लोगोंकी शांति, अुनका स्वास्थ्य और अुनकी आजीविकाको भी कूटपीट कर नष्ट कर रही थी। हमने अघाकर खाना खाया और हमारे अिन्तजारमें खड़े तैलवाहनमें हम आरूढ़ हुअे।

पेट्रोलके अेक डिब्बेमें थोड़ासा तेल बाकी था। हमारा सारथी अुसीमें पानी भरकर ले आया और मोटरमें डाला। पानी गरम हुआ और तेलका धुआं पानीमें मिला। फिर क्या पूछना था? कदम कदम पर मोटर रुकने लगी; चिल्लाने लगी; शिकायत करने लगी और बदबू छोड़ने लगी। हम भी अूब गये, गुस्सेमें आये, आग-बबूला हुअे और अंतमें यह देखकर कि अब कोअी अिलाज ही नहीं है, ठंडे पड़ गये। बंगला भाषाकी अेक कहावतका मुझे स्मरण हो आया: 'जले तेले मिश खाये ना'। बड़ी मुश्किलसे, किसी न किसी तरह जब हम पानीवाली जगह पर आ पहुंचे तब पुराने विप्लवी पानीको निकालकर हमने अुसमें शुद्ध सज्जन पानी भर लिया। अुसके बाद हमारा रास्ता बिलकुल आसान हो गया।

बरसोंसे चर्चा चल रही है कि गिरसप्पाके प्रपातसे बिजली पैदा की जाय या नहीं। शरावतीके पानीको अेक ओरसे मोड़कर बड़े बड़े नलों द्वारा नीचे अुतारकर वहां अुसकी मददसे यदि बिजली पैदा की जा सके,

तो सारी मैसूर रियासतको सस्ते दाममें बिजली दी जा सकेगी। अितना ही नहीं, बल्कि अुत्तर और दक्षिण कानड़ा जिलोंको भी दी जा सकेगी। अिससे लोगोंको बड़ा फायदा होगा। किन्तु अिससे वह अद्भुतरम्य प्राकृतिक दृश्य हमेशाके लिअे नष्ट हो जायगा। अिन दो बातोंमें से कौनसी अधिक अिष्ट है, अिसका अब तक कोअी निर्णय नहीं हो सका है। हजारों—नहीं, लाखों लोगोंको पेटभर अन्न मिलेगा। सैकड़ों विज्ञानवेत्ता नवयुवकोंको अपनी योग्यता सिद्ध करनेका मौका मिलेगा। हजारों जानवरोंकी पीड़ा दूर होगी। अेक स्थान पर अिस तरहका कारखाना सफल हो सका तो भारतके सब प्रपातोंका अैसा ही अुपयोग किया जा सकेगा। और देशको अेक महान शक्तिका हमेशाके लिअे लाभ मिल जायगा। तब क्या केवल अेक भीषणरम्य दृश्यके लोभसे हम अिन अनेक हितकर बातोंको छोड़ दें? कलाके शौककी भी कोअी सीमा है या नहीं? अपनी रानीके मनोविनोदके लिअे अपनी राजधानी रोमको जला डालनेवाले नीरोकी सुलतानी वृत्तिमें और अिस प्रकारकी कला-भक्तिमें तत्त्वतः क्या फर्क है?

अिस प्रश्नके अुत्तरमें जो कुछ कहा जाता है अुसका जिक्र करनेके पहले थोड़ेसे विपयांतरकी आवश्यकता है। यूरोपमें जब महा-युद्ध छिड़ गया और लाखों नौजवान तोपों तथा बंदूकोंके शिकार हुअे, तब साहित्य-शिरोमणि रोमें रोलांकी भूतदया द्रवीभूत हुअी और अन्य लोगोंके समान, खुद अुन्होंने भी अिन घायल लोगोंकी सेवाका कुछ प्रबंध किया। किन्तु जब अुभय पक्षके शत्रुओंने अेक-दूसरेकी कलापूर्ण अिमारतों पर बम-वर्षा शुरू की तब अुनकी कलात्मा पुण्यप्रकोपसे सुलग अुठी और अुन्होंने बुलंद आवाजसे सारे युरोपको चेतावनी दी: "अै कमबख्तो, तुम्हें अेक-दूसरेको मार डालना हो तो मार डालो; अिस संसारसे तुम्हें बिलकुल नष्ट हो जाना हो तो नष्ट हो जाओ। किन्तु ये कलाकृतियां तो आत्माकी अभिव्यक्ति करनेवाली अमर कृतियां हैं। अुन्हींके द्वारा समस्त मानव-जातिकी आत्मा अपने आपको व्यक्त करती है—और कुछ नहीं तो कम-से-कम अिनका तो नाश न करो!!"

रोमें रोलांकी आर्षवाणी युरोपकी आत्माने सुनी और युध्यमान पक्षोंने कलाकृतियोंका संहार बंद कर दिया। अब सवाल यह है कि क्या कलाकृतियां सचमुच मानवकी आत्माकी अभिव्यक्तिकी द्योतक या प्रेरक हैं? या अुच्च अभिरुचिके आवरणके पीछे रही हुअी विलासिताकी ही साधन-सामग्री हैं?

कलाको जिसने सचमुच पहचाना है वह फौरन बता देगा कि कला और विलासिताके बीच जमीन आसमानका फर्क है और सच्ची कलाकृतिके द्वारा जो निरतिशय आनंद होता है वह सोयी हुअी आत्माको सचमुच जाग्रत करता ही है। करोड़ों वॉल्टकी विद्युतशक्ति पैदा करके लाखों लोगोंकी आजीविकाका प्रबंध करना कोअी साधारण बात नहीं है। किन्तु असंख्य लोगोंको कलाके द्वारा जो आनंद या संस्कारिता प्राप्त होती है वह तो अुनकी आत्माको पोषण देनेवाली चीज है।

और जोग कोअी मानवकृत कलाकृति नहीं है। अुलटे, वह तो कलाकारोंको भव्यता और सम्यताकी अेक ही साथ शिक्षा और दीक्षा देनेवाली प्रकृति-माताकी अलौकिक विभूति है। अुसे नष्ट करना नास्तिक विद्रोहके समान है। अुसे नष्ट करनेके पहले हमें सहस्र बार सोचना होगा। जोगका प्रपात वर्तमान युगकी ही संपत्ति नहीं है। हमारे अनेक ऋषि-पूर्वजोंने अुसके पास बैठकर अीश्वरका ध्यान किया होगा, और भविष्यमें हमारे वंशजोंके वंशज अुसका दर्शन करके अपने जीवनकी अज्ञात वृत्तियों और शक्तियोंका साक्षात्कार करेंगे।

अुपयुक्ततावादका सहारा लेकर 'अल्पस्य हेतोः बहु हातुम् अिच्छन्' जैसे जड़ हम न बनें। अिस प्रपातको सुरक्षित रखकर अुससे कोअी लाभ अुठाया जा सकता हो तो भले अुठायें। मानव-बुद्धिके लिअे यह बात असंभव न होनी चाहिये। किन्तु अिस तांडवयोगके दर्शनसे मनुष्य-जातिको वंचित करनेका धर्मतः किसीको हक नहीं है। मंदिरमें हम मूर्तिकी स्थापना करते हैं। अुसी तरह प्रकृतिने भी विराट् स्वरूपकी भव्य प्रतिमाओंकी यहां, हमारे सामने, स्थापना की है। यहां केवल दर्शन, ध्यान और अुपासनाके लिअे आना चाहिये और

हृदयमें यदि कुछ सामर्थ्य हो तो अिनके साथ तदाकार हो जाना चाहिये। यही हमारा अधिकार है।

मअी, १९३८

१४

जोगका सूखा प्रपात

याद नहीं किस कविने यह विचार प्रकट किया है; मगर अुसका वह विचार मैं अपनी भाषामें यहां रख देता हूं।

"यह सही है कि पहाड़ोंके जैसी अूंची अूंची लहरें अुछालनेवाला समुद्र भयानक मालूम होता है। मगर अुसका सारा पानी सूखकर यदि पात्र खाली हो जाय तो हजारों मील तक फैले हुअे अुसके गहरे गड्ढे कितने भयावने मालूम होंगे, अिसकी कल्पना भी करना कठिन है। यह सही है कि किसी दुर्जनके पास संपत्तिके भंडार हों तो वह अुनका दुरुपयोग करके लोगोंको सतायेगा। मगर अुसकी यह संपत्ति नष्ट होकर वह यदि भूखा कंगाल बन जाय, तो वह किस राक्षसी दुष्टतासे बाज आयेगा? अच्छा ही है कि समुद्र पानीसे भरपूर है, और दुर्जनोंके पास अुनकी दुष्टताकी आग बुझानेके लिअे पर्याप्त संपत्ति रहती है।"

जोगके प्रपातमें से राजा और रुद्रके सूखे हुअे प्रपातोंको देखकर कविकी अूपर बताअी हुअी अुक्ति याद आनेका यद्यपि कोअी कारण नहीं था, फिर भी यह अुक्ति याद आअी जरूर।

सन् १९२७ में जब पहले पहल मैंने जोगका प्रपात देखा था, तब अुसका वैभव सोलहों कलासे प्रकट हुआ था। पानीका मुख्य प्रपात अपनी प्रचंड जलराशिके साथ ८४० फुट नीचे कूदकर नीचेकी घाटीमें प्रपातके प्रवाहके ही द्वारा तैयार की हुअी १५० फुट गहरे तालाबकी गद्दी पर गिरता था। अिस मुख्य प्रवाहकी प्रतिष्ठा बढ़ानेके लिअे अुसके

दोनों ओर मोतियोंकी मालाओंके समान पानीकी अनेक धारायें अनेक ढंगसे गिरती थीं। अुसके दक्षिणकी ओर टेढ़ी सीढ़ियों परसे कूदता कूदता रुद्र अपना पानी, आधेसे अधिक पतनके बाद, राजाके पानीमें फेंक देता था। राजाकी गर्जना प्रायः नीचे पहुंचनेके बाद ही पैदा होती है। रुद्रका प्रपात रावणकी तरह अपने जन्मके साथ ही चिल्लाने लगता है।

दोनों प्रपात अद्भुत तो हैं ही। किन्तु अुस समय मुझे जो दृश्य अलौकिक लगा था वह था वीरभद्रकी अुछलती जटाओंका। यह दृश्य मैं फिर कभी नहीं देख पाया। किसी तसवीरमें भी वीरभद्रकी अुन जटाओंका चित्र नहीं आया है।

आखिरी प्रपात है पार्वतीका। अुसे देखते ही मनमें स्त्रीदाक्षिण्य पैदा होता है।

दस सालके बाद जब मैंने फिरसे जोगका दर्शन किया, तब राजाका स्रोत काफी क्षीण हो चुका था। वीरभद्रकी जटाओंका मुंडन हो गया था। रुद्रकी चिल्लाहट यद्यपि कम नहीं हुअी थी, फिर भी अुसका वह बड़ा ताल जोगके क्षीण प्रपातके साथ मिलता नहीं था। और पार्वती तो बिलकुल कृषांगी तपस्विनी जैसी बन गयी थी।

किन्तु अिन सब संकोचोंको भुला दे अैसी खूबी तो थी प्रपातकी ठंडी भापमें से अुत्पन्न होनेवाले अिन्द्रधनुषोंके भ्रूविलासमें। यह शोभा जितनी ओरसे देखने जाते अुतनी ओरसे अिन्द्रधनुष अपने मुंह घुमाकर नया नया सौंदर्य प्रकट करते थे।

फिर ठीक दस सालके बाद जोगका वही प्रपात देखनेके लिअे जब हम अबकी बार गये तब चार प्रपातोंमें से तीन तो बिलकुल सूख गये थे। रुद्रके अभावमें सर्वत्र स्मशान-शांति फैली हुअी थी। राजाके सूख जानेसे अुसके पीछेकी अेकके नीचे अेक दो बड़ी दरारें औरंगजेब द्वारा निकाली हुअी संभाजीकी आंखों जैसी भयावनी मालूम होती थीं। पार्वती तो मानो दक्षके यज्ञमें जाकर भस्म हो गअी थी और वीरभद्र अैसा मालूम होता था मानो दक्षका नाश करनेके बाद कुछ शांत होकर

अपने स्वामीके ससुरकी मृत्यु पर नीरव आंसू ढाल रहा हो। अितनी खिन्नता तो शायद महाभारतके युद्धके बाद कुरुक्षेत्र पर भी नहीं छाअी होगी!

पहली बार हम गये थे शिमोगा-सागरके रास्तेसे — गुजरातमें आयी हुअी बाढ़के संकटके दिनोंमें। दूसरी बार गये अिरादतन समुद्रके छोरसे अुलटे क्रमसे — शरावतीके पानीमें अूपरकी ओर यात्रा करके। हमारे पूर्वजोंने कहा है: 'नदीमुखेनैव समुद्रमाविशेत्।' अिस नसीहतके ठीक अुलटे हम शरावती-सागर-संगमसे नावमें बैठकर प्रतीप क्रमसे प्रपातकी सीढ़ियों तक पहुंचे और वहांसे पहाड़की पगडंडीसे अूपर चढ़कर प्रपातके सिर पर जा पहुंचे थे। अबकी बार हमने तीसरा रास्ता लेकर यात्रा की। शिरसीसे सिद्धापुर होकर हम प्रपातकी मंबअीवाली बाजू पर गये। वहां राजाके सिर पर विराजनेवाली अेक बड़ी शिला पर लेटकर हमने नीचेका रोमहर्षण दृश्य देखा। आलेके जैसी भयावनी दरारके सिर पर जाकर अंदर देखनेसे सारा बदन कांप अुठता है। मनमें यह संदेह पैदा हुअे बिना नहीं रहता कि यह शिला अपने ही भारसे कहीं टूट तो नहीं जायगी?

अिस शिलाके बगलमें अुतनी ही बड़ी और अुतनी ही भयावनी जगह पर दूसरी शिला है। अुस पर प्राचीन कालमें किसी राजाका लग्नमंडप खड़ा किया गया होगा। आज अुस मंडपके चार स्तंभ जिस पर खड़े किये गये थे वह चार सुराखोंवाला अेक बड़ा चबूतरा अुस शिला पर दिखाअी देता है। भयावने प्रपातकी दरारके किनारे मंडप खड़ा करके विवाह करनेवाले राजाकी काव्यमय वृत्तिकी बलिहारी है! अैसे शौकीन राजाके साथ जिसने शादी की अुस राजकन्याको अिस मंडपमें बैठते समय कैसा अनुभव हुआ होगा! किसीने बताया, 'भीषण रसके रसिया अुस राजाके नाम पर ही अिस प्रपातका नाम राजा रखा गया है।' मैंने मनमें सोचा, 'तब तो अुससे शादी करनेवाली राजकन्याका नाम हम नहीं जानते अिस बातका फायदा अुठाकर अुसीको हम पार्वती क्यों न कहें? पर्वतकी दरारके किनारे अुसने शादी की; क्या अितना कारण अुसे पार्वती कहनेके लिअे बस नहीं है?'

अैसा नहीं है कि पहाड़ोंमें आलेकी जैसी गहरी दरारें मैंने न देखी हों। मस्जिदोंमें भी दीवारोंमें गहराअी साधकर अुनके किनारे मेहराव बनाते हैं। किन्तु राजाके नीचेका आला तो कालपुरुषके मुंहसे भी वड़ा और गहरा था। अुसके भीतर जहां जगह मिले वहां पक्षी अपने घोंसले वनाते हैं और चुनकर लाये हुअे अनाजके दानोंका संग्रह करते हैं।

वम्ब्रअीकी ओरसे यानी अुत्तरकी ओरसे जी भरकर देखनेके वाद हम मोटरमें वैठकर पूर्वकी ओर गये। वहां दो नावोंको वांधकर वनाये हुअे वेड़े पर — जिसे यहां 'जंगल' कहते हैं — हमारी मोटरको चढ़ाकर हम शरावती नदीको पार करके दक्षिणके किनारे आ पहुंचे। वहां मैसूर सरकारकी अतिथिशालाके पाससे फिर अेक बार सारी दरारका दृश्य देखा। वीस साल पहले यहींसे राजा, वीरभद्र और पार्वतीका देवदुर्लभ दृश्य देखा था। अैसा नहीं था कि अवकी वारके सूखे दृश्यमें काव्य न हो। अेकके नीचे अेक, दो वड़े आले ८४० फुटके पतनको नाप रहे हैं। अैसा दृश्य विधाताकी अिस विविध सृष्टिमें हर कहीं देखनेको थोड़े ही मिलनेवाला है!

मेरे मनमें छाया हुआ विषाद मैंने पेड़ों पर नहीं देखा। दोनों आलोंमें गोल गोल चक्कर काटनेवाले पक्षी भी विषण्ण नहीं दिखाअी देते थे। आकाशमें तैरते हुअे और प्रपातकी दरारमें ताकनेवाले बादल भी गंभीर नहीं मालूम होते थे। फिर रिक्तताका यह दृश्य देखकर मैं ही अितना वेचैन क्यों होता हूं? क्या वीस साल पहले यहां देखी हुअी जल-समृद्धिकी याद आनेसे? या दस साल पहले अुसमें देखे हुअे अिन्द्र-धनुषोंको याद करके? मगर वह जल-समृद्धि और वर्णसंकरका वह चमत्कार हमेशाके लिअे थोड़े ही लुप्त हो गये हैं? हजारों सालसे हर ग्रीष्मकालमें अैसी ही रिक्तता देखनेको मिलती होगी और हर वर्षाकालमें भारंगी सारी घाटीको जलमग्न कर देती होगी। यह क्रम तो चलता ही रहेगा। तव 'तत्र का परिदेवना'?

जोगके प्रपातके अिस तीसरे दर्शनके वाद हमने यहांके अितिहासका नया अध्याय खोला।

बीस साल पहले मैंने सुना था कि 'मैसूर सरकार जिस प्रपातके पानीसे बिजली पैदा करना चाहती है। बम्बअी सरकार और मैसूर सरकारके बीच जिस सिलसिलेमें पत्रव्यवहार चल रहा है। जब तक ये दोनों सरकारें अेकमत नहीं हो पाअीं, जिसलिअे बिजलीकी वह योजना अमलमें नहीं लाअी गअी।'

अुस समय मैंने मनमें चाहा था कि अीश्वर करे ये दोनों सरकारें अेकमत न होने पायें। मेरे मनमें डर था कि बिजली पैदा करके यहां कल-कारखाने चलेंगे और देशकी समृद्धि बढ़ानेके बहाने देशकी गरीब जनता चूसी जायगी। और जिससे भी अधिक अकुलाहट तो यह थी कि यंत्र आने पर प्रपात टूट जायगा और प्रकृतिका यह भव्य दर्शन हमेशाके लिअे मिट जायगा। किन्तु सौभाग्यसे मेरा यह डर सच्चा नहीं निकला।

अिंजीनियर लोगोंने प्रपातसे काफी अूपर अेक बांध बांधकर वहां पानीके जत्थेको रोका है। अभी यह काम पूरा नहीं हुआ है। बांध बांधकर जो पानी रोका गया है अुसकी चार नहरोंको अेक दिशामें ले जाकर मैसूरकी ओर, प्रपातसे काफी दूर, टेकरी परसे नीचे छोड़ दिया गया है—प्रपातके रूपमें नहीं, बल्कि टेढ़े अुतरे हुअे महाकाय चार नलों द्वारा। पानी नलके द्वारा जहां पहुंचता है वहां जिस पानीकी रफ्तारसे चलनेवाले यंत्र रखकर अुनसे बिजली पैदा की जाती है। अब यहां जितनी बिजली पैदा होगी कि मैसूर राज्यकी भूख मिटाकर थोड़ी हैदराबाद राज्यको भी दी जायगी। और बंबअी सरकारकी होन्नावर ताअुकेकी सीमा परसे शरावती नदी गुजरती है जिसलिअे कुछ हजार किलोवाट बिजली बम्बअी सरकारको भी दी जायगी। न्यायतः जिस बिजली पर सबसे पहला अधिकार है होन्नावर तालुकेका और कारवार जिलेका। किन्तु यह जिला औद्योगिक दृष्टिसे अभी खिला हुआ नहीं है। जिस कारणसे यह तय हुआ है कि बिजली धारवाड़ जिलेको दी जाय। जिससे कारवार जिलेके लोग नाराज हुअे हैं। कारवार जिलेकी खनिज-संपत्ति और अुद्भिज्ज-संपत्ति धारवाड़ जिलेसे कअी गुनी अधिक है। अुसके पास समुद्र-किनारा होनेसे

अुसका व्यापार भी काफी वढ़ सकता है। कारवार जिलेमें काली, गंगावली, अघनाशिनी और शरावती — ये चार नदियां नौकानयनके लिअे अनुकूल होनेसे अिस जिलेका अुद्योगीकरण भी वहुत आसान है। किन्तु आज यह कहकर कि अिस जिलेमें वड़े अुद्योग नहीं हैं, अुसको विजली देनेसे अिनकार किया जाता है! और अुसके पास विजली न होनेसे वहां अुद्योग नहीं वढ़ाये जा सकते, यह भी अुसे सुना दिया जाता है!! तामिल भाषाकी अेक कहावत है कि 'शादी नहीं होती अिसलिअे लड़कीका पागलपन नहीं जाता, और पागलपन नहीं जाता अिसलिअे अुसकी शादी नहीं होती'। अैसी है यह स्थिति।

मैं अुम्मीद रखता हूं कि स्वराज्य सरकार द्वारा यह अन्याय दूर होगा और कारवार जिलेको शरावतीकी विजली मिलेगी। अलावा अिसके, कारवारके पास अुंचळ्ळी, मागोड जैसे दूसरे भी छोटे वड़े तीन चार प्रपात हैं। शरावतीकी विजली मिलने पर अुसकी मददसे दूसरे प्रपातों पर भी जीन कसा जायेगा और कारवार जिलेमें वारिशकी तरह विजलीकी भी समृद्धि होगी। जहां चार नदियां पहाड़की अूंचाअीसे नीचे गिरती हैं वहां आज नहीं तो कल मनुष्य तिजारती विजली पैदा करने ही वाला है।

मुझे संतोष हुआ केवल अिसीलिअे कि शरावतीके पानीसे विजली तैयार करने पर भी जोगके प्रपातका प्राकृतिक स्वरूप तनिक भी खंडित होनेवाला नहीं है। वांधके कारण चाहे जितना पानी रोकने पर भी नदीके सामान्य प्रवाहमें पानी कम नहीं होगा। वारिशका पानी भर देनेके वाद हमेशाका प्रवाह हमेशाकी ही तरह चलेगा। अिसमें प्रवाहकी दिशा, गति या पानीका जत्था — किसी वातमें भी कमी नहीं आयेगी। अुलटा, लाभ यह होगा कि गरमीके दिनोंमें हजारों सालसे जो प्रपात सूख जाता था वह, किसी दिन चाहने पर वांधके खजानेमें से पानी छोड़कर, चाहे जितने प्रचंड और तूफानी रूपमें प्रत्यक्ष किया जा सकेगा, जिसे देखकर आकाशके गरमीके अुष्मपा देवता भी चकित हो जायेंगे।

वलिहारी है मानवी विज्ञानकी!

अप्रैल, १९४७

१५

गुर्जर-माता साबरमती

अंग्रेज सरकारके खिलाफ असहयोग पुकार कर महात्माजी स्वराज्यकी तैयारी कर रहे हैं। अहमदाबादमें गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुआी है। स्वातंत्र्यवादी नौजवान महाविद्यालयमें शरीक हुअे हैं। वे अपनी आकांक्षायें और कल्पना-विलास व्यक्त करनेके लिअे अेक मासिक पत्रिका चाहते हैं। मेरे पास आकर वे पूछते हैं, "मासिक पत्रिकाका नाम क्या रखेंगे?" वह जमाना अैसा था जब चाचा (काका) को ही बुआका काम करना पड़ता था।

मैंने कहा, "मासिक पत्रिकाअें तो काफी प्रकाशित हो रही हैं। तुम दो-दो महीनोंमें, ऋतु ऋतुमें, नये रूपसे प्रकट होनेवाली पत्रिका शुरू करो और अुसका नाम रखो 'साबरमती'।" द्विमासिककी कल्पना तो पसंद आअी। किन्तु 'साबरमती' नाम किसीको न भाया। 'साबरमती' तो है हमारी हमेशाकी परिचित नदी! हम अुसमें रोज स्नान करते हैं। अुसमें क्या नावीन्य है कि हम यह नाम अपने नवचेतनवाले साहित्य-प्रवाहको दें? मैंने कहा, "साबरमतीका प्रवाह सनातन है — अिसीलिअे नित्य-नूतन है।" मिसाल देनेकी दृष्टिसे मैंने दलील पेश की, "सिंध-हैदराबादके हमारे मित्रोंने अपनी कॉलिजकी पत्रिकाका 'फुलेली' नाम रखा है। 'फुलेली' सिंधुकी अेक नहर है। हमारी यह अनाविला (कीचड़-रहित) साबरमती गांधीयुगकी प्रतीक बन सकती है। मेरी बात मान लो और साबरमती नाम अपना लो।"

युवकोंने मेरी आज्ञाका पालन करनेके लिअे साबरमती नामको अपनाया, हालांकि वे चाहते थे अिससे कोअी अधिक जोशीला नाम।

मैंने नरहरिभाअीसे कहा — "साबरमती गुजरातकी विशेष लोक-माता है। आबूके परिसरसे जिन नदियोंका अुद्गम होता है अुनमें यह ज्येष्ठ और श्रेष्ठ है। अुसका अेक गद्यस्तोत्र लिख दीजिये।" अुन्होंने अुत्साहपूर्वक अेक छोटासा, सुन्दर लेख लिख दिया। विद्यार्थियोंकी भावनायें जाग्रत हुअीं। अिस लोकमाताके प्रति अुनमें भक्ति पैदा हुअी

देखकर मैंने मौकेसे लाभ अुठाया और विद्यार्थियोंसे कहा, "मेरा सुझाया हुआ नाम तुम लोग अनिच्छासे स्वीकार करो, यह मुझे पसन्द नहीं है। चाहो तो मैं दूसरा नाम सुझाता हूं।" सबने अेक ही आवाजसे जवाब दिया, "नहीं, नहीं, हम दूसरा नाम नहीं चाहते। 'साबरमती' ही सबसे सुन्दर है।"

मैंने कहा, "अिसमें तो कोअी संदेह ही नहीं है।"

* * *

मेरे नदी-पूजक हृदयने भारतकी अनेक नदियोंको समय समय पर अंजलियां अर्पित की हैं। सिंधुसे लेकर ब्रह्मपुत्रा और अिरावती तक और दक्षिणमें पिनाकिनी तथा कावेरी तक, अनेक नदियोंको मैंने संस्मरणांजलि दी है। किन्तु यह देखकर कि अिनमें गुजरातकी ही मुख्य नदियां रह गअी हैं, मेरे कअी पाठकोंने अिसका कारण पूछा और गुजरातकी लोकमाताओंके बारेमें लिखनेकी आग्रहपूर्वक सूचना की।

मैंने कहा, "नदीके अुपस्थानकी प्रेरणा मैं दे चुका हूं। अब गुजरातकी नदियोंके बारेमें गुजरातीमें कोअी गुर्जरी-पुत्र लिखे, अिसीमें औचित्य है।"

अिसकी भी काफी राह देखी गयी और बार बार मुझे सूचना की गयी। किन्तु अन्तमें मेरी श्रद्धा सच्ची साबित हुअी और गुजरात विद्यापीठके अेक विद्यार्थी, वनस्पति-अुपासक श्री शिवशंकरने गुजरातकी लोकमाताओंके बारेमें लिखना शुरू किया। यह काम किसी समय अवश्य पूरा होगा। मुझे संतोष है कि साबरमतीके प्रवाह-कुटुंबके बारेमें अुन्होंने पर्याप्त लिखा है। अिसलिअे मुझे विस्तारपूर्वक लिखनेकी कोअी आवश्यकता नहीं है। किन्तु जिस नदीके किनारे मैंने महात्माजीके और सब साथियोंके संपर्कमें २५–३० साल बिताये, अुस नदीको श्रद्धांजलि अर्पण करनेका कर्तव्य तो रह ही जाता था। अुसे आह्लादपूर्वक पूरा करनेके लिअे थोड़ासा लिखता हूं।

हमारे कवि हरेक नामको संस्कृत रूप देनेका प्रयत्न तो करेंगे ही। साबरमतीका संस्कृत शब्द बनाते समय अुन्होंने 'साभ्रमति' शब्द खोज

निकाला और फिर अुसका दो तरहसे पदच्छेद किया। अेक दलने बताया 'सा भ्रमति'—वह भ्रमण करती है, टेढ़े-मेढ़े मोड़ लेती है। दूसरेने कहा कि अिस नदीके प्रवाहके अूपरके आकाशमें अभ्र—बादल दिखाअी देते हैं; अिसलिअे वह अभ्रमति या 'साभ्र-मति' है। मेरा खयाल है कि यह सारा प्रयास मिथ्या है।

जिस नदीके किनारे गायोंके झुंड घूमते हैं, चरते हैं और पुष्ट होते हैं, वह जिस प्रकार या तो गो-दा (गोदावरी) या गो-मती होती है; जिस नदीके किनारे और प्रवाहमें बहुत पत्थर होते हैं, वह जिस प्रकार दृषद्-वती होती है, अुसी प्रकार अनेक सरोवरोंको जोड़नेवाली या सारस पक्षियोंसे शोभनेवाली नदी सरस्-वती या सारस-वती कही जाती है। अिसी न्यायसे भारतकी नदियोंको वाघ-मती, हाथ-मती, अैरावती आदि अनेक नाम हमारे पूर्वजोंने दिये हैं। अिनमें हाथमती तो साबरमतीसे ही मिलनेवाली नदी है। हिरन या साबर जिसके किनारे बसते हैं, लड़ते हैं और आजादीसे विहार करते हैं, वह है साबर-मती। अुसका संबंध 'श्वभ्र' के साथ जोड़ देनेकी कोअी आवश्यकता नहीं है।

गुजरातकी नदियोंमें तीन-चार बड़ी नदियां आंतरप्रांतीय हैं। नर्मदा, ताप्ती, मही—तीनों दूर दूरसे निकलकर पूर्वकी ओरसे आकर गुजरातमें घुसती हैं और समुद्रमें विलीन हो जाती हैं। साबरमती अिनसे अलग है। आरवल्ली पहाड़में जन्म पाकर तथा अनेक नदियोंको साथमें लेकर दक्षिणकी ओर बहती हुअी अंतमें वह सागरसे जा मिलती है। साबरमतीके जैसी कुटुंब-वत्सल नदियां हमारे देशमें भी अधिक नहीं हैं। साबरमतीको विशेष रूपसे गुर्जरी माता कह सकते हैं। अुसके किनारे गुजरातके आदिम निवासी सनातन कालसे बसते आये हैं। अुसके किनारे ब्राह्मणोंने तप किया है। राजपूतोंने कभी धर्मके लिअे, तो बहुत बार अपनी वेनकूफीसे भरी हुअी जिदके लिअे, वीर पुरुषार्थ कर दिखाया है। वैश्योंने अिसके किनारे गांव और शहर बसा-कर गुजरातकी समृद्धि बढ़ायी है और अब आधुनिक युगका अनुकरण करके शूद्रोंने भी साबरमतीके किनारे मिलें चलाअी हैं।

सच पूछा जाय तो अिन नदियोंके साथ घनिष्ठ संपर्क तो पशु-पक्षियोंकी तरह आदिम निवासियोंका ही होता है। अिसलिअे सावरमतीके कुटुंब-विस्तारका काव्य यदि अिकट्ठा करना हो तो पुराणोंकी ओर मुड़नेके वदले आदिम निवासियोंकी लोक-कथाओं और लोक-गीतोंकी ओर हमारा ध्यान जाना चाहिये। डर यह है कि आजके संशोधक नवयुवकोंमें अिस कामके लिअे अुत्साह पैदा हो और आदिम निवासी गिरिजनोंके साथ मिलजुल जानेके लिअे वे समय निकाल सकें, अुसके पहले ही आदिम निवासियोंकी नदी-कथायें कहीं लुप्त न हो जायं।

केवल नदी-भक्तिसे प्रेरित होकर आदिम निवासियोंका 'वौठा' का मेला जव तक होता है, तव तक विलकुल निराश होनेका कोअी कारण नहीं है। सात नदियोंका पानी क्रमशः अेक-दूसरेमें मिलकर जिस जगह अेकत्र होता है, अुसके काव्यका आनन्द भोगने या नहाने के लिअे जहां आदिम निवासी तथा दूसरे लोग अिकट्ठे होते हैं, वहां 'वौठा'में सावरमतीके वारेमें आदि-कथायें हमें मिलनी ही चाहिये।

सावरमतीके पुराने नामोंकी खोज करते हुअे कश्यपगंगा या अैसा ही दूसरा अेकाध नाम अवश्य मिल जायगा। नदीको किसी न किसी प्रकार गंगाका अवतार जव तक न वनायें तव तक आर्योंको संतोष नहीं होता। किन्तु मुझे तो सावरमतीका पुराना नाम 'चंदना' सबसे अधिक आकर्षित करता है। क्योंकि — जैसा मैंने सुना है — कहीं कहीं पीली मिट्टीके वीचसे वहनेके कारण वह गोरोचनका रंग धारण करती है। किन्तु सावरमतीके जिस किनारे पर मैंने तीस साल विताये, वहां अुसका पानी सज्जनों और महात्माओंके मनकी तरह बिलकुल निर्मल है।

जहां नदीका पानी छिछला होनेसे अुस पार तक आसानीसे जाया जा सकता है, अैसे स्थानको संस्कृतमें तीर्थ कहते हैं। अनेक स्थानों पर प्रयत्न कर देखनेके वाद यात्री लोग तय करते हैं कि अमुक अमुक जगह अैसे घाट हैं। अतः थोड़ा वहुत चलकर वे अैसे घाटके पास आते हैं, वहीं अिकट्ठे होते हैं, बैठकर विश्रांति लेते हैं, वातचीत करते हैं और नदीका पानी यकायक वढ़ गया हो तो जव तक वह कम न हो जाय तव तक कुछ घंटों या कुछ दिनों तक वहां ठहरते भी हैं। अिस प्रकार जहां स्वाभाविक

रूपमें लोग अिकट्ठे होते हैं, वहां धर्मसेवा और लोकसेवाके लिअे परम कारुणिक संत आकर बस जाते हैं। अिसीलिअे तीर्थ शब्दको अुसका नया अर्थ प्राप्त हुआ। मूलमें तीर्थ शब्दका अर्थ होता था केवल अैसा घाट जहांसे नदीको आसानीसे पार किया जा सके। अिससे अधिक अर्थ कुछ नहीं। किन्तु जहां साधु-सन्त लोगोंको भवनदी पार करनेकी नसीहत देते हैं और अुसकी कला भी सिखाते हैं, अुस तीर्थ स्थानको विशेष पवित्रता अपने आप प्राप्त होती है।

अहमदाबादके पास साबरमतीमें रेलवे-पुलसे लेकर सरदार-पुल तक और अुससे भी अधिक दक्षिणकी ओर कअी तीर्थ हैं। अिनमें भी जहां चंद्रभागा नदी साबरमतीसे मिलती है वहां दधीचिने तप किया था, अिसलिअे वह स्थान अधिक पवित्र माना जाता है। और आसपासके लोगोंने अिहलोकको छोड़कर परलोक ज़ानेवाले यात्रियोंको अग्निदाह देकर विदा करनेकी जगह भी वहीं पसंद की है। अिससे वह स्मशान घाट भी है। स्मशानके अधिपति दूधेश्वर महादेव वहां विराजमान हैं और अिस महायात्राकी निगरानी करते हैं।

* * *

मुझे वह दिन याद है जब पूज्य गांधीजी अपने स्नेही रंगूनवाले डॉ० प्राणजीवन महेता तथा रणोलीके मेरे स्नेही नाथाभाअी पटेलको साथमें लेकर आश्रमकी भूमि पसन्द करनेके लिअे निकले थे। मैं भी साथ था। अुस दिनसे अिस भूमिके साथ मेरा सम्बन्ध बंध गया। अिस स्थान पर पहली कुदाली मैंने ही चलाअी। पहला खेमा भी मैंने ही खड़ा किया और अुसके बाद अनेक तंबू भी खड़े किये। झोंपड़ियां बनाअीं; मकान बंधवाये। खादीकी प्रवृत्ति, खेती और गोशालाकी प्रवृत्ति, राष्ट्रीय शाला, राष्ट्रीय त्यौहार, रास-नृत्य, लोक-संगीत तथा शास्त्रीय संगीत, 'नव-जीवन' तथा 'यंग अिंडिया', साहित्य-निर्माण, सत्याग्रह, मिल-मालिकोंके साथका मजदूरोंका झगड़ा और अंतमें ब्रिटिश साम्राज्यको जड़मूलसे अुखाड़ फेंकनेके लिअे शुरू किया गया दांडी-कूच — अिन सब प्रवृत्तियोंका अिस आश्रममें ही अुद्भव हुआ और यहीं वे विकसित भी हुअीं। रौलेट

अेक्टके खिलाफ आन्दोलन, अुसमें से अुत्पन्न हुअे पंजाबके दंगे, जलियांवाला बाग, खेड़ा-सत्याग्रह, बारडोलीकी लड़ाअी, गुजरात विद्यापीठकी स्थापना, कांग्रेसके अधिवेशन, देशके हरेक राजकीय, सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक आन्दोलनका केंद्र साबरमतीका यह किनारा था। साबरमतीकी रेतमें जब सभायें होती थीं तब लाख लाख लोगोंकी भीड़ जम जाती थी। अिस साबरमतीकी जीवनलीलाने केवल गुजरातका ही नहीं बल्कि सारे हिन्दुस्तानका जीवन बदल दिया। अुस समयका वायुमंडल आज सारी दुनियाकी राजनीतिमें अेक नया सिलसिला शुरू कर रहा है और नये युगकी नींव डाल रहा है।

अिस साबरमतीके नीरमें हमने क्या क्या आनन्द नहीं मनाया है? आश्रमके कअी लड़के-लड़कियोंको, और शिक्षकोंको भी, मैंने वहां तैरने-की कला सिखाअी है। अुसकी रेतमें गीता और अुपनिषदोंका चिंतन-मनन किया है। गीता-पारायणके अनेक सप्ताह चलाये हैं। अिस आश्रम-भूमि पर खड़े करीब करीब सभी पेड़ हमारे हाथों ही बोये गये हैं।

वह रचनाकाल था ही अद्भुत। हरेक हृदयमें अेक नअी शक्तिशाली आत्मा आकर बसी थी। वह सबोंसे तरह तरहके काम ले सकी। केवल आहारके प्रयोग भी हमने वहां कम नहीं किये। कौटुंबिक जीवनके अनेक प्रकार आजमाये। शिक्षाका तंत्र अनेक बार बदला और अुसमें भी कअी दफा क्रांति की। और जीवनके हरेक पहलूके लिअे हम नयी नयी स्मृतियां तैयार करते गये। अिस सारे पुरुषार्थकी साक्षी साबरमती नदी है।

जब तक भारतका अितिहास दुनियाके लिअे बोध-दायक रहेगा और भारतके अितिहासमें महात्मा गांधीका स्थान कायम रहेगा, तब तक साबरमतीका नाम दुनियाकी जबान पर अवश्य रहेगा।

मअी, १९५५

१६
अभयान्वयी नर्मदा

हमारा देश हिन्दुस्तान महादेवजीकी मूर्ति है। हिन्दुस्तानके नक्शेको यदि अुल्टा पकड़ें, तो अुसका आकार शिवलिंगके जैसा मालूम होगा। अुत्तरका हिमालय अुसका पाया है, और दक्षिणकी ओरका कन्या-कुमारीका हिस्सा अुसका शिखर है।

गुजरातके नक्शेको जरा-सा घुमायें और पूर्वके हिस्सेको नीचेकी ओर तथा सौराष्ट्रका छोर — ओखा मंडल — अूपरकी ओर ले जायं तो यह भी शिवलिंगके जैसा ही मालूम होगा। हमारे यहां पहाड़ोंके जितने भी शिखर हैं, सब शिवलिंग ही हैं। कैलासके शिखरका आकार भी शिवलिंगके समान ही है।

अिन पहाड़ोंके जंगलोंसे जब कोअी नदी निकलती है, तब कवि लोग यह कहे बिना नहीं रहते कि 'यह तो शिवजीकी जटाओंसे गंगाजी निकली हैं!' चंद लोग पहाड़ोंसे आनेवाले पानीके प्रवाहको अप्सरा कहते हैं। और चंद लोग पर्वतकी अिन तमाम लड़कियोंको पार्वती कहते हैं।

अैसी ही अप्सरा जैसी अेक नदीके बारेमें आज मुझे कुछ कहना है। महादेवके पहाड़के समीप मेकल या मेखल पर्वतकी तलहटीमें अमर-कंटक नामक अेक तालाब है। वहांसे नर्मदाका अुद्‌गम हुआ है। जो अच्छा घास अुगाकर गाओंकी संख्यामें वृद्धि करती है, अुस नदीको गो-दा कहते हैं। यश देनेवालीको यशो-दा और जो अपने प्रवाह तथा तटकी सुन्दरताके द्वारा 'नर्म' याने आनंद देती है, वह है नर्म-दा। अिसके किनारे घूमते-घामते जिसको बहुत ही आनंद मिला, अैसे किसी ऋषिने अिस नदीको यह नाम दिया होगा। अुसे मेखल-कन्या या मेखला भी कहते हैं।

जिस प्रकार हिमालयका पहाड़ तिब्बत और चीनको हिन्दुस्तानसे अलग करता है, अुसी प्रकार हमारी यह नर्मदा नदी अुत्तर भारत अथवा हिन्दुस्तान और दक्षिण भारत या दक्खनके बीच आठ सौ मीलकी अेक चमकती, नाचती, दौड़ती सजीव रेखा खींचती है। और कहीं

अिसको कोअी मिटा न दे, अिस खयालसे भगवानने अिस नदीके अुत्तरकी ओर विंध्य तथा दक्षिणकी ओर सातपुड़ाके लंबे लंबे पहाड़ोंको नियुक्त किया है। अैसे समर्थ भाअियोंकी रक्षाके वीच नर्मदा दौड़ती कूदती अनेक प्रांतोंको पार करती हुअी भृगुकच्छ यानी भड़ौंचके समीप समुद्रसे जा मिलती है।

अमरकंटकके पास नर्मदाका अुद्‌गम समुद्रकी सतहसे करीब पांच हजार फुटकी अूंचाअी पर होता है। अब आठ सौ मीलमें पांच हजार फुट अुतरना कोअी आसान काम नहीं है; अिसलिअे नर्मदा जगह जगह छोटी-बड़ी छलांगें मारती है। अिसी परसे हमारे कवि-पूर्वजोंने नर्मदाको दूसरा नाम दिया 'रेवा'। 'रेव्' धातुका अर्थ है कूदना।

जो नदी कदम कदम पर छलांगें मारती है, वह नौका-नयनके लिअे यानी किश्तियोंके द्वारा दूर तककी यात्रा करनेके लिअे कामकी नहीं। समुद्रसे जो जहाज आता है, वह नर्मदामें मुश्किलसे तीस-पैंतीस मील अंदर जा-आ सकता है। वर्षा ऋतुके अंतमें ज्यादासे ज्यादा पचास मील तक पहुंचता है।

जिस नदीके अुत्तरकी ओर दक्षिणकी ओर दो पहाड़ खड़े हैं, अुसका पानी भला नहर खोदकर दूर तक कैसे लाया जा सकता है? अतः नर्मदा जिस प्रकार नाव खेनेके लिअे वहुत कामकी नहीं है, अुसी प्रकार खेतोंकी सिंचाअीके लिअे भी विशेष कामकी नहीं है। फिर भी अिस नदीकी सेवा दूसरी दृष्टिसे कम नहीं है। अुसके पानीमें विचरने-वाले मगर और मछलियोंकी, अुसके तट पर चरनेवाले ढोरों और किसानोंकी, और दूसरे तरह-तरहके पशुओंकी तथा अुसके आकाशमें कलरव करनेवाले पक्षियोंकी वह माता है।

भारतवासियोंने अपनी सारी भक्ति भले गंगा पर अुंड़ेल दी हो; पर हमारे लोगोंने नर्मदाके किनारे कदम कदम पर जितने मंदिर खड़े किये हैं, अुतने अन्य किसी नदीके किनारे नहीं किये होंगे।

पुराणकारोंने गंगा, यमुना, गोदावरी, कावेरी, गोमती, सरस्वती आदि नदियोंके स्नान-पानका और अुनके किनारे किये हुअे दानके माहात्म्यका वर्णन भले चाहे जितना किया हो, किन्तु अिन नदियोंकी

प्रदक्षिणा करनेकी वात किसी भक्तने नहीं सोची। जव कि नर्मदाके भक्तोंने कवियोंको ही सूझनेवाले नियम वनाकर सारी नर्मदाकी परिक्रमा या 'परिकम्मा' करनेका प्रकार चलाया है।

नर्मदाके अुद्गमसे प्रारंभ करके दक्षिण-तट पर चलते हुअे सागर-संगम तक जाअिये; वहांसे नावमें वैठकर अुत्तरके तट पर जाअिये और वहांसे फिर पैदल चलते हुअे अमरकंटक तक जाअिये — अेक परिक्रमा पूरी होगी। नियम वस अितना ही है कि 'परिकम्मा' के दरम्यान नदीके प्रवाहको कहीं भी लांघना नहीं चाहिये, न प्रवाहसे वहुत दूर ही जाना चाहिये। हमेशा नदीके दर्शन होने चाहिये। पानी केवल नर्मदाका ही पीना चाहिये। अपने पास धन-दौलत रखकर अैश-आराममें यात्रा नहीं करनी चाहिये। नर्मदाके किनारे जंगलोंमें वसनेवाले आदिम निवासियोंके मनमें यात्रियोंकी धन-दौलतके प्रति विशेष आकर्षण होता है। आपके पास यदि अधिक कपड़े, वर्तन या पैसे होंगे, तो वे आपको अिस वोझसे अवश्य मुक्त कर देंगे।

हमारे लोगोंको अैसे अकिंचन और भूखे भाअियोंका पुलिसके द्वारा अिलाज करनेकी वात कभी सूझी ही नहीं। और आदिम निवासी भाअी भी मानते आये हैं कि यात्रियों पर अुनका यह हक है। जंगलोंमें लूटे गये यात्री जव जंगलसे वाहर आते हैं, तव दानी लोग यात्रियोंको नये कपड़े और सीधा देते हैं।

श्रद्धालु लोग सव नियमोंका पालन करके — खास तौर पर ब्रह्म-चर्यका आग्रह रखकर नर्मदाकी परिक्रमा धीरे धीरे तीन सालमें पूरी करते हैं। चौमासेमें वे दो-तीन माह कहीं रहकर साधु-संतोंके सत्संगसे जीवनका रहस्य समझनेका आग्रह रखते हैं।

अैसी परिक्रमाके दो प्रकार होते हैं। अुनमें जो कठिन प्रकार है, अुसमें सागरके पास भी नर्मदाको लांघा नहीं जा सकता। अुद्-गमसे मुख तक जानेके वाद फिर अुसी रास्तेसे अुद्गम तक लौटना तथा अुत्तरके तटसे सागर तक जाना और फिर अुसी रास्तेसे अुद्गम तक लौटना। यह परिक्रमा अिस प्रकार दूनी होती है। अिसका नाम है जलेरी।

मौज और आरामको छोड़कर तपस्यापूर्वक अेक ही नदीका ध्यान करना, अुसके किनारेके मंदिरोंके दर्शन करना, आसपास रहनेवाले संत-महात्माओंके वचनोंको श्रवण-भक्तिसे सुनना, और प्रकृतिकी सुन्दरता तथा भव्यताका सेवन करते हुअे जीवनके तीन साल विताना कोअी मामूली प्रवृत्ति नहीं है। अिसमें कठोरता है, तपस्या है, वहादुरी है; अंतर्मुख होकर आत्म-चिंतन करनेकी और गरीबोंके साथ अेकरूप होनेकी भावना है; प्रकृतिमय वननेकी दीक्षा है; और प्रकृतिके द्वारा प्रकृतिमें विराजमान भगवानके दर्शन करनेकी साधना है।

और अिस नदीके किनारेकी समृद्धि मामूली नहीं है। असंख्य युगोंसे अुच्च कोटिके संत-महंत, वेदांती, संन्यासी और अीश्वरकी लीला देखकर गद्‌गद होनेवाले भक्त अपना अपना अितिहास अिस नदीके किनारे वोते आये हैं। अपने खानदानकी शान रखनेवाले और प्रजाकी रक्षाके लिअे जान कुरवान करनेवाले क्षत्रिय वीरोंने अपने पराक्रम अिस नदीके किनारे आजमाये हैं। अनेक राजाओंने अपनी राजधानीकी रक्षा करनेके हेतुसे नर्मदाके किनारे छोटे-वड़े किले वनवाये हैं। और भगवानके अुपासकोंने धार्मिक कलाकी समृद्धिका मानो संग्रहालय तैयार करनेके लिअे जगह जगह मंदिर खड़े किये हैं। हरेक मंदिर अपनी कलाके द्वारा आपके मनको खींचकर अंतमें अपने शिखरकी अुंगली अूपर दिखाकर अनंत आकाशमें प्रकट होनेवाले मेघश्यामका ध्यान करनेके लिअे प्रेरित करता है।

जिस प्रकार 'अजान' की आवाज सुनकर खुदापरस्तोंको नमाजका स्मरण होता है, अुसी प्रकार दूर दूरसे दिखाअी देनेवाली मन्दिरोंकी शिखररूपी चमकती अुंगलियां हमें स्तोत्र गानेके लिअे प्रेरित करती हैं।

और नर्मदाके किनारे शिवजी या विष्णुका, रामचंद्र या कृष्णचंद्रका, जगत्पति या जगदंवाका स्तोत्र शुरू करनेसे पहले नर्मदाष्टकसे प्रारंभ करना होता है—'सविंदुसिंधु सुस्खलत् तरंगभंग-रंजितम्'। अिस प्रकार जव पंचचामरके लघु-गुरु अक्षर नर्मदाके प्रवाहका अनुकरण करते हैं, तव भक्त लोग मस्तीमें आकर कहते हैं, 'हे माता! तेरे पवित्र जलका दूरसे दर्शन करके ही अिस संसारकी समस्त वाधायें दूर

हो गओीं—'गतं तदैव मे भयं त्वदम्बु वीक्षितं यदा'। और अंतमें भक्तिलीन होकर वे नमस्कार करते हैं—'त्वदीय पाद-पंकजं नमामि देवि! नर्मदे!'।

हमें यह भूलना नहीं चाहिये कि जिस प्रकार नर्मदा हमारी और हमारी प्राचीन संस्कृतिकी माता है, अुसी प्रकार वह हमारे भाओी आदिम निवासी लोगोंकी भी माता है। अिन लोगोंने नर्मदाके दोनों किनारों पर हजारों साल तक राज्य किया था, कओी किले भी बनवाये थे और अपनी अेक विशाल आरण्यक संस्कृति भी विकसित की थी।

मुझे हमेशा लगा है कि हिन्दुस्तानका अितिहास प्रांतोंके अनुसार या राज्योंके अनुसार लिखनेके बजाय यदि नदियोंके अनुसार लिखा गया होता, तो अुसमें प्रजा-जीवन प्रकृतिके साथ ओतप्रोत हो गया होता और हरेक प्रदेशका पुरुषार्थी वैभव नदीके अुद्गमसे लेकर मुख तक फैला हुआ दिखाओी देता। जिस प्रकार हम सिन्धुके किनारेके घोड़ोंको सैंधव कहते हैं, भीमाके किनारेका पोषण पाकर पुष्ट हुओ भीमथड़ीके टट्टुओंकी तारीफ करते हैं, कृष्णाकी घाटीके गाय-बैलोंको विशेष रूपसे चाहते हैं, अुसी प्रकार पुराने समयमें हरेक नदीके किनारे पर विकसित हुओी संस्कृति अलग अलग नामोंसे पहचानी जाती थी।

अिसमें भी नर्मदा नदी भारतीय संस्कृतिके दो मुख्य विभागोंकी सीमारेखा मानी जाती थी। रेवाके अुत्तरकी ओरकी पंचगौड़ोंकी विचार-प्रधान संस्कृति और रेवाके दक्षिणकी ओरकी द्रविड़ोंकी आचार-प्रधान संस्कृति मुख्य मानी जाती थी। विक्रम संवत्का काल-मान और शालिवाहन शकका काल-मान, दोनों नर्मदाके किनारे सुनाओी देते हैं और बदलते हैं।

मैंने कहा तो सही कि नर्मदा अुत्तर भारत तथा दक्षिण भारतके बीच अेक रेखा खींचनेका काम करती है; किन्तु अुसके साथ मुकाबला करनेवाली दूसरी भी अेक नदी है। नर्मदाने मध्य हिन्दुस्तानसे पश्चिम किनारे तक सीमा-रेखा खींची है। गोदावरीने यों मानकर कि यह ठीक नहीं हुआ, पश्चिमके पहाड़ सह्याद्रिसे लेकर पूर्व-सागर तक अपनी अेक तिरछी रेखा खींची है। अतः अुत्तरकी ओरके ब्राह्मण संकल्प बोलते

समय कहेंगे —"रेवायाः अुत्तरे तीरे;" और पैठणके अभिमानी हम दक्षिणके ब्राह्मण कहेंगे —"गोदावर्याः दक्षिणे तीरे।" जिस नदीके किनारे शालिवाहन या शातवाहन राजाओंने मिट्टीमें से मानव बनाकर अुनकी फौजके द्वारा यवनोंको परास्त किया, अुस गोदावरीको संकल्पमें स्थान न मिले, यह भला कैसे हो सकता है ?

* * *

नर्मदा नदीकी 'परिकम्मा' तो मैंने नहीं की है। अमरकंटक तक जाकर अुसके अुद्गमके दर्शन करनेका मेरा संकल्प बहुत पुराना है। पिछले वर्ष विन्ध्यप्रदेशकी राजधानी रीवा तक हम गये भी थे। किन्तु अमरकंटक नहीं जा सके। नर्मदाके दर्शन तो जगह जगह किये हैं। किन्तु अुसके विशेष काव्यका अनुभव किया जबलपुरके पास भेड़ाघाटमें।

भेड़ाघाटमें नावमें बैठकर संगमरमरकी नीली-पीली शिलाओंके बीचसे जब हम जलविहार करते हैं, तब यही मालूम होता है मानो योगविद्यामें प्रवेश करके मानव-चित्तके गूढ़ रहस्योंको हम खोल रहे हैं। अिसमें भी जब हम बंदरकूदके पास पहुंचते हैं, और पुराने सरदार यहां घोड़ोंको अिशारा करके अुस पार तक कूद जाते थे आदि बातें सुनते हैं, तब मानो मध्यकालका अितिहास फिरसे सजीव हो अुठता है।

अिस गूढ़ स्थानके अिस माहात्म्यको पहचानकर ही किसी योग-विद्याके अुपासकने समीपकी टेकरी पर चौंसठ योगिनियोंका मंदिर बनवाया होगा और अुनके चक्रके बीच नंदी पर विराजित शिव-पार्वतीकी स्थापना की होगी। अिन योगिनियोंकी मूर्तियां देखकर भारतीय स्थापत्यके सामने मस्तक नत हो जाता है और अैसी मूर्तियोंको खंडित करनेवालोंकी धर्मांधताके प्रति ग्लानि पैदा होती है। मगर हमें तो खंडित मूर्तियोंको देखनेकी आदत सदियोंसे पड़ी हुअी है!!

* * *

धुवांधार प्रकृतिका अेक स्वतंत्र काव्य है। पानीको यदि जीवन कहें तो अधःपातके कारण खंड खंड होनेके बाद भी जो अनायास पूर्वरूप धारण करता है और शांतिके साथ आगे बहता है, वह सचमुच

जीवनतम कहा जायगा। चौमासेमें जब सारा प्रदेश-जलमग्न हो जाता है, तब वहां न तो होती है 'धार' और न होता है अुसमें से निकलनेवाला ठंडी भापके जैसा 'धुवां'। चौमासेके बाद ही धुवांधारकी मस्ती देख लीजिये। प्रपातकी ओर टकटकी लगाकर ध्यान करना मुझे पसन्द नहीं है, क्योंकि प्रपात अेक नशीली वस्तु है। अिस प्रपातमें जब धोबीघाट परके साबुनके पानीके जैसी आकृतियां दिखाअी देती हैं और आसपास ठंडी भापके बादल खेल खेलते हैं, तब जितना देखते हैं अुतनी चित्तवृत्ति अस्वस्थ होती जाती है। यह दृश्य मन भरकर देखनेके बाद वापस लौटते समय लगता है, मानो जीवनके किसी कठिन प्रसंगमें से हम बाहर आये हैं और अितने अनुभवके बाद पहलेके जैसे नहीं रहे हैं।

*   *   *

अिटारसी-होशंगाबादके समीपकी नर्मदा बिलकुल अलग ही प्रकारकी है। वहांके पत्थर जमीनमें तिरछे गड़े हुअे हैं। किस भूकंपके कारण अिन पत्थरोंके स्तर अैसे विषम हो गये हैं, कोअी नहीं बता सकता। नर्मदाके किनारे भगवानकी आकृति धारण करके बैठे हुअे पाषाण भी अिस विषयमें कुछ नहीं बता सकते।

और वही नर्मदा जब शिरोवेष्टनके साफेके समान लंबे किन्तु कम चौड़े भड़ौंचके किनारेको धो डालती है और अंकलेश्वरके खलासियोंको खेलाती है, तब वह बिलकुल निराली ही मालूम होती है।

*   *   *

कबीरवड़के पास अपनी गोदमें अेक टापूकी परवरिश करनेका आनंद जिसे अेक बार मिला, वह सागर-संगमके समय भी अिसी तरहके अेक या अनेक टापू-बच्चोंकी परवरिश करे, तो अिसमें आश्चर्य ही क्या है?

कबीरवड़ हिन्दुस्तानके अनेक आश्चर्योंमें से अेक है। लाखों लोग जिसकी छायामें बैठ सकते हैं और बड़ी बड़ी फौजें जिसकी छायामें पड़ाव डाल सकती हैं, अैसा अेक वट-वृक्ष नर्मदाके प्रवाहके बीचोंबीच अेक टापूमें पुराण पुरुषकी तरह अनंतकालकी प्रतीक्षा कर रहा है। जब बाढ़ आती है, तब अुसमें टापूका अेकाध हिस्सा बह जाता है, और अुसके साथ

अिस वट-वृक्षकी अनेक शाखायें तथा अुन परसे लटकनेवाली जड़ें भी वह जाती हैं। अब तक कबीरवड़के अैसे बंटवारे कितनी बार हुअे, अितिहासके पास अिसकी नोंध नहीं है। नदी बहती जाती है, और बड़को नअी नअी पत्तियां फूटती जाती हैं! सनातन काल वृद्ध भी है और बालक भी है। वह त्रिकालज्ञानी भी है और विस्मरणशील भी है।

अिस काल-भगवानका और कालातीत परमात्माका अखंड ध्यान करनेवाले ऋषि-मुनि और संत-महात्मा जिसके किनारे युग-युगसे बसते आये हैं, वह आर्य अनार्य सबकी माता नर्मदा भूत-भविष्य-वर्तमानके मानवोंका कल्याण करे। जय नर्मदा, तेरी जय हो!

अगस्त, १९५५

१७

संध्यारस

गौरीशंकर* तालावका दर्शन यकायक होता है। हमने बगीचेमें जाकर पेड़ोंकी शोभा देख ली, चीनी तश्तरीके टुकड़ोंसे बनाये हुअे निर्जीव हाथी, घोड़े और शेरोंका रुआव देखकर तथा पेड़ोंके बीच मौज करनेवाले सजीव पक्षियोंका कलरव सुनकर तालवके किनारे पहुंचे; सीढ़ियां चढ़ने लगे; और ठंडे पवनकी शांति अनुभव करने लगे; तो भी खयाल नहीं हुआ कि यहां पर तालाव होगा। आखिरी (यानी अूपरकी) सीढ़ी पर पांव रखा कि यकायक मानो आकाशको चीरकर कोअी अप्सरा प्रकट हुअी हो, अिस प्रकार सरोवरका नीर हमारे सामने सस्मित वदनसे देखने लगता है। आप भले अकेले ही सरोवरका दर्शन करने आयें, परन्तु आप वहां अकेले नहीं रहेंगे। आप देखेंगे कि आकाशके बादल और सबसे जल्दी दौड़कर आयी हुअी संध्या-तारिकायें भी आपके साथ ही सरोवरकी शोभाको निहार रही हैं।

---

* सौराष्ट्रमें भावनगरका बोर तालाव।

सरोवर तो हमेशा नीची सतह पर होते हैं। पहाड़से अुतरकर नीचे आते हैं तभी हम सरोवरके जलमें पांवोंका प्रक्षालन कर पाते हैं। किन्तु यह तो मानो गंधर्व सरोवर है; मानो बादल पिघलकर टेकरीके सिर पर छलक रहे हैं!

अुस पारका किनारा दिखाओी दे अैसा सरोवर भला किसे पसन्द आयेगा? अितना सारा पानी कहांसे आता है, अैसी अतृप्त जिज्ञासा जिसके साथ न हो, अुसके सौंदर्यमें दैवी गूढ़ भाव कैसे हो सकता है? रेलवे लाअिन भी बिलकुल सीधी हो तो हमें पसन्द नहीं आती। चढ़ाव हो, अुतार हो, दाअीं या बाअीं ओर मोड़ हो, तभी वह फबती है। सरोवर कोअी प्रपात नहीं है कि वह अूंचे-नीचेकी क्रीड़ा दिखाये। गौरीशंकर चारों ओर टेकरियोंसे घिरा हुआ है। किन्तु ये टेकरियां मौतकी परवाह न करनेवाले वीरोंकी भांति भीड़ करके खड़ी नहीं हैं। अिसलिअे पानीको अिधर-अुधर सभी जगह फैलनेके लिअे अवकाश मिला है।

सरोवरके बांध परसे पश्चिमकी ओर देखने पर पानीमें भांति-भांतिके रंग फैले हुअे दिखाअी देते हैं, मानो किसी अद्‌भुत अुपन्यासमें नवों रस गूंथे गये हों। पांवके नीचे आत्महत्याका गहरा हरा रंग मानो हर क्षण हमें अंदर बुलाता है। अिसमें भी सभी जगह समानता नहीं है। कहीं मेंहदीकी पत्तियोंकी तरह गाढ़ा, तो कहीं नीमकी पत्तियोंकी तरह गहरा। काफी देखनेके बाद लगता है कि यह पानीका रंग नहीं है, बल्कि पानीमें छिपा हुआ स्वतंत्र जहर है। कुछ आगे देखने पर बादामी रंग दीख पड़ता है, मानो निराशामें से आशा प्रकट होती हो। रंग तो है बादामी, किन्तु अुसमें धातुकी चमक है। आगे जाकर वही रंग कुछ रूपांतर पाकर नारंगी रंगके द्वारा संध्याका अुपस्थान करता हुआ दिखाअी देता है। बादलोंकी जामुनी छाया बीचमें यदि न आअी होती तो पता नहीं अिस ओरके नारंगी और अुस ओरके सुनहरे रंगके बीच कैसी शोभा प्रकट होती!

हमारा ध्यान सुनहरे रंगकी ओर जाता है अुसके पहले ही मंद-मंद बहता हुआ पवन जलपृष्ठ पर वीचिमाला अुत्पन्न करके हमसे कहता है, 'सुनिये, यह समयोचित स्तोत्र!' सामनेकी टेकरीने सिर अूंचा न किया

होता तो यह रसवती पृथ्वी कहां पूरी होती है और निःशब्द आकाश कहां शुरू होता है, यह जानना किसी पंडितके लिअे भी कठिन हो जाता।

बाअीं ओर काट-छांट की हुअी मेंहदीकी वाड़ है। सुघड़ वाड़ किसे पसंद न होगी? किन्तु शृंगार-साधिका मेंहदीका शिरच्छेद मुझे असह्य मालूम हुआ। दाहिनी ओर ठंडे पड़े हुअे किन्तु गाढ़ न हुअे सूर्यके तेजके समान सरोवर और बाअीं ओर नीचे घनी-छिछली झाड़ी! अैसे परस्पर भिन्न रसोंके बीचसे जनककी तरह योगयुक्त चित्तसे हम आगे बढ़े। वहां मिला अेक निराधार सेतु। संस्कृत कवियोंने अुसे देखा होता तो वे अुसका नाम शिक्य-सेतु ही रखते। अैसे सेतुओंकी खोज पहले-पहल हिमालयके वनेचरोंने ही की होगी। यह निराधार पुल हमें धीरे धीरे ले जाता है पानीके बीच तप करनेवाले ऋषि-जैसे अेक द्वीपके जटाभारमें। पुलके बीचोंबीच पहुंचने पर आतिथ्यशील जल चेतावनी देता है: 'सावधानीसे चलिये, सावधानीसे चलिये।' और योग्य अवसर मिलने पर पादप्रक्षालन करनेमें भी नहीं चूकता।

और वह द्वीप? वह तो नीरव शांतिकी मूर्ति है। पानीमें चांद अितना खिलखिलाकर हंसता है, फिर भी अुसकी प्रतिध्वनि कहीं सुनाअी नहीं देती। मानो प्रकृतिको डर मालूम होता है कि कहीं ध्यानी मुनिकी शांतिमें खलल न पड़े। अिस बेटमें न तो सांप हैं, न गिरगिट। पक्षी हों तो वे अब अपने घोंसलोंमें निश्चित सो गये हैं। आतिथेय मंडपके नीचे हम विराजमान हुअे। अब तो पानीके अूपर अज्ञात या गूढ़ अंधकारकी छाया फैलने लगी थी। अष्टमीकी चांदनी सीधी पानीमें अुतर रही थी। सिर्फ जातिवैरी सुर-असुरोंके गुरु दीर्घ विग्रहसे अूबकर पश्चिमकी ओर चमक रहे थे, मानो समझौता करनेके लिअे अिकट्ठे हुअे हों। प्रकाश और अंधकारकी संधि करनेका प्रयत्न संध्याने अनेक बार किया है। अिसमें यदि वह कभी कामयाब हो सके तो ही सुर-असुरोंके बीच हमेशाके लिअे समाधान हो सकेगा। देखिये, दोनोंके गुरु अपनी दिशाको बदलकर अपनी स्वभावोचित गतिसे जा रहे हैं और संध्याकी रक्त कालिमा दोनोंको किसी

पक्षपातके बिना घेर रही है। जो हमेशा विग्रह ही चलाता है, अुसका अन्त तो होने ही वाला है।

अब पानीने अपना रंग बदला। अब तक पानीके पृष्ठ पर चांदीके बनाये हुअे रास्तोंके समान जो पट्टे बिना कारण दिखाअी देते थे वे अब दिखने बंद हुअे। खेल काफी हो चुका है, अब गंभीरताके साथ सोचना चाहिये, अैसा कुछ विचार आनेसे पानीकी मुखमुद्रा अंतर्मुख हो गअी। टेकरियां अैसी दिखाअी देने लगीं, मानो प्रेतलोकके वासनादेह विचरते हों। विस्तीर्ण शांति भी कितनी बेचैन कर सकती है, अिस बातका खयाल यहां पूरा-पूरा हो आता है। सब टेकरियां मानों हमारी अेक आवाज सुननेकी ही राह देख रही हैं। अिसमें कोअी संदेह नहीं रहता कि जरासी आवाज देने पर वे 'हां, हां! अभी आओ, अभी आओ।' कह कर दौड़ती हुअी आयेंगी। किन्तु अुन्हें बुलानेकी हिम्मत ही कैसे हो? क्या वे टेकरियां नक्षत्ररात्रिके समय, कोअी न देख रहा हो तब, कपड़े अुतारकर सरोवरमें नहानेके लिअे अुतरती होंगी? आज तो वे नहीं अुतरेंगी, क्योंकि दुर्विनीत चन्द्रमा मध्यरात्रि तक सरोवरमें टकटकी बांधकर देखता रहेगा। और मध्यरात्रिके पहले ही शिशिरकी ठंडका साम्राज्य शुरू होनेवाला है। फिर पता नहीं, अुषःकालके पहले माघस्नान करनेकी अिच्छा अिन्हें होगी या नहीं। अैसे किसी पुण्यसंचयके बिना टेकरियोंको भी अितनी स्थिरता कैसे प्राप्त हुअी होगी?

कोअी पुल परसे निकला। पानीमें अुससे खलबली मचती है, और अुसमें से निकलनेवाली लहरोंके वर्तुल दूर दूर तक दौड़ते हैं। लोग अपने अपने गांवोंमें रहते हैं फिर भी जिस तरह खबरें अुनके द्वारा दूर दूरकी यात्रा करती हैं, अुसी तरह पुलके पास जो क्षोभ शुरू हुआ वह किनारे तक पहुंचने ही वाला है। शरीरमें अेक जगह चोट लगनेसे जैसे सारे शरीरको अुसका पता चल जाता है, वैसी पानीकी भी बात है। पानीकी शांतिमें यदि भंग हो तो अुसके परिणामस्वरूप अुसके अुदरमें प्रतिबिंबित हुआ सारा ब्रह्मांड डोलने लगता है।

अब सितारोंका रास शुरू हुआ। पानीमें अुसका अनुकरण चलता दीख पड़ता है। किन्तु भूलोकका ताल तो अलग ही है।

फरवरी, १९२७

१८

रेणुका का शाप

रेणुका का मतलब है रेत। अुसके शापसे कौनसी नदी सूख न जायगी? गयाकी नदी फल्गु भी अिस तरह अंतःस्रोता हो गअी है न! फिर वढवाणके पासकी भोगावो भी अैसी क्यों न हो? सौराष्ट्रमें भोगावो (बरसातके बाद सूखनेवाली नदियां) बहुत हैं। क्या हरेकको किसी न किसी राणकदेवीका शाप लगा होगा? शेत्रुंजी, भादर, मच्छु, आजी, रंगमती, मेगळ — चारों दिशाओंमें बहनेवाली अिन नदियोंमें कितनी नदियां अैसी हैं, जिनमें बारह मास पानी बहता हो? खंडस्थ भारतवर्षसे सौराष्ट्र-काठियावाड़ अनेक प्रकारसे अलग मालूम होता है। अुसका आकार भी कितना है! चोटीला या बरडा, शेत्रुंजा या गिरनार पर्वत भला पानी देगा भी तो कितना देगा? और अुनकी लड़कियां भी खींच-खींचकर आखिर कितना पानी लायेंगी? नीलगिरि और सह्याद्रि, सातपुड़ा और विन्ध्याद्रि, हिंदूकुश और हिमालय, नागा, खासी और ब्रह्मी योमा जैसे समर्थ पर्वतराजोंको ही बादलोंका मुख्य करभार मिलता है। अुनकी लड़कियां गौरवसे कैसी अलस-लुलित होकर चलती हैं! अुनके मुकाबलेमें बेचारी काठियावाड़ी नदियां क्या हैं? पानी बरसा कि बहने लगीं। बरसात बन्द हुआ कि असमंजसमें पड़कर सूख गअीं।

हरेक नदीने अेक-दो अेक-दो शहरोंको आश्रय दिया है। भोगावोके कारण वढवाण (अब सुरेन्द्रनगर) की शोभा है। राणकदेवीका शाप अगर न लगा होता तो अिस नदीका मुख कितना अुज्वल मालूम होता! अंत्यजोंका शाप लेकर आगेके लोग भविष्यमें अुसकी क्या दशा करनेवाले

हैं ? शेत्रुंजीकी वक्रता देखनी हो तो अुसके वीर(भाअी)के शिखर परसे देख लीजिये। कुंदनके समान पीली घास अुगी हुअी है, दूर दूर तक गालीचोंके समान खेत फैले हुअे हैं और बीचमें से शेत्रुंजी धीमे धीमे अपना रास्ता काटती जा रही है। शेत्रुंजीकी यह चाल संस्कारी और चित्ताकर्षक है।

और मेगळका नाम मेगळ (=मयगळ?) क्यों पड़ा होगा? क्या देवघरामें मगरने किसी हाथीको पकड़ रखा होगा अिसलिअे? या समुद्र और अुसके बीच आनेवाले अूंचे सिकता-पट पर वह सिर पटकती है अिसलिअे? समुद्रसे मिलनेका हक तो हरेक नदीको है ही। किन्तु बेचारी मेगळके भाग्यमें सालमें आठ महीनों तक खंडिताकी तरह अपने पतिके दूरसे ही दर्शन करना बदा है। वर्षा ऋतुमें जब समुद्रसे भी रहा नहीं जाता तभी अिन दोनोंका संगम होता है। चोरवाड़के लोगोंको अिस संगम पर ही स्मशान बनानेकी क्या सूझी होगी? या कैसे कह सकते हैं कि अिसमें भी औचित्य नहीं है? स्मशान भी तो अिहलोक और परलोकका संगम ही है न!

भादर ही अेक अैसी नदी है, जिसके लिअे काठियावाड़ गर्व कर सकता है। भादरका असली नाम क्या होगा? भाद्रपदी या भद्रावती? बहादुर तो हरगिज नहीं होगा। अिस नदीकी प्रतिष्ठा बहुत है। जेतपुर, नवागढ़ और नवीबंदर जैसे स्थान अुसके तट पर खड़े हैं। नवीबंदर जब बसा होगा तब अुसको 'नवी' (=नयी) नाम देनेवाले पुरुषोंके दिलमें कितनी आकांक्षा, कितना अुत्साह होगा! पोरबंदरसे भी यह श्रेष्ठ होगा, बड़े बड़े जहाज दूर दूरके देशोंका माल देशके अंदर पहुंचायेंगे! दैव यदि अनुकूल होता तो क्या भादर टेम्स नदीकी प्रतिष्ठा न पाती? किन्तु नदीकी प्रतिष्ठा तो अुसके पुत्रोंके पुरुषार्थ पर निर्भर है। आज भादरको हिन्दुस्तानकी पश्चिम-वाहिनी नदियोंका नेतृत्व मिला है यही काफी है।

रंगमती, आजी और मच्छु नदियां चाहे जितनी परोपकारी हों और नवानगर, राजकोट और मोरवीके वैभवको वे भले अखंड रूपमें निहारती हों, फिर भी अुन्हें सागरको छोड़कर छोटे अखातको ही ब्याहना पड़ा है।

काठियावाड़की अिन सव नदियोंने देशी रियासतोंकी करतूतोंको तथा प्रपंचोंको पुराने जमानेसे देखा होगा। मगर काठियावाड़के भिन्न भिन्न विभागोंके विशिष्ट रीति-रिवाजोंका दर्शन यदि वे हमें करा दें तो वह कथा रोचक जरूर होगी।

सौराष्ट्रकी नदियोंका पानी पीनेवाले किसी पुत्रका यह काम है कि वह अिन नदियोंके मुंहसे अुनका अपना अपना अनुभव सुनवावे।

१९२६–२७

१९

अंबा-अंबिका

भीष्म-पितामह अंवा-अंविका नामक दो राजकन्याओंको जीतकर राजा विचित्रवीर्यके पास ले आये। कन्याओंने साफ-साफ कह दिया, 'हमारा मन दूसरी जगह वैठा हुआ है।' विचित्रवीर्य अव अिनसे विवाह कैसे करे? और जिसमें अिनका मन चिपका था वह राजा भी जीती हुअी कन्याओंका स्वीकार किस प्रकार करे? वेचारी राजकन्याओंको कोअी पति नहीं मिला और वे झूर झूर कर मर गअीं।

गरमीके दिनोंमें आवूके पहाड़ परसे सरस्वती और वनास नदियोंके दर्शन किये थे। वे वेचारी समुद्र तक पहुंच ही न पाअीं। वीचमें कच्छके रेगिस्तानमें ही झूर झूर कर लुप्त हो गअी हैं। अंवा-अंविकाकी तरह कौमार्य, सौभाग्य और वैधव्यमें से अेक भी स्थिति अिनके लिअे नहीं रही। गुजरात और राजपूतानाके अितिहासमें अिन नदियोंका कितना भी महत्त्व क्यों न हो, राजा कर्णके दो आंसुओंके अलावा हम अुन्हें क्या दे सकते हैं?

१९२६–'२७

२०

लावण्यफला लूनी

खारची (मारवाड़ जंक्शन) से सिंध हैदराबाद जाते हुअे लूनी नदीका दर्शन अनेक बार किया है। क्योंकि स्वदेश जोधपुर जानेका रास्ता लूनी जंक्शनसे ही है; अिसलिअे भी अिस नदीका नाम स्मृतिपट पर अंकित है। वहांके स्टेशन पर हिरणके अच्छे-अच्छे चमड़े सस्तेमें मिलते थे। अैसे मुलायम मृगाजिन यहांसे खरीदकर मैंने अपने कअी गुरुजनोंको और प्रियजनोंको ध्यानासनके तौर पर भेंट दिये थे। पता नहीं कि चमड़ेके अिस अुपयोगसे हिरणोंको अुनके ध्यानका कुछ पुण्य मिला या नहीं।

लूनीका नाम सुनते ही हृदय पर विषाद छा जाता है। यों तो सब-की-सब नदियां अपना मीठा जल लेकर खारे समुद्रसे मिलती हैं। और अिसी तरह अपने पानीको सड़नेसे बचाती हैं। लेकिन सागरका संगम होने तक नदीका पानी मीठा रहे यही अच्छा है। बेचारी लूनीका न सागरसे संगम होता है, और न आखिर तक अुसका पानी मीठा ही रहता है।

अगर यह नदी सांभर सरोवरसे निकली होती तो अुसका खारापन हम माफ कर देते। लेकिन अुसका अुद्गम है अजमेरके पास अरवली, आरावली या आड़ावलीकी पहाड़ियोंसे। वहां भी अुसे सागरमती कहते हैं! वह गोविन्दगढ़ तक पहुंच गअी तो वहां पुष्कर सरोवरके पवित्र जल लाकर सरस्वती नदी अुससे मिलती है।

लूनीका असली नाम था लवणवारि। अुसका अपभ्रंश हो गया लोणवारी, और आज लोग अुसे कहते हैं लूनी। अजमेरसे लेकर आबू तक जो आरवलीकी पर्वत श्रेणी फैली हुअी है, अुसका पश्चिमका सारा पानी छोटे-बड़े स्रोतोंके द्वारा लूनीको मिलता है। अिस पानीके बदौलत जोधपुर राज्यका आधा भाग अपनी द्विदल धान्यकी खेती करता

है। सिंघाड़ेकी अुपज भी यहां कम नहीं है। जहां-जहां लूनीकी बाढ़ पहुंचती है, वहां किसान अुसे आशीर्वाद ही देते हैं।

जब लूनी बालोतरा पहुंचती है तब अुसका भाग्य — सौभाग्य नहीं किन्तु दुर्भाग्य, अुस पर सवार होता है। जहां जमीन ही खारी है वहां बेचारी नदी क्या करे?

जोधपुरके राजा जसवंतसिंहको सद्‌बुद्धि सूझी। अुसने लूनी नदीका पानी खारा होनेके पहले ही, बिलाड़ाके पास अेक बड़ा बांध बांध दिया और बाअीस वर्गमीलका अेक बड़ा विशाल, मनुष्य-कृत सरोवर बना दिया। तेरह हजार वर्गमीलका पानी अिस सरोवरमें अिकट्‌ठा होता है। अिसकी गहराअी अधिक-से-अधिक चालीस फुटकी है। अिस सरोवरका नाम 'जसवंत-सागर' रखा सो तो ठीक ही है, क्योंकि राजाने अुसे बनाया। अगर किसानोंसे पूछा जाता तो वे अुसे 'लूनी-प्रसाद' कहते।

अपनी दो सौ मीलकी यात्राके अन्तमें यह नदी कच्छके रणमें अपने भाग्यको कोसते-कोसते लुप्त हो जाती है। अिसके तीनों मुख नमकसे अितने भरे हुए रहते हैं कि समुद्र भी अिसके पानीका आचमन करनेमें संकोच करता है।

अब देखना है कि लूनी, सरस्वती, बनास और अैसी ही दूसरी नदियां जिस श्रद्धासे अपना जल कच्छके रणमें छोड़ देती हैं, अुस श्रद्धाका फल अुन्हें कब मिलता है और रणका परिवर्तन अुपजाअू भूमिमें कब हो जाता है। आज लूनी नदी करीब-करीब पाकिस्तानकी सरहद तक पहुंच जाती है और कच्छके रणको दिन-पर-दिन अधिक खारा करती जाती है! अैसी लवण-प्रधान, लवण-समृद्ध नदीको अगर हम 'लावण्यवती' कहें तो वैयाकरण अुस नामको जरूर मान्य करेंगे।

काव्यरसिक क्या कहेंगे अिसका पता नहीं।

१०.५७

२१

अुंचळ्ळीका प्रपात

जोगके बिलकुल ही सूखे प्रपातके अिस बारके दर्शनका गम हल्का करनेके लिअे दूसरा अेकाध भव्य और प्रसन्न दृश्य देखनेकी आवश्यकता थी ही। कारवार जिलेके सर्वसंग्रह — गॅजेटियर — के पन्ने अुलटते अुलटते पता चला कि जोगसे थोड़ा ही घटिया अुंचळ्ळी नामक अेक सुन्दर प्रपात शिरसीसे बहुत दूर नहीं है। लशिंग्टन नामक अेक अंग्रेजने सन् १८४५में अिसकी खोज की थी, मानो अुसके पहले किसीने अिसे देखा ही न हो! अंग्रेजोंकी आंखों पर वह चढ़ा कि दुनियामें अुसकी शोहरत हो गयी!

यह अुंचळ्ळी कहां है? वहां किस ओरसे जाया जा सकता है? हम कैसे जायें? हमारे कार्यक्रममें वह बैठ सकता है या नहीं? आदि पूछताछ मैंने शुरू कर दी। श्री शंकरराव गुलवाड़ीजीने देखा कि अब अुंचळ्ळीका कार्यक्रम तय किये बिना शांति या स्वास्थ्य मिलनेवाला नहीं है। वे खुद भी मुझसे कम अुत्साही नहीं थे। अुन्होंने बताया कि जब बिजली पैदा करनेकी दृष्टिसे कारवार जिलेके प्रपातोंकी जांच — सरवे की गअी थी, तब अिंजीनियर लोगोंने अुंचळ्ळीके प्रपातको प्रथम स्थान पर रखा था; और गिरसप्पा यानी जोगके प्रपातको दूसरे स्थान पर; मागोडाको तीसरा और सूपाके नजदीकके प्रपातको चौथा स्थान दिया था।

समुद्रके साथ कारवार जिलेकी दोस्ती जोड़नेवाली मुख्य चार नदियां हैं — काळी नदी, गंगावळी, अघनाशिनी और शरावती। अिनमें से शरावती या बालनदी होन्नावरके पास समुद्रसे मिलती है। दस साल पहले जब हमने जोगका प्रपात दूसरी बार देखा था, तब अिस शरावती नदी पर नावमें बैठकर होन्नावरसे हम अूपरकी ओर गये थे। शरावतीका किनारा तो मानो वनश्रीका साम्राज्य है!

अिस बार जब हम हुबलीसे अंकोला और कारवार गये तब आरबेल घाटीमें से 'नागमोड़ी' रास्ता निकालनेवाली गंगावळीको

देखा था। और अंकोलासे गोकर्ण जाते समय अुसके पृष्ठभाग पर नौका-क्रीड़ा भी की थी। काळी नदीके दर्शन तो मैंने बचपनमें ही कारवारमें किये थे। पचास साल पहलेके ये संस्मरण दस साल पहले ताजे भी किये थे और अबकी बार भी कारवार पहुंचते ही काळी नदीके दो बार दर्शन किये। किन्तु अितनेसे संतोष न होनेके कारण कारवारसे हळगा तक की दस मीलकी यात्रा — आना-जाना — नावमें की।

चौथी है अघनाशिनी। अुसका नाम ही कितना पावन है! गोकर्णके दक्षिणकी ओर तदड़ी बंदरके पास वह टेढ़ी-मेढ़ी होकर खूब फैलती है। किन्तु समुद्र तक पहुंचनेके लिअे अुसको जो रास्ता मिलता है वह बिलकुल छोटा है। यह अघनाशिनी जहां समुद्रसे मिलनेके लिअे अुतावली होकर सह्याद्रिके पहाड़ परसे नीचे कूदती है, वही स्थान अुंचळ्ळीके प्रपातके नामसे पहचाना जाता है।

हमने सिद्धापुरसे शिरसीका रास्ता लिया। किन्तु शिरसी तक जानेके बदले अेक रास्ता पश्चिमकी ओर फूटता था, अुससे हम नीलकुंद पहुंचे। वहां श्री गोपाल माडगांवकरके चाचा रहते थे। वे बड़े प्रतिष्ठित जमींदार थे। अुनके आतिथ्यका स्वीकार करके हम अुंचळ्ळीकी खोजमें निकल पड़े। नीलकुंदसे होसतोट (=नया बगीचा) जाना था। फौजी 'जीप' का प्रबंध होनेसे जंगलका रास्ता कैसे तय करेंगे, यह चिंता करीब करीब मिट गअी थी। होसतोटसे होन्नेकोंब (=सोनेका सींग) की ओरका रास्ता हमें लेना था। किन्तु अिस रास्तेसे मोटर तो क्या, बैलगाड़ी या पालकी भी नहीं जा सकती थी। अिसे तो बाघका रास्ता कहना चाहिये। मनुष्य भी बाघके जैसा बनकर ही अैसे रास्तेसे जा सकता है। हमने अपनी जीपको अेक पेड़की छांहमें आराम करनेके लिअे छोड़ दिया और 'अथाऽतो प्रपात-जिज्ञासा' कहकर जंगलमें रास्ता तय करना शुरू किया। होसतोटसे अेक स्थानिक नौजवान हाथमें अेक बड़ा 'कोयता' लेकर हमें रास्ता दिखानेके लिअे हमारे आगे चला। अिस बेचारेको धीरे चलनेकी आदत नहीं थी, न सृष्टि-सौंदर्य निहारनेकी लत! वह तो आगे ही आगे चलने लगा। हमें अुसका

बहुत ही कम लाभ मिला। हम कुछ आगे गये। अूपर चढ़े, नीचे अुतरे, फिर चढ़े और फिर अुतरे। अितनेमें जंगल घना होने लगा। थोड़े समयके बाद वह घनघोर हो गया।

So steep the path, the foot was fain,
Assistance from the hand to gain.

हमारी मुख्य कठिनाओी तो पगडंडीकी थी। वहां सूखे पत्ते अितने जमा हो गये थे कि पांव न फिसले तो ही गनीमत समझिये! मेहर मालिककी कि अिन पत्तोंमें से सरसराता हुआ कोओी सांप न निकला। वरना हमारी अुंचळ्ळी वहींकी वहीं रह जाती। जहां सख्त अुतार होता था वहां लाठीसे पत्तोंको हटाकर देखना पड़ता था कि कोओी मजबूत पत्थर या किसी दरख्तकी अेकाध चीमड़ जड़ है या नहीं।

दोपहरके बारहका समय था। किन्तु पेड़ोंकी 'स्निग्ध-छाया' के अंदर धूप आये तभी न? चलकर यदि गरम न हो गये होते तो सर्दी ही लगती। जरा आगे बढ़ते और अेक-दूसरेसे पूछते, "हमने कितना रास्ता तय किया होगा? अब कितना बाकी होगा?" सभी अज्ञान! किन्तु सिद्दापुरसे अेक आयुर्वेदिक डॉक्टर कैमेरा लेकर हमारे साथ आये थे। ये सज्जन अेक साल पहले दूसरे किसी रास्तेसे अुंचळ्ळी गये थे। अपने पुराने अनुभवके आधार पर वे रास्तेका अंदाज हमें बताते थे। बीच बीचमें तो हमारा यह नाममात्रका रास्ता भी बन्द हो जाता था। आगे अंदाजसे ही चलना पड़ता था। किन्तु सच्ची मुसीबत रास्ता बन्द हो जाने पर नहीं, बल्कि तब होती है जब अेक पगडंडी फूटकर दो पगडंडियां बन जाती हैं। जब सही रास्ता दिखानेवाला कोओी नहीं होता और अंधा अंदाज करनेवाले अेक साथीकी रायसे दूसरेका अंधा अंदाज मेल नहीं खाता, तब 'यद् भावि तद् भवतु'—जो होनेवाला होगा सो होगा—कहकर किस्मतके भरोसे किसी अेक पगडंडीको पकड़ लेना पड़ता है।

किसीने कहा कि दूरसे प्रपातकी आवाज सुनाओी देती है। मेरे कान बहुत तीक्ष्ण नहीं हैं। अेकने तो कभीका अिस्तीफा दे दिया है और दूसरा काम भरकी ही बात सुनता है। किन्तु अपनी कल्पना-शक्तिके

बारेमें मैं अैसा नहीं कहूंगा। मैंने कान और कल्पना, दोनोंके सहारे सुननेकी कोशिश की। किन्तु जिसे प्रपातकी आवाज कहें वैसी कोअी आवाज सुनाअी न दी। कहीं मधुमक्खियां भनभनाती होतीं तो भी मैं कहता, "हां, हां, प्रपातकी आवाज सचमुच सुनाअी देती है।" कठिन यात्रामें साथियोंके साथ झट सहमत हो जानेके यात्रा-धर्ममें मेरा पूर्ण विश्वास है। किन्तु यहां मैं लाचार था।

अेक ओर यदि जंगलकी भीषण सुंदरताका मैं रसास्वादन कर रहा था, तो दूसरी ओर चि० सरोजके कितने बेहाल हो रहे होंगे अिस चितासे अुसकी ओर देखता था। जब सरोजने कहा, "जंगलकी अैसी यात्राके अंतमें अगर कोअी प्रपात देखनेको न मिले तो भी कहना होगा कि यहां आना सार्थक ही हुआ है। कैसा मजेका जंगल है! ये बड़े बड़े पेड़; अुन्हें अेक-दूसरेसे बांधनेवाली ये लतायें — सब सुन्दर है!" तब मुझे बहुत संतोष हुआ।

आगे जब रास्ता लगभग असंभव-सा मालूम हुआ, और अेक हाथमें लकड़ी तथा दूसरेसे किसीका कंधा पकड़कर अुतरना भी संदेहप्रद प्रतीत हुआ, तब भी सरोज कहने लगी: "मेरा अुत्साह कम नहीं हुआ है। किन्तु दूसरोंको अड़चनमें डाल रही हूं अिस खयालसे ही हताश हो रही हूं। यह अुतार फिर चढ़ना होगा अिसका भी खयाल रखना है।"

मैंने कहा, "अेक बार अंचळ्ळीके दर्शन करनेके बाद किसी न किसी तरह वापस तो लौटना होगा ही। किन्तु हम पूरा आराम लेकर ही लौटेंगे। यहां तक तो आ ही गये हैं, और अब प्रपातकी आवाज भी सुनाअी दे रही है। अिसलिअे अब तो आगे बढ़ना ही चाहिये।"

हमारे मार्गदर्शकने नीचे जाकर आवाज दी। डॉक्टरने कहा, "शायद अुसने पानी देखा होगा।" हमारा अुत्साह बढ़ा। हम फिर अुतरे। आगे बढ़े। फिर दाहिनी ओर मुड़े और आखिर जिसके लिअे आंखें तरस रही थीं अुस प्रपातका सिर नजर आया!

अेक तंग घाटीके अिस ओर हम खड़े थे और सामने अघनाशिनीका पानी, जिसे सुबह जीपकी यात्राके दरम्यान हमने तीन-चार बार

लांबा था, यहां अेक बड़े पत्थरके तिरछे पट परसे नीचे पहुंचनेकी तैयारी कर रहा था। गीत जिस प्रकार तम्बूरेके तालके साथ ही सुना जाता है, अुसी प्रकार प्रपातके दर्शन भी नगारेके समान बद-बद आवाजके साथ ही किये जाते हैं।

अुंचळ्ळीका प्रपात जोगके राजाकी तरह अेक ही छलांगमें नीचे नहीं पहुंचता है। सुबहकी पतली नींदके हरेक अंशका जिस प्रकार हम अर्ध-जाग्रत स्थितिमें अनुभव लेते हैं, अुसी प्रकार अघनाशिनीका पानी अेक अेक सीढ़ीसे कूदकर सफेद रंगका अनेक आकारोंका परदा बनाता है। जितने शुभ्र पानीमें संसारका कालेसे काला 'अघ'—पाप भी सहज ही धुल सकता है

जिस प्रकार धान पछोरने पर सूपके दाने नाचते-कूदते दाहिनी ओरके कोने पर दौड़ते आते हैं, और साथ साथ आगे भी बढ़ते हैं, अुसी प्रकार यहांका पानी पहाड़के पत्थर परसे अुतरते समय तिरछा भी दौड़ता है और फेनके वलय बनाकर नीचे भी कूदता है। पानी अेक जगह अवतीर्ण हुआ कि वह फौरन घूमकर अंगरखेके घेरकी तरह या धोतीके घुमावकी तरह फैलने लगता है और अनुकूल दिशा ढूंढ़कर फिर नीचे कूदता है।

अब तो बिना यह जाने कि यह पानी जिस प्रकार कितने नखरे करनेवाला है और अंतमें कहां तक पहुंचनेवाला है, संतोष मिलनेवाला न था। हममें से चंद लोग आगे बढ़े। फिर अुतरे। और भी अुतरे। पेड़की लचीली डालियोंको पकड़कर अुतरे। अैसा करते करते पूरे प्रपातका अखंड साक्षात्कार करानेवाले अेक बड़े पत्थर पर हम जा पहुंचे। अुस पर खड़े रहकर सामनेकी बड़ी अूंची चट्टानसे गिरते हुअे पानीका पदक्रम देखना जीवनका अनोखा आनन्द था। हम टकटकी लगाकर पानीको देखते थे। मगर हम लोगोंको देखनेके लिअे पानीके पास फुरसत न थी। वह अपनी मस्तीमें चूर था। कपूरके चूर्णमें शुभ्र रंगका जो अुत्कर्ष होता है, वही अिस जीवनावतारमें था।

भगवान सूर्यनारायण माथे परसे हमें अपने आशीर्वाद देते थे। पसीनेके रेले हमारे गालों परसे चाहे अुतने अुतरें, सामनेके प्रपातके आगे वे किसीका ध्यान थोड़े ही खींच सकते थे! सूर्यनारायणके आशीर्वाद झेलनेकी जैसी शक्ति अुंचळ्ळीके प्रपातमें थी, वैसी मुझमें न थी। पानी चमक कर सफेद रेशम या साटिनकी शोभा दिखाने लगा। A moving tapestry of white satin and silver filigree.

कटकमें चांदीके बारीक तार खींचकर अुसके अत्यंत नाजुक और अत्यंत मोहक फूल, गहने आदि बनाये जाते हैं। तारके बनाये हुअे पीपलके पत्ते, कमल, करंड आदि अनेक प्रकारकी चीजें मैंने अुड़ीसामें मन भरकर देखी हैं और कहा है, 'अिन गहनोंने बेशक कटकका नाम सार्थक किया है।'

प्रकृतिके हाथोंसे बननेवाले और क्षण-क्षणमें बदलनेवाले चांदीके सुंदर और सजीव गहने यहां फिरसे देखकर कटकका स्मरण हो आया। सोनेके ढक्कनसे सत्यका रूप शायद ढंक जाता होगा, किन्तु चांदीके सजीव तार-कामसे प्रकृतिका सत्य अद्भुत ढंगसे प्रगट होता था। "अब अिस सत्यका क्या करूं? किस तरह अुसे पी लूं? अुसे कहां रखूं? किस तरह अुठाकर ले चलूं?" अैसी मधुर परेशानी मैं महसूस कर रहा था, अितनेमें पुरानी आदतके कारण, अनायास, कंठसे अीशावास्यका मंत्र जोरोंसे गूंजने लगा। हां, सचमुच अिस जगतको अुसके अीशसे ढंकना ही चाहिये —जिस तरह सामनेका तिरछा पत्थर पानीके परदेसे ढंक जाता है और वह परदा चैतन्यकी चमकसे छा जाता है। जो जो दिखाअी देता है—फिर वह चाहे चर्म-चक्षुकी दृष्टि हो या कल्पनाकी दृष्टि हो—सबको आत्मतत्त्वसे ढंक देना चाहिये। तभी अलिप्त भावसे अखंड जीवनका आनन्द अंत तक पाया जा सकता है। मनुष्यके लिअे दूसरा कोअी रास्ता नहीं है।

दृष्टि नीचे गअी। वहां अेक शीतल कुंड अपनी हरी नीलिमामें प्रपातका पानी झेलता था और यह जाननेके कारण कि परिग्रह अच्छा नहीं है, थोड़ी ही देरमें अेक सुंदर प्रवाहमें अुस सारी जलराशिको बहा देता था। अघनाशिनी अपने टेढ़े-मेढ़े प्रवाहके द्वारा आसपासकी सारी भूमिको

पावन करनेका और मानव-जातिके टेढ़े-मेढ़े (जुहुराण) पाप (अेनस्) को धो डालनेका अपना व्रत अविरत चलाती थी। मैंने अंतमें अुसीसे प्रार्थना की:

युयोधि अस्मत् जुहुराणम् अेनः
भूयिष्ठां ते नम अुक्ति विधेम।

हे अघनाशिनी! हमारा टेढ़ा-मेढ़ा कुटिल पाप नष्ट कर दे। हम तेरे लिअे अनेकों नमस्कारके वचन रचेंगे।

जून, १९४७

२२

गोकर्णकी यात्रा

लंकापति रावण हिमालयमें जाकर तपश्चर्या करने बैठा। अुसकी मांने अुसे भेजा था। शिवपूजक महान सम्राट् रावणकी माता क्या मामूली पत्थरके लिंगकी पूजा करे? अुसने लड़केसे कहा, "जाओ बेटा, कैलास जाकर शिवजीके पाससे अुन्हींका आत्मलिंग ले आओ। तभी मेरे यहां पूजा हो सकती है।" मातृभक्त रावण चल पड़ा। मानसरोवरसे हररोज अेक सहस्र कमल तोड़कर वह कैलासनाथकी पूजा करने लगा। यह तपश्चर्या अेक हजार वर्ष तक चली।

अेक दिन न जाने कैसे, नौ कमल कम आये। पूजा करते करते बीचमें अुठा नहीं जा सकता था, और सहस्रकी संख्यामें अेक भी कमल कम रहे तो काम नहीं चल सकता था। अब क्या किया जाय? आशुतोष महादेवजी शीघ्रकोपी भी हैं। सेवामें जरा भी न्यूनता रही कि सर्वनाश ही समझ लीजिये। रावणकी बुद्धि या हिम्मत कच्ची तो थी ही नहीं। अुसने अपना अेक-अेक शिर-कमल अुतारकर चढ़ाना शुरू कर दिया। अैसी भक्तिसे क्या प्राप्त नहीं होता? भोलानाथ प्रसन्न हुअे। कहने लगे: 'वर मांग, वर मांग। जितना मांगे अुतना कम

है।' रावणने कहा, 'मां पूजामें बैठी है। आपका आत्मलिंग चाहिये।' शब्द निकलनेकी ही देर थी। शंभुने हृदय चीरकर आत्मलिंग निकाला और रावणको दे दिया।

त्रिभुवनमें हाहाकार मच गया। देवाधिदेव महादेवजी आत्मलिंग दे बैठे। और वह भी किसको? सुरासुरोंके काल रावणको! अब तीनों लोकोंका क्या होगा? ब्रह्मा दौड़े विष्णुके पास। लक्ष्मी सरस्वतीसे पूछने गअीं। अिन्द्र मूर्छित हुआ। आखिर विघ्ननाशक गणपतिकी सबने आराधना की और अुनसे कहा, 'चाहे सो कीजिये। किन्तु यह लिंग लंकामें न पहुंचने पाये अैसा कुछ कीजिये।'

महादेवजीने रावणसे कहा था, 'लो यह लिंग। जहां जमीन पर रखोगे वहीं यह स्थिर हो जायगा।' महादेवजीका लिंग पारेसे भी भारी था। रावण अुसे लेकर पश्चिम समुद्रके किनारे चला जा रहा था। शाम होने आयी थी। रावणको लघुशंकाकी हाजत हुअी। शिव-लिंगको हाथमें लेकर बैठा नहीं जा सकता था; जमीन पर तो रखा ही कैसे जाता? रावणके मनमें यह अुधेड़बुन चल ही रही थी कि अितनेमें देवताओंके संकेतके अनुसार गणेशजी चरवाहेके लड़केका रूप लेकर गौअें चराते हुअे प्रकट हुअे। रावणने कहा, 'अै लड़के, यह लिंग जरा संभाल तो। जमीन पर मत रखना।'

गणेशने कहा, 'यह तो भारी है। थक जाअूंगा तो तीन बार आवाज दूंगा। अुतनी देरमें तुम आये तो ठीक, वरना तुम्हारी बात तुम जानो।'

हाजत तो लघुशंकाकी ही थी। अुसमें भला कितनी देर लगती? रावण बैठा। बैठा तो सही किन्तु न मालूम कैसे, आज अुसके पेटमें सात समुद्र भर गये थे! जनेअू कान पर चढ़ाने पर तो बोला भी नहीं जा सकता था। सिद्धि-विनायकने अिकरारके अनुसार तीन बार रावणके नामसे आवाज दी। और अर्‌र्‌र्‌र्‌की चीख मारकर लिंग जमीन पर रख दिया, मानो वजन असह्य मालूम हुआ हो! जमीन पर रखते ही लिंग पाताल तक पहुंच गया! रावण क्रोधके मारे लाल-लाल होकर आया और गणपतिकी खोपड़ी पर अुसने कसकर अेक घूंसा मारा। गजाननका सिर खूनसे लथपथ हो गया।

बादमें रावण दौड़ा लिंग अुखाड़ने। किन्तु अब तो वह बात असंभव थी। पाताल तक पहुंचा हुआ लिंग कैसे अुखाड़ा जा सकता था? सारी पृथ्वी कांपने लगी, किन्तु लिंग बाहर नहीं आया। आखिर रावणने लिंगको पकड़कर मरोड़ डाला। जिससे अुसके चार टुकड़े हाथमें आये। निराशाके आवेशमें अुसने चारों टुकड़े चारों दिशाओंमें फेंक दिये और बेचारा खाली हाथ लंकाको वापस लौटा।

मरोड़े हुअे लिंगका मुख्य भाग जहां रहा, वही है गोकर्ण-महाबळेश्वर। सारी पृथ्वी पर जिससे अधिक पवित्र तीर्थ-स्थान नहीं है।

*　　*　　*

गोकर्ण-महाबळेश्वर कारवार और अंकोला बंदरगाहोंके बीच स्थित तदड़ी बंदरगाहसे करीब छः मील अुत्तरकी ओर ठीक समुद्रके किनारे पर है। दक्षिणमें जिसका माहात्म्य काशीसे भी अधिक माना जाता है। लिंग अधिकतर जमीनके अंदर ही है। अुसकी जलाधारीके बीचोंबीच अेक बड़ा सुराख है। अुसमें अंदर अंगूठा डालने पर भीतरके लिंगका स्पर्श होता है। दर्शनका तो प्रश्न ही नहीं। वहांके पुजारी कहते हैं कि लिंगकी शिला अत्यंत मुलायम है। भक्तोंके स्पर्शसे वह घिस जाती है, जिसलिअे प्राचीन लोगोंने यह प्रबंध किया है। बहुत बरसोंके बाद शुभ शकुन होने पर जलाधारी निकाली जाती है और आसपासकी चुनाअीको हटाकर मूल लिंगको दो-तीन हाथोंकी गहराअी तक खोल दिया जाता है। कुछ महीनों तक खुला रखनेके बाद मोतियोंको पीसकर बनाये हुअे चूनेसे आसपासकी चुनाअी फिरसे कर दी जाती है। यदि मैं भूलता नहीं हूं, तो जिस क्रियाको 'अष्टबंध' या अैसा ही कुछ नाम दिया जाता है।

हम कारवारमें थे तब अेक बार कपिलाषष्ठी जैसा दुर्लभ अष्टबंधका योग आया। पिताश्री, आअी (मां) और मैं — हम तीनों जिस यात्रामें गये। तदड़ी बंदरगाह पर मुझे अुठा लेनेके लिअे 'कुली' किया गया। अुसके कंधे पर बैठकर मैं गोकर्ण गया। कोटितीर्थमें स्नान किया। गोकर्ण-महाबळेश्वरके दर्शन किये। स्मशानभूमि और अुसकी रखवाली करनेवाले हरिश्चंद्रका दर्शन किया। हड्डियां डालने पर जिसमें

गल जाती हैं अैसे पानीका अेक तीर्थ देखा। अहल्याबाअीके अन्नसत्रमें अुस साध्वीकी मूर्ति देखी। सिरमें चोटके निशानवाले और दो हाथोंवाले चरवाहे गजाननके दर्शन किये। ब्रह्माकी अेक मूर्ति देखी। और सबसे बड़ी बात तो यह थी कि रावणकी अुस मशहूर लघुशंकाका कुंड भी देखा। आज भी वह भरा हुआ है और अुससे बदबू आती है। और भी बहुत कुछ देखा होगा, किन्तु वह आज याद नहीं है।

हां, अिस प्रदेशकी अेक खासियत बताना तो मैं भूल ही गया। घर चाहे गरीबका हो या अमीरका, फर्श तो गारेकी ही होगी; किन्तु वह काले संगमरमरके पत्थरके समान सख्त और चमकनेवाली होती है। सच-मुच अुसमें मुंह दिखाअी देता है। गरमीके दिनोंमें दोपहरके समय आदमी बगैर कुछ बिछाये गारेके अुस पलस्तर पर आरामसे सो सकता है। समय समय पर यह जमीन गोबर और काजल मिलाकर अुससे लीपी जाती है। किन्तु हाथसे नहीं लीपा जाता। सुपारीके पेड़ पर अेक तरहकी छाल तैयार होती है। अुससे फर्शको घिस-घिसकर चमकीला बनाया जाता है। अिस छालको वहांकी भाषामें 'पोवली' कहते हैं।

गोकर्णसे वापस लौटते समय तदड़ी तक समुद्री रास्तेसे बाफर यानी स्टीमलोंचमें जानेका विचार था। मौसमी तूफान शुरू होनेको बहुत ही थोड़े दिन बाकी थे। आठ दिनके बाद आगबोटें भी बंद होनेवाली थीं। अिसलिअे वापस लौटनेवाले यात्रियोंकी भीड़का पार नहीं था। तदड़ी बंदरसे चढ़नेवाले यात्रियोंको स्टीमरमें जगह मिलेगी या नहीं, अिस बातका संदेह था। अिसीलिअे हमने स्टीमलोंचमें बैठकर स्टीमर तक जल्दी पहुंचना पसंद किया था।

गोकर्णका बंदर बंधा हुआ नहीं था। किनारेसे मेरी छाती बराबर पानी तक तो चलकर जाना पड़ता था। वहांसे नावमें बैठकर स्टीम-लोंच तक जाना पड़ता था। नौजवान लोग नाव तक चलकर जाते; किन्तु औरतें तथा बच्चे तो कुलियोंके कंधे पर चढ़कर या दो कुलियोंके हाथोंकी पालकीमें बैठकर जाते।

शुरूमें ही अेक अपशकुन हुआ। अेक गरीब बुढ़िया शरीरसे कुछ स्थूल थी। किन्तु किराये पर दो कुली करने जितने पैसे अुसके

पास न थे। अुसने अेक लोभी कुलीको कुछ अधिक मजदूरी देनेका लालच देकर अपनेको कन्धे पर अुठा ले जानेके लिअे राजी किया। वह था दुबला-पतला। वह किनारे पर बैठ गया। विधवा बुढ़िया अुसके कन्धे पर सवार हुअी। किन्तु ज्यों ही कुली अुठने गया, त्यों ही दोनों धम्मसे गिर पड़े। अितनेमें अेक नटखट लहरने दौड़ते आकर दोनोंको कृतार्थ कर दिया!

यह बोट लगभग 'आखिरी होनेसे गोकर्णमें भी चढ़नेवाले यात्री बहुत थे। वे सबके सब स्टीमलोंचमें कैसे समाते? अिसलिअे सौ आदमी बैठ सकें अितना बड़ा अेक पड़ाव (यानी नाव) स्टीमलोंचके पीछे बांध दिया गया। और अुसके पीछे कस्टम्स विभागके अेक अफसरकी सफेद नाव बांध दी गअी। मैंने देखा कि खानगी नावोंकी पतवारें कड़छी या पंखे जैसी गोल होती हैं, जब कि कस्टमवालोंकी पतवारें क्रिकेट-बैटकी तरह लंबी-लंबी और चपटी होती हैं।

हमारा काफला ठीक समय पर निकला। अेक दो मील गये होंगे कि अितनेमें आसमान बादलोंसे घिर गया। हवा जोरसे बहने लगी। लहरें जोर जोरसे अुछलने लगीं, मानो बड़ी दावत मिल रही हो। नावें डोलने लगीं। और स्टीमलोंच परका खिचाव भी बढ़ने लगा। अरे! यह क्या? बारिशके छींटे! बड़े बड़े बेरोंके जैसे छींटे! अब क्या होगा? लहरें जोर जोरसे अुछलने लगीं। स्टीमलोंच बेकाबू घोड़ेकी तरह अूपर-नीचे कूदने लगी। पीछेकी नावकी रस्सियां कर्र्र् कर्र्र् आवाज करने लगीं। अितनेमें स्टीमलोंच और नावके बीच अेक लहर अितनी बड़ी आअी कि नाव दिखाअी ही न दी।

मैं स्टीमलोंचमें बॉयलरके पास लकड़ीके तख्तोंके चबूतरे पर बैठा था। हमारे कप्तानको जल्दीसे जल्दी स्टीमर तक पहुंचना था। अुसने स्टीमलोंच पागलकी तरह पूरी रफ्तारमें छोड़ दी। चबूतरा गरम हुआ। मैं जलने लगा। समझमें न आया कि क्या करूं? जरा अिधर-अुधर हटता तो 'समुद्रास्तृप्यन्तु' होनेका डर था! और बैठना बिलकुल नामुमकिन हो गया था। अिस अुलझनसे मुझे बड़े भयानक ढंगसे छुटकारा मिला। समुद्रकी अेक प्रचंड लहर चढ़ आअी

और अुसने मुझे नखशिखान्त नहला दिया। अब चबूतरा गरम रहता ही कैसे? पिताश्री परेशान हुअे। आअी (मां) को तो कुलदेवका स्मरण हो आया: 'मंगेशा! महारुद्रा! मायबापा! तूंच आतां आम्हांला तार!' मूसलधार वर्षा होने लगी। हम स्टीमलोंचवाले तो कुछ सुरक्षित थे। किन्तु पीछेके अुन नाववालोंका क्या? शुरू शुरूमें तो स्टीमलोंचको पानी काटना था, अिसलिअे अुसमें पानी आसानीसे आ जाता था। किन्तु नावको तो हर हिलोर पर सवार ही होना था, अिसलिअे चाहे जितना डोलने-पर भी अुसके अंदर पानी नहीं आ पाता था। किन्तु जब हवा और बारिशके बीच होड़ लगी और दोनोंका अट्टहास्य बढ़ने लगा, तब अेक ही लहरमें आधीके करीब नाव भर जाने लगी। लहरें सामनेसे आतीं, तब तक तो ठीक था। नाव अुन पर सवार होकर अुस पार निकल जाती थी। कभी लहरोंके शिखर पर तो कभी दो लहरोंके बीचकी घाटीमें। कभी कभी तो नाव अेक हिलोर परसे अुतरती कि नीचेसे नअी लहर अुठकर अुसे अधरमें ही अुठा लेती थी। अैसी अनसोची हलचल होने पर अंदर जो लोग खड़े थे वे धड़ाधड़ अेक-दूसरे पर गिर पड़ते थे।

लेकिन अब लहरें बाजुओंसे टकराने लगीं। नावके अंदर बैठी हुअी औरतों और बच्चोंको तो सिर्फ फूट फूटकर रोनेका ही अिलाज मालूम था। जितने जवांमर्द थे वे सब डोल, गागर या डिब्बा, जो भी हाथमें आता अुसीमें पानी भर-भरकर बाहर फेंकने लगे। फायर अेंजिनके बंबे भी अिससे ज्यादा तेजीसे क्या काम कर पाते? नाव खाली होती न होती अितनेमें अेकाध क्रूर लहर विकट हास्यके साथ 'ध . . . ड़' से नावसे टकराती और अंदर चढ़ बैठती। अुस समय स्त्री-बच्चोंकी चीखें और दहाड़ें कानोंको फाड़े डालती थीं। दिल चीर डालती थीं। कुछ यात्री अवधूत दत्तात्रेयको सहायताके लिअे पुकारने लगे, कुछ पंढरपुरके विठोबाको पुकारने लगे। कोअी अंबा भवानीकी मन्नत मनाने लगे, तो कोअी विघ्नहर्ता गणेशको बुलाने लगे। शुरू शुरूमें स्टीमलोंचके कप्तान और खलासी हम सबको धीरज देते और कहते: 'अजी आप डरते क्यों हैं? जिम्मेदारी तो हमारी है। हमने अैसे कअी तूफान देखे हैं।' किन्तु

देखते ही देखते मामला अितना बढ़ गया कि कप्तानका भी मुंह अुतर गया। वह कहने लगा: 'भाअियो, रोनेसे क्या फ़ायदा? अिन्सानको अेक बार मरना तो है ही। फिर वह मौत बिस्तरमें आये या घोड़े पर, शिकारमें आये या समुद्रमें। आप देख ही रहे हैं कि हम सब तरहकी कोशिश कर रहे हैं। किन्तु अिन्सानके हाथमें क्या है? मालिक जो चाहे वही होता है।' मैं अुसके मुंहकी ओर टकटकी लगाकर देख रहा था। यात्राके प्रारंभमें जो आदमी गाजरकी तरह लाल-लाल था, वही अब अरबीके पत्तोंकी तरह हरा-हरा हो गया था!

मैं अुस समय बिलकुल बालक था। किन्तु गंभीर अवसर पर बालक भी सच्ची स्थितिको समझ लेता है। पल पल पर मैं स्थानभ्रष्ट हो रहा था। अपने दोनों हाथोंसे पकड़कर मैं बड़ी मुश्किलसे अपने स्थानको संभाले हुअे था। हमारा सारा सामान अेक ओर पड़ा था। किन्तु अुसकी ओर देखता ही कौन? लेकिन पूजाकी देव-मूर्तियां और नारियल बेंतकी जिस 'सांवळी' में रखे हुअे थे, अुसे मैं अपनी गोदमें लेकर बैठना नहीं भूला था।

मेरे मनमें अुस समय कैसे कैसे विचार आ रहे थे! वह काल था मेरी मुग्ध भक्तिका। रोज सुबह दो-दो घंटे तो मेरा भजन चलता था। मेरा जनेअू नहीं हुआ था। अिसलिअे संध्या-पूजा तो कैसे की जाती? फिर भी पिताश्री जब पूजामें बैठते, तब पास बैठकर अुनकी मदद करनेमें मुझे खूब आनंद आता। मनमें आया, आज यदि डूबना ही भाग्यमें बदा हो, तो देवताओंकी यह 'सांवळी' छातीसे चिपटाकर ही डूबूंगा। दूसरे ही क्षण मनमें विचार आया, मांके देखते ही लोंचमें से पानीमें लुढ़क जाअूंगा तो मांकी क्या दशा होगी? यह विचार ही अितना असह्य मालूम हुआ कि मेरी सांस रुंध गअी। सीनेमें अिस तरह दर्द होने लगा, मानो पत्थरकी चोट लगी हो। मैंने अीश्वरसे प्रार्थना की कि 'हे भगवान्, यदि डुबाना ही हो तो अितना करो कि 'आअी' और मैं अेक-दूसरेको भुजाओंमें लेकर डूबें।'

हरेक बालककी दृष्टिमें अुसके पिता तो मानो धैर्यके मेरु होते हैं। बालकका विश्वास होता है कि आकाश भले टूटे, किन्तु

पिताका धैर्य नहीं टूट सकता। अिसलिअे जब अैसे अवसर पर बालक अपने पिताको भी दिङ्मूढ बना हुआ, घवड़ाया हुआ देखता है, तब वह व्याकुल हो अुठता है। मैं तूफानसे अितना नहीं डरा था, बरसातसे भी अितना नहीं डरा था, 'आदमकी बू आ रही है, मैं अुसे खाअूंगी' अैसा कहते हुअे मुंह फाड़कर आनेवाली लहरोंसे भी अितना नहीं डरा था, जितना पिताजीका परेशान चेहरा देखकर तथा अुनकी रुंधी हुअी आवाज सुनकर डर गया।

हरेक आदमी कप्तानसे पूछता, 'हम कितनी दूर आ गये हैं? अभी कितना फासला बाकी है?' चारों ओर जहां भी नजर डालते वहां बारिश, आंधी और तरंगोंका तांडव ही नजर आता! अितना पानी गिरा, किन्तु आकाश जरा भी नहीं खुला। मैंने कप्तानसे गिड़-गिड़ाकर कहा, 'लाँचको कुछ किनारेकी ओर ले चलो न, जिससे यदि वह डूब ही गअी तो भी चंद लोग तो किनारे तक तैरकर जा सकेंगे!' वह अुत्साह-हीन हास्यके साथ बोला, 'कैसा बेवकूफ है यह लड़का! किनारेसे जितने दूर हैं, अुतने ही सुरक्षित हैं। जरा भी पास गये तो शिलाओंसे टकराकर चकनाचूर हो जायेंगे। आज तो जानबूझ कर हम किनारेसे दूर रह रहे हैं। स्टीमर तक पहुंच गये कि गंगा नहाये समझो। आज दूसरा अिलाज ही नहीं है।'

मैंने अिससे पहले कभी बड़ी अुम्रके लोगोंको अेक-दूसरेसे गले लगकर रोते नहीं देखा था। वह दृश्य आज अुस नावमें देखा। अुसमें स्त्री-पुरुष अेक-दूसरेको भुजाओंमें लेकर फूट फूटकर रो रहे थे। दो-तीन बच्चोंवाली अेक मां अपने सब बच्चोंको अेक ही साथ गोदमें लेनेकी कोशिश कर रही थी। केवल पांच-पचीस जवांमर्द जीतोड़ मेहनत करके समुद्रके साथ अ-समान युद्ध कर रहे थे। तूफान अितना बढ़ गया और स्टीमलाँच तथा नाव अितनी अधिक डोलने लगी कि लोग डरके मारे रोना तक भूल गये। मृत्युकी अेक काली छाया सर्वत्र फैल गयी। होशमें थे सिर्फ नावके बहादुर नौजवान और काली-काली वर्दी पहने हुअे स्टीमलाँचके खलासी। हमारा कप्तान हुक्म छोड़ते छोड़ते कभी परेशान हो अुठता; किन्तु खलासी बराबर अेकाग्र मनसे, बिना परेशान

हुअे, अचूक ढंगसे अपना अपना काम कर रहे थे। कर्मयोग क्या अिससे भिन्न होगा?

आखिरकार तदड़ी बंदर आया। हम स्टीमरको देखते अुससे पहले ही स्टीमरने हमारी लाँचको देख लिया। स्टीमरने अपना भोंपू बजाया: 'भों . . .!' मानो सबकी करुण वाणी सुनकर अीश्वरने ही 'मा भैः' की आकाशवाणी की हो। हमारी स्टीमलाँचने अपनी तीक्ष्ण आवाजसे जवाब दिया। सबके दिलमें आशाके अंकुर फूटे। चारों ओर जय-जयकार हुआ।

अितनेमें, मानो अपना अंतिम प्रयत्न कर देखनेकी दृष्टिसे और हम सबके भाग्यके सामने हारनेसे पहले आखिरी लड़ाअी लड़ लेनेके लिअे अेक बड़ी लहर हमारी लाँच पर टूट पड़ी। और पिताजी जहां बैठे थे वहीं पर पीछेकी ओर गिर पड़े। मैंने कातर होकर चीख मारी। अब तक मैं रोया नहीं था। मानो अुसका पूरा बदला मुझे अेक ही चीखमें ले लेना था। दूसरे ही क्षण पिताजी अुठ बैठे और मुझे छातीसे लगाकर कहने लगे, 'दत्तू, डरे मत। मुझे कुछ भी नहीं हुआ है।'

हम स्टीमरके पास पहुंच गये। किन्तु बिलकुल पास जानेकी हिम्मत कौन करे? कस्टमवाली नावको तो अुन लोगोंने कभीका अलग कर दिया था, क्योंकि लाँच तथा बड़ी नावके झोंके वह सह नहीं सकती थी। अुसकी सुरक्षितता अलग होनेमें ही थी। स्टीमलाँचने दूरसे स्टीमरकी प्रदक्षिणा कर ली। मगर किसी भी तरह पास जानेका मौका नहीं मिला। तरंगोंके धक्केसे लाँच यदि स्टीमरके साथ टकरा जाती, तो बिलकुल आखिरी क्षणमें हम सब चकनाचूर हो जाते। आखिर अूपरसे रस्सा फेंका गया और हमारे खलासी लाँचकी छत पर खड़े होकर लम्बे लम्बे बांसोंसे स्टीमरकी दीवालोंसे होनेवाली लाँचकी टक्करको रोकने लगे। तरंगें अुसे स्टीमरकी ओर फेंकनेकी कोशिश करतीं, तो खलासी अपने लम्बे लम्बे बांसोंकी नोकोंकी ढाल बनाकर सारी मार अपने हाथों और पैरों पर झेल लेते। तिस पर भी अंतमें स्टीमरकी सीढ़ीसे स्टीमलाँचकी छत टकरा ही गअी, और कड़ड़ड़ आवाज करता हुआ अेक लम्बा पटिया टूटकर समुद्रमें जा गिरा।

में पास ही था, अिसलिअे स्टीमरमें चढ़नेकी पहली वारी मेरी ही आअी। चढ़नेकी काहेकी? गेंदकी तरह फेंके जानेकी! खुद कप्तान और दूसरा अेक खलासी लाँचके किनारे खड़े रहकर अेक अेक आदमीको पकड़कर स्टीमरकी सीढ़ीके सबसे नीचेके पाये पर खड़े खलासियोंके हाथमें फेंक देते थे। अिसमें खास सावधानी तो यह रखी जाती कि जब लाँच हिलोरोंके गड्ढेमें अुतर जाती तब वे लोग राह देखते और दूसरे ही क्षण जब वह तरंगोंके शिखर पर चढ़ जाती और सीढ़ी बिलकुल पास आ जाती, तब झट यात्रीको सौंप देते! दोनों ओरके खलासी यदि आदमीके हाथ पकड़ रखें तो दूसरे ही क्षण जब लाँच तरंगोंके गड्ढेमें अुतरे तब अुसकी धज्जियां अुड़ जायं! मैं अूपर सीढ़ी पर चढ़ा और मुड़कर देखने लगा कि मां आती है या नहीं। जब अेक बिलकुल अजनबी मुसलमानको मांकी बांहें पकड़ते देखा तो मेरा मन बेचैन हो अुठा। किन्तु वह समय था जान बचानेका। वहां कोमल भावनायें किस कामकी? थोड़ी ही देरमें पिताजी भी आ पहुंचे। देवताओंकी 'सांवळी' तो मैंने कंधे पर ही रखी थी। अूपर अच्छी जगह देखकर पिताजीने हमें बिठा दिया और वे सामान लाने गये। मैं श्रद्धालु लड़का अवश्य था; पर अुस समय मुझे पिताजी पर सचमुच गुस्सा आया। भाड़में जाये सारा सामान! जान खतरेमें डालनेके लिअे दुबारा क्यों जाते होंगे? किन्तु वे तो तीन बार हो आये। आखिरी बार आकर कहने लगे, 'गोकर्ण-महाबळेश्वरके प्रसादका नारियल पानीमें गिर गया।' अेक ही क्षणमें आअी और मैं दोनों बोल अुठे; आअीने कहा, 'अरे अरे!' और मैंने कहा, 'बस अितना ही न?'

लाँचवाले सब यात्रियोंके चढ़नेके बाद नाववालोंकी बारी आयी। वे सब चढ़े। अुसके बाद लाँच और नाव निशाचर भूतोंकी तरह चीखें मारती हुअी तदड़ीके किनारेकी ओर गअीं और किनारे पर तपश्चर्या करते बैठे हुअे यात्रियोंको थोड़े थोड़े करके लाने लगीं। तूफान अब कुछ ठंडा पड़ा था। मगर अंधेरी रात और अुछलती हुअी तरंगोंके बीच अुन लोगोंका जो हाल हुआ होगा, अुसका वर्णन कौन कर सकता है?

स्टीमर यात्रियोंसे ठसाठस भर गअी। जो भी बोलता, समुद्रमें डूबे हुअे अपने सामानकी बातें ही सुनाता। आखिर यात्री सब आ गये। मेहर मालिककी कि किसीकी जान न गयी।

स्टीमर आखिर छूटी और लोग अपनी अपनी पुरानी यात्राओंके अैसे ही खतरनाक संस्मरण अेक-दूसरेको सुनाकर आजका दुःख हलका करने लगे। बड़ी देर तक किसीको नींद नहीं आअी। मैं कब सोया, कारवारका बंदरगाह सुबह कब आया, और हम घर पर कब पहुंचे, आज कुछ भी याद नहीं है। किन्तु अुस दिनका तूफानका वह प्रसंग स्मृतिपट पर अितना ताजा है, मानो कल ही हुआ हो। सचमुच :

दुःखं सत्यं, सुखं मिथ्या; दुःखं जन्तोः परं धनम्।

अक्तूबर, १९२५

२३

भरतकी आंखोंसे

किनारे पर खड़े रहकर समुद्रकी शोभाको निहारनेमें हृदय आनंदसे भर जाता है। यह शोभा यदि किसी अूंचे स्थानसे निहारनेको मिले तब तो पूछना ही क्या? जहाजके अूपरके हिस्सेसे या देवगढ़ जैसे टापूके सिर परसे समुद्रका किनारे पर होनेवाला आक्रमण देखनेमें अेक अनोखा ही आनंद आता है। मनमें यह भाव अुत्पन्न होते ही कि हम समुद्रके राजा हैं और तरंगोंकी यह फौज हमारी ही ओरसे सामनेके भूमि-भागको पादाक्रान्त कर रही है, हमारे हृदयमें अेक प्रकारका अभिमान स्फुरित होने लगता है। ध्यानसे देखने पर मालूम होता है कि समुद्रका हरा-हरा या काला-काला पानी मस्तीमें आकर सफेद बालूके किनारे पर जोरोंसे आक्रमण करता है और आखिरी क्षणमें 'अजी, यह तो महज विनोद ही था' कहकर हंस पड़ता है। तब अुसके अिस मिथ्या-भाषण पर हम भी खिलखिला कर हंस पड़ते हैं।

समुद्र-किनारे रहनेवालोंको अिस तरहके दृश्य कभी भी देखनेको मिल जाते हैं। मगर समुद्र और वालुका-पट जहां अखंड जलक्रीड़ा करते हों, अुस दिशामें समकोणमें अूंचाअी पर खड़े रहकर वालूका यह जलविहार और तरंगोंका सिकता-विहार निहारनेका सौभाग्य यदि किसी दिन प्राप्त हो तो मनुष्य 'अद्य मे सफला यात्रा; धन्योऽहं अप्रसादतः।' क्यों नहीं गायेगा ?

सन् १८९५ में मैंने जिस गोकर्णकी यात्रा की थी और जिस गोकर्णके दर्शन मैंने श्री गंगाधरराव देशपांडेके साथ दस साल पहले किये थे, अुसी गोकर्णके पवित्र किनारे पर संगववेला* में समुद्रके दर्शन करनेका सौभाग्य प्राप्त होनेसे मैं आनन्द-विभोर हो गया था। गोकर्णका समुद्र-तट काफी विस्तृत और भव्य है। दाहिनी यानी अुत्तरकी ओर कारवारके पहाड़ और टापू धुंधले क्षितिज पर अस्पष्ट-से दिखाअी देते हैं; बायीं यानी दक्षिणकी ओर रामतीर्थका पहाड़ और अुस पर खड़ा भरतका छोटा-सा मंदिर दिखाअी देता है। और सामने अगाध अनंत सागर 'अमर होकर आओ' कहता हुआ अहोरात्र आमंत्रण देता है। अिस तरहका हृदयको अुन्मत्त करनेवाला दृश्य अेक बार देख लेने पर भला कभी भूला जा सकता है ? रामतीर्थकी पहाड़ी पर जाकर वहांके झरनेमें स्नान करनेका यदि संकल्प न किया होता, तो सागरके अिस भव्य दृश्यमें तैरते रहना ही मैंने पसंद किया होता। नारियलके बगीचों और खुरदरी शिलाओंको पार करके हम रामतीर्थ तक पहुंचे। वहांकी धाराके नीचे बैठकर नहानेका सात्त्विक जीवनानंद या स्नानानंद आपाद-मस्तक लेकर रामेश्वरके दर्शन किये। शांडिल्य महाराज नामक अेक साधुने असंख्य लोगोंमें अुत्साह प्रकट करके यहांके मंदिरका निर्माण मुफ्तमें करवा लिया था। यह मंदिर समुद्रमें घुसे हुअे अेक अुन्नत पहाड़ पर स्थित है। मंदिरकी अूंचाअी परसे वालूका पट और लहरोंका

---

*गायोंका दोहन करनेके बाद तथा गोशाला साफ करनेके बाद वनमें चरनेके लिअे अुन्हें अिकट्ठा किया जाता है, अुस समयको (सुबहके करीब नौ बजे) 'संगववेला' कहते हैं। यह शब्द वेदकालीन है।

पट जहां अेक-दूसरेका आलिंगन करके क्रीड़ा करते हैं, अुसका मीलों तक फैला हुआ सौंदर्य हम देख सके। नारियलके दो-अेक वृक्षोंने अिसी स्थान पर खड़े रहकर सागर-सिकता-मिलनके दृश्यका आनंद सेवन करनेकी बात तय की थी। अपनी डालियां हिलाकर अुन्होंने हमसे कहा: 'आअिये, आअिये! बस यही स्थान अच्छा है। यहांसे सिकता-सागरके मिलनकी रेखा नजरके सामने सीधी दीख पड़ती है।'

यहांसे मैंने देखा कि पानीकी तरंगोंको सागरके गहरे पानीका सहारा था। लेकिन बालूके पटको सहारा कौन दे? कोअी पहाड़ी नजदीकमें नहीं थी, अिसलिअे नारियल और सरो जैसे पेड़ोंने यह जिम्मेदारी अपने सिर पर अुठा ली थी। ये अूंचे पेड़ और सागरका गहरा पानी—दोनोंके हरे रंगमें फर्क तो जरूर था; किन्तु अुनके कार्यमें कोअी फर्क नहीं मालूम होता था। पेड़ अपने पांवोंके नीचेकी बालूको आशीर्वाद देते और समुद्रका गहरा पानी लहरोंको आगे बढ़नेके लिअे प्रोत्साहन देता। यह दृश्य देखकर भला कौन तृप्त होगा?

किसी दृश्यसे मनुष्य तृप्ति अनुभव नहीं करता, अिसलिअे अेक जगह खड़े रहकर अुसीका पान करते रहना भी मनुष्यको पसन्द नहीं आता। मैंने देखा कि रामतीर्थके झरनेकी और रामेश्वरके मंदिरकी मानो रखवाली करनेके लिअे श्रीरामचंद्रजीके प्रबंधक प्रतिनिधि भरत यहांकी पहाड़ीके अूपर खड़े हैं। अुनके दर्शन तो करने ही चाहिये। और बन सके तो योग्य अूंचाअी पर जाकर अुनकी दृष्टिसे भी सागरको देखना चाहिये। बिना अूंचे चढ़े विशाल दृष्टि कैसे प्राप्त हो? सीढ़ियोंने निमंत्रण दिया, अिसलिअे नाचता और कूदता या अुड़ता हुआ मैं भरतके मंदिर तक पहुंच गया, मानो मुझे पंख लग गये हों। वहां छोटे शुभ्रकाय भरतजी सुंदर पीतांबर पहनकर समुद्र-दर्शन कर रहे थे।

मेरी दृष्टिसे भरतकी मूर्तिके आसपास मंदिर बनाना ही नहीं चाहिये था। अुन्हें ताप, पवन और बरसातकी तपश्चर्या ही करने देना चाहिये था। समुद्र परसे आनेवाले शीतल पवनमें सूर्यका ताप वे आसानीसे सह लेते। और लोग यह कैसे भूल गये कि भरत आखिर सूर्यवंशी राजपुत्र थे? वायुपुत्र हनुमानका और सूर्यवंशी राघवोंका

स्मरण करते हुअे हम वहां काफी देर तक खड़े रहे। हृदयमें भक्ति-भाव अुमड़ रहा था और सामने समुद्रके पानीमें ज्वार चढ़ रही थी।

अुस दिनके अुस भव्य और पावन दर्शनके लिअे रामतीर्थका और दिक्‌पाल भरत महाराजका मैं सदा आभारी रहूंगा।

मअी, १९४७

२४

वेळगंगा — सीताका स्नान-स्थान

वेरूळग्रामका हरा कुंड देखकर लौटते समय रास्तेमें वेळगंगाका झरना देखा था। झरना अितना छोटा था कि अुसे नाला भी नहीं कह सकते। किन्तु अुसे 'वेळगंगा'का प्रतिष्ठित नाम प्राप्त हुआ है। नदीका नाम सुनने पर अुसका अुद्‌गम कहां है, अिसकी खोज किये बिना क्या रहा जा सकता है? किन्तु हम तो गुफाओंकी अद्‌भुत कारीगरीमें मस्त होकर विचर रहे थे; अिसलिअे हमें वेळगंगाका स्मरण तक नहीं हुआ। 'अपौरुषेय' कारीगरीवाली कैलासकी गुफाको देखकर हम जैन तीर्थंकरोंकी अिन्द्रसभाकी ओर बढ़ रहे थे। अितनेमें श्री अच्युत देश-पांडेने कहा, 'वेळगंगाका अुद्‌गम यहीं है।' नाम सुनते ही वेळगंगा दिमाग पर सवार हुअी!

अिन्द्रसभासे लौटते समय हम २९ वीं गुफामें जा पहुंचे। अनेक गुफाओंमें घूमनेके कारण काफी थकावट मालूम हो रही थी। सारे बदनकी हड्डियोंमें दर्द होने लगा था। ठीक अुसी समय बंबअीके निकट स्थित घारापुरीकी अेलिफंटा गुफाका स्मरण करानेवाली यहांकी २९ वीं गुफाने भव्यताका कमाल कर दिखाया। यह कहना मुश्किल था कि घूम-घूम-कर हमारे पैर ज्यादा थके थे या देख-देखकर हमारी आंखें ज्यादा थकी थीं। हम निश्चय कर ही रहे थे कि अब नादतेके साथ थकावट अुतारनेके बाद ही आगे जायंगे, अितनेमें सीताके स्नान-स्थानका स्मरण हुआ।

अयोध्यासे जनस्थान तककी यात्रा सीताने पैदल की थी। वहांसे रावण अुसे अुठाकर लंका ले गया था। दुःखावेगमें सीताने दक्षिणका यह प्रदेश शायद देखा भी न होगा। किन्तु रामने रावणका वध करके अुसीके पुष्पक विमानमें बैठकर जब लंकासे अयोध्या तककी हवाअी यात्रा की, तब सीतामाताको नीचेकी प्राकृतिक शोभा देखकर कितना आनंद हुआ होगा! रामायणमें वाल्मीकिने प्राकृतिक सौंदर्यके प्रति सीताके पक्षपातका वर्णन जहां-तहां किया है। सृष्टि-सौंदर्य देखकर सीताको कितना अलौकिक आनंद होता था, अिसका वर्णन भवभूतिने भी किया है। सीताने यदि भारतके ललित और भव्य, सुन्दर और पवित्र स्थानोंका वर्णन स्वयं लिखा होता, तो मैं समझता हूं कि अुसके बाद संस्कृतके किसी भी कविने सृष्टि-वर्णनकी अेक पंक्ति भी लिखनेका साहस न किया होता।

सीतामाता पहाड़ोंको देखकर आनंदित होती, नदियोंको अपने आनंदाश्रुओंसे नहलाती, हाथीके बच्चोंको पुचकारती, सारस-युगलोंको आशीर्वाद देती, सुगंधित फूलोंके सौरभसे अुन्मत्त होती और प्रत्येक स्थान पर सारे आनंदको राममय बनाकर अपने-आपको भूल भी जाती। लंकामें राम-विरहसे झूरनेवाली सीता भी वहांकी अेक नदीसे अेकरूप हुअे बिना न रह सकी। आज भी लंकामें 'सीतावाका' वर्षा-ऋतुमें अपने दोनों किनारों परसे वह निकलती है और जितने खेतोंको डुबाती है अुन सबको सुवर्णमय बना देती है। सीताका जन्म ही जमीनसे हुआ था। भारतभूमिकी भक्तिके रूपमें आज भी वह हमें दर्शन देती है।

सीताको लगा होगा कि गोदावरीके विशाल प्रदेशमें चल-चलकर अब हम थक गये हैं। लक्ष्मणको वनफल लानेके लिअे भेज देंगे। और राम तो धनुष लेकर पहरा देते ही रहेंगे। तब अिस चंद्राकार करारके नीचे वेळगंगाका आतिथ्य स्वीकार करके थोड़ा-सा जलविहार क्यों न कर लिया जाय?

* * *

पहले तो हमारी वृत्ति किसी अनुकूल जगहसे वेळगंगाके सुन्दर प्रपातका सिर्फ दर्शन करनेकी ही थी। अिसलिअे २९ नंबरकी गुफामें, अुसकी बाअीं ओर और हमारी दाहिनी ओर, जो झरोखा दिखाअी देता था वहां हम गये। मनमें यह चोरी तो अवश्य थी कि यदि नीचे जाया जा सकेगा, तो वहांका आनंद लूटनेमें हम चूकेंगे नहीं।

झरोखेसे देखा तो अेक पतला-सा प्रपात पवनके साथ खेलता हुआ नीचे अुतर रहा है और अपनी अंगुलियां हिलाकर हमें चुपचाप न्योता दे रहा है। मैं विचार करने लगा कि नीचे अुतरा जा सकेगा या नहीं? अितना समय खर्च करना अुचित होगा या नहीं? साथियोंको मेरी यह स्वच्छंदता रुचेगी या नहीं? मुझको अिस प्रकार अुलझनमें पड़ा हुआ देखकर घाटीमें दौड़-धाम करनेवाले नन्हें नन्हें पक्षी तिरस्कारसे हंस पड़े: "देखो तो, कितना अरसिक मनुष्य है! प्रपात अितने प्रेमसे न्योता दे रहा है और यह विचारमें डूबा हुआ है! अिन मानवोंमें काव्य लिखनेवाले कअी हैं, किन्तु काव्यका अनुभव करनेवाले विरले ही होते हैं। और यह सामनेवाला आदमी अपने-आपको प्रकृतिका बालक कहलवाता है। आंखें फाड़-फाड़कर प्रपातकी ओर देख रहा है। नीचेका स्फटिक जैसा निर्मल पानी देखकर अिसका हृदय भी अुमड़ पड़ता है। किन्तु यह संकल्प नहीं कर पाता। अिसके पैर नहीं अुठते। अिसे किसीने शाप तो दिया नहीं कि 'तू पत्थर बनकर पड़ा रहेगा।' फिर भी यह पत्थरसे चिपका हुआ है!"

पक्षियोंकी यह निर्भर्त्सना सुनकर मैं लज्जित हुआ, और होशमें आनेके पहले ही मेरे पैर सीढ़ियां अुतरने लगे। मैं सोच रहा था कि दाहिनी ओर वाले गड्ढेको लांघकर अुस पारसे प्रपातके पास जाया जाय, या बाअीं ओरसे कगारके पीछेसे होकर २८ नंबरकी छोटी-सी गुफा तक पहुंचा जाय और वहांसे प्रपातके जलकणोंका आनन्द लिया जाय? दाहिनी ओरका रास्ता लम्बा और सुरक्षित था; जब कि बाअीं ओरवाले रास्तेमें काव्य था। नहानेकी तैयारी करके ही मैं अुतरा था, अिसलिअे भीगनेका तो सवाल ही नहीं था।

२८ नंबरकी छोटी-सी गुफामें अेक दो मूर्तियां हैं; किन्तु अुस गुफाके अंदर विशेष काव्य नहीं है। काव्य तो बाहर ही बिखरा हुआ है। जिस गुफामें बैठकर यदि कोअी बाहर देखे, तो पानीके पतले परदेमें से अुसे अपने सामनेकी सृष्टिका जीवनमय विस्तार दिखाअी देगा। प्रपात तो वहां गिरता है, किन्तु वह अितना घना नहीं है कि आरपार कुछ दिखाअी ही न दे। यह गुफा पानीके परदेके पीछे ढंकी हुअी रहने पर भी बिलकुल भीगती नहीं, क्योंकि खिलाड़ी पवन भी पानीके तुषारोंको गुफाके अंदर नहीं ले जा सकता। गुफाके जरा बाहर आयें तो फिर यह शिकायत मत कीजिये कि पवनने आपको गीला क्यों कर दिया।

हम अिस गुफासे नीचे अुतरे। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि पहाड़ी चतुष्पाद बनकर ही हमें अुतरना पड़ा। प्रपात जिस पत्थर पर गिरता है, वहीं मैंने अपना आसन जमाया। सौ फुटकी अूंचाअीसे जो पानी गिरता है, वह केवल गुदगुदा कर ही संतोष नहीं मानता। अुसने पहले सिर पर थप्पड़ें मारना शुरू किया; बादमें कंधे पर चपतें जमाअीं, फिर पीठ पर रप् रप् रप् रप् चपतें बरसने लगीं और यात्राकी सारी थकावट अुतरने लगी। अक्सर हम पहले मालिश करा कर बादमें नहाते हैं। यहां तो मालिश ही स्नान था और स्नान ही मालिश! सीतामाताने यहां अपने बालोंको खोलकर पानीमें साफ-सुथरा कर लिया होगा।

किन्तु यह क्या? मैं घुमक्कड़ यात्री हूं या दुनियाका बादशाह हूं? मेरी पलथींके नीचे यह रत्नखचित आसन कहांसे आ गया? पानीके तुषार चारों ओर अैसे फैल रहे हैं, मानो मोतियोंकी माला हो! और आसनके नीचे दो सुन्दर अिंद्रधनुष मुझे सम्राट्की प्रतिष्ठा प्रदान कर रहे हैं! अलकापुरीके कुबेरसे मेरा वैभव किस बातमें कम है? अिंद्रधनुषकी दुहरी किनारवाले, चांदीके धागोंके आसन पर मैं बैठा हूं और मोतियोंकी मालाका अुत्तरीय ओढ़कर यहां आनंद कर रहा हूं। माथे पर सूर्यनारायणका चमकता हुआ छत्र है और चारों ओर ये अुड़ते हुअे द्विजगण जगन्नायके स्तोत्र गा रहे हैं!

बदन साफ करनेके लिअे नहीं, बल्कि व्यायामका आनंद मनानेके लिअे पत्थर पर सवार होकर प्रपातके नीचे मैंने अपना सारा बदन मला। स्नान-पानका आनंद लूटा और रामरक्षा-स्तोत्रका स्मरण किया। सीतामैयाने जो स्थान पसंद किया, वहां रामरक्षा-स्तोत्रके गायनका ही स्फुरण होना स्वाभाविक था। और सिरसे लेकर पैर तकके सारे गात्रोंको मलकर साफ करते समय 'शिरो मे राघवः पातु, भालं दशरथात्मजः' आदि श्लोकोंको याद करनेका यह न्यास कितना अुचित था!

* * *

स्वर्गको गये हुअे लोग भी यदि अंतमें मृत्युलोकमें वापस आते हैं, तो फिर अिस प्रपात-स्नानका नशा चढ़ने पर भी अुसमें से व्युत्थान करके फिर गद्यमय जीवनमें प्रवेश करनेकी आवश्यकता मुझे मालूम हुअी, अिसमें भला आश्चर्य कैसा? अिसलिअे आखिर अितने सारे आनंदका स्वेच्छासे त्याग करनेकी अपनी संयम-शक्तिको सराहता हुआ मैं वापस लौटा। और नये कपड़े पहनकर नाश्तेके लिअे तैयार हुआ। नाश्ता क्या — वह तो कला-निरीक्षणके लिअे की हुअी दोपहर तककी तपस्या और प्रपात-स्नानकी शांतिके बादका अमृत-भोजन तथा वेळगंगाका कृपा-प्रसाद ही था!

गुफामें स्थिर होकर खड़े हुअे द्वारपालोंके यदि आंखें होतीं, तो अुन्हें जरूर हमसे अीर्ष्या हुअी होती!

सितम्बर, १९४०

२५

कृषक नदी घटप्रभा

घटप्रभा और मलप्रभा हमारी ओरके कर्णाटककी प्रमुख नदियां हैं। वे स्वभावसे किसान हैं। वे जहां जाती हैं वहां खेती करती हैं, जमीनको खाद देती हैं, पानी देती हैं और मेहनत करनेवाले लोगोंको समृद्धि देती हैं। अिसमें भी गोकाकके पास अेक बड़ा बांध बनाकर मनुष्यने अिस नदीकी शक्ति बढ़ा दी है। जहां नदीके पानीकी पहुंच न थी, वहां अिस बांधके कारण वह पहुंच गयी। घटप्रभाका नाम लेते ही गोकाकके पासका लंबा बांध ध्यानमें जरूर आयेगा। बड़ी बड़ी नदियां जहां-तहांसे पंक खींच-खींचकर ले जाती हैं, जब कि अैसी छोटी नदियां, बन सके वहांसे, थोड़ा थोड़ा करके अच्छा कीमती पंक किसानोंको अपने पानीके साथ मुफ्तमें देकर अपने बालकोंका पालन करती हैं। सचमुच घटप्रभा कृषक जातिकी नदी है।

बेलगामसे अितना नजदीक होते हुअे भी गोकाकके पासका घटप्रभाका प्रपात अभी देखना बाकी ही है।

१९२६–'२७

२६

कश्मीरकी दूधगंगा

श्रीनगरमें भला पानीकी कमी कैसे हो?

सतीसर नामक पौराणिक सरोवरको तोड़कर ही तो कश्मीरका प्रदेश बना हुआ है। झेलम नदी मानो अिस अुपत्यकाकी लंबाअी और चौड़ाअीको नापती हुअी सर्पाकारमें बहती है। अिसके अलावा जहां नजर डालें वहां कमल, सिंघाड़े तथा किस्म किस्मकी साग-सब्जी पैदा करनेवाले 'दल' (सरोवर) फैले हुअे दीख पड़ते हैं। जिस वर्ष जल-प्रलय न हो वही सौभाग्यका वर्ष समझ लीजिये। अैसे प्रदेशमें गाड़ीके संकरे रास्ते जैसे छोटे प्रवाहको भला पूछे ही कौन?

फिर भी अैसे अेक प्रवाहको कश्मीरमें भी प्रतिष्ठा मिली है।

अिसमें पानी अधिक चाहे न हो, किन्तु यह प्रवाह अखंड रूपसे बहता है। न कम होता है, न बढ़ता है। अिसका पानी सफेद रंगका है, अिसीलिअे शायद अिसका नाम दूधगंगा रखा गया होगा। जिस नारायणाश्रममें हम रहते थे, अुसके नजदीकसे ही यह दूधगंगा बहती थी। अेक लंबी लकड़ी डालकर अुस पर पुल बनाया गया था। नहानेके लिअे दूधगंगा बहुत अनुकूल है। अुसमें खड़े खड़े नहाया जा सकता है, और तैरना हो तो थोड़ा तैरा भी जा सकता है। बुवा बीमार थे तब बरतन मांजनेमें, कपड़े धोनेमें और अन्य कामोंमें दूधगंगाकी मुझे काफी मदद मिलती थी। अुस अपरिचित प्रदेशमें जब हम दोनों बीमार पड़े, तब यदि दूधगंगाकी मदद हमें न मिलती तो हमारी क्या दशा हुअी होती?

कृतज्ञताके कारण दूधगंगाका माहात्म्य खोजनेकी अिच्छा हुअी। सार्वजनिक पुस्तकालयमें जाकर मैंने अनेक पुस्तकें ढूंढ़ निकालीं। यह जानकर मुझे आश्चर्य हुआ कि अितनी छोटी दूधगंगा बहुत दूरसे आती है और दूर दूर तक जाती है। किस ऋषिने दूधगंगाको जन्म दिया, किस-किसने अुसके किनारे तपस्या की आदि सब जानकारी मैंने खोज-करके प्राप्त कर ली। अितिहासकी अनंत घटनाओंकी तरह यह जानकारी भी विस्मृतिके प्रवाहमें फिरसे बह गअी, और असली कृतज्ञता ही केवल शेष रही है।

अितना याद है कि रोज सुबह मठके साधु स्नान करनेके लिअे नदी पर अिकट्ठा होते थे। और रातको जब सब सो जाते तब मैं दूधगंगाके किनारे बैठकर आकाशके ध्रुवका ध्यान करता था। मेरा ध्यान भी अधिक न चला, क्योंकि कश्मीरमें ध्रुव अितना अूंचा होता है कि अुसकी ओर देखनेमें गर्दन दर्द करने लगती है। वहां सप्तर्षिमें से अरुंधती-सहित वसिष्ठको सीधा सिर पर विराजमान देखकर कितना आश्चर्य मालूम होता था!

कश्मीर-तल-वाहिनी सती-कन्या दूधगंगाको मेरा प्रणाम।

१९२६–'२७

स्वर्धुनी वितस्ता

'संसारमें अगर कहीं स्वर्ग है,
तो वह यहीं है, यहीं है, यहीं है।'

सम्राट् जहांगीरने झेलम नदीके अुद्गमको देखकर अूपरका वचन कहा था। अुसका यह वचन वहांके अष्टकोनी तालावके पास पत्थरमें खोद दिया गया है। सचमुच यह स्थान भू-स्वर्गके पदके योग्य ही है। वेदकालमें अिस नदीका नाम था वितस्ता।

जहां अंग-अंगमें और रोम-रोममें प्राण फूंकता हुआ ठंडा मीठा पवन वहता है, जहां वनश्री अपने यौवनका पूरा-पूरा अुन्माद प्रकट करती है, जहांके पहाड़ अपने सौंदर्यसे मनमें संदेह पैदा करते हैं कि ये पहाड़ हैं या रंगभूमिका परदा, और जहांकी शांति चैतन्यसे भरी हुअी है — वहींसे झेलमका अुद्गम हुआ है। जहांगीरने अिस अुद्गम-स्थान पर अेक अष्टकोनी तालाव वनवाया है। और अंदरका पानी? वह तो मानो नीलमणिका अमृत-रस हो! देखते ही मनमें आता है कि यहां नीलमें रंगे कपड़े किसीने धो डाले हैं। किन्तु अितना स्वच्छ और मीठा पानी अन्यत्र कहां मिलेगा?

अिस तालावके अेक ओरसे जो सुन्दर, सीधी नहर वहती है वही है हमारी वितस्ता-झेलम। अिस स्वर्गका आनंद लूटनेके लिअे मानो गंधर्व मछलियोंका रूप धारण करके अिस तालाव और नहरमें नहानेके लिअे अुतरे हैं। अैसी अुसकी शोभा है। अिस प्रदेशमें मछलियोंको पकड़नेकी यदि सख्त मनाही न होती तो भला अिस सौंदर्यकी क्या दशा हो जाती? मैंने अेक वड़ा वरतन नहरमें डुवो दिया तो अुसमें नहरकी पांच-सात मछलियां आ गअीं — अितनी भोली हैं वे। मैंने अुनको फिरसे नहरमें छोड़ दिया।

अिस स्थानको वेरीनाग कहते हैं। यहांसे आगे खनवल नामक अेक स्थान आता है। यहांसे झेलम नदी नावें चलाअी जा सकें अितनी वड़ी हो जाती है। खनवलके पास ही अनंतनाग नामक अेक सुन्दर तालाव

है। यहांसे आगे सारी जमीन समतल है। कश्मीरकी सारी घाटी अिसी तरह चारों ओर सपाट है।

झेलमको सीधा चलनेकी सूझती ही नहीं। मोड़ लेती लेती मंद गतिसे वह आगे बढ़ती है। अुसके किनारे अेक बड़ी वैभवशाली संस्कृतिका विकास हुआ और अस्त भी हुआ। परन्तु वितस्ता आज भी जैसीको तैसी ही बहती है।

खनवलसे आगे बीजब्यारा नामक अेक स्थान आता है। वहां चिनारका अेक खास पेड़ हमने देखा। नौ आदमियोंने हाथ फैलाकर अुसको आलिंगन किया और अुसके तनेको नापा। ठीक चौपन फुटका घेरा था!

बीजब्याराके मंदिरके बारेमें हमने यहां अेक मजेदार दंतकथा सुनी, जो अंग्रेज लेखकोंने भी लिख रखी है।

धर्मांध मुसलमान जब यह मंदिर तोड़नेके लिअे आये, तब यहांके पुजारियोंने अुनका न तो कोअी विरोध किया, न धन देकर मन्दिरको बचानेकी बात की। अुन्होंने कहा, "आअिये, आअिये, मंदिरको तोड़ डालिये। हमारे शास्त्रोंमें लिखा है कि यवन आयेंगे और मूर्तिका नाश करके मंदिरको तोड़ डालेंगे। हमारे शास्त्रोंमें जो लिखा है, वह झूठा होनेवाला नहीं है।" बुतशिकन गाजीको लगा, "अिनका मंदिर यदि तोड़ेंगे तो अिन काफिरोंके शास्त्र सच्चे साबित होंगे। अिससे बेहतर तो यह है कि यह अेक मंदिर छोड़ दिया जाय।" पता नहीं यह कहानी कहां तक सच है, किन्तु यह हमारे यहांके बनियेकी कहानी जैसी चतुराअीकी कहानी जरूर है। और यह बात भी सही है कि बीजब्याराका मंदिर मुसलमानोंके आक्रमण या अमलके दरम्यान भी टूटा नहीं।

यहांसे कुछ दूरी पर अनंतपुर नामक अेक प्राचीन शहर जमीनके नीचे दबकर छोटी पहाड़ी बन गया है। खेतोंमें खोदते समय पुरानी सुन्दर कारीगरी, कअी प्राचीन कोठियां और कोयला बना हुआ चावल यहां मिला है, जिन्हें मैंने खुद देखा है।

नदी अिधर अुधर घूमती-घामती अितनी धीरेसे बहती है कि पानीका प्रवाह मालूम ही नहीं होता। नदीके प्रवाहकी विरुद्ध दिशामें

जब जाना होता है तब पतवार चलानेके बजाय किश्तीकी नाकको काफी लंबी डोरी बांधकर अेक या दो आदमी किनारे परसे खींचते चलते हैं। किश्ती प्रवाहमें ही चले, किनारे पर न आये, अिसलिअे नावमें बैठा हुआ मांझी हाथमें रही पतवारको टेढ़ा पकड़ रखता है।

कश्मीरी शालोंके कोने पर आमके या काजूके आकारके जो बेलबूटे होते हैं वे यहांकी कारीगरीकी विशेषता हैं। कहते हैं कि झेलमके मोड़ देखकर यहांके कारीगरोंको ये बेलबूटे सूझे। अेक दफा हमने नदीमें अेक बंदरसे चौदह मीलकी यात्रा की। अितनेमें पिछले बंदर पर जरा देरीसे आया हुआ यात्री पैदल चलकर हमसे आ मिला। अुसे केवल डाओ मील ही चलना पड़ा। अितने मोड़ लेती हुआी यह नदी बहती है।

अिन मोड़ोंके कारण प्रवाहका जोर टूट जाता है और नदीका पात्र घिसता नहीं। जब बाढ़ आती है तभी सिर्फ 'सर्वतः संप्लुतोदके' जैसी स्थिति हो जाती है। यहांके प्राचीन अिंजीनियर राजाओंने बाढ़के वक्त नदीको काबूमें रखनेके लिअे अैसे अनेक मोड़ तथा नहरें खोद रखी हैं।

यह अिलाज अितना अक्सीर है कि आज भी अुसीका अनुकरण करना पड़ता है। अेक बड़ी किश्तीमें से सूअरके दांतके जैसा अेक बड़ा राक्षसी हल नदीके तलकी जमीनको चीरता हुआ जाता है और अंदरके कीचड़को बिजलीके पंप द्वारा बाहर फेंकता जाता है। यह सारी प्रवृत्ति 'वराहमूलम्' (आजकलका बारामूल्ला) क्षेत्रमें देखनेको मिलती है।

बारामूल्ला कश्मीरकी घाटीका अुस पारका सिरा है। वहांसे आगे झेलम जोरोंसे दौड़ती है।

अिस सारे प्रदेशके बीचोंबीच कश्मीरकी राजधानी है। श्रीनगर शहर नदीके दोनों किनारों पर बसा हुआ है। नदीके अूपर थोड़े थोड़े अंतर पर सात पुल (कदल) बनाये गये हैं। अिसके सिवा, दोनों ओरसे शहरके अंदर तक नदीमें से नहरें खोदी हुआी होनेके कारण अनायास ही

प्रवाही शांत जलमार्ग मिलते हैं। नदीका मुख्य प्रवाह ही राजमार्ग है। बाकीकी नहरें अिस राजमार्गसे आकर मिलनेवाले गौण रास्ते हैं। खुश्की रास्तों पर जिस प्रकार गाड़ियां दौड़ती हैं, अुसी प्रकार यहां लम्बी और सकरी 'शिकारा' किश्तियां तीरकी तरह दौड़ती हैं। नदीमें किश्तियोंकी चाहे जितनी धूमधाम हो, वह बिना आवाजकी ही होती है।

दोपहरको जब महाराजाके मंदिरकी पूजा पूरी होती है और अगले दिनके निर्माल्य फूल नदीके पाट पर फेंक दिये जाते हैं, तब ये फूल करीब आधे मील तक आहिस्ता आहिस्ता लम्बी हारमें बहते हुअे बड़े सुन्दर दिखाअी देते हैं।

और अिस नदीके किनारे चलनेवाली प्रवृत्ति भी किस प्रकारकी है! कहीं शतरंजियां बुनी जाती हैं तो कहीं अप्रतिम गालीचे। अेक जगह अखरोटकी लकड़ी पर सुंदर कारीगिरीका काम चल रहा है, तो दूसरी जगह रेशमका कारखाना भद्दे कीड़ोंको अुबालकर सुंदर मुलायम रेशम बना रहा है। चीन, तिब्बत तथा समरकंद और बुखाराके सौदागर यहां महीनों तक पड़ाव डाले पड़े रहते हैं और होशियार पंजाबी अुनसे तिजारत करनेमें मशगूल रहते हैं। जहां देखें वहां हाथोंसे ज्यादा लम्बी बांहवाले कोट पहने हुअे लोग घूमते नजर आते हैं।

आगे जाकर यही झेलम हिन्दुस्तानके बड़ेसे बड़े सरोवर वुलरमें जा गिरती है और अुसमें विलीन होकर गुप्त रूपसे लम्बी यात्रा करके दूसरे छोर पर बाहर निकलती है और बारामुल्लाकी ओर जाती है। वहां अिस नदीमें से अेक कृत्रिम नहर पैदा करके जो बिजली तैयार की जाती है वही कश्मीरके राज्यको पर्याप्त शक्ति देती है। अबटाबादके नजदीक यह नदी दिशा बदलती है और दौड़ती हुअी आगे बढ़ती है। झेलमकी सारी घाटी अपने सौंदर्यके लिअे प्रख्यात है।

लोककथा कहती है कि अकबर बादशाह अिस घाटीके सौंदर्यके नशेमें अूपरसे नीचे कूद पड़े थे। यह कवि-कल्पना भले हो, किन्तु घाटीको देखने पर अिस तरहका नशा चढ़ना संभव तो अवश्य जान पड़ता है। अैसी लोककथाअें किसी राजाके गौरवका वर्णन करनेकी अपेक्षा

नदीके मोहक सौंदर्यकी तारीफ करनेके लिअे ही अर्थवादके तौर पर गढ़ ली जाती हैं।

जब हिन्दुस्तानका सच्चा अितिहास लिखा जायगा, तब अुसमें बड़ी बड़ी नदियोंके अनुसार देशके अलग अलग विभाग बनाये जायंगे। अैसे अितिहासमें झेलमकी स्वर्गीय संस्कृतिका विभाग मामूली नहीं होगा। सचमुच झेलमको स्वर्धुनीका ही नाम शोभा देता है।

१९२६–'२७

२८

सेवाव्रता रावी

सिन्धु नदीको करभार देनेवाली पांच नदियोंमें वितस्ता — झेलम — और शुतुद्री दो ही महत्त्वकी मानी जाती हैं। बाकीकी नदियां अपने जिम्मे आया हुआ काम नम्रताके साथ पूरा करती हैं। जिस प्रकार किसी श्रेष्ठ पुरुषसे मिलनेके लिअे शिष्ट-मंडल जाता है, अुसी प्रकार ये नदियां धीरे धीरे साथ मिलकर आखिर सिन्धुसे जा मिलती हैं। व्यास सतलजसे मिलती है। चिनाव झेलमसे मिलती है और रावी अिन दोनोंसे मिलती है। मुलतानके पास तीन नदियोंका पानी लाती हुअी झेलम हिन्दुस्तानके अुस पारसे आनेवाली सतलजसे मिलती है। और अन्तमें अिन सबोंका बना हुआ पंचनद सिन्धुमें मिलकर कृतार्थ होता है। सिन्धुसे बातें करनेवाले शिष्ट-मंडलका अध्यक्षीय स्थान तो सतलजको ही मिल सकता है, क्योंकि वह भी सिन्धुकी तरह परलोकसे (हिमालयके अुस पारसे) ही आती है।

अिन पांच नदियोंमें मध्यम स्थान अिरावतीका यानी रावीका है। वेदोंमें अिराका अर्थ है पानी, आह्लादक पेय। यों तो नदीमें पानी होता ही है। किन्तु अिस नदीके विशेष गुणको देखकर ऋषियोंने अुसे अिरावती नाम दिया होगा। ब्रह्मदेशकी अैरावती (अिरावान् = समुद्र) को

समुद्रके समान विस्तृत देखकर क्या यह नाम दिया होगा? रावी अितनी विस्तृत नहीं है।

स्वामी रामतीर्थकी जीवनीमें रावीका जिक्र अनेक जगह पर आता है। रावीको देखकर स्वामी रामतीर्थकी आंखें प्रेमसे भर आती थीं। वैराग्य और संन्यासके कच्चे विचार अुन्होंने अिस नदीके किनारे ही पक्के किये। किन्तु रावी तो सिख-गुरु अर्जुनदेव और सिख-महाराज रणजितसिंहके लिअे ही आंसू बहाती दिखाअी देती है।

मैं लाहौर गया था तब अिरावतीके पुण्यदर्शन कर पाया था। अुस समय वह कितनी शांत थी! अुसके विशाल पट पर सारा लाहौर अुलट पड़ा था। लोगोंकी धूमधाम और पैसेवालोंकी शान-शौकत तथा विलासके सामने रावीकी शांति विशेष रूपसे शोभा पाती थी। यहां रावीका दृश्य अैसा मालूम होता था, मानो सारे लाहौरको अपनी गोदमें लेकर खेलाती हो!

अपना पावन और पोषक जल देनेके अलावा रावी अपने बच्चोंकी विशेष सेवा करती है। हिमालयके घने अरण्योंमें चीड़, देवदार, बांझ, सफेता आदि आर्य वृक्षोंके घने नगर बसे हुअे हैं। कहीं कहीं तो अैन दोपहरके समय भी सूरजकी धूप जमीन तक बड़ी मुश्किलसे पहुंचती है। और वयोवृद्ध वृक्षोंका अेकाध पितामह जब अुन्मूल होकर गिर पड़ता है तब भी अुसका जमीन तक पहुंचना असंभव-सा हो जाता है। आसपासके वृक्ष अपनी बलवान भुजाओंमें अुसको अंतरिक्षमें ही पकड़ लेते हैं। मानो बाणशय्या पर पड़े हुअे भीष्माचार्य हों। बरसों तक अिस तरह अधर ही अधरमें रहकर ठंड, धूप तथा बारिश सहते हुअे आखिर अिस भीष्माचार्यका विशाल शरीर छिन्न-भिन्न और चूर्णित होकर लुप्त हो जाता है।

अैसे जंगलोंसे अिमारती लकड़ी काटकर लाना आसान बात नहीं है। अिसलिअे लोगोंने रावीका आश्रय लिया। रावीके किनारे जहां बड़े बड़े जंगल हैं वहां लकड़ी काटनेवाले जाते हैं और लकड़ीके बड़े बड़े लट्ठे काटकर रावीके प्रवाहमें छोड़ देते हैं। बस हो-हा करते हुअे वे चलने लगते हैं। कहीं कहीं पाठशालामें जानेवाले आलसी लड़कोंकी

भांति वे धीरे धीरे और रुकते रुकते भी चलते हैं। और कहीं कहीं घासके समय घरकी ओर दौड़नेवाले सांड़ोंकी तरह वे नाचते-कूदते, अूपर-नीचे होते, अेक-दूसरेसे टकराते हुअे दौड़ते जाते हैं।

जब सजीव जानवरोंको भी हांकनेके लिअे गड़रियोंकी आवश्यकता होती है, तब ये निर्जीव लट्ठे अैसी किसी देखरेखके बिना मुकाम तक कैसे पहुंच सकते हैं? नदीका कहीं मोड़ देखा कि सब रुक गये। अेक रुका जिसलिअे दूसरा रुका। अुसके सहारे तीसरा रुका। 'आगे जानेका रास्ता नहीं है' कहकर चौथा रुका। 'क्या देखकर ये सब यहां खड़े हो गये हैं, देखूं तो सही!' कहकर पांचवां रुका। रात बितानेके लिअे यह पड़ाव होगा, अैसा अीमानदारीके साथ मानकर सातवां, आठवां और दसवां रुका। बादमें आये हुअे तो यह मानने लगे कि हमारा मुकाम ही यहीं है, अब यात्रा करना बाकी नहीं रहा। जहां सब रुके 'सा काष्ठा सा परा गतिः'।

सुबह होते ही अिन लट्ठोंके गड़रिये आते हैं और सबको आगे हांक ले जाते हैं। 'अरे भअी, चलो चलो' करते यह काफिला फिर कूच शुरू करता है। नदीका प्रवाह अच्छा हो वहां तक तो यह यात्रा ठीक चलती है। मगर जहां प्रवाह ज्यादा तेज, छिछला या पथरीला होता है वहां बड़ी मुश्किल होती है। अेकाध लंबे लट्ठेको दो बड़े पत्थरोंका आश्रय मिल गया कि वह वहीं रुक जायगा और कहेगा 'मैं तो यहांसे हटनेवाला ही नहीं हूं। और दूसरोंको भी नहीं जाने दूंगा।' अैसी जगह पर अुन लट्ठोंके जानेके लिअे पांच-सात ही खेल नहरें होंगी। वे बंद गअीं कि सारा काफिला रुक गया समझिये। गड़रिये वहां तैर कर आनेकी हिम्मत भी नहीं करेंगे; क्योंकि अुनको अिन लट्ठोंसे अधिक अपना सिर प्यारा होता है। किनारे पर खड़े रहकर लम्बे लम्बे बांसोंसे ढकेल ढकेल कर कड़ियोंको निकाला जा सकता है। किन्तु जो प्रवाहके बीचोंबीच रुक गये हों अुनका क्या?

मनुष्यने अिस आफतका भी अिलाज खोज निकाला है। हिमालयमें भैंसके समान बड़े जानवर रहते होंगे। अुनकी पूरी खाल अुतार कर अुसको सी लेते हैं और अुसका थैला बनाते हैं। गलेकी ओरसे

हवा भर कर अुसे भी सी डालते हैं। अिससे यह जानवर अप्सराकी तरह, बिना मांस या हड्डियोंका, हवासे भरा हुआ हो जाता है और पानी पर तैरने लायक बन जाता है। अुसके चार पांव भी हड्डियोंको निकालकर जैसेके तैसे रखे जाते हैं। फिर अिस तैरते हुअे फुग्गे या मशकको पानीमें छोड़कर ये गड़रिये अुसके पेट पर अपनी छाती रख देते हैं और पांव हिलाते हिलाते तय किये हुअे मुकाम पर पहुंच जाते हैं। फुग्गेके कारण पानीमें तैरना आसान हो जाता है। फुग्गेके पांवोंको पकड़ रखने पर वह छातीके नीचेसे खिसकता नहीं और तेज प्रवाहमें कहीं पत्थरसे टकराने पर चोट खालको ही लगती है, अुस पर सवार हुअे आदमीको नहीं।

अितनी तैयारी होने पर वे लट्ठे भटकते कैसे रह सकते हैं? अेक अेकको तो आगे बढ़ना ही पड़ता है। पहाड़की घाटियोंको पार कर अेक बार बाहर निकल आये कि ये लट्ठे मनचाहे ढंगसे अलग अलग न हो जायं अिसलिअे अुनके गड़रिये सबको रस्सेसे बांधकर अुन पर सवार होते हैं और अुन्हें आगे ले जाते हैं।

लाहौरमें रावीके प्रवाह पर अिन लट्ठोंके कअी काफिले तैरते हुअे दीख पड़ते हैं। अुनके शत्रु अुनको पानीसे बाहर निकालकर अुनके टुकड़े टुकड़े कर डालते हैं; और फिर मनुष्योंके मकान या दूसरे साज-सामान तैयार करनेके लिअे दधीचि ऋषिकी तरह अुन्हें अपना शरीर अर्पण करना पड़ता है। अपने पर्वतीय सहोदरोंको मनुष्यकी सेवामें अिस प्रकार लाकर छोड़ते समय रावीको कैसा लगता होगा? रावी अितना ही कहती होगी : 'भाअियो, परोपकाराय अिदं शरीरम्।'

जून १९३७

२९

स्तन्यदायिनी चिनाब

कश्मीरसे लौटते समय पैर अुठते ही नहीं थे। जाते समय जो अुत्साह मनमें था, वह वापस लौटते वक्त कैसे रह सकता था? अिसी कारण, जाते समय जो रास्ता लिया था, अुसे छोड़कर पीर पुंजालके पहाड़ोंको पार करके हम जम्मूके रास्तेसे आ रहे थे। श्रीनगरसे जम्मू तक गाड़ीका रास्ता भी नहीं है। हिम्मत हो तो पैदल चलिये, वरना कश्मीरी टट्टू पर सवार हो जाअिये। रास्तेमें प्रकृतिकी सुंदरता और जहांगीरकी विलासिताका कदम कदम पर अनुभव होता है। जहां देखें वहां बंधे हुअे जलाशय और पहाड़ोंमें बनाये हुअे रास्ते दीख पड़ते हैं। आज शिमलाकी जो प्रतिष्ठा है, वही या अुससे भी अधिक प्रतिष्ठा जहांगीरके समयमें श्रीनगरकी थी। अैसे बादशाही पहाड़ी रास्तेसे वापस लौटते समय भगवती चंद्रभागाके दर्शन किये थे। लोग आज अुसे चिनाबके नामसे पहचानते हैं।

यदि मैं भूलता नहीं हूं तो हम रामवनके आसपास कहीं थे। सारा दिन और सारी रात चलना था। चांदनी सुंदर थी। थके-मांदे हम रास्ते पर पियक्कड़ आदमीकी तरह लड़खड़ाते हुअे चल रहे थे। पांवोंके तलुओंमें छाले निकल आये थे। घुटनोंमें दर्द था और निराश नींदका रूपांतर हुआ था आधी क्लान्तिमें। निद्रा सुखावह होती है; तन्द्रा वैसी नहीं होती।

अैसी हालतमें हम आगे बढ़ रहे थे, अितनेमें दायीं ओरकी गहरी घाटीमें से गंभीर ध्वनि सुनाअी दी। सामनेकी टेकरी परसे झुककर आया हुआ पवन शीतल-सुगंधित मालूम होने लगा। तन्द्रा अुड़ गअी। होश आया। और दृष्टि कलरवका अुद्गम खोजने दौड़ी। कैसा मनोहर दृश्य था! अूपरसे दूधके जैसी चांदनी बरस रही है। नीचे चंद्रभागा पत्थरोंसे टकराकर सफेद फेन अुछाल रही है। और अुसका आस्वाद लेकर तृप्त हुआ पवन हमें वहांकी शीतलता प्रदान कर रहा है।

साथ आये हुअे अेक आदमीसे मैंने पूछा, "यह कोअी नदी है, या पहाड़ी प्रवाह है?" अुसने जवाब दिया, "दोनों है। वह तो मैया चिनाव है।" मैंने चिनावको प्रणाम किया। नीचे तो अुतरा नहीं जा सकता था। अतः दूरसे ही दर्शन करके पावन हुआ। प्रणाम करके कृतार्थ हुआ और आगे चलने लगा।

क्या यही है वेदकालीन भगवती चंद्रभागा! कअी ऋषियोंने अपने ध्यान और अपनी गायोंको यहां पुष्ट किया होगा। आज भी अुद्यमी लोग अिस नदी माताका दोहन कम नहीं करते। मेरी जीवन-स्मृति शुरू होती है अुसी समय पहाड़ों जैसे कद्दावर पंजाबी अिस नदीके किनारे पर नहरें खोदते थे। आज पचीस लाख अेकड़ जमीन अिस माताके दूधसे रसकस प्राप्त करती है और पंजाबी वीरोंका पोषण करती है। वेद-कालीन चिनावका सत्त्व आर्योंके अुत्कर्षमें काम आता था। रणजितसिंहके समयमें यही जल गुरुकी फतह पुकारता था। आजका रंग भी अंतिम नहीं है। चिनावका पानी बिलकुल निःसत्त्व नहीं हुआ है। पंचनदकी प्रतिष्ठा फिरसे जागेगी और सप्तसिंधुका प्रदेश भारतवर्षको भाग्यके दिन दिखलायेगा।

१९२६–'२७

[चिनावका प्रवाह पंजाबकी भाग्यरेखा होनेके बजाय आज पंजाबके बंटवारेकी रेखा बना है, यह कितना दैवदुर्विपाक है!]

३०

जम्मूकी तवी अथवा तावी

किसी नदीके बारेमें कहने जैसा कुछ न मिले तो भी क्या? अुसमें स्नान करनेका आनंद कम थोड़े ही होनेवाला है! नदीका महत्त्व स्वतःसिद्ध है। अुसके नामके साथ कोअी अितिहास जुड़ा हुआ हो तो धन्य है वह अितिहास। नदीको अुससे क्या? अितिहासकी दिलचस्पी विग्रहके साथ अधिक होती है — जब कि नदीका काम संधिका, मेलजोलका होता है। किसानोंको और पथिकोंको, पशुओंको और पक्षियोंको अपने जलसे संतुष्ट करती हुअी नदी जब बहती है, तब वह 'आत्मरति, आत्मक्रीड़ और आत्मन्येव च संतुष्ट' जैसी मालूम होती है। आप नदीसे पूछिये, 'तेरा अितिहास क्या है?' वह जवाब देगी, 'मैं पहाड़की लड़की हूं। असंख्य मानव तथा तिर्यक् प्रजाकी माता हूं। मैं सागरकी सेवा करती हूं, और आकाशके बादल ही मेरे स्वर्गस्थान हैं। बस अितना अितिहास मेरी दृष्टिसे महत्त्वका है।' ज्यादा पूछो तो तावी कहेगी कि 'आसपासके प्रदेशको पिलानेके बाद मेरा जो पानी बचता है वह मैं चिनावको देती हूं। चिनाव अपना पानी झेलममें विसर्जन करती है। झेलम सिंधुसे मिलती है। और सिंधु हम सबका पानी सागरमें छोड़कर अपनेको और हम सबको कृतार्थ करती है। वही है हमारी सायुज्य मुक्ति। बाकी तुम पागलोंका अितिहास तुम जानो। दुश्मनी और पागलपनका अितिहास भला कभी लिखा जाता है? वह तो भूल जानेकी बात है, भूल जानेकी। क्या तुम दुश्मनी और जहरको कायम रखनेके लिअे अितिहास लिखते हो? अैसे अितिहासको दफना दो या धो डालो। सेवाका अितिहास ही सच्चा अितिहास है। द्विगर्तवासी डोगरा, गद्दी और गुज्जर जैसी प्रजा मेरी संतान है। अुनका जीवन ही मेरा जीवन है।'

कश्मीरकी यात्रा पूरी करके हम जम्मू आये और रघुनाथजीके मंदिरमें ठहरे। पास में ही तवी बह रही थी। जम्मूकी ओरका तवीका किनारा खासा अूंचा है। तवी भी वैसी ही है जैसी बहुतसी नदियां

होती हैं। अुसमें असाधारण कुछ नहीं है। अेक महाराष्ट्रीय अिंजीनियरसे हम मिलने गये थे। अुन्होंने बताया कि 'तवीके अूपर बिजलीके यंत्र लगाये गये हैं। अिस बिजलीसे बहुतसा काम किया जा सकता है।' किन्तु तवीको अुससे क्या? वह तो निरन्तर बहती ही रहती है।

१९२६-'२७

३१

सिंधुका विषाद

हिमालयके अुस पार, पृथ्वीके अिस मानदंडके लगभग बीचमें, कैलासनाथजीकी आंखोंके नीचे चिर-हिमाच्छादित पुण्यवान प्रदेश है, जिसके छोटेसे दायरेमें आर्यावर्तकी चार लोकमाताओंका अुद्गम-स्थान है। अुस पार और अिस पारका विचार यदि न करें, तो हम कह सकते हैं कि अुत्तर भारतकी लगभग सभी नदियां यहांसे झरती हैं।

हिमालय हिन्दुस्तानका ही है, और किसी देशका नहीं, मानो यही सिद्ध करनेके लिअे हिमालयके अुत्तरकी ओर बहनेवाले पानीका अेक-अेक बूंद अिकट्ठा करके, हिमालयके दोनों छोरोंसे घूमकर अुन्हें हिन्द महासागर तक पहुंचानेका काम सिन्धु और ब्रह्मपुत्र, दोनों नद अखंड रूपसे करते हैं। ये दो नद अैसे लगते हैं, मानो श्री कैलासनाथजीने भारतवर्षको अपनी भुजाओंमें लेनेके लिअे दो कारुण्यबाहु फैलाये हों। हिमालयकी रुकावट मानो सहन न होती हो अिस तरह सतलज और घाघरा हिमालयकी गोदमें से सीधा रास्ता निकाल कर मानसरोवरका जल भारतवर्षके दो बड़े प्रांतोंको पिलाने लगती हैं। जब कि गंगा, यमुना और अुनकी असंख्य बहनें पिताका लिहाज रखकर अिस ओर रहते हुअे वही काम करती हैं। पंजाबकी पांच नदियां और युक्तप्रांतकी (अुत्तर प्रदेशकी) पांच नदियां मिलकर भारतवर्षकी समृद्धिको दसगुना बना देती हैं। ये दसों नदियां भारतीय हैं। केवल सिंधु और ब्रह्मपुत्रको अति-भारतीय कह सकते हैं।

भारतवासी गंगा मैयाको प्राप्त करके सिंधुको मानो भूल ही गये हैं। सिन्धुके तट पर आर्योंके धर्मप्रसिद्ध तीर्थ हैं ही नहीं। वैदिक देवताओंके देवता अिन्द्रको जिस प्रकार हम भूल गये हैं, अुसी प्रकार सप्त-सिंधुमें से मुख्य सिन्धु नदीको भी मानो हम भूल ही गये हैं। दक्षिण और पूर्वकी ओर महासाम्राज्योंकी स्थापना करके प्राचीन आर्य वायव्य दिशाके प्रति कुछ अुदासीनसे बने और अिस कारण हमेशाके लिअे खतरेमें आ पड़े। अुत्तरकी ओर तो हिमवानकी रक्षा थी ही। पश्चिमकी ओर ठेठ अन्दर तक राजपूतानेकी मरुभूमि और राजपूत तथा डोगरा जातिके शौर्यसे पूरी रक्षा मिलती थी। अुससे बाहर वेगवती सिंधु रक्षा कर रही थी। जिससे आगे करतार (खिरथर) से लेकर हिन्दूकुश तक प्रचंड पर्वतमालाकी रक्षा थी। पहाड़ी परोपनिसदी (अफगान) लोगोंकी स्वातंत्र्य-प्रियता भी विदेशियोंको अिस ओर आने नहीं देती थी। मगर जहां देशवासी ही अुदासीन हो गये, वहां पहाड़ी दीवारें और नदियां कितनी रक्षा कर सकती हैं? परोपनिसदी लोगोंमें यवन मिल गये और बाल्हीकके पास हिन्दुस्तानकी जो शास्त्रीय फौजी सीमा थी, वह खिसकती खिसकती अटक तक आकर अटक गयी। और अटकने भी विदेशियोंको अंदर आनेसे अटकानेके बजाय भारतवासियोंको बाहर जानेसे ही अटकाया! रानी सेमीरामिस हिन्दुस्तान आनेसे नहीं अटकी। फारसके सम्राट दरायस पंजाब और सिंधुसे सुवर्ण-करभार लेनेसे न अटके। युअेची तथा हूण लोग हिन्दुस्तान आनेसे न अटके। सिकंदर पांच नदियोंको पार करनेसे न अटका। महमूद या बाबरको भी यह अटक न अटका सकी। हमें मालूम होना चाहिये था कि जिस नदीने काबुल नदीके पानीका स्वीकार किया वह पश्चिमकी ओरसे आनेवाले लोगोंको नहीं अटकायेगी!

पश्चिम तिब्बतमें कैलासकी तलहटीमें सिन्धुका अुद्गम है। वहांसे सीधी रेखामें वायव्यकी ओर वह दौड़ती है, क्योंकि अंतमें अुसे नैऋत्यकी ओर जाना है। कश्मीरमें घुसकर लेहकी फौजी छावनीकी मुलाकात लेती हुअी काराकोरम पहाड़की रक्षामें वह सीधी आगे बढ़ती है। स्कार्डूके पास अुसे होश आता है कि मुझे हिन्दुस्तान जाना है। गिलगिटके किलेको

दूरसे देखकर वह दक्षिणकी ओर मुड़ती है। चित्रालकी ओर तो वह खुद जाना नहीं चाहती, लेकिन यह जांचनेके लिअे कि वहांका पानी कैसा है, वह स्वात नदीको अपने पास बुलाती है। स्वात भला अकेली क्यों आने लगी ? अुसकी निष्ठा काबुल नदीके प्रति है। सफेद कोहका पानी लानेवाली काबुलसे मिलकर वह अटकके पास सिन्धुसे आ मिलती है। अब सिन्धु पूरी पूरी भारतीय बन जाती है। स्वात और काबुलके पास सुननेके लिअे काफी अितिहास पड़ा है। खैबरघाटसे कौन कौन लोग आये और गये, बैक्ट्रियाके यूनानी लोग किस रास्तेसे आये, और कर्नल यंगहसबंड वहांसे चित्रालकी चढ़ाअी पर कैसे गया — आदि सारा अितिहास ये दो नदियां बता सकती हैं। अमीर अमानुल्लाने गरमीके पागलपनमें परसों ही जो चढ़ाअी की थी अुसकी बात यदि पूछें तो वह भी ये बता सकेंगी। और कोहाटकी क्रूरतासे भी सिन्धु अपरिचित नहीं है। वजीरिस्तान और बन्नूमें क्षात्र-धर्मको लज्जित करनेवाली जो घटनाअें घटी थीं, अुनकी कहानी कुरमके मुंहसे सुनकर सिन्धुका जी कांप अुठता है। क्रुमु या कुरम नदी सिन्धुसे मिलती है तब अुसका प्रवाह बिगड़ता है। पहाड़के अभावमें वह मर्यादामें नहीं रह पाता। छोटे बड़े टापू बनाती बनाती सिन्धु डेरा अिस्माअिलखांसे लेकर डेरा गाजीखां तक जाती है।

अब सिन्धु पांचों नदियोंके पानीकी राह देखती हुअी संकरी होकर दौड़ती है। जम्मूकी ओरसे आनेवाली चिनाब कश्मीरी झेलम नदीसे मिलती है। लाहौरके वैभवका अनुभव करके तृप्त बनी हुअी रावी अिन दोनोंसे मिलती है। व्यासके पानीसे पुष्ट बनी सतलज अिन तीनोंके पानीमें जा मिलती है। और फिर अुन्मत्त बना हुआ पंचनदका प्रवाह अपनी पूरी रफ्तारके साथ मिट्ठनकोटके पास सिन्धुके अूपर टूट पड़ता है। अितने बड़े आक्रमणको सहकर, हजम करके, अपना ही नाम कायम रखनेवाली सिन्धुकी शक्ति भी अुतनी ही बड़ी होनी चाहिये।

सिन्धु न सिर्फ अपना नाम ही कायम रखती है, बल्कि यहांसे वह अपने जीवनकी अुदार कृपाको अनेक प्रकारसे फैलाती हुअी आस-पासके प्रदेशको भी अपना नाम अर्पण करती है। 'त्यागाय संभृतार्था-

नाम्’ के अुदाहरणरूप आर्य राजाओंका ही वह अनुकरण करती है। बड़ी बड़ी सात घाटियोंका पानी वह अिकट्ठा जरूर करती है, मगर सारा पानी अनेक मुखोंसे महासागरको देनेके लिअे ही। और बीचमें यदि कोअी गरजमंद आदमी अुसमें से मनमाना पानी कहीं ले जाना चाहे, तो सिन्धुको कोअी अेतराज नहीं है।

फिर भी गंगा मैयाकी अुदारता सिन्धुमें नहीं है। अिसलिअे अटक और सक्करसे लेकर हैदराबाद तक अुस पर पुल बनाये गये हैं। सक्करका पुल फौजी दृष्टिसे बहुत महत्त्वका है। सिंधुमें स्थित अेक बड़े टापूसे लाभ अुठाकर यह पुल बनाया गया है। मगर रोहरीकी ओर जहां पानी गहरा है, वहां यह पुल किसी भी समय पंखेकी तरह समेटकर अिकट्ठा किया जा सकता है। यदि फौजके लिअे सिन्धुको पार करना असंभव-सा बना देना हो, तो अेक मंत्र बोलते ही सारा पुल लुप्त हो सकता है। फिर शिकारपुर-सक्कर अलग और रोहरी अलग।

यह बात नहीं है कि शिकारपुर-सक्करको अंग्रेजोंने ही महत्त्व दिया है। यहांके हिन्दू व्यापारी प्राचीन कालसे बोलनघाटके रास्तेसे कंदहार जाकर मध्य अेशियामें तिजारत करते आये हैं। हिरात या मर्व, बुखारा या समरकंद, कहीं भी देखिये आपको शिकारपुरके व्यापारी जरूर मिल जायेंगे। शिकारपुरकी हुंडी मास्को और पिटर्सबर्ग (लेनिनग्राड) तक सकारी जाती थी। सक्करका स्मरण करें और बड़े जहाजके समान पानीमें तैरनेवाले साधुबेला नामक टापूका स्मरण न हो यह असंभव है। साधुओंकी काव्यमय अभिरुचि हमेशा सुन्दरसे सुन्दर स्थान पसंद करती है। साधुबेलाके सौंदर्यकी अीर्ष्या सम्राट् भी करेंगे।

पता नहीं, सिन्धुको आराम लेनेकी सूझी या सिंघाड़े खानेकी; वह यहांसे मंचर सरोवरकी दिशामें दौड़ती है। किन्तु समय पर सावधान होकर या खिरथर (करतार) के कहने पर वह वापस लौटती है और सेवणसे आग्नेय दिशामें मुड़कर हैदराबाद तक जाती है। यह प्रदेश कअी युद्धोंका साक्षी है। मालूम नहीं, जयद्रथके समयमें यहांकी स्थिति कैसी थी। मगर दाहिर और जच्चके समयमें यह प्रांत काफी पिछड़ा

हुआ रहा होगा। चंद्रगुप्तके पहले अीरानी साम्राज्यको सोना दे देकर निःसत्त्व हो जानेके कारण कहो, या वहांके ब्राह्मण राजाओंके अनाचारोंके कारण कहो, वहांकी प्रजा बिलकुल कंगाल और कमजोर हो गअी थी। अीरानका बादशाह आये या सिकंदर आये, बगदादका मुहम्मद-बिन-कासिम आये या सर चार्ल्स नेपियर आये, सिन्धु-तटवासी लोग हर समय हारे ही हैं।

जब सिकंदरने जहाजोंमें बैठकर सिन्धुको पार किया तब अुसने अपनी रक्षाके लिअे दोनों किनारों पर अपनी फौज चलाअी थी। आज अंग्रेजोंने सिन्धुकी रक्षाके लिअे नहीं, बल्कि पंजाबका गेहूं विलायत ले जानेके लिअे सिन्धुके दोनों तट पर रेलें दौड़ाअी हैं। सिन्धुका प्रवाह काफी वेगवान होनेसे गंगाकी तरह अुसमें जहाज नहीं चल सकते। अिसी कारणसे कराचीके पासके केटी बंदरगाहका कोअी महत्त्व नहीं रहा है।

सिन्धुके मुखका प्रदेश सिन्धुके ही पुरुषार्थके कारण बना है। दूर दूरसे कीचड़ और बालू ला लाकर सिन्धु वहां अुंड़ेलती गअी है। नतीजा यह हुआ है कि अरबी समुद्रको हमेशा अत्यंत सूक्ष्मतासे या 'बहादुरीसे' पीछे हटना पड़ा है।

सिन्धुका प्रवाह सिन्धु नामको शोभा दे अितना विस्तीर्ण और वेगवान है। गरमीके दिनोंमें जब पिघले हुअे बर्फके पानीका पूर अुसमें आता है, तब अुसको घोड़े या हाथीकी अुपमा शोभा तो क्या दे, वह सूझती भी नहीं। अुसको तो जल-प्रलय ही कहना होगा। सागरकी लहरें जैसी अुछलती हैं, वैसी ही सिन्धुकी लहरें अुछलती हैं। मगर-मच्छोंके गुरु बन सकें, अैसे तैराक भी पूरके समय पानीमें कूदनेकी हिम्मत नहीं करते।

प्रेम-दिवानी सती सुहिणीकी ही, कच्चे घड़ेके आधार पर, अैसे प्रवाहमें कूदनेकी हिम्मत हो सकती थी। प्रेमका प्रवाह, प्रेमका वेग और परिणामके बारेमें प्रेमका निरादर महासिंधुसे भी बड़ा होता है।

सितंबर, १९२९

३२

मंचरकी जीवन-विभूति

जिसने पानीको जीवन कहा, वह कवि था या समाजशास्त्री? मुझे लगता है वह दोनों था। विना पानीके न तो वनस्पति जी सकती है, न पशु-पक्षी ही जी सकते हैं। तव फिर दोनोंका आश्रित मनुष्य तो विना पानीके टिक ही कैसे सकता है? अीश्वरने पृथ्वीके पृष्ठभाग पर तीन भाग पानी और अेक भाग जमीन वनाकर यह वात सिद्ध की है कि पानी ही जीवन है। वेहोश आदमी आंखोंको पानीकी अेक ठंडी वूंद लगनेसे भी होशमें आ जाता है, तो फिर अनंत वूंदोंसे छलकते हुअे सरोवरको देखकर जीवन कृतार्थ होने जैसा आनन्द यदि वह अनुभव करे तो अिसमें आश्चर्य ही क्या?

अनंत सागर और अुसकी अनंत तरंगोंको देखने पर मनुष्यको अुन्माद होना स्वाभाविक है। पर जिसके सामनेके किनारेकी थोड़ी झांकी ही हो सकती है, और अिस कारण आंखोंको जिसके विशाल विस्तारका माप पानेका आनंद मिल सकता है, अैसे शांत सरोवरका दर्शन मित्र-दर्शनके समान आह्लादक होता है। सागर अज्ञातमें कूद पड़नेके लिअे हमें वुलाता है, जव कि सरोवर अपनी दर्पण जैसी शीतल पारदर्शक शांति द्वारा मनुष्यको आत्म-परिचय पानेके लिअे प्रोत्साहन देता है। सरोवरमें हमें जीवनकी प्रसन्नताका दर्शन होता है, जव कि सागरमें जीवनकी प्रक्षुब्ध विराटताका साक्षात्कार होता है। सागरका तांडव-नृत्य देखकर जो मनुष्य कहेगा:

दिशो न जाने न लभे च शर्म।

वही मनुष्य विशाल सरोवरके किनारे पहुंचते ही 'हाश' करके गायेगा:

अिदानीं अस्मि संवृत्तः, सचेताः, प्रकृतिं गतः।

अिस प्रकार सागर और सरोवर जीवनकी दो प्रधान और भिन्न विभूतियां हैं।

मैं जानता था — कभीका जानता था — कि जीवन-विभूतिका अैसा अेक सुभग दर्शन सिंधमें सदाके लिअे फैला हुआ है। किन्तु अुसे देखनेके सौभाग्यका अुदय अभी तक नहीं हो पाया था। जब मेरे लोकसेवक संस्कार-संपन्न रसिक मित्र श्री नारायण मलकानीने मुझे अिस बार सिंधमें घूमनेका आमंत्रण दिया, तब मैंने अुनसे यह शर्त की कि अबकी बार यदि जीवन और मरण दोनोंका साक्षात्कार करानेके लिअे आप तैयार हों तो ही मैं आअूंगा। अिस तरहकी गूढ़ वाणीकी अुलझनमें मित्रको लम्बे समय तक डालना मैंने पसन्द नहीं किया। मैंने अुनको लिखा, जहां अेक अेक करके तीन युग दबे पड़े हैं, और जहां मृत्युनें अपना सबसे बड़ा म्यूजियम खोला है, वह 'मोहन-जो-दड़ो'*, मुझे फिरसे देखना है। अुसी तरह जहां कमलकंदकी जड़में से पैदा होनेवाले असंख्य कमलों, अिन कमलोंके बीच नाचनेवाली छोटी-बड़ी मछलियों, अिन मछलियों पर गुजर करनेवाले रंगबिरंगे पक्षियों और कमलकंद से लेकर पक्षियों तक सबको बिना किसी पक्षपातके अपने अुदरमें स्थान देनेवाले सर्वभक्षी मनुष्योंकी निश्चितताके साथ जहां वृद्धि होती है, अुस जीवन-राशि मंचर सरोवरका भी मुझे दर्शन करना है। नारायणकी स्थिति तो 'जो दिल-पसन्द था वही वैद्यने खानेको कहा' जैसी हुअी होगी। अुन्होंने सिंधके सूफी दर्शनका पालन करके प्रथम लारकानाके रास्तेसे 'मौतके टीले' का दर्शन कराया, और अुसके पश्चात् ही जीवनकी अिस राशिकी ओर वे हमें ले गये!

सिन्धुके पश्चिम तट पर, जहां पंजाबका गेहूं कराची तक पहुंचा देनेवाली रेलवे दौड़ती है, दादू और कोटरीके बीच बूबक स्टेशन आता है। बगैर पूछे आदमीको कैसे पता चले कि अबूबकर नामके दोनों छोरके अक्षर कम करके बूबक नामका सर्जन हुआ है? स्टेशनसे पश्चिमकी ओर चार मीलका धूल-भरा रास्ता पार करके हम बूबक पहुंचे। वहांके लोग बाजे, शहनाअी और थोड़ी-बहुत दक्षिणा लेकर हमें लेने

*अुसका सही नाम है 'मूवन-जो-दड़ो'। अिसका अर्थ होता है मरे हुअे लोगोंका टीला।

आये। अुनके साथ सारा गांव घूमकर, गली-कूचोंको देखकर, हम अपने मिजवान श्री गोधूमलजीके घर पहुंचे। अुनके आतिथ्यको स्वीकार करके खाया-पिया, दस-पंद्रह मिनट तक स्वप्नसृष्टि पर राज्य किया और वहांके गालीचों तथा रंगाअी-कामकी कद्र करके हम मंचरके दर्शन करने निकले।

दो मीलका धूल-भरा रास्ता हमें फिर तय करना पड़ा। अुसके बाद ही खेतोंके बीच अंटसंट बातें करनेवाली और गड़रियोंकी कुटियोंकी मुलाकात लेनेवाली अेक नहर आअी। जहांसे वह शुरू होती थी, वहीं नअी-पुरानी किश्तियोंका अेक झुंड कीचड़में पड़ा था। अुनमें से अेक बड़ी किश्ती हमने पसन्द की और अुसमें सवार हुअे। ('सवार' या 'असवार' यानी 'अश्वारोही'; हम तो नौकारोही हुअे थे।) अिस प्रकार हमने और दो मीलकी प्रगति की। दोनों ओर पानीके साथ क्रीड़ा करनेवाली रहंट घुमानेका पुण्य प्राप्त करनेवाले अूंट हमने देखे। खुले वायुमंडलमें ही अपना जीवन, अपना विनोद और अपना अुद्योग चलानेवाले किसान भी हमने वहां देखे। और जमीन तथा पानीके बीच आवा-जाअी करनेवाले बनजारे पक्षी भी देखे।

हमारे काफिलेके बीसों जन आनंदके अुपासक बने थे। कुछने 'चल चल रे नौजवान — रुकना तेरा काम नहीं, चलना तेरी शान' वाला कूचगीत छेड़ा। अिसमें हंसनेकी बात तो अितनी ही थी कि नौकारोही हम लोग पैदल कूच नहीं कर रहे थे, मगर लंबे लंबे बांसोंसे कीचड़को कोचते कोचते आगे बढ़ रहे थे। हमारे पैर कोअी हल-चल किये बिना अजगरोंकी अुपासना कर रहे थे। पर जब सभी खुश-मिजाज होते हैं, तब बातों तथा गीतोंमें औचित्यके व्याकरणकी कोअी परवाह नहीं करता।

जब चि० रैहानाबहनको 'बेनवा फकीर' की मुरलीके सुर छेड़नेका निमंत्रण दिया गया तभी सच्चा रंग जमा; ठीक अिसी समय हमारी नहरने अपना मुंह चौड़ा करके हमारी किश्तीको सरोवरमें ढकेल दिया। फिर तो पूछना ही क्या? जहां देखो वहां जीवन ही जीवन फैला हुआ था! पंद्रहसे बीस मील लंबा और दस मील चौड़ा जीवनका

काव्यमय विस्तार!! पानीकी विस्तृत जलराशिकी कांति और बीच बीचमें हरे घासके टापुओंकी शांति! प्रकृतिको अितना काव्य कैसे सूझा होगा? मैंने गोधूमलजीसे कहा, 'यहां तो मेरा हृदय द्रवित होता जा रहा है।' अुन्होंने अुतनी ही रसिकताके साथ जवाब दिया: 'यदि आप नवंबरमें यहां आते तो यहांके लाखों कमलोंमें दब जाते। आपको यदि यह अुल्लास देखना हो तो अपने विष्णुशर्माको किसी भी साल लिखकर सूचना कर दीजिये। वे मुझे लिखेंगे और मैं आपके लिअे सब तैयारी कर रखूंगा। हमारा प्रदेश अितना अलग पड़ गया है कि आपके जैसे लोग शायद ही यहां आते हैं। जहां तक मुझे याद आता है, अिसके पहले यहां अेक ही महाराष्ट्रीय प्रोफेसर आये थे और वे भी आपकी ही तरह आनन्द-विभोर हो गये थे। हां, हर साल कुछ गोरे फौजी अफसर यहां मछलियां मारने या शिकार खेलने जरूर आते हैं। मगर अुससे हमें क्या लाभ हो सकता है?'

दूरी पर अेक किश्ती दिखाअी दी। देहातका कोअी कुटुंब स्थलांतर करता होगा। अुनकी नारंगी रंगकी ओढ़नी तथा नीले रंगके पाय-जामेका प्रतिबिंब पानीमें कितना सुशोभित हो रहा था—मानो ग्रामीण काव्य ही आनंदमें आकर जल-विहार कर रहा हो! दूर दूर काले जल-कुक्कुट पानीकी सतह पर तैरते हुअे अुदर-पूजन कर रहे थे। हममें से कुछ लोगोंको किश्तीके किनारे बैठकर पानीमें पांव धोनेकी सूझी। अुन्होंने रिपोर्ट दी कि कहीं पानी बिलकुल ठंडा है और कहीं कुनकुना। अिसका कारण क्या है, यह तो लोग मुझसे ही पूछेंगे न? अैसी लहरी टोलीमें मैं हमेशा सर्वज्ञ होता हूं। मैंने फौरन कारण ढूंढ़ निकाला और सबको शास्त्रीय अुपपत्तिका संतोष प्रदान किया।

'वे सामने जो टेकरियां दिखाअी देती हैं, अुनका क्या नाम है?' मैंने आसपासके लोगोंसे पूछा। अुन्हें मेरे प्रश्नसे आश्चर्य हुआ। मानो अुन्हें मालूम ही नहीं था कि स्वदेशी टेकरियोंके नाम भी होते हैं। और अिधर प्रत्येक रूपके साथ यदि नाम न जुड़ा हो तो मेरी दार्शनिक आत्मा संतुष्ट नहीं होती। हमारी टोलीमें बूबकका अेक छोटा, नाजुक और शर्मीले स्वभावका लड़का अेक कोनेमें बैठा था। मैंने

अुसे 'अीस्सरदास' कहकर पुकारा। पाठशालामें पढ़ा हुआ भूगोल अुसके काम आया। अुसने तुरन्त कहा, 'सामनेकी टेकरियोंको खिरथर कहते हैं।' मैं हंस पड़ा और मेरे मुंहसे अुद्‌गार निकल पड़ा: 'धन्य है करतार!' छुटपनमें हाला और सुलेमान पर्वतके नाम हमने रटे थे। आगे जाकर हाला पर्वतने करतारका नाम धारण किया था। अुसका कारण अितना ही था कि अंग्रेजोंने खिरथरकी स्पेलिंग की थी Kirthar। विदेशी लिपिके कारण हमारे यहां कअी अनर्थ हुअे हैं। यह अुनमें से ही अेक था। खिरथरकी टेकरियां अिस किनारेसे दस बारह मील दूर हैं। वहां सिंध पूरा होकर बलूचिस्तान शुरू होता है।

अब सूरज थककर खिरथरका आश्रय लेनेकी सोच रहा था। हमने भी सोचा कि अब लौटकर घर जाना चाहिये और सात बजनेसे पहले जठराग्निको आहुति देना चाहिये! नावने दिशा बदली और हम पूर्वकी ओरकी शोभा देखने लगे। 'वऽऽह सामने दूर जो नाव दिखाअी दे रही है वह अिस समय पश्चिमकी ओर कहां जाती होगी?' मैंने माअी गोवूमलजीसे पूछा। अुन्होंने बताया, 'अुस किनारे खिरथरकी बगलमें अेक गांव है। वहां महाशिवरात्रिका अेक मेला लगता है। अुस दिन हिन्दू लोग महाशिवरात्रिके कारण वहां अिकट्ठा होते हैं। मुसलमान भी अुस दिन वहीं अपने किसी पीरके नाम पर अिकट्ठा होते हैं। बहुत बड़ा मेला लगता है। ये लोग शायद मेलेके लिअे ही जा रहे होंगे।' हम गये अुस दिन फरवरीकी २१ तारीख थी। महाशिवरात्रि बिलकुल पास यानी २४ तारीखको थी। हमारे कार्यक्रममें फेरबदल किया ही नहीं जा सकता था। 'आज यदि २४ तारीख होती तो मैं जल्दी निकलकर अुस गांवमें जरूर जाता। मैं महाशिवरात्रिका व्रत रखता हूं। हिन्दू और मुसलमानोंको अेकहृदय होकर अेक ही अीश्वरकी भक्ति करनेके लिअे हजारोंकी तादादमें अेक ही जगह अिकट्ठा हुअे देखकर अपने हृदयको पवित्र करनेका मौका मैं न छोड़ता। शिवरात्रिके दिन जिस वृत्तिसे हिन्दू और मुसलमान प्रेमसे अिकट्ठा होते हैं, वही वृत्ति यदि हिन्दुस्तानमें सर्वत्र फैल जाय तो हमारा बेड़ा पार! वह दिन हिन्दुस्तानके लिअे सुदिन तथा शिवदिन हो जाय।'

अितना कहकर मैं खामोश हो गया। अब किसीके साथ बातें करनेमें मेरी दिलचस्पी न रही। मैं दूर दूर तक देखने लगा। पृथ्वी पर या आकाशमें नहीं, बल्कि कालके अुदरमें देखने लगा। कोलंबस जिस प्रकार श्रद्धापूर्वक अमरीकाका रास्ता खोजता था, अुसी प्रकार शिवरात्रिका कब शिवदिन होगा अिसकी मैं श्रद्धाकी दृष्टिसे खोज करने लगा।

'वह सामने जो हरे हरे खेत दीख पड़ते हैं अुनके पीछे तमाकू या भांगकी खेती होती है।' यूवकके अेक साथीने मेरा ध्यान भंग किया। हमने सरोवरमें से नहरमें प्रवेश किया था। नहरके किनारे, बांसकी कमानी पर, पैरोंको बांधकर खड़े हुअे बगुले मछलियोंका ध्यान कर रहे थे। झोंपड़ियोंमें से चूल्हेका धुआं निकलने लगा था। आंखें यूवकके अूंचे अूंचे चौरस मकानोंके स्थापत्यको निहारने लगीं। अिन मकानोंके कुछ 'मंध' बगुलोंकी तरह सिर अूंचा करके वायुसेवनके पैंतरेमें खड़े थे। हमने तमाकू और भांगके खेत भी पार किये। भांगके विषयमें सरकारी नीतिका अितिहास सुना। और घर लौटकर समय पर भोजन करने बैठे।

किन्तु मेरा मन तो मंचरके 'ढंढ' (बांध) पर महाशिवरात्रिका आनन्द ले रहा था।

मार्च, १९४१

लहरोंका तांडवयोग

[कराचीके पास कीआमारीसे जरा दूर मनोरा नामक अेक टापू है। वहां अेक सुन्दर मंदिर है। टापू पर अधिकतर पोर्टट्रस्टके लोग और थोड़ी-सी फौज रहती है। मनोरा टापू कराचीका गहना तथा समुद्रका खिलौना है। अिसके दक्षिणके छोर पर अेक बड़ी खोह है, जिस पर समुद्रकी लहरें टकराती हैं। अिससे आगे काफी दूर तक अेक बड़ी दीवार खड़ी करके लहरोंको रोका गया है। अिससे वहां लहरोंका अखंड सत्याग्रह देखनेको मिलता है। यह दृश्य देखनेके लिअे में अेक बार गया था।

हिंदी-साहित्य-संमेलनमें भाग लेनेके लिअे अिस साल कराची गया, तब दुवारा वह दृश्य देख आया। लहरोंका असर अुन पत्थरों पर चाहे न भी हो, परंतु हृदय पर अुनका असर हुअे विना थोड़े ही रहता है! हृदय और समुद्र दोनों स्वभावसे ही अूर्मिल हैं।]

कोअी प्राकृतिक दृश्य पहली वार देखकर हृदय पर जो असर होता है, वह दूसरी बार देखने पर नहीं होता। पहली वार सव नया ही नया होता है। अुस समय अज्ञात वस्तुओंका परिचय करना होता है। कदम कदम पर आश्चर्य और चमत्कृतिका अनुभव होता है। दूसरी बार अुसी जगह जाने पर किन किन बातोंकी आशा करनी चाहिये, अिसका मनुष्यको खयाल होता है। अिसलिअे अुतनी मात्रामें चमत्कृतिके लिअे गुंजाअिश कम रहती है। परिचित वस्तुके प्रति प्रेम हो सकता है; आश्चर्य और चमत्कृति तो अपरिचितके लिअे ही हो सकती है।

अैसी ही प्रेमपूर्ण किन्तु अुत्सुकता-रहित वृत्तिसे मैं कराचीके पासके मनोराकी लहरें देखनेके लिअे अबकी वार गया। यह आशा भी मनमें थी कि पुराने किन्तु नौजवान मित्रोंसे अिस रम्य स्थान पर विस्रब्ध वार्तालाप हो सकेगा। लहरें तो वहां हैं ही; अुनको देखकर आनन्द जरूर होगा। अिससे विशेष कुछ नहीं होगा — अिस प्रकार मनको समझाकर मैं वहां गया।

पिछली वार जव गया था तव मैंने अुछलती लहरोंके धवल हास्यको पकड़नेके लिअे तरह तरहके फोटो खींचे थे। मगर अुनमें से अेक भी अच्छा नहीं आया था। अिस कारण अिन लहरोंके प्रति मनमें थोड़ा गुस्सा होते हुअे भी अितना विश्वास था कि वार्तालापके लिअे वहां अनुकूल वायुमंडल अवश्य मिलेगा।

किन्तु वहां जाकर मैंने क्या देखा? पिछली वार जो दृश्य देखा था और जिसके काव्यमय चित्रोंको मैंने चित्तमें संग्रह करके रखा था, अुन्हें फीके वना कर चित्तमें से धो डालनेवाला लहरोंका अेक अखंड तांडव अेकाअेक दीख पड़ा! अव वातचीत काहेकी और विस्रब्ध कथा काहेकी! मुझे तो वहां मानो अुन्मत्त करनेवाला नशा ही मिल गया। वहां मैं यदि अकेला होता तो अिन लहरोंके तांडवमें कूदकर अुनके साथ अेकरूप होनेके भीतरी खिचावको रोक पाता या नहीं, यह मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता।

अेक आदमी गाने लगे तो दूसरेको गानेकी स्फूर्ति अवश्य होगी। अेक सियार रात्रिकी शांतिके खिलाफ यदि वगावत करे तो दूसरे क्रांतिकारी सियार अपने फेफड़ोंकी कसरत जरूर करेंगे। अजी, तरववाली सितारके मुख्य तारको अपने प्राणोंके साथ छेड़ दीजिये; तुरन्त नीचेके तार अपने-आप अपना आनंद-झंकार शुरू कर देंगे। तो फिर मेरे जैसा प्रकृति-प्रेमी जीव कुदरतकी भव्यताके दर्शन करके अुससे अपना भिन्नत्व यदि भूल जाय तो मानवीय सयानपनकी दृष्टिसे अुसमें आश्चर्य भले हो, किन्तु वह अनहोनी वात नहीं है।

जिस प्रकार हाथीकी सारी शोभा अुसके गंडस्थलमें केंद्रीभूत होती है, किलेकी संपूर्ण शोभा अुसके गजेन्द्र-भव्य वुर्जमें होती है, जहाजकी शोभा अुसके तूतक (अूपरके डेक) में परिपूर्ण होती है, अुसी प्रकार मनोराके अिस छोर पर किलेके समान जो दीवारें खड़ी हैं अुनके कारण, यह टापू यहां विशेष रूपसे शोभा पाता है; और समुद्रकी लहरें भी यहीं वप्रक्रीड़ा करके अपनी खुजली (कंडु) शांत करती हैं। यह कंडु-विनोद सतत चलता रहे तो भी देखनेवाला अूवता नहीं। अिसलिअे यह दृश्य चिरमनोहारी होता ही है। परन्तु यहां पर आदमीने अेक लंवी दीवार वना-

कर समुद्रकी लहरोंको बेहद छेड़ा है, और अब अितने साल हो गये फिर भी लहरें अिस अधिक्षेप (अपमान)को न तो आज तक सह सकी हैं, न आगे सहनेवाली हैं। जितनी बार अुन्हें अिस अपमानका स्मरण होता है, अुतनी ही बार वे बड़ी फौज लेकर अिन दीवारों पर टूट पड़ती हैं और अिन पत्थरोंका प्रतिकार करनेके लिअे अेक-दूसरेको भड़काती जाती हैं। कैसा अुनका यह अुन्माद! कैसी अुनकी दृढ़ प्रतिज्ञा! कैसा अुनका वह प्राणघातक आक्रमण! आज तो अुनका यह अमर्ष चरम सीमाको पहुंच गया था। फिर पूछना ही क्या था! मानो वीरभद्र सारे शिवगणोंको अेकत्र करके लहरोंके रूपमें यहां प्रलय-काल मचाना चाहता हो!

अेक अेक लहर मानो अुछलती पहाड़ी-सी मालूम होती थी। अेककी अुत्तुंग शोभाको देखकर वैसी ही दूसरी लहरोंको अुसकी कदर करना चाहिये। किन्तु अिसके बदले, दोनों अेक होकर अेक नयी ही अूंचाअी पर पहुंचती हैं और आसपासकी लहरोंको भी अुतनी ही अूंचाअी तक चढ़नेके लिअे अुत्तेजित करती जाती हैं। और यह तांडव नृत्य, अेक क्षणके लिअे भी रुके बिना, अखंड रूपसे चलता रहता है। टकटकी लगा-कर अिस तांडवको देखते रहिये तो अुसमें अेक प्रचंड ताल मालूम होता है। मानो शिव-तांडव-स्तोत्रका प्रमाणिका वृत्त अपनी शक्ति आजमाने लगा है, और दिल भर आने पर प्रवाह-वेग बढ़नेसे देखते ही देखते प्रमाणिकाका पंचचामर छन्द हो जाता है। और फिर अपनी सुधबुध भूलकर पुष्पदंत भी अुस तालके साथ तांडव-नृत्य करने लगता है।

जिस तरफ लहरोंका आक्रमण अधिकसे अधिक जोरदार है, और जहां टकरानेवाली लहरें चकनाचूर हो जाती हैं तथा आकाशमें अुनके अिन्द्रधनुषको झेलनेवाला बड़ा पंखा तैयार होता है, वहीं कुछ सीढ़ियां अखंड स्नान करते हुअे ऋषियोंकी तरह ध्यान करती बैठी हैं। लहरोंका पानी अुनके सिर पर गिरकर हंसता हुआ और गोमूत्रिका-बंध करता हुआ सीढ़ियां अुतरता जाता है। दिल्ली-आगरेमें और कश्मीर या मैसूरके वृंदावनमें मनुष्यने विलासके जो साधन निर्माण किये हैं और पानीका प्रवाह श्रावण-भादोंकी बड़ी धाराओंमें बहाया है, अुसका यहां स्मरण हुअे बिना नहीं रहता।

मगर कुछ लहरें तो अुस लंबी दीवारके साथ टकराकर अुसके सिर पर पानीकी लंबी लंबी धारायें फेंकनेमें ही मशगूल रहती हैं। लहर टकराती है, दीवार पर सवार होती है और दीवारकी चौड़ाअीका अनादर करके सामनेकी ओर कूद पड़ती है और होलीकी पिचकारियां दूरसे हमारी ओर दौड़ती आती हैं — यह दृश्य हर तरहसे अुन्मादक होता है। और यह महोत्सव मनाने आये हुअे हम लोगोंका स्वागत करनेका कर्तव्य मानो अपने सिर आ पड़ा हो, अैसा समझकर अिन धाराओं तथा अुस पंखेमें से फैलनेवाले पानीके कण सारी हवाको शीतल बना देते हैं। जब यह खारी ओस आंखकी पलकों पर, नाककी नोक पर और आश्चर्यसे खुले हुअे ओठों पर जमती हैं, तब लगता है कि हम भी नागरिक या ग्रामवासी नहीं हैं, बल्कि वरुणके सामुद्रिक राज्यकी प्रजा हैं।

और महासागरके अूपरसे दौड़कर आनेवाला शुद्ध पवन कहता है: "अिस दृश्यका आतिथ्य स्वीकारनेकी पूरी शक्ति तुम्हारे पामर हृदयमें कहांसे होगी! चलो, मैं तुम्हें दूर दूरसे लाये हुअे ओझोन (प्राणवायु) की दीक्षा देता हूं, पाथेय देता हूं। ओझोन जब तुम्हारे दिलमें भर जायगा, तब तुम्हारे फेफड़े प्राणपूर्ण होंगे, पवित्र होंगे। अुसके बाद ही तुम यहांका वातावरण तथा अुदावरण सहन कर सकोगे।" और सचमुच, प्राणवायुके श्वासोच्छ्वाससे हरेकके मुंह पर अुषाकी लालिमा छा गअी थी। हम आठों जन आठ दिशाओंमें देख देखकर भी तृप्त नहीं होते थे।

अिसी स्थान पर हमारे पहले अेक सिंधी सज्जन अेक बड़ी शिला पर बैठकर चुपचाप अिस काव्यमें ओतप्रोत होकर भावनामें नहा रहे थे। वे न बोलते थे, न चालते थे, न हंसते थे, न गाते थे। तल्लीन होकर जरा डोल रहे थे। हम बातें कर रहे थे, हृदयके अुद्गार प्रकट कर रहे थे। मगर अुन सज्जनको अिसकी क्या परवा? अुन्हें मनुष्यकी मौज नहीं मनाना था, बल्कि लहरोंकी मस्तीको अपनाना था, अुसे पी जाना था। अेक पैर पर दूसरे पैरकी पलथी लगाकर, अुस पर कुहनी रख-कर और सिरको अेक ओर झुकाकर वे समुद्रका ध्यान कर रहे थे।

अुनकी वालोंकी मांगमें सीकर-विन्दुओंकी मुक्तामाला चमक रही थी। मानो वरुणदेवने अपना वरद् हस्त अुनके सिर पर रख दिया हो!

हमने स्थान वदल वदल कर अनेक दृष्टिकोणोंसे यह दृश्य देखा। अिससे लहरोंके मनमें हमारे प्रति सद्भावकी जागृति हुअी। वे कहने लगीं, "आओ आओ, अितनी दूरसे क्या देख रहे हो? तुम पराये नहीं हो। पास आओ, मौज मनाओ, लहरोंका आनन्द लूटो, हंसो और कूदो। यह क्षण और अनंत काल — अिनके वीच कोअी फर्क नहीं है। चलो, आ जाओ।" लहरोंकी शिष्टता भिन्न प्रकारकी होती है। न्योता देते समय वे हाथ नहीं पकड़तीं, वल्कि पांव पखारती हैं। हमने सभ्यतासे अिस स्वागतको स्वीकार करके कहा, "सचमुच आनेका जी होता है। मगर अभी नहीं। अभी हमारा काम पूरा नहीं हुआ है। काफी वाकी रहा है। हमारे मनके कअी संकल्प अभी अधूरे हैं। जिस भारतमाताके चरणोंका तुम अखंड रूपसे प्रक्षालन कर रही हो, वह अभी तक आजाद नहीं हुअी है। मनुष्य-मनुष्यके वीचका विग्रह शांत नहीं हुआ है। गरीव तथा दवी हुअी जनताके साथ जव तक पूरी अेकताका हम अनुभव नहीं करते, तव तक तुम्हारे साथ अेकता अनुभव करनेका अधिकार हमें कैसे प्राप्त होगा? तुम मुक्त हो, अखंड कर्मयोगी हो, सतत कार्य करते हुअे भी तुम्हारे लिअे कर्तव्य जैसा कुछ नहीं रहा है। हम तो कर्तव्योंका पहाड़ सामने देखते हुअे भी आलस्यमें पड़े हैं। तुम्हारी पंक्तिमें खड़े रहकर नाचनेका अधिकार हमें नहीं है। तुम हमें प्रेरणा दो। हमारे दिलमें तुम्हारी मस्ती भर दो। तुम्हारा वेदान्त हमारे चित्तमें वो दो। फिर हमें अपना कार्य पूरा करनेमें, भारतको आजाद करनेमें देर नहीं लगेगी। और यह अेक संकल्प यदि पूरा हुआ, तो विना किसी विषादके हम तुम्हारे पास दौड़ आयेंगे। तुम्हारे साथ अद्वैत सिद्ध करेंगे। और अिसमें यदि हड्डियां, चमड़ी या मांस शिकायत करने लगें, तो जिस प्रकार कष्ट देनेवाले कपड़े फाड़ दिये जाते हैं, अुसी प्रकार अिस शरीरको हम चकनाचूर कर डालेंगे और फिर अुसके पिंडोंके नये नये आकारोंको देखकर हंसने लगेंगे।"

"ठीक है। जब अनुकूल हो तब आना। तुम आओ या न आओ; हमारा यह तांडव-नृत्य तो चलता ही रहेगा। जीवनका रास पूरा करके गोपियां अिसमें मिल गअी हैं। संसारके चक्रव्यूहसे मुक्त हुअे तमाम साधु-संत, फकीर और औलिये अिसमें आ मिले हैं। विज्ञानवीर तथा सत्यके अुपासक अिसमें मिलकर शांत हो गये हैं। अिसीलिअे हमारा यह संघ अखंड अशांति मचाते हुअे भी शांतिका सागर-संगीत सुना सकता है।

"क्या तुम्हें सुनाअी देता है यह संगीत?"

जून, १९३७

३४

सिन्धुके बाद गंगा

फरवरीकी १५ या १६ तारीखको ठेठ पश्चिमकी ओर रोहरी-सक्करके बीच सिंधुके विशाल पट पर जल-विहार करनेके बाद और २८ फरवरीको कोटरीके समीप अुसी सिन्धुके अंतिम दर्शन करनेके बाद, बारह-पंद्रह दिनके भीतर ही पूर्वकी ओर पाटलिपुत्रके निकट गंगाका पावन प्रवाह देखनेको मिला। यह कितने सौभाग्यकी बात है! आर्योंकी वैदिक माता सिन्धु और अुन्हीं भारतीयोंकी सनातन माता गंगाके दर्शन अिस प्रकार अेकके बाद अेक होते रहें तो अुस सौभाग्यका स्वागत कौनसा नदी-पुत्र नहीं करेगा? गंगाको जिस प्रकार अुसके पानीका अुपयोग करनेवाला भगीरथ मिला अुसी प्रकार यदि सिन्धुको भी मिल जाता, तो राजस्थान और सिन्धका अितिहास दूसरे ही ढंगसे लिखा जाता। सिन्धु बिना किसीके कहे, अनेक दिशाओंमें बहती है और अपना पात्र बदलनेमें संकोच नहीं करती। तब यदि भगीरथ और जह्नु जैसे अुपासक अिंजीनियर अुसे मिल जाते, तो वह सिंध तथा सौवीर देशोंके लिअे क्या क्या न करती? क्या आज भी रोहरी और सक्करके बीच अपना पानी अेकत्र करके नहरोंके सात प्रवाहों द्वारा

यह स्वच्छंद-विहारिणी सिन्धु अपना स्तन्य सिंधु देशको पिलाने नहीं लगी है?

सिन्धु नदी पंजावके सात प्रवाहोंका पानी अेकत्र करके मिट्ठन-कोट और कश्मीर तक युक्तवेणी रहती है; वही सिन्धु सक्कर-रोहरीके बाद पहले-पहल मुक्तवेणी हो जाती है और कोटरीके बाद केटी बंदर तक तो न मालूम कितने मुखोंसे समुद्रमें जा मिलती है।*

गंगा नदी गोआलंदो तक युक्तवेणी रहती है। गोआलंदोमें गंगा और ब्रह्मपुत्राके मिलनसे अुनके अमर्याद प्रवाहोंकी अैसी अराजकता मच जाती है कि मुक्तवेणी और युक्तवेणीका भेद ही नहीं किया जा सकता। कलकत्ताके बाद सुन्दरवनका पंखा देखनेको जरूर मिलता है। किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि गंगाका विस्तार अितना ही है।

गांधी-सेवा-संघकी अंतिम बैठकके लिअे हम मालीकांदा गये थे। तब असम प्रांतसे शिलोंगके रास्ते सुरमा घाटी होकर वापस लौटे थे। जाते और आते समय भगवती गंगाके विविध दर्शन किये थे। किन्तु सम्राट् अशोकके पाटलिपुत्र (आजकलके पटना) के समीप गंगाकी शोभा अनोखी है। पटनाके पास मैंने भिन्न भिन्न समय पर कमसे कम तीन-चार बार गंगा पार की होगी। फिर भी वहां गंगाके दर्शनकी नवीनता कम होती ही नहीं। मेरा खयाल है कि नेपालकी यात्रा

---

* जिस प्रदेशमें अनेक प्रवाह आकर अेक नदीमें मिल जाते हैं, अुस सारे प्रदेशको अंग्रेजीमें 'region of tributaries' कहते हैं। और जहां अेक नदीमें से अनेक प्रवाह निकल कर चारों ओर फैल जाते हैं अुस प्रदेशको 'region of distributaries' कहते हैं। हमारे यहां यही भाव व्यक्त करनेके लिअे 'युक्तवेणी' और 'मुक्तवेणी' शब्द काममें लाये गये हैं।

जब नदी समुद्रको मिलनेके लिअे दो या अधिक मुखोंमें विभक्त होती है, तब बीचके अुस तिकोने प्रदेशको अुसी आकारके ग्रीक अक्षर परसे 'delta' कहते हैं। हमें अैसे प्रदेशको 'नदीका पंखा' कहना चाहिये।

समाप्त करके में मुजफ्फरपुरसे कलकत्ता गया तब पहले पहल पटना गया था। फाल्गुन मासके दिन थे। जहां जायें वहां आमके मौरसे हवा महक रही थी। और अजनबी में पटनाके छोटे बड़े रास्तों पर मतवालेकी तरह अपने अंतःकरणमें वसंतोत्सव मना रहा था। वहां जो पहली छाप मन पर पड़ी, वह आज भी मौजूद है। फिर भी अुसके बाद जब जब में पटना गया हूं, तब तब कुछ न कुछ नवीनता मैंने वहां अवश्य पायी है।

श्री राजेन्द्रबाबू जहां रहते हैं और जहां बिहार विद्यापीठ चल रहा है, वह सदाकत आश्रम गंगाके ठीक किनारे पर ही है। आश्रमके सामनेका रास्ता लांघकर तीन फुटके बांध पर चढ़ते ही गंगाकी विस्तीर्ण जलराशि पश्चिमसे आकर पूर्वकी ओर बहती हुअी नजर आती है। अुस पारका किनारा देखनेकी यदि कोशिश करें, तो जमीनकी अेक पतली-सी रेखाके सिवा कुछ दिखाअी ही नहीं देता। चकित होकर आप साथमें आये हुअे किसी आदमीसे कहें कि 'गंगाका पाट कितना चौड़ा है!' तो वह तुरंत हंसकर कहेगा, 'वह जो सामने दीख पड़ता है वह केवल अेक टापू है। अुसके आगे भी गंगाका प्रवाह है। अुस पारका किनारा यहांसे दिखाअी नहीं पड़ता।'

सामने जो पतली-सी लकीर दिखाअी देती है वह अेक चौड़ा टापू है, यह सुनने पर भी यकीन नहीं होता कि पानीके अितने बड़े विस्तारके बाद, लकीरके अुस पार और भी विस्तार हो सकता है। अेक बार संदेह मनमें पैदा हुआ कि वह कुतूहलका रूप अवश्य धारण कर लेता है। कुतूहल परिपक्व होने पर अुसमें से संकल्प अुठता है। और संकल्पके जैसी बेचैन बनानेवाली दूसरी कोअी वस्तु भला हो सकती है?

सदाकत आश्रममें रहे तब तक रोज गंगाके किनारे टहलना हमारा काम था। क्योंकि गंगाकी संस्कृति-पुनीत मोहिनी न होती, तो भी किनारे पर खड़े पुराण-पुरुष जैसे वृक्षोंकी पंक्ति हमें खींचे बिना न रहती। सह्याद्रि या हिमालयके अुत्तुंग वृक्ष जिसने देखे हैं, अुसका जी ललचानेकी शक्ति मामूली वृक्षोंमें कहांसे आवे? किन्तु गंगाके

तट पर, पटनाके आसपास, योजनों तक चलते रहिये — चारों ओर अूंचे-अूंचे वृक्ष अपनी पुष्ट शाखायें चारों दिशाओंमें अूपर और नीचे दूर दूर तक फैलाये हुअे नजर आते हैं। किसी समय, पटना सम्राट् अशोकके साम्राज्यकी राजधानी था। आज वही पटना वृक्षोंके अेक विशाल साम्राज्यका पोषण करता है।

अैसे स्थान पर खड़े रहकर, जो न तो बहुत दूर हो और न बहुत पास, अिन बड़े वृक्षोंके अंग-प्रत्यंगोंकी शोभाको यदि ध्यानसे निहारें, तो अुनका स्वभाव, अुनकी चित्तवृत्ति और अुनकी कुलीनताका खयाल आये बिना नहीं रहता। सभी वृक्ष तपस्वी नहीं होते। कुछ मौनी ध्यानी जैसे दिखाअी देते हैं, कुछ क्रीड़ाप्रिय होते हैं; कुछ वियोगी विरही जैसे, तो कुछ अत्युत्कट प्रेमी जैसे। परन्तु किसी भी स्थितिमें वे अपना आर्यत्व नहीं छोड़ते। कुछ वृक्षोंकी शाखायें अूपर अितनी फैली हुअी होती हैं, मानो टूटते हुअे आसमानको बचानेका काम अुन्हींके जिम्मे आया हो।

चार बूढ़े सज्जन शांतिसे गंभीर बातें कर रहे हैं और तुतलाते हुअे बच्चे अुनकी गोदमें अुछल-कूद मचा रहे हैं — क्या अैसा दृश्य आपने कभी देखा है? बूढ़े बच्चोंको डांटते नहीं; कोमलताके साथ अुन्हें पुचकारते हैं। फिर भी अुनकी गंभीर बातचीतमें खलल नहीं पड़ती। गंगाके किनारे सनातन मंत्रणा चलानेवाले अिन पेड़ोंके बीच जब छोटे-बड़े पक्षी मीठा कलरव करते हैं, तब ठीक वही वृद्ध-अर्भक-दृश्य नये ढंगसे आंखोंके सामने आता है।

फाल्गुन पूर्णिमाके आसपासके दिन थे। शामको अगर घूमने निकलते तो 'चंदामामा' पेड़ोंकी ओटमें से दर्शन देते ही थे। हमने यहां अेक नये आनंदकी खोज की। जिस प्रकार अलग अलग प्रकारकी अंगूठियोंमें जड़ने पर हीरा नयी नयी शोभा दिखाता है, अुसी प्रकार अलग अलग पेड़ोंकी ओटमें चांद नयी नयी छवि धारण करता था। अेक बार सींग जैसी दो शाखाओंके बीचमें अुसे खड़ा करके हमने देखा। दूसरी बार गोल-कीपर (goal-keeper) या लक्ष्यपाल जैसे अेक बड़े पेड़को अुसी चंद्रको हवा-गेंद (फूटबॉल) की तरह अुछालते हुअे

देखा। दीघाघाटके बंदरगाहके पास अेक जगह तो दो पेड़ोंके बीच चन्द्रमा अिस तरह जमकर बैठा था कि मालूम होता था मानो "यह चांद तेरा नहीं है, मेरा है" कहकर पेड़ आपसमें लड़ रहे हों। और अंतमें अिन दोनोंका झगड़ा निपटानेके लिअे चांदने मुंह बनाकर कहा, "तुम दोनोंमें से मैं किसीका भी नहीं हूं, जाओ।" अितना कहकर वह रुका नहीं। वह तो सीधा अूंचा ही चढ़ता गया। चंद्रकी अिस तटस्थताकी कद्र करके हम थोड़े आगे बढ़े ही थे, अितनेमें वह अपना न्यायाधीशपन भूलकर अेक पेड़से जाकर चिपक गया! और अंतमें भुजाओंमें जकड़े जानेके कारण हंसने लगा।

मनमें संकल्प अुठा : अैसे चांदनीके दिनोंमें कुछ समय सामनेके अुस निर्जन टापूमें बिता सकें तो कितना अच्छा हो! होली और धुलेड़ीके दिन तो छोड़ ही देने पड़े, क्योंकि लोग होली पीकर अुन्मत्त हो गये थे, और अुन्होंने दो दिन तक गंगा-किनारेके कीचड़ और पेड़ोंके रंगोंका अनुकरण करनेका निश्चय किया था। जब वे अिससे निवृत्त हुअे, तब हम अेक नावकी व्यवस्था करके चल पड़े।

चंद्र निकले अुसके पहले रवाना होनेमें भला मजा कैसे आवे? किन्तु चंद्रको जल्दी थी ही नहीं। निकला भी तो प्रकाश नहीं देता था। किसीको पता चले बिना जिस प्रकार कोअी नया धर्म स्थापित होता है, अुसी प्रकार चंद्रमा निकला। अुसका प्रकाश अितना मंद था कि स्वातिको भी अुस पर तरस आ रहा था। जब चंद्र ही अितना मंद था, तब वफादार चित्रा अदृश्य रहे, अिसमें आश्चर्य क्या? शनि और गुरु मंत्र पढ़ते हुअे पश्चिमकी ओर अस्त हो रहे थे। तारकांकित झोंपड़ीके स्वामी अगस्ति दक्षिण पर आरोहण कर रहे थे। हमारी नाव चलने लगी। पानीमें चन्द्रका अेक लम्बा स्तंभ दिखाओी देने लगा। प्रथम स्थिर, बादमें तरल। हम ज्यों ज्यों आगे बढ़ते गये त्यों त्यों पानीका पृष्ठभाग अधिकाधिक चंचल होता गया, और भांति भांतिकी आकृतियोंका प्रदर्शन करने लगा।

मेरे मनमें विचार आया कि पानीके जत्थे और रफ्तारके साथ ये आकृतियां भी बदलती हैं। तो अिनका अध्ययन करके हरेकको अलग

अलग नाम देकर अैसी योजना क्यों न बनायी जाय कि नदीकी रफ्तार दिखानेके लिअे अुन आकृतियोंका नाम ही बता दिया जाय? अुच्च और नीच ध्वनिको हम यदि 'सा, रे, ग, म, प, ध, नी' जैसे नाम दे सकते हैं, अत्यंत अुग्र तापको (white heat) नूरंकांति अुष्णता कह सकते हैं, तो नदीकी रफ्तारको गोमूत्रिका-वेग, वलय-वेग, आवर्त-वेग, विवर्त-वेग आदि नाम क्यों नहीं दे सकते?

अिस कल्पनाके साथ ही मैं विचारोंके आवर्तमें अुतर गया और चित्रा कब प्रकट हुअी, अिसका पता ही न चला। हम मंझधारमें पहुंचे और मुझे प्रार्थना सूझी। अैसे स्थान पर आंखें मूंदकर कहीं अंधेरी प्रार्थना की जा सकती है? हमारा प्रार्थना-स्वामी जब हमारे सामने विविध रूपसे प्रत्यक्ष विराजमान हो, तब आंखें मूंदकर हम गुहा-प्रवेश किसलिअे करें? 'रसो वै सः' कहकर जिसे हम पहचानते हैं, वह जब रसपूर्ण भूमि, पवित्र जल, सौम्य तेज, आह्लादकारी पवन और पितृ-वात्सल्यसे हमारी ओर देखनेवाले आकाशके विस्तार आदिके विविध रूपोंमें प्रकट हो और 'विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः, रसवर्जं रसोप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।' श्लोक हम गाते हों, तब सारा जीवन-दर्शन नये सिरेसे सोचा जाता है। गहरा विचार लम्बा होता ही है, अैसी कोअी बात नहीं है। **रसका निवर्तन कब होता है और परिवर्तन किस तरह होता है,** अिसकी सारी मीमांसा मैंने तीन-चार क्षणोंमें ही मनमें कर ली और देखते ही देखते प्रार्थनामें ताजगी आ गअी। 'रघुपति राघव राजाराम' की धुन शुरू हुअी, और चंचल मन जीवन-रसकी गंभीर मीमांसा छोड़कर तुरन्त पूछने लगा, 'श्री रामचंद्रजीने गुहककी सहायतासे गंगा किस स्थान पर पार की होगी? गुहककी नाव हमारी नावके अितनी चौड़ी होगी या किसी पेड़के तनेसे बनाअी हुअी नन्हींसी डोंगी जैसी होगी?'

बातकी बातमें हम अुस टापू पर पहुंच गये। और सलिल-विहार छोड़कर हमने सिकता-विहार शुरू किया। चमकीली बालू चमकीले पानीसे कम आनंददायक नहीं थी। टापूके किनारे थोड़ी दूब अुगी हुअी थी। अेक क्षणका विचार करके हमने निश्चय कर लिया कि यहां

सांप, विच्छू, कांटा कुछ भी नहीं हो सकता। यहां तो अक्षुण्ण वालू ही विछी हुआी है। यदि कोआी निशानी है तो वह अस्थिर-मति पवनकी लहरोंकी ही। गंगाकी लहरोंके कारण रेतमें वनी हुआी आकृतियोंको मिटानेकी क्रीड़ा मनमौजी पवन किस प्रकार करता है, अिसका आलेख यहां देखनेको मिलता था। रेत पर वनी हुआी आकृतियां अैसी दिखाअी देती थीं, मानो पाठशालाके वच्चे थककर सो गये हों और अुनकी कापियां तथा स्लेटें कितावोंके साथ अिधर-अुधर विखर पड़ीं हों। कहीं मनचले, लहरी पवनकी लिखावट दिखाअी देती, तो कहीं लहरोंकी स्वर-लिपि रेतमें अंकित दिखाअी देती थी। अिनमें अपने पदचिह्न अंकित करनेका मेरा जी नहीं होता था। किन्तु वालूके झट टूट जानेवाले पपड़े जव पैरों तले टूट जाते, तव पापड़ खाने जैसा मजा आता था। पैरोंके आनंदको सारे शरीरने अनुभव किया और अुसे लगा कि दरअसल मूसलकी तरह खड़े खड़े चलनेमें पूरा मजा नहीं है। All rights reserved का दावा करनेवाला कोआी गधा वहां नहीं था। अिसलिअे हमने निःशंक होकर रेतमें लोटनेकी सोची। किन्तु दुर्भाग्यवश अिस वातमें हमारे साथियोंका अेकमत नहीं हो सका। किसीकी प्रतिष्ठा अिसमें वाधक हुअी, तो किसीका कैंकर्य आड़े आया। हमारे खलासी तो हमें वहीं छोड़कर किसीसे मिलने टापूके दूसरे छोर पर चले गये। शरावखानेके नौकर पियक्कड़ोंकी ओर जिस दृष्टिसे देखते हैं, अुसी दृष्टिसे अुन्होंने हम सौंदर्य-पिपासु लोगोंकी ओर देखा होगा।

गया कांग्रेसके बाद हम चंपारणकी ओर गये थे, तव अिसी स्थानसे हमने गंगा पार की थी। अुस समय आश्रमके दो विद्यार्थियोंने अेक मीठा भजन गाया था: 'मंगल करहु दयाSSS करी देवी'। अिस स्थान पर आते ही वह सव याद आया और मैं भीमसेनका अनुकरण करके मुक्तकंठसे गाने लगा। साथियोंने अुदारताके साथ अुसे सह लिया। अिससे मैं और भी चढ़ गया और मथुरावावूसे कहने लगा, "मुझे छपरासे मुंगेर तक नावमें जाना है। कितना समय लगेगा?" अैसी यात्रा मेरे नसीवमें है या नहीं, अीश्वर जाने! किन्तु कल्पनामें तो मैंने वह पूरी भी कर ली।

आकाशमें ब्रह्महृदय अस्त होनेकी तैयारी कर रहा था। महा-श्वान अपनी मृगयामें मशगूल था। अगस्तिकी झोंपड़ी अब अपनी जगह पर आ गयी थी। और कृत्तिका तटस्थतासे स्मित कर रही थी। पुनर्वसुकी नावने अपना अग्रभाग जरा अूंचा करके दक्षिणकी यात्रा शुरू की और हमें अिस बातकी याद दिलाअी कि हम अिस टापूके निवासी नहीं हैं; यहांसे हमें वापस लौटना है और परियोंकी सृष्टिको छोड़कर मानवी सृष्टिमें अुतरना है। हम तुरंत टापूके किनारे पर आ गये और पुनर्वसुकी तरह अपनी नाव हमने दक्षिणकी ओर बढ़ाअी।

'फिर यहां कब आयेंगे?' अैसा विषाद मनमें नहीं अुठा। गंगोत्रीसे लेकर हीरा बंदर तक गंगाके अनेक बार दर्शन करके मैं पावन हुआ हूं और मैयाकी कृपासे आगे भी अनेक बार दर्शन होंगे। अब अिस पूर्णानंदमें घट-बढ़ होनेकी संभावना नहीं है। अिसीलिअे वापस लौटते समय मुंहसे शांतिपाठ निकल पड़ा:

ॐ पूर्णम् अदः, पूर्णम् अिदं; पूर्णात् पूर्णम् अुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णम् आदाय पूर्णम् अेवावशिष्यते॥

अप्रैल, १९४१

३५

नदी पर नहर

श्रावण पूर्णिमाके मानी हैं जनेअूका दिन; और यदि ब्राह्मण्यको भूल जायं तो राखीका दिन। अुस दिन हम रुड़की पहुंचे। मजाकिये वेणीप्रसादने देखते ही देखते मुझसे दोस्ती कर ली और कहा, 'अजी काकाजी, आज तो आपके हाथसे ही जनेअू लेंगे। यहांके ब्राह्मण वेदमंत्र बराबर बोलते ही नहीं। आप महाराष्ट्री हैं। आप ही हमें जनेअू दीजियेगा।' वेणीप्रसादके मामा परम भक्त थे। अुनसे जनेअूके बारेमें चर्चा चली। अुत्तर भारतके ब्राह्मण चाहते हैं कि वे ही नहीं बल्कि तीनों द्विज वर्ण नियमित रूपसे जनेअू पहनें और संध्यादि नित्यकर्म करें। मगर यहांके लोगोंकी बड़ी अनास्था है।

अिससे ठीक विपरीत, दक्षिणमें जब ब्राह्मणेतर जनेअू मांगते हैं, तब महाराष्ट्रके ब्राह्मण 'कलौ आद्यन्तयोः स्थितिः' के वचनके अनुसार अैसी वेहूदी जिद लेकर बैठते हैं, मानो वीचके दो वर्ण हैं ही नहीं। (सौभाग्यसे आज वह स्थिति नहीं रही।) जिन्हें जनेअू पहननेका अधिकार है, वे अुसे पहननेके वारेमें अुदासीन रहते हैं, और जो हाथापाअी करके भी जनेअू पहननेका अधिकार प्राप्त करना चाहते हैं, अुनके लिअे अपना द्विजत्व सिद्ध करनेमें कठिनाअी पैदा की जाती है! यह चर्चा सुनकर वेणीप्रसादको लगा कि 'आज हमें जनेअू मिलनेवाली नहीं है।' अुसने दलील पेश की : 'कलियुगमें क्या नहीं हो सकता? नदी पर यदि नदी सवार हो सकती है, तो महाराष्ट्रके ब्राह्मण भी हमें जनेअू दे सकते हैं।' दलील मंजूर हुअी। किन्तु विषय बदला और कलियुगके भगीरथोंकी, वहादुरीके अुदाहरण-स्वरूप गंगाकी नहरके वारेमें वातें चलीं।

दोपहरके समय हम लोग मानवका यह प्रताप देखने निकले। गंगाकी नहर शहरके समीपसे जाती है। लड़के अुसमें मछलियोंकी तरह अेक खेल खेल रहे थे। नहरके किनारे किनारे हम अुस प्रख्यात पुल तक गये। वह दृश्य सचमुच भव्य था। पुलके नीचेसे गरीव ब्राह्मणीके समान सोलाना नदी वह रही थी और अूपरसे गंगाकी नहर अपना चौड़ा पाट जरा भी संकुचित किये विना पुल परसे दौड़ती जा रही थी। पुलके अूपर पानीका वोझ अितना ज्यादा था कि मालूम होता था, अभी दोनों ओरकी दीवारें टूट जायेंगी और दोनों ओरसे हाथीकी झूलके समान वड़े प्रपात गिरना शुरू होंगे। पुलकी दीवार पर खड़े रहकर नहरके वहावकी ओर देखते रहनेसे दिमाग पर अुसका असर होता था। दुःखी मनुष्यको जिस प्रकार अुद्वेगके नये नये अुभार आते हैं, अुसी प्रकार नहरके जलमें भी अुभार आते थे। किन्तु ससुराल आयी हुअी वहू जिस प्रकार अपनी सव भावनायें नये घरमें दवा देती है, अुसी प्रकार गंगा नदीकी यह परतंत्र पुत्री अपने सव अुभारोंको दवा देती थी। अुसका विस्तार देखकर प्रथम दर्शनमें तो मालूम होता था मानो यह कोअी धनमत्त सेठानी है। किन्तु नजदीक जाकर देखने पर श्रीमंतीके नीचे परतंत्रताका दुःख ही अुसके वदन पर दीख पड़ता था।

अूपरसे नीचे देखने पर निम्नगा सोलानाका क्षीण किन्तु स्वतंत्र बहाव दोनों ओरसे आकर्षक मालूम होता था। चुभता केवल अितना ही था कि नहरकी दोनों ओरकी दीवारोंमें परिवाहके तौर पर कअी सूराख़ रखे गये थे, जिनमें से नहरका थोड़ा पानी अिस तरह सोलानामें गिर रहा था मानो अुस पर अहसान कर रहा हो।

हम पुलसे नीचे अुतरे और सोलानाके किनारे जा बैठे। अूंचेसे दिये जानेवाले अुपकारको अस्वीकार करने जितनी मानिनीं सोलाना नहीं थी। मगर कोअी कृपा अवतरित होगी, अैसी लोभी दृष्टि रखने जितनी हीन भी वह न थी। हीनता अुसमें जरा भी नहीं थी। और मानिनीकी वृत्ति अुसको शोभती भी नहीं। अुसकी निर्व्याज स्वाभाविकता प्रयत्नसे विकसित अुदात्त चारित्र्यसे भी अधिक शोभा देती थी।

भगीरथ-विद्यामें (अिरिगेशन अिजीनियरिंगमें) पानीके प्रवाहको ले जानेवाले छः प्रकार बताये गये हैं। अुनमें अेक प्रवाहके अूपरसे दूसरे प्रवाहको ले जानेकी योजनाको अद्‌भुत और अत्यन्त कठिन प्रकार माना गया है। अिस प्रकारके रेलके या मोटरके मार्ग हमने कअी देखे हैं। मगर, जहां तक मैं जानता हूं, हिन्दुस्तानमें अिस प्रकारके जल-प्रवाहका यह अेक ही नमूना है। संस्कृतिके प्रवाहकी दृष्टिसे यदि सोचें, तो सारा भारतवर्ष अैसे ही प्रकारसे भरा हुआ है। यहां हरअेक जातिकी अपनी अलग संस्कृति है, और कअी बार आमने सामने मिलने पर भी वे अेक-दूसरीसे काफी हद तक अस्पृष्ट रह सकी हैं!

१९२६–’२७

३६

नेपालकी बाघमती

कश्मीरकी जैसे दूधगंगा है, वैसे नेपालकी बाघमती या वाघमती है। अितनी छोटी नदीकी ओर किसीका ध्यान भी नहीं जायेगा। किन्तु वाघमतीने अेक अैसा अितिहास-प्रसिद्ध स्थान अपनाया है कि अुसका नाम लाखोंकी जबान पर चढ़ गया है। नेपालकी अुपत्यका अर्थात् अठारह कोसके घेरेवाला और चारों ओर पहाड़ोंसे सुरक्षित रमणीय अण्डाकार मैदान। दक्षिणकी ओर फर्पिग-नारायण अुसका रक्षण करता है। अुत्तरकी ओर गौरीशंकरकी छायाके नीचे आया हुआ चंगु-नारायण अुसको संभालता है। पूर्वकी ओर विशंगु-नारायण है और पश्चिमकी ओर है अिचंगु-नारायण।

हिमालयकी गोदमें बसे हुये स्वतंत्र हिन्दू राज्यके अिस घोंसलेमें तीन राजधानियां अैसी हैं, मानो तीन अंडे रखे गये हों। अत्यन्त प्राचीन राजधानी है ललितपट्टन; अुसके बादकी है भादगांव, और आजकलकी है काठमांडू या काष्टमंडप। नेपालके मंदिरोंकी बनावट हिन्दुस्तानके अन्य स्थलोंकी बनावटके समान नहीं है। मंदिरकी छतसे जहां बरसातके पानीकी धारायें गिरती हैं वहां नेपाली लोग छोटी-छोटी घंटियां लटका रखते हैं। और बीचमें लटकनेवाले लोलकको पीतलके पतले पीपल-पान लगा दिये जाते हैं। जरा-सी हवा लगते ही वे नाचने लगते हैं। यह कला अुन्हें सिखानी नहीं पड़ती। अेकसाथ अनेक घंटियां किणकिण किणकिण आवाज करने लगती हैं। यह मंजुल ध्वनि मंदिरकी शांतिमें खलल नहीं डालती, बल्कि शांतिको अधिक गहरी और मुखरित करती है। भादगांवकी कअी मूर्तियां तो शिल्पकलाके अद्भुत नमूने हैं। शिल्पशास्त्रके सब नियमोंकी रक्षा करके भी कलाकार अपनी प्रतिभाको कितनी आजादी दे सकता है, अिसके नमूने यदि देखने हों तो अिन मूर्तियोंको देख लीजिये। मालूम होता है यहांके मूर्तिकार कलाको अतिमानुषी ही मानते हैं।

खेतोंमें दूर दूर भव्याकृति स्तूप अैसे स्वस्थ मालूम होते हैं, मानो समाधिका अनुभव ले रहे हों।

और काठमांडू तो आजके/नेपाल राज्यका वैभव है। नेपालमें जानेकी अिजाजत आसानीसे नहीं मिलती। अिसीलिअे परदेके पीछे क्या है, अवगुंठनके अंदर किस प्रकारका सौंदर्य है, यह जाननेका कुतूहल जैसे अपने-आप अुत्पन्न होता है, वैसे नेपालके बारेमें भी होता है। आठ दिन रहनेकी अिजाजत मिली है। जो कुछ देखना है, देख लो। वापस जाने पर फिर लौटना नहीं होगा। अैसी मनःस्थितिमें जहां देखो वहां काव्य ही काव्य नजर आता है।

पशुपतिनाथका मंदिर काठमांडूसे दूर नहीं है। वह अैसा दिखता है मानो मंदिरोंके झुंडमें बड़ा नंदी बैठा हो। निकटमें ही बाघमती बहती है। रेतीली मिट्टी परसे अुसका पानी बहता है, अिसलिअे वह हमेशा मटमैला मालूम होता है। अुसमें तैरनेकी अिच्छा जरूर होती है, मगर पानी अुतना गहरा हो तभी न? गुह्येश्वरी और पशुपतिनाथके बीचसे यह प्रवाह बहता है, अिसी कारण अुसकी महिमा है।

पशुपतिनाथसे हम सीधे पश्चिमकी ओर शिंगु-भगवानके दर्शन करने गये। रास्तेमें मिली बाघमतीकी बहन विष्णुमती। अिस नदी पर जहां तहां पुल छाये हुअे थे। पुल काहेके? नदीके पट पर पानीसे अेक हाथकी अूंचाअी पर लकड़ीकी अेक अेक बित्ता चौड़ी तख्तियां। सामनेसे यदि कोअी आ जाय तो दोनों अेकसाथ अुस पुल परसे पार नहीं हो सकते। दोनोंमें से किसी अेकको पानीमें अुतरना पड़ता है। कहीं कहीं पानी अधिक गहरा होता है; वहां तो आदमी घुटनों तक भीग जाता है।

शिंगु-भगवानकी तलहटीमें ध्यानी बुद्धकी अेक बड़ी मूर्ति सूर्यके तापमें तपस्या करती है। टेकरी पर अेक मंदिर है। अुसमें तीन मूर्तियां हैं। अेक बुद्ध भगवानकी; दूसरी धर्म भगवानकी; तीसरी संघ भगवानकी! हरेकके सामने घीका दीया जलता है। और अेक कोनेमें लकड़ीकी बनायी हुअी अेक चौखटमें पीतलकी अेक पोली लाट खड़ी कर रखी है, जिस पर 'ॐ मामे पामे हुम्' (ॐ मणिपद्मेऽहम्)का पवित्र मंत्र कअी बार खुदा

हुआ है। दस्ता घुमाने पर लाट गोल गोल घूमती है। रुद्राक्ष या तुलसीकी माला फेरनेकी अपेक्षा यह सुविधा अधिक अच्छी है! हर चक्करके साथ अुस पर जितनी बार मंत्र लिखा हुआ है अुतनी बार आपने मंत्रका जाप किया, और अुतना पुण्य आपको अपने-आप मिला गया, अिसमें संदेह रखनेका कोअी कारण नहीं है! 'नात्र कार्या विचारणा'। तथागतको अपने संदेशका यह स्वरूप देखनेको नहीं मिला, यह अुनका दुर्भाग्य है, और क्या? अिसी मंदिरके पास पीतलका बनाया हुआ अिंद्रका वज्र अेक चबूतरे पर रखा है। भगिनी निवेदिताको अिसका आकार बहुत पसंद आया था। अुन्होंने सूचना की थी कि भारतवर्षके राष्ट्रध्वज पर अिसका चित्र बनाया जाय।

बाघमतीके किनारे धान, गेहूं, मकअी और अुड़द काफी पैदा होते हैं। अरहर वहां नहीं होती। मालूम नहीं, अिन लोगोंने अिसे पैदा करनेकी कोशिश की है या नहीं। रुअी पैदा करनेके प्रयत्न अभी अभी हुअे हैं।

बाघमती नेपाली लोगोंकी गंगा-मैया है। गोरक्षनाथ अुनके पिता हैं।

१९२६-'२७

३७
बिहारकी गंडकी

छुटपनमें मैंने अितना ही सुना था कि गंडकी नदी नेपालसे आती है और अुसमें शालिग्राम मिलते हैं। शालिग्राम अेक तरहके शंख जैसे प्राणी होते हैं; अुन्हें तुलसीके पत्ते बहुत पसंद आते हैं; पानीमें तुलसीके पत्ते डालने पर ये प्राणी धीरे-धीरे बाहर आते हैं और पत्ते खाने लगते हैं; अुन्हें पकड़कर अंदरके जीवको मार डालते हैं और काले पत्थर जैसे ये शंख साफ करके पूजाके लिअे बेचे जाते हैं; लेकिन आजकलके धूर्त लोग काले रंगकी शिलाका अेक टुकड़ा लेकर अुसमें सुराख करके नकली शालिग्राम

बनाते हैं; अैसी कअी बातें सुनी थीं। अिसलिअे कअी दिनोंसे मनमें था कि अैसी नदीको अेक बार देख लेना चाहिये।

मुझे याद है कि स्वामी विवेकानंदने कहीं लिखा है कि नर्मदाके पत्थर महादेवके बाणलिंग हैं और विष्णुके शालिग्राम बौद्ध स्तूपोंके प्रतीकके तौर पर गंडकीमें से लाये हुअे पत्थर हैं। पेरिसकी बड़ी प्रदर्शनीके समय अुन्होंने किसी भाषण या लेखमें जाहिर किया था कि बाणलिंग और शालिग्राम बौद्ध जगतके दो छोर सूचित करते हैं।

गंगा नदीका जहां अुद्गम है, वहींसे वह दोनों ओरसे कर-भार लेती हुअी आगे बढ़ती है। अुसकी मांडलिक नदियां अधिकांशत: अुत्तरकी ओरकी यानी बायीं तरफकी हैं। चंबल और शोणको यदि छोड़ दें, तो महत्त्वकी कोअी नदी दक्षिणसे अुत्तरकी ओर नहीं जाती। गंगाकी दक्षिण-वाहिनी मांडलिक नदियोंमें गंडकी गंगाके लिअे बिहारका पानी लाती है।

हम सब मुजफ्फरपुर गये थे तब अेक दिन गंडकीमें नहाने गये। बिहारकी भूमि है अनासक्तिके आद्य प्रवर्तक सम्राट् जनककी कर्म-भूमि; अहिंसा-धर्मके महान प्रचारक महावीरकी तपोभूमि; अष्टांगिक मार्गके संशोधक बुद्ध भगवानकी विहार-भूमि। ये सब धर्मसम्राट् अिस नदीके किनारे अहर्निश विचरते होंगे। अुनके असंख्य सहायकोंने तथा अनुयायियोंने अिसमें स्नान-पान किया होगा। सीतामैयाने छुटपनमें अिसमें कितना ही जल-विहार किया होगा। वही गंडकी मुझे अपने शैत्य-पावनत्वसे कृतार्थ करे — अिस संकल्पके साथ मैंने अुसमें स्नान किया। नदीके पानीको किसी भी प्रकारकी जल्दी नहीं थी। अुसमें किसी प्रकारका अुत्पात न था। वह शांतिसे बहती जाती थी, मानो मारको जीतनेके बाद बुद्ध भगवानका चलाया हुआ अखंड ध्यान हो हो।

१९२६–'२७

३८

गयाकी फल्गु

संस्कृतमें फल्गुके दो अर्थ होते हैं। (१) फल्गु यानी निःसार, क्षुद्र, तुच्छ; और (२) फल्गु यानी सुन्दर। गयाके समीपकी नदीका फल्गु नाम दोनों अर्थोंमें सार्थक है। पुराण कहते हैं कि अुसे सीताका शाप लगा है। सीताके शापके बारेमें जो होगा सो सही; किन्तु अुसे सिकताका शाप लगा है यह तो हम अपनी आंखोंसे देख सकते हैं। जहां भी देखें, बालू ही बालू दिखाअी देती है। बेचारा क्षीण प्रवाह अिसमें सिर अूंचा करे भी तो कैसे? यात्री लोग जहां तहां खोदकर गड्ढे तैयार करते हैं। लकड़ीके बड़े फावड़ेको लम्बी डोरी बांधकर हलकी तरह अुसे अिन गड्ढोंमें चलाते हैं, जिससे नीचेका कीचड़ निकल कर गड्ढा अधिक गहरा होता है और अधिक पानी देता है।

असंख्य श्रद्धावान यात्री फल्गुके पटमें 'सनान' करके पितरोंके लिअे चावल पकाते हैं और पिंड तैयार करते हैं। चावल, पानी, मटकी, गोबर आदिकी मात्रा पंडोंने हमेशाके लिअे तय कर रखी है। नियमके अनुसार पैसा दे दीजिये; पंडा सब सामग्री ले आता है। गोबरके थपले सुलगाकर अुस पर चावलकी मटकी रख दीजिये; अमुक विधियोंके पूरे होने तक चावल तैयार हो ही जायगा।

फल्गुके किनारे मंदिर और धर्मशालाओंका सौंदर्य बहुत है। अिनमें भी श्री गदाधरजीके मंदिरका शिखर तो अनायास हमारा ध्यान खींचता है।

फल्गुकी सच्ची शोभा देख लीजिये, गयासे बोधगयाकी ओर जाते समय। बालूका लंबा-चौड़ा पाट, आसपास ताड़के अूंचे अूंचे पेड़ और अिनके बीचसे टेढ़ा-मेढ़ा बहता हुआ फल्गुका क्षीण प्रवाह। मगर अुसे क्षुद्र या निःसार कौन कहेगा? यहां रामचंद्र और सीताजी आयी थीं। भगवान बुद्ध यहां घूमे थे। और कअी सत्पुरुष यहां श्राद्ध करने आये थे। अिस महातीर्थको निःसार तो कह ही नहीं सकते। आखिर फल्गु यानी सुन्दर — यही अर्थ सही है।

१९२६–'२७

३९

गरजता हुआ शोणभद्र

'अयं शोण: शुभ-जलोऽगाध: पुलिन-मण्डित: ।
'कतरेण पथा ब्रह्मन् संतरिष्यामहे वयम्?'॥
अेवम् अुक्तस् तु रामेण विश्वामित्रोऽब्रवीद् अिदम्।
'अेष पन्था मयोद्दिष्टो येन यान्ति महर्षय:'॥

आसेतु-हिमाचल भारतवर्षके बारेमें अेक ही साथ विचार करनेवाले क्षत्रिय गुरु-शिष्यकी अिस जोड़ीके मनमें शोणनद पार करते समय क्या क्या विचार आये होंगे? प्रकृतिके कवि वाल्मीकिने विश्वामित्र और राम, दोनोंके प्रकृति-प्रेमका मुक्तकंठसे वर्णन किया है। तीनों जनगण-हितकारी मूर्तियां। अुनकी भावनाओंका स्रोत भी शोणभद्रकी तरह ही बहता होगा, और आसपासकी भूमिको मुखरित करता होगा।

अमरकंटकके आसपासकी अुन्नत भूमि भारतवर्षके लगभग मध्यमें खड़ी है। वहांसे तीन दिशाओंकी ओर अुसने अपनी करुणाका स्तन्य छोड़ दिया है। भौगोलिक रचनाकी दृष्टिसे जिनके बीच काफी साम्य है, किन्तु दूसरी दृष्टिसे संपूर्ण वैषम्य है, अैसे दो प्रांतोंको अुसने दो नदियां दी हैं। नर्मदा गुजरातके हिस्से आयी, और महानदी अुत्कलको मिली।

अमरकंटकका तीसरा स्रोत है पीवरकाय शोणभद्र। नर्मदा सुदीर्घा है, महानदी अष्टावक्रा है और शोणभद्र सुघोष है। करीब पांच सौ मीलका पराक्रम पूरा करके वह पटनाके पास गंगासे मिलता है। शोणके कारण ही शोणपुरका स्थान मशहूर है। कहते हैं कि ग्राहके साथ गजेंद्रकी लड़ाअी गंगा-शोणके संगमके समीपस्थ दहमें ही हुअी थी। मानो अिसी प्रसंगको चिरस्मरणीय करनेके लिअे अब भी शोणपुरमें लाखों लोगोंका मेला होता है, और अुसमें सैकड़ों हाथी बेचे जाते हैं।

सिन्धु और ब्रह्मपुत्रके साथ शोणभद्रको नर नाम देकर प्राचीन ऋषियोंने अुसका समुचित आदर किया है। बनारससे गया जाते समय अिस महाकाय और महानाद नदके दर्शन हुअे थे। गाड़ी बड़े पुल परसे जाती है और शोणभद्रका पुलिन-मंडित महापट दिखता रहता है।

संकरी घाटीमें अपना विकास रुकनेके कारण अधीरताके साथ जब दौड़ता हुआ वह यकायक विशाल क्षेत्रमें पहुंचता है, तब कहां जाअूं और कहां न जाअूं यह भाव अुसके चेहरे पर स्पष्ट रूपसे दिखाअी देता है। 'नाल्पे सुखम् अस्ति; यो वै भूमा तत् सुखम्'—यह माननेवाले महर्षिगण शोणके किनारे अच्छा अुतार खोजते हुअे जब घूमते होंगे, तब अुनके मनमें क्या क्या विचार आते होंगे? यह तो विश्वामित्र या अुनके मखत्राता प्रभु श्री रामचंद्रजी ही जानें।

१९२६–'२७

४०

तेरदालका मृगजल

मेरे विवाहके बाद कुछ ही दिनोंमें हम शाहपुरसे जमखंडी गये। पिताजी हमसे पहले वहां पहुंच गये थे। रातको हम कुड़ची स्टेशन पर अुतरे। वहांसे रातको ही बैलगाड़ीमें रवाना हुअे। दोनों बैल सफेद और मजबूत थे। रंग, सींगोंका आकार, मुखमुद्रा और चलनेका ढंग सब बातें दोनोंमें समान थीं। हमारे यहां अैसी जोड़ीको 'खिल्लारी' कहते हैं। अिन बैलोंने हमें चौबीस घंटोंमें पैंतीस मील पहुंचा दिया।

जमखंडी जाते हुअे रास्तेमें अितिहास-प्रसिद्ध तेरदाल आता है। हम तेरदालके पास पहुंचे तब मध्याह्नका समय था। दाहिनी ओर दूर दूर तक खेत फैले हुअे थे। काफी दूर, लगभग क्षितिजके पास, अेक बड़ी नदी बह रही थी। पानी पर सख्त धूप पड़नेके कारण वह चमचमा रहा था। और पानी कितने वेगसे बह रहा है अिसका भी कुछ कुछ खयाल होता था। अितनी सुंदर नदीके किनारे पेड़ कम क्यों हैं, अिसका कारण मैं समझ न सका। मैंने गाड़ीवानसे पूछा, 'अिस नदीका नाम क्या है? कितनी बड़ी दिखाअी देती है? कृष्णा नदी तो नहीं है?' गाड़ीवान हंस पड़ा। कहने लगा, 'यहां नदी कहांसे आयेगी? वह तो मृगजल है। पानीके अिस दृश्यसे बेचारे प्यासे हिरन

धोखेमें आ जाते हैं और धूपमें दौड़-दौड़कर और पानीके लिअे तड़प-तड़प कर मर जाते हैं। अिसीलिअे अुसको मृगजल कहते हैं।'

मृगजलके बारेमें मैंने पढ़ा तो था। मृगजलमें अूपरके पेड़का प्रतिबिंब भी दिखाअी देता है, रेगिस्तानमें चलनेवाले अूंटोंके प्रतिबिंब भी दिखाअी देते हैं, आदि जानकारी और अुसके चित्र मैंने पुस्तकोंमें देखे थे। मगर मैं समझता था कि मृगजल तो अफ्रीकामें ही दिखाअी देते होंगे। सहाराके रेगिस्तानकी अिक्कीस दिनकी यात्रामें ही यह अद्भुत दृश्य देखनेको मिलता होगा। हिन्दुस्तानमें भी मृगजल दिखाअी दे सकते हैं, अिसकी यदि मुझे कल्पना होती, तो मैं अितनी आसानीसे और अितनी बुरी तरहसे धोखा नहीं खाता।

अब मैं देख सका कि हम ज्यों ज्यों गाड़ीमें आगे बढ़ते जाते थे, त्यों त्यों पानी भी आगे खिसकता जाता था। मैंने यह भी देखा कि अुस पानीके आसपास हरियाली नहीं थी, और पानीका पट आसपासकी जमीनसे नीचे भी नहीं था। जमीनकी सतह पर ही पानी बहता था! अूपरकी हवामें भी धूपका असर दिखाअी देता था। फिर तो मृगजलकी मौज देखनेमें और अुसका स्वरूप समझनेमें बहुत आनंद आने लगा। बेचारे बैल अधमुंदी आंखोंसे अपनी गतिके तालमें अेक समान चल रहे थे। कोअी बैल चलते चलते पेशाब करता, तो अुसका आलेख जमीन पर बन जाता था और थोड़ी ही देरमें सूख जाता था। हम आधे-आधे घंटेमें सुराहीसे पानी लेकर पीते थे, फिर भी प्यास बुझती नहीं थी।

अैसा करते करते आखिर तेरदाल आया। धर्मशाला पत्थरकी बनी हुअी थी। देशी रियासतका गांव था; अिसलिअे धर्मशाला अच्छी बनी हुअी थी। मगर सख्त धूपके कारण वह भी अप्रिय-सी मालूम हुअी। मुकाम पर पहुंचनेके बाद मैं तालाबमें नहा आया। साथमें पूजाकी मूर्तियां थीं। बेंतकी पेटीमें से अुन्हें निकालकर पूजाके लिअे जमाया। अुनमें अेक शालिग्राम था। वह तुलसीपत्रके बिना भोजन नहीं करता; अिसलिअे मैं गीली धोतीसे, किन्तु नंगे पैरों तुलसीपत्र लानेके लिअे निकल पड़ा। अेक घरके आंगनमें सफेद कनेरके फूल भी मिले और तुलसीपत्र भी मिले। दोपहरका समय था। पेटमें भूख थी, पैर जल रहे थे, सिर

गरम हो गया था — अैसे त्रिविध तापमें पूजा करने बैठा। देवता कुछ कम न थे। अीश्वर अेक अवश्य है; मगर सबकी ओरसे अेक ही देवताकी पूजा करता तो वह चल नहीं सकता था। पूजा करते समय मेरी आंखोंके सामने अंधेरा छा गया। बड़ी मुश्किलसे मैंने पूजा पूरी की और खाना खाकर सो गया।

स्वप्नमें मैंने हिरनोंके अेक बड़े झुण्डको गेंदकी तरह दौड़ते हुअे मृगजलका पानी पीने जाते देखा।

अैसा ही अेक मृगजल दांडीयात्राके समय नवसारीसे दांडीके समुद्र-किनारेकी ओर जाते समय देखनेको मिला था। हमें यह विश्वास होते हुअे भी कि यह मृगजल है, आंखोंका भ्रम तनिक भी कम नहीं होता था। वेदान्तका ज्ञान आंखोंको कैसे स्वीकार हो?

आजकल कलकत्तेकी कोलतारकी सड़कों पर भी दोपहरके समय अैसा मृगजल चमकने लगता है, जिससे यह भ्रम होता है कि अभी अभी बारिश हुअी है। दौड़नेवाली मोटरोंकी परछाअियां भी अुनमें दिखाअी देती हैं। भगवानने यह मृगजल शायद अिसीलिअे बनाया है कि ज्ञान होने पर भी मनुष्य मोहवश कैसे रह सकता है, अिस सवालका जवाब अुसे मिल जाय।

१९२५

४१

चर्मण्वती चंबल

जिनके पानीका स्नान-पान मैंने किया है, अुन्हीं नदियोंका यहां अुपस्थान करनेका मेरा संकल्प है। फिर भी अिसमें अेक अपवाद किये बिना रहा नहीं जाता। मध्य देशकी चंबल नदीके दर्शन करनेका मुझे स्मरण नहीं है। किन्तु पौराणिक कालके चर्मण्वती नामके साथ यह नदी स्मरणमें हमेशाके लिअे अंकित हो चुकी है। नदियोंके नाम अुनके किनारेके पशु, पक्षी या वनस्पति परसे रखे गये हैं, अिसकी मिसालें बहुत हैं। दृषद्वती, सारस्वती, गोमती, वेत्रवती, कुशावती, शरावती, बाघमती,

हाथमती, साबरमती, अिरावती आदि नाम अुन अुन प्रजाओंको सूचित करते हैं। नदीके नामसे ही अुनकी संस्कृति प्रकट होती है। तब चर्मण्वती नाम क्या सूचित करता है? यह नाम सुनते ही हरेक गोसेवकके रोंगटे खड़े हुअे बिना नहीं रहेंगे।

प्राचीन राजा रंतिदेवने अमर कीर्ति प्राप्त की। महाभारत जैसा विराट ग्रंथ रंतिदेवकी कीर्ति गाते थकता नहीं। राजाने अिस नदीके किनारे अनेक यज्ञ किये। अुनमें जो पशु मारे जाते थे, अुनके खूनसे यह नदी हमेशा लाल रहती थी। अिन पशुओंके चमड़े सुखानेके लिअे अिस नदीके किनारे फैलाये जाते थे; अिसीलिअे अिस नदीका नाम चर्मण्वती पड़ा। महाभारतमें अिस प्रसंगका वर्णन बड़े अुत्साहके साथ किया गया है। रंतिदेवके यज्ञमें अितने ब्राह्मण आते थे कि कभी कभी रसोअियोंको भूदेवोंसे विनती करनी पड़ती कि 'भगवन्! आज मांस कम पकाया गया है; आज केवल पचीस हजार पशु ही मारे गये हैं। अिसलिअे सब्जी-कचूमर अधिक लीजियेगा।'

अुस समयके हिन्दूधर्ममें और आजके हिन्दूधर्ममें कितना बड़ा अंतर हो गया है! यूनानी लोगोंके 'हैकॅटॉम' को भी फीका सिद्ध करें अितने बड़े यज्ञ करके हम स्वर्गके देवताओंको तथा भूदेवोंको तृप्त करेंगे, अैसी अुम्मीद अुस समयके धार्मिक लोग रखते थे। बादके लोगोंने सवाल अुठाया:

वृक्षान् छित्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिर-कर्दमम्
स्वर्गः चेत् गम्यते मर्त्यैः नरकः केन गम्यते?

'पेड़ोंको काटकर, पशुओंको मारकर और खूनका कीचड़ बनाकर यदि स्वर्गको जाया जाता हो, तो फिर नरकको जानेका साधन कौनसा है?' अिस चर्मण्वती नदीके किनारे कअी लड़ाअियां हुअी होंगी। मनुष्यने मनुष्यका खून बहाया होगा। मगर चंबलका नाम लेते ही राजा रंतिदेवके समयका ही स्मरण होता है।

यदि आज भी हमें अितना अुद्वेग मालूम होता है, तो समस्त प्राणियोंकी माता चर्मण्वतीको अुस समय कितनी वेदना हुअी होगी?

१९२६–'२७

४२

नदीका सरोवर

हमारे देशमें अितने सौंदर्य-स्थान बिखरे हुअे हैं कि अुनका कोअी हिसाब ही नहीं रखता। मानो प्रकृतिने जो अुड़ाअूपन दिखाया अुसके लिअे मनुष्य अुसे सजा दे रहा है। आश्रममें जिन्हें चौबीसों घंटे बापूजीके साथ रहने तथा बातें करनेका मौका मिला है, वे जैसे बापूजीका महत्त्व नहीं समझते और बापूजीका भाव भी नहीं पूछते, वैसा ही हमारे देशमें प्रकृतिकी भव्यताके बारेमें हुआ है।

हम माणिकपुरसे झांसी जा रहे थे। रास्तेमें हरपालपुर और रोहाके बीच हमने अचानक अेक विशाल सुंदर दृश्य देखा। पता ही नहीं चला कि यह नदी है या सरोवर? आसपासके पेड़ किनारेके अितने समीप आ गये थे कि अिसके सिवा दूसरा कोअी अनुमान ही नहीं हो सकता था कि यह नदी नहीं हो सकती। मगर सरोवरकी चारों बाजू तो कमोबेश अूंची होनी चाहिये। यहां सामने अेक अूंचा पहाड़ आसपासके जंगलको आशीर्वाद देता हुआ खड़ा था, और पानीमें देखनेवाले लोगोंको अपना अुलटा दर्शन देता था। दाढ़ी रखकर सिर मुंड़ानेवाले मुसलमानोंकी तरह अिस पहाड़ने अपनी तलहटीमें जंगल अुगाकर अपने शिखरका मुंडन किया था।

पुलकी बाअीं ओर पानीके बीचोंबीच अेक छोटा-सा टापू था — दो अेक फुट लंबा और अेक हाथ चौड़ा, और पानीके पृष्ठभागसे अधिक नहीं तो छः अिंच अूंचा। अुसका घमंड देखने लायक था। वह मानो पासके पहाड़से कह रहा था, 'तू तो तट पर खड़ा खड़ा तमाशा देख रहा है; मुझको देख, मैं कितना सुन्दर जल-विहार कर रहा हूं!'

तब यह नदी है या सरोवर? अभी अभी बेलाताल स्टेशन गया। अिसलिअे लगा कि अिस प्रदेशमें जगह जगह तालाब होंगे। किन्तु विश्वास न हुआ। डिब्बेमें बैठे हुअे लोगोंको अवश्य पूछा जा सकता था। मगर अेक तो पैसेंजर गाड़ी होते हुअे भी दीपावलीके दिन होनेके कारण

अुसमें स्थानिक यात्री नहीं थे; और यदि होते भी तो अुनसे अधिक जानकारी पा सकनेकी अुम्मीद थोड़े ही रखी जा सकती थी! युगों तक जीवन-यात्रा विषम बनी रही, जिस कारण लोगोंके जीवनमें से सारा काव्य सूख गया है। जिसलिअे जो भी सवाल पूछा जाय, अुसका जवाब विषादमय अुपेक्षाके साथ ही मिलता है। लोगोंकी भलमनसाहत अभी कुछ बाकी है, किन्तु काव्य. अुत्साह और कल्पनाकी अुड़ान अब स्मृतिशेष हो गये हैं।

पर जितना सुन्दर दृश्य देखनेके बाद क्या विषादके विचारोंका सेवन किया जा सकता है? यात्रामें मैं हमेशा अेक-दो नक्शे अपने साथ रखता ही हूं। बलिहारी आधुनिक समयकी कि अैसे साधन अनायास मिल जाते हैं। मैंने 'रोड मैप ऑफ अिन्डिया' निकाला। हरपालपुर और मअुरानीपुरके बीचसे अेक लंबी नदी दक्षिणसे अुत्तरकी ओर दौड़ती है, बेतवासे जा मिलती है और बेतवाकी मददसे हिमतपुरके पास अपना नीर यमुनाके चरणोंमें चढ़ा देती है। 'मगर अिस नदीका नाम क्या है?' मैंने नक्शेसे पूछा। वह आलसी बोला: 'देखो, कहीं लिखा हुआ होगा!' और सचमुच अुसी क्षण नाम मिला — धसान! अितने सुंदर और शांत पानीका नाम 'धसान' क्यों पड़ा होगा? यह तो अुसका अपमान है। मैं अिस नदीका नाम प्रसन्ना रखता। मंदस्रोता कहता या हिमालयसे माफी मांगकर अुसे नंदाकिनीके नामसे पुकारता।

मगर हमें क्या मालूम कि जिस लोककविने अिस नदीका नाम धसान रखा, अुसने अुसका दर्शन किस ऋतुमें किया होगा? वर्षा मूसलधार गिर रही होगी, आसपासके पहाड़ बादलोंको खींचकर नीचे गिरा रहे होंगे, और मस्तीमें झूमनेवाले नीर हाथीकी रफ्तारसे अुत्तर दिशाकी ओर तेजीसे दौड़ रहे होंगे। शंका पैदा हुअी होगी कि समीपकी टेकरियां कायम रहेंगी या गिर पड़ेंगी। अैसे समय पर लोककविने कहा होगा, 'देखो तो अिस धसान नदीकी शरारत, मानो महाराज पुलकेशीकी फौज अुत्तरको जीतनेके लिअे निकल पड़ी है!'

किन्तु अब यह नदी अितनी शांत मालूम होती है, मानो गोकुलमें शरारत करनेके बाद यशोदा माताके सामने गरीब गाय बना हुआ कन्हैया हो!

सुबह नाश्तेके समय अितनी अनसोची मेजवानी मिलने पर अुसे कौन छोड़ेगा ?

अघाकर खानेके बाद रिश्तेदारोंका स्मरण तो होता ही है। अब अिस धसानका मंगल दर्शन अिष्ट मित्रोंको किस प्रकार कराया जाय? न पास कैमरा है, न ट्रेनसे फोटो खींचनेकी सुविधा है। और फोटोकी शक्ति भी कितनी होती है? फोटोमें यदि सारा आनंद भरना संभव होता, तो घूमनेकी तकलीफ कोअी न अुठाता। मैं कवि होता तो यह दृश्य देखकर हृदयके अुद्‌गारोंकी अेक सरिता ही बहा देता। मगर वह भी भाग्यमें नहीं है। अिसलिअे 'दूधकी प्यास छाछसे बुझाने' के न्यायसे यह पत्र लिख रहा हूं। भारतकी भक्ति करनेवाला कोअी समानधर्मी झांसीसे करीब पचास मीलके अंदर आये हुअे अिस स्थानका दर्शन करनेके लिअे जरूर आयेगा।

स्टेशन बरवासागर, १४–११–'३९

ता० १६–११–'३९

धसानसे आगे बढ़े और ओरछाके पास बेतवा नदी देखी। यह नदी भी काफी सुन्दर थी। अुसके प्रवाहमें कअी पत्थर और कअी पेड़ थे। अुसके लावण्यमें फीका कुछ भी नहीं था। दूर दूर तक ओरछाके मंदिर और महल दिखाअी देते थे; कीचड़का दर्शन कहीं भी नहीं हुआ। यह अनाविला नदी देखकर हम झांसी पहुंचे। वहां श्री मैथिलीशरणजीके भाअी — सियारामशरणजी और चारुशीलाशरणजी अपने परिवारके अन्य लोगोंके साथ भोजन लेकर आये थे। मेरे मनमें संदेह था कि काव्य पढ़-पढ़कर काव्यका सर्जन करनेवाले हमारे कवि जिस तरह प्रकृतिका प्रत्यक्ष दर्शन हृदयसे नहीं करते, अुसी तरह अिन कवि-बन्धुओंने भी धसान और बेतवाके बारेमें शायद कुछ न लिखा होगा। अिसलिअे मैंने अुनसे साफ साफ कह दिया कि 'आपने यदि अिन दो नदियों पर कुछ भी न लिखा हो, तो आप निंदाके पात्र हैं!' सियारामशरणजीने अपने विनयसे मुझे पराजित किया। अुन्होंने कहा, 'भैयाजीने (मैथिलीशरणजीने) अिन नदियोंके बारेमें गाते हुअे

कहा है कि सौंदर्यमें बुंदेलखंडकी ये नदियां गंगा-यमुनासे भी बढ़कर हैं। अिसलिअे मेरे बड़े भाअी तो आपके अुपालंभमें नहीं आयेंगे। हां, मैंने खुद अिन नदियोंके बारेमें कुछ नहीं लिखा है। मगर मैं कहां अभी बूढ़ा हो गया हूं। मुझे तो अभी बहुत लिखना है।"

अुनसे मालूम हुआ कि धसानका मूल नाम था दशार्ण। और यह तो मुझे मालूम था कि बेतवाका नाम था वेत्रवती। दशार्ण = दशाअण = दशाण = धसान। अितना ध्यानमें आनेके बाद धसान नामके बारेमें मैंने जो अूटपटांग कल्पना की थी, वह पत्तोंके महलकी तरह गिर पड़ी। किसी तरहके सबूतके बिना केवल कल्पनाके सहारे खोज करनेवाले मेरे जैसे कअी लोग अिस देशमें होंगे। अुनकी गलती बतानेके लिअे जो जानकारी चाहिये अुसके अभावमें अैसी निरी कल्पनायें भी अितिहासके नामसे रूढ़ हो जाती हैं, और आगे जाकर रूढ़ियोंके अभिमानी लोग जोशके साथ अैसी कल्पनाओंसे भी चिपटे रहते हैं।

मैंने अेक दफा 'वती-मती' वाली नदियोंके नाम अिकट्ठा किये थे। अिसीलिअे वेत्रवती ध्यानमें रही थी। जिसके किनारे बेंत अुगते हैं वह है वेत्रवती। दृषद्वती (पथरीली); सरस्वती, गोमती, हाथमती, वाघमती, अैरावती, साबरमती, वेगमती, माहिष्मती (?), चर्मण्वती (चंबल), भोगवती (?), शरावती। अितनी नदियां तो आज याद आती हैं। और भी खोजने पर दूसरी पांच-दस नदियां मिल जायेंगी। महाभारतमें जहां तीर्थयात्राका प्रकरण आता है, वहां कअी नाम अेकसाथ बताये गये हैं। परशुराम, विश्वामित्र, बलराम, नारद, दत्तात्रेय, व्यास, वाल्मीकि, सूत, शौनक आदि प्राचीन घुमक्कड़ भूगोलवेत्ताओंसे यदि पूछेंगे, तो वे काफी नाम बतायेंगे या पैदा कर लेंगे। हमारी नदियोंके नामोंके पीछे रही जानकारी, कल्पना, काव्य और भक्तिके बारेमें आज तक भी किसीने खोज नहीं की है। फिर भारतीय जीवन भला फिरसे समृद्ध किस तरह हो?

नवंबर, १९३९

४३

निशीथ-यात्रा

जबलपुरके समीप भेड़ाघाटके पास नर्मदाके प्रवाहकी रक्षा करने-वाले संगमरमरके पहाड़ हम रात्रिके समय देख आयेंगे, यह खयाल शायद मध्यरात्रिके स्वप्नमें भी न आता। किन्तु 'सबिन्दु-सिन्धु-सुस्खलत् तरंगभंग-रंजितम्' कहकर जिसका वर्णन हम किसी समय संध्या-वंदनके साथ गाते थे, अुस शर्मदा नर्मदाके दर्शन करनेके लिअे यह अेक सुन्दर काव्यमय स्थान होगा, अैसी अस्पष्ट कल्पना मनके किसी कोनेमें पड़ी हुअी थी।

हिमालयकी यात्राके समय मैं रास्तेमें जबलपुर ठहरा था। किंतु अुस समय भेड़ाघाटकी नर्मदाका स्मरण तक नहीं हुआ था। गंगोत्री और अुसके रास्तेमें आनेवाले श्रीनगरके चिंतनके सामने नर्मदाका स्मरण कैसे होता? नर्मदा-तटकी गहनताके महादेवको छोड़कर मैं गंगोत्रीकी यात्राके लिअे चल पड़ा था।

फैजपुर कांग्रेसके समय हमने केवल अजंता जानेका सोचा था। किन्तु रेलवे कंपनीने झोन टिकट निकाले, और हममें अिधर-अुधर अधिक घूमनेकी वृत्ति जगा दी। जबलपुरकी यात्रा यदि मुफ्तमें होती है, तो क्यों न हो आयें? —यों सोचकर हम चल पड़े। यह सच था कि हम किसी खास कामके लिअे जबलपुर नहीं जा रहे थे; मगर अेक दिन सिर्फ मौज करना है, अैसी भी हमारी वृत्ति नहीं थी।

देशके अलग अलग धार्मिक स्थल, अैतिहासिक स्थान, कला-मंदिर और निसर्ग-रमणीय दृश्य देखनेको मैंने कभी निरी नयन-तृप्ति नहीं माना है। मंदिरमें जाकर जिस प्रकार हम देवताका दर्शन करते हैं, अुसी प्रकार भूमाताकी अिन विविध विभूतियोंके दर्शनके लिअे मैं आया हूं, अिसी भावनासे मैंने अब तक की अपनी सारी यात्रायें की हैं। अपने देशकी रग-रगकी जानकारी मुझको होनी चाहिये और अिस जानकारीके साथ साथ भक्तिमें भी वृद्धि होनी चाहिये, अैसी मेरी अपेक्षा रहती है।

ज्यों ज्यों मैं यात्रा करता हूं और अभिमान तथा प्रेमसे हृदयको भर देनेवाले दृश्य देखता हूं, त्यों त्यों अेक चीज मुझे बेचैन किया ही करती है: यह मेरा अितना सुन्दर और भव्य देश परतंत्र है, अिसके लिअे मैं जिम्मेदार हूं। पारतंत्र्यका लांछन लेकर मैं अिस अद्भुत-रम्य देशकी भक्ति भी किस प्रकार कर सकता हूं? क्या मैं कह सकता हूं कि यह देश मेरा ही है? मैं देशका हूं अिसमें तो कोअी संदेह नहीं है; क्योंकि अुसने मुझे पैदा किया है, वही मेरा पालन-पोषण अखंड रूपसे कर रहा है; वही मुझे रहनेके लिअे स्थान, खानेके लिअे अन्न और आरामके लिअे आश्रय देता है; अपने बालबच्चोंको मैं अुसीके सहारे, निश्चिंत होकर छोड़ सकता हूं; जिस अुज्ज्वल अितिहासके कारण मैं संसारमें सिर अूंचा करके चलता हूं, वह आर्योंका प्राचीन अितिहास भी अिसी देशने मुझे दिया है। अिस प्रकार मैंने अपना सर्वस्व देशसे ही पाया है। किन्तु यह देश मेरा है, यों कहनेके लिअे मैंने देशके लिअे क्या किया है? मेरा जन्म हुआ अुसके साथ ही मैं देशका बना; मगर यों कहनेके पहले कि 'यह देश मेरा है' मुझे जिंदगी भर मेहनत करके अिसके लिअे खप जाना चाहिये।

मनमें अिस तरहके विचारोंका आवर्त अुठने पर मैं क्षण भर बेचैन हो जाता हूं, किन्तु अिसी अस्वस्थतामें से धर्मनिष्ठा पैदा होकर दृढ़ बनती है। अिसी बेचैनीके कारण स्वराज्यका संकल्प बलवान होता है और देशके लिअे — देशमें असह्य कष्ट अुठानेवाले गरीबोंके लिअे — यत्किंचित् भी कष्ट सहनेका जब मौका मिलता है, तब मुझे लगता है कि मैं अुपकृत हुआ हूं। और ज्यों ज्यों यात्रा करता रहता हूं, त्यों त्यों मनमें नयी शक्तिका संचार होने लगता है। युवकोंसे मैं हमेशा कहता आया हूं कि 'स्वदेशमें घूमकर देशके और देशके लोगोंके दर्शन करनेका तुम अेक भी मौका मत छोड़ना।'

अिस प्रकारकी अुत्कट भावनाका अुदय जब हृदयमें होता है, तब अैसा लगना स्वाभाविक है कि पासमें कोअी न हो तो अच्छा। अपनी नाजुक भावनाओंको शब्दोंमें लिखकर लोगोंके सामने रखना अुतना कठिन नहीं है। किन्तु अिन भावनाओंसे बेचैन होने पर हमारी

जो विह्वल दशा हो जाती है और हम मतवाले बन जाते हैं, अुसे कोअी देखे यह हमें सहन नहीं होता। अिसी कारण मैं जब जब भक्ति-यात्राके लिअे चल पड़ता हूं, तब तब मुझे लगता है कि मैं अकेला ही जाअूं और अेकांतमें ही प्रकृतिका अनुनय करूं तो अच्छा होगा।

किन्तु मेरी जाति है कौवेकी। अकेले अकेले सेवन किया हुआ कुछ भी मुझे हजम नहीं होता। अिसलिअे अनिच्छासे ही क्यों न हो, मैं सब लोगोंसे कह देता हूं: 'मुझसे अब रहा नहीं जाता; मैं तो यह चला।' लिहाजा कोअी न कोअी मेरे साथ हो ही लेता है। लोगोंको लगता है कि अिनके साथ जानेसे हमारे चर्मचक्षुओंको अिनके प्रेम-चक्षुओंकी मदद मिलेगी; और अपना देश हम चार आंखोंसे जी भरकर देख सकेंगे। मेरी अिस स्थितिका वर्णन मैंने अपने अेक मित्रको लिख-कर कहा था कि 'मैं खोजता हूं अेकांत, किन्तु पाता हूं लोकांत।'

आखिर अिस सबका नतीजा यह होता है कि मुझे समुदायके साथ यात्रा करनी पड़ती है, और अिसलिअे अपनी अुछलनेवाली मनोवृत्तियोंको दबा देना पड़ता है। और अेक ओर मनके अन्तर्मुख बनकर चिंतन-मग्न होने पर भी दूसरी ओर मुझे बाहरके लोगोंके वायुमंडलके अनुकूल बनना पड़ता है।

यात्रामें हो या किसी महत्त्वके काममें हो, मंगलाचरणमें कोअी विघ्न न आये तो मुझे कुछ खोया-खोया-सा मालूम होता है। निर्विघ्न प्रवृत्ति यदि मैंने अपनी स्वप्नसृष्टिमें भी न देखी हो, तो जागृतिमें भला वह कहांसे आयेगी? बड़े अुत्साहके साथ हम भुसावलसे रवाना हुअे और अिटारसीमें ही पहली ठोकर खाअी। पहलेसे सूचना देने पर भी अिटारसीके स्टेशन-मास्टर गाड़ीमें हमारे लिअे कोअी प्रबंध नहीं कर सके थे। नया डिब्बा जोड़ दें तो अुसे खींचनेकी ताकत अेंजिनमें नहीं थी; क्योंकि अिटारसीके पहले ही गाड़ीमें ज्यादा डिब्बे जोड़े गये थे और सब डिब्बे ठसाठस भरे हुअे थे।

क्या अब यहींसे वापस लौटना पड़ेगा? कितनी निराशा! सोचा, मनको दूसरी दिशामें मोड़ दें और दिलजोअीके लिअे यहांसे होशंगाबाद तक मोटरमें जाकर नर्मदामाताके दर्शन कर लें और फैजपुरकी ओर

वापस लौट जायं। किन्तु जितनी हिम्मत हारनेकी भी हिम्मत न होनेसे आखिर आयी हुअी गाड़ीमें हम किसी न किसी तरह घुस गये।

जबलपुर जाकर अेक-दो स्थानिक सज्जनोंकी मददसे हम नजदीककी धर्मशालामें जा पहुंचे और मोटरकी व्यवस्था करनेकी कोशिशमें लगे।

कोअी बड़ा काफिला साथमें लेकर यात्रा करनेमें जिस व्यवस्था-शक्तिकी आवश्यकता रहती है, वही युद्धोंमें बड़ी फौजके स्थानांतरके समय रहती है। किसी आश्रम, संस्था, मंदिर या छोटे-बड़े संस्थानको चलानेमें जिन गुणों या शक्तियोंका विकास होता है, अुन्हींका अुपयोग किसी राज्य या साम्राज्यको चलानेमें होता है। कोअी होशियार किसान मौका मिलते ही अुत्तम शासक या प्रबंधक हो सकता है; और बड़े बड़े कल-कारखाने चलानेवाला कल्पक या योजक कारखानेदार किसी साम्राज्यका सूत्र आसानीसे चला सकता है। यात्रामें मनुष्यकी सब तरहकी कुशलताकी परीक्षा होती है। और अुसमें योग्य पुरुष — और स्त्रियां भी, अपने आप आगे आ जाती हैं।

यह विचार यहां क्यों सूझा, यह बतानेके लिअे हम न रुकेंगे। हमें समय पर भेड़ाघाट पहुंचना है, और बारिश तो मानो 'अभी आती हूं' कहकर टूट पड़ने पर तुली हुअी है। यों तो ये बारिशके दिन नहीं हैं। किन्तु हिन्दुस्तानके चारों ओरके लोग फैजपुर कांग्रेसके लिअे जा रहे हैं, यह देखकर बारिशको भी लगा, 'चलो हम भी अलग अलग स्थान देखते हुअे फैजपुर हो आयें।' मगर जाड़ेके दिनोंमें बारिशके पांवोंमें ताकत नहीं होती; अिसलिअे दौड़ते दौड़ते वह रास्तेमें ही गिर पड़ी और फैजपुर तक पहुंच न सकी! अुसके हाथमें यदि 'स्वराज्यकी ज्योति' होती, तो शायद लोगोंने अुसे अुठकर आगे बढ़नेमें मदद की होती।

खैर; हमारी दोनों मोटरें तैल-वेगसे चल पड़ीं और संध्याके समय हम भेड़ाघाट जा पहुंचे। संगमरमरकी शिलायें देखनेके लिअे अिससे पहले शायद ही कोअी अैसे समय यहां आया होगा। मगर प्रकृतिके दीवानेको समयके साथ क्या लेना देना है?

* * *

यहां आकर हम बड़ी दुविधामें पड़े। निकटमें ही अेक टेकरी पर महादेवजीके मंदिरको घेरकर चौरासी योगिनियां तपस्या करती हुअी बैठी थीं। तपस्या करते करते अहल्याकी तरह वे शिलारूप बन गअी होंगी। रामके चरणोंका स्पर्श होनेके बजाय मुसलमानोंकी लाठियोंका स्पर्श होनेके कारण अिनमें से बहुत-सी योगिनियोंकी काफी दुर्दशा हुअी है। अिस टेकरीके अुस पार धुवांधार नामक अेक मशहूर प्रपात है। अुसे देखने जायें या संगमरमरकी शिलायें देखनेके लिअे नौका-विहार करें?

विहार करनेके लिअे नौकायें केवल दो ही थीं। अिसलिअे हम सब किसी अेक बात पर अेकमत हो जायं अिसमें लाभ नहीं था। लिहाजा हमने दो टोलियां बनायीं। यह स्थान संगमरमरकी शिलाओंके लिअे मशहूर था, अिसलिअे बड़ी टोलीने अुस ओर जाना पसन्द किया। अिसमें संदेह नहीं कि थोड़ा अुजियाला जो बचा था अुसीमें यह स्थान देख लेनेमें अक्लमंदी थी। हमारी दूसरी टोलीने योगिनियोंका दर्शन करके धुवांधार जानेका निर्णय किया और हम सीढ़ियां चढ़ने लगे। सब योगिनियोंके दर्शन हमने अपने हाथकी बिजलीकी अेक छोटी-सी मशालकी मददसे किये। मूर्तियां सुन्दर ढंगसे बनाअी हुअी और कलापूर्ण लगीं। मंदिरके भीतर विराजमान महादेव तथा अुनका नंदी भी देखने लायक हैं।

मनमें विचार आया कि जब किसी लड़ाअीमें हम घायल होते हैं, तब तुरंत अिलाज करके हम अच्छे हो जाते हैं। गांवमें रोगसे किसीकी मौत होती है, तो हम तुरंत अुसे जला देते या दफना देते हैं। जब जमीन पर दूध गिरता है तब हम अुसके धब्बोंको अमंगलकारी समझकर अुन्हें जमीन पर रहने नहीं देते; अुन्हें पोंछ डालते हैं। अैसा मनुष्य-स्वभाव होने पर भी हमने खंडित मूर्तियां ज्यों-की-त्यों क्यों रहने दीं? क्या धर्मान्ध मुसलमानोंके अत्याचारोंका स्मरण करानेके लिअे? या खुद अपनी कायरता और सामाजिक गैर-जिम्मेदारीको स्वीकार करनेके लिअे? अप्रतिम कलामूर्तियां बनानेकी कला यदि देशमें से नष्ट हो गअी होती, तो अिस प्रकारके प्राचीन अवशेषोंके नमूनोंको सुरक्षित रखना

अुचित माना जाता। किन्तु मैंने देखा है कि आबूमें देलवाड़ेके मंदिरोंमें संगमरमरकी कारीगरी करनेवाले कुटुंबोंको हमेशाके लिअे नियुक्त कर लिया गया है; मंदिरके किसी हिस्सेमें जब कुछ खंडित होता है तो तुरंत अुसकी मरम्मत करके अुसको पहलेकी तरह बना दिया जाता है। अिसी तरह लाहौरके अजायबघरमें भी मैंने देखा है कि मूर्तियोंका कोअी कुशल सर्जन घायल मूर्तियोंके हाथ, पैर, नाक, ओंठ आदिको सीमेन्टकी मददसे अिस ढंगसे ठीक कर देता है कि किसीको पता तक न चले। मगर हमारे मंदिर योग्य और पुरुषार्थी लोगोंके हाथमें हैं ही कहां? हमारे समाजकी स्थिति लावारिस ढोरों जैसी है।

योगिनियोंके आशीर्वाद लेकर हम टेकरीसे नीचे अुतरने लगे। अब भी कुछ प्रकाश बाकी था। अिसलिअे हम हंसते-खेलते किन्तु द्रुत गतिसे बुवांबारकी खोज करने निकल पड़े। जो साथी आगे दौड़ रहे थे अुनकी लगाम खींचनेका और जो पीछे पड़ रहे थे अुन्हें चाबुक लगानेका काम अेक ही जीभको करना पड़ता था। मेरा अनुभव है कि नयी आजादीसे बहकनेवाले बछड़ों या भेड़ोंको ज्यों ज्यों पास लानेकी कोशिश की जाती है, त्यों त्यों संघको छोड़कर दूर दूर भागनेमें अुन्हें बड़ी बहादुरी मालूम होती है; फिर अुन पर रुष्ट होकर अुन्हें वापस लानेमें होनेवाले कष्टके कारण संघपतिको भी अपना महत्त्व बड़ा हुआ-सा मालूम होता है। परस्पर खींचातानीके कष्टोंका आनन्द दोनोंसे छोड़ा नहीं जाता।

जहां भी हमारी नजर जाती, सफेद पत्थर ही पत्थर नजर आते थे। जबलपुरका ही यह प्रदेश है! किन्तु अेक जगह तो हमें संग-जराहतका खेत ही मिल गया। संग-जराहत अेक अद्भुत चीज है। वह पत्थर जरूर है, मगर बिलकुल चिकना। मानो पेन्सिलका सीसा। छुटपनमें अेक बार मुझे संग्रहणी हो गयी थी। अुस समय अिस संग-जराहतका चूरा छानकर मावेकी बरफीमें मिलाकर मुझे खिलाया गया था। तबसे अुस पर मेरी श्रद्धा जमी हुआी है। आंवकी वजहसे जब आंतोंमें घाव हो जाते हैं तब अुन्हें भरनेमें यह चूरा मदद करता है; और घाव भरनेके बाद वह अपने-आप पेटके बाहर निकल जाता

है। पत्थरका चूरा हजम थोड़े ही हो सकता है! पेटमें रहे तो रोग हो जाय। मगर वह अपना काम पूरा होते ही अुपकारके वचनोंकी वसूली करनेके लिअे भी अधिक दिन रहनेकी गलती नहीं करता।

अव तो चारों ओर काफी अंधेरा छा गया था। सर्वत्र भयानक अेकांत था। हमारी टोली अिस अेकांतको चीरती हुअी आगे चल रही थी, मानों अनन्त समुद्रमें कोअी नाव चल रही हो। हवा कुछ रुंधी हुअी-सी लगती थी। कव पानी गिरेगा, कहा नहीं जा सकता था। अूपर आकाशमें देखा तो काले काले वादलोंके वीच अेक ओर सिर्फ अेक तारका चमक रही थी। चमकती क्या थी? वेचारी वड़े दुःखके साथ झांक रही थी, मानो किसी वड़े मकानकी खिड़कीसे कोअी अेकाकी वृद्धा निर्जन रास्ते पर देख रही हो। हम आगे वढ़े। अव जमीन भी अच्छी खासी गीली थी। वीच-वीचमें पानी और कीचड़के गड्ढे भी आते थे।

अंधेरा खूव वढ़ गया। गड्ढोंमें से रास्ता निकालना कठिन-सा मालूम होने लगा। आगे जानेका अुत्साह वहुत कम हो गया। अैसे कठिन स्थान पर अंधेरी रातके समय हम यहां तक आये, अिसीको यात्राका आनंद मानकर हमने वापस लौटनेका विचार किया। मनमें डर भी पैदा हुआ — अैसे निर्जन और भयावने स्थानमें कहीं चोरोंसे मुलाकात न हो जाय!

कुछ लोगोंको अकेले यात्रा करते समय चोर-डाकुओंका डर मालूम होता है। जव समुदाय वड़ा होता है, तव यह डर मानो सवके वीच वंट जाता है और हरेकके हिस्से वहुत कम आता है। फिर अेक-दूसरेके सहारे हरेक अपना अपना डर मन ही मनमें दवा भी सकता है। कुछ लोगोंका अिससे विलकुल अुलटा होता है। अकेले होने पर अुन्हें अपनी कोअी परवाह नहीं होती। अपना कुछ भी हो जाय। मार-पीटका प्रसंग आ जाये तो जी-भर लड़ते हुअे शानके साथ सारे वदन पर मार खानेमें विशेष नुकसान नहीं लगता। और यदि अहिंसक वृत्ति हो तो विना गुस्सा किये और विना डर कर भागे मार खाते रहनेमें अनोखा आनन्द आता है। सत्याग्रही

वृत्तिसे खायी हुआी मारका असर मारनेवाले पर ही होता है; क्योंकि अहिंसक मनुष्यको मारनेवालेकी अपने ही मनके सामने प्रतिक्षण फजीहत होती है।

मगर जब बड़ी टोलीके साथ होते हैं, तब भरोसा नहीं होता कि कौन किस प्रकार व्यवहार करेगा। बच्चे और औरतें यदि साथ हों तब कुछ अलग ही ढंगसे सोचना पड़ता है। अपने-आपको खतरेमें डालनेमें जो मजा आता है, वह अैसे असबरों पर अनुभव नहीं होता। सभी सत्याग्रही हों तो बात अलग है। किन्तु बड़ी खिचड़ी-टोली साथमें लेकर खतरेके स्थान पर कभी भी नहीं जाना चाहिये। श्रीकृष्णके कुटुम्ब-कबीलेको ले जानेवाले वीर अर्जुनकी भी क्या दशा हुआी थी, यह तो हम पुराणोंमें पढ़ते ही हैं।

अैसे अंधेरेमें शिलाओंके बीचसे कहां तक जायें और वहां क्या देखनेको मिलेगा, अिसकी कुछ कल्पना ही नहीं थी। अतः मनमें आया, यहींसे वापस लौटना अच्छा होगा। अितनेमें दाहिनी ओर अेक छोटी-सी टूटी-फूटी कुटिया दीख पड़ी। अैसे निर्जन स्थानमें चोर भी चोरी काहेकी करेंगे? मगर चोरी करके थकने पर शांति और निश्चिन्तताके साथ बैठनेके लिअे यह स्थान बहुत सुन्दर है। चोरोंको ढूंढ़ने निकलने-वाले लोगोंको यहां तक आनेका खयाल भी नहीं आयेगा। तो क्या अिस कुटियामें निरंजनका ध्यान करनेवाला कोअी अलख-अुपासक साधु रहता होगा? हम कुटियाके नजदीक गये। अंदर कोअी नहीं था! तब तो यह कुटिया साधुकी नहीं हो सकती। फकीर दिनभर कहीं भी घूमता रहे; रातको अपनी मसजिदमें आना वह कभी नहीं भूलेगा। और बाबाजी रात बाहर कहीं बितानेके बजाय अपनी सहचरी धूनीके संपर्कमें ही बितायेंगे।

तब यह कुटिया मछलियां मारनेवाले किसी मच्छीमारकी होगी। किसीकी भी हो, हमें अिससे क्या मतलब? आजकी रात हमें यहां थोड़ी बितानी है? जरा आगे जाने पर यकीन हुआ कि रास्ता ठीक न होनेसे अंधेरेमें अिससे आगे जाना खतरा मोल लेना है। अतः मैंने हुक्म छोड़ा: 'चलो, अब वापस लौटें।' अितनेमें मानो सत्त्व-परीक्षा

पूरी हो गअी हो, अिस खयालसे बादल जरा हटे और ठीक हमारे सिर पर विराजित चंद्रने 'पश्याश्चर्याणि भारत!' कहकर आसपासका प्रदेश प्रकाशित कर दिया। सूर्य सब कुछ प्रकट कर देता है, अिसलिअे अुसके प्रकाशमें कोअी काव्य नहीं होता। अंधेरी रातमें आकाशके सितारोंमें विचरनेवाली दृष्टिको चंद्र पृथ्वी पर भेज देता है और कहता है: 'थोड़ा आंखोंसे देखो और बाकीका सब कल्पनासे भर दो।'

चंद्रने कुछ मदद की और दूर दूरसे धुवांधारका घोष भी सुनाअी देने लगा। मेरा हुक्म अेक ओर रह गया और सब अपने पैर तेजीसे अुठाने लगे। जरा आगे गये कि धुवांधार दीख पड़ा! मानो दूधका स्रोत बह रहा हो!! सर-सर धब-धब! सुलमुल धब-धब! करर्रर्र धब-धब! धब-धब; धब-धब! अुन्मत्त पानी बहता ही जा रहा था। और अुसमें से निकलनेवाली सीकर-वृष्टि सर्वत्र फैल रही थी। वृष्टि काहेकी? तुषारका फव्वारा ही समझ लीजिये। कितना अतिथिशील! अिन सूक्ष्म जीवन-कणोंने हमारे अिन जीवन-क्षणोंको सार्थक कर दिया। चंद्र प्रसन्नतासे हंस रहा था, पानी खेल रहा था, तुषार अुड़ रहे थे, हवा झूम रही थी और हम मस्तीमें डोल रहे थे। अिधर देखिये, अुधर देखिये, कैसा मजा है! आदि अुद्गारोंका प्रपात भी देखते ही देखते शुरू हो गया। भिन्न भिन्न ॠतुओंमें धुवांधार कैसा दिखाअी देता है, अिसका वर्णन हमारे साथ आये हुअे स्वयंसेवक पथदर्शकने शुरू किया। यहां लोग तैरने कैसे जाते हैं, कहांसे कूदते हैं, गरमीके दिनोंमें धुवांधारकी अूंचाअी कितनी होती है, आदि बहुत-सी जानकारी अुसने हमें दी। और अपनी जानकारी तथा रसिकताके लिअे अुसने हमसे अपनी कद्र भी करवा ली। अब सब शांत हो गये और अेकध्यानसे धुवांधारके साथ अेक-रूप होनेमें मग्न हो गये। कितना भव्य और पावन दर्शन था! अरणिके मंथनसे प्रथम गरमी पैदा होती है; फिर धुवां निकलता है; धुवां बढ़ने पर अुसमें से चिनगारियां अुड़ती हैं और फिर लपटें निकलने लगती हैं। अिसी तरह निसर्ग-यात्रासे प्रथम कुतूहल जाग्रत होता है, कुतूहलमें से अद्भुतता पैदा होती है, और अद्भुतताके काफी मात्रामें अेकत्र होने पर यकायक भक्तिकी अूर्मियां बाहर आती हैं। 'चलो, हम यहां

शिला पर वैठकर प्रार्थना करें।' प्रार्थनाके लिअे अितना पवित्र स्थान और अितना शुभ समय हमेशा नहीं मिलता। सब तुरन्त वैठ गये और 'यं ब्रह्मा वरुणेन्द्र . . .' की ध्वनि धुवांधारके कानों पर पड़ी।

जिस प्रकार भिन्न भिन्न समय पर भिन्न भिन्न राग गाये जाते हैं, अुसी प्रकार भिन्न भिन्न स्थलों पर मुझे भिन्न भिन्न स्तोत्र सूझते हैं। हिन्दुस्तानके दक्षिणमें कन्याकुमारी मैं तीन वार गया, तव मुझे गीताका दसवां और ग्यारहवां अध्याय सूझा। विभूतियोग और विश्व-दर्शनयोगका अुत्कट पाठ करनेके लिअे वही अुचित स्थान था। और जव सीलोनके मध्यभागमें — अनुराधापुरके समीप — महेन्द्र पर्वतके शिखर पर संध्यास्तके समय पहुंचा था, तव पाटलिपुत्रसे आकाशमार्ग द्वारा आकर अिस शिखर पर अुतरे हुअे महेन्द्रका स्मरण करके मैंने औशावास्योपनिषद् गाया था। दैव जाने अनात्मवादी वुद्ध-शिष्योंकी आत्माको औशोपनिषद् सुनकर कैसा लगा होगा! और पूनासे जव शिवनेरी गया, तव मसजिदकी अूंची दीवारोंकी सीढ़ियां चढ़कर दूरसे श्री शिवाजी महाराजके वाल्यकालकी क्रीड़ाभूमिके दर्शन करते समय न मालूम क्यों मांडुक्योपनिषद् गाना मुझे ठीक लगा था। यह अुपनिषद् श्रीसमर्थको प्रिय था, अैसा माननेका कोअी सवूत नहीं है। फिर भी 'नान्त:प्रज्ञं न वहि:प्रज्ञं नोऽभयत: प्रज्ञं न प्रज्ञानघनम् न प्रज्ञं नाप्रज्ञम्।' यह कंडिका वोलते समय मैं शिव-कालीन महाराष्ट्रके साथ तथा आत्मारामकी अभेद-भक्ति करनेवाले साधु-सन्तोंके साथ विलकुल अेकरूप हो गया था। अुस समय मनमें यह भाव अुठा था — 'मैं नहीं चाहता यह अलग व्यक्तित्व; अेकरूप सर्वरूप हो जायं अिस समस्त दृश्यके साथ।' धुवांधारकी मस्ती तथा अुसके तुपारोंका हास्य देखकर यहां स्थितप्रज्ञके श्लोक गाना ठीक लगा।

अुत्कट भावनाओंका सेवन लम्वे समय तक करते रहना जरूरी नहीं है। अेक आलापमें अेक अखिल भावसृष्टिको समाया जा सकता है। अेक जलविंदुमें प्रचण्ड सूर्य भी प्रतिविम्वित हो सकता है। अेक दीक्षामंत्रसे युगोंका अज्ञान हटाया जा सकता है। अेक क्षणमें हमने धुवांधारके वायुमंडलको अपना वना लिया। आंखोंकी

शक्ति कितनी अजीव होती है! धुवांधारका पान मुंहसे करना असंभव था। हम कुंभ-संभव अगस्ति थोड़े ही थे! मगर हमारी दो नन्ही पुतलियोंने अखंड वहनेवाले अिस प्रपातका आ-कंठ पान किया। मुझे लगता है कि अैसे दृक्-पानको 'आ-कंठ' कहनेके वदले 'आ-पलक' कहना चाहिये। हम सबने अपनी अपनी आंखोंमें यह लूट अेक क्षणमें भर ली और वापस लौटे। हमारा यह भूतोंका संघ तरह तरहकी वातें करता हुआ तथा गर्जना करता हुआ मोटरके अड्डे पर आ पहुंचा।

यहां भेड़ाघाटकी संगमरमरकी शिलायें देखकर लौटी हुअी टोली हमसे मिली। अेक-दूसरेके अनुभवोंका आदान-प्रदान करके हमने अिस टोलीको वुजुर्गाना सलाह दी कि 'अिस समय धुवांधार जाना वेकार है। आप तैल-वाहनमें वैठकर सीधे जवलपुर चले जाअिये। आप जहां हो आये हैं वहां थोड़ा नौका-विहार करके हम तुरन्त लौट आयेंगे।' मालूम नहीं, हमारी यह सलाह अुन्हें पसंद आयी या नहीं। मगर अुसको माने सिवा अुनके लिअे कोअी चारा नहीं था।

रास्तेकी ओरसे अुतरते हुअे और अंधेरेमें लड़खड़ाते हुअे हम प्रवाहके किनारे तक पहुंचे और दो टोलियोंमें बंटकर दो नावोंमें चढ़ वैठे। हमारी नाव आगे वढ़ी। सर्वत्र शांतिका ही साम्राज्य था और अुसकी गहराअीकी मानो थाह लगानेके लिअे वीच वीचमें हमारी नावकी पतवारें तालवद्ध आवाज करती थीं। चंद्र अपनी टिमटिमाती मशाल सिर पर रखकर मानो यह सुझा रहा था: 'आसपासकी यह शोभा दिनके समय कैसी मालूम होती होगी अिसकी कल्पना कर लीजिये।' कअी स्थानों पर विलकुल अंधेरा था। वीच वीचमें चांदनीके धब्बे दिखाअी पड़ते थे। आकाश निरभ्र न था। अिसलिअे चांदनी छाछके समान पतली वन गअी थी। आकाशके वादल वीच वीचमें मलमलके जैसे पतले दीख पड़ते थे, अतः अुनकी ओर भी ध्यान खिंच जाता था। दोनों ओर संगमरमरकी शिलायें कितनी अूंची मालूम होती थीं! अूंची और भयावनी। मानो राक्षसोंका समूह वैठा हो! और अिन

शिलाओंके वीचसे नर्मदाका प्रवाह मोड़ ले लेकर अपना चक्रव्यूह रच रहा था।

अूंची अूंची शिलायें या पहाड़ जहां अेक-दूसरेके वहुत पास आ जाते हैं, वहां 'प्राचीन कालमें अेक सरदारने अपने घोड़ेको अेड़ लगाकर अिस शिखरसे सामनेके शिखर तक कुदाया था' जैसी दंतकथा चलती ही है। वंदर तो सचमुच अिस प्रकार कूदते ही हैं। यहां भी आपको अिस प्रकारकी दंतकथायें नाववालोंके मुंहसे सुननेको मिलेंगी।

यहां अिन शिलाओंके वीच कअी गुफाअें भी हैं। अिनमें अृषि-मुनि ध्यान करनेके लिअे अवश्य रहते होंगे। और मध्ययुगमें राज-कुलोंके आपद्ग्रस्त लोग तथा स्वतंत्रताकी साधना करनेवाले देशभक्त भी यहीं आत्मरक्षाके लिअे छिपते रहे होंगे। और फिर छछूंदरोंकी तरह नावें अिन लोगोंको गुप्त रूपसे आहार, समाचार और आश्वासन पहुंचाती रहती होंगी। अिन गुफाओंको यदि वाचा होती, तो अितिहासमें जिसका जिक्र तक नहीं है, अैसा कितना ही वृत्तांत वे हमें वतातीं।

खोहके वीचोंवीच नावसे जाते हुअे हम अेक अैसे स्थान पर आ पहुंचे, जिसे शांतिका गर्भगृह कह सकते हैं। यहां हमने पतवारें वंद करवायीं, और अिस डरसे कि कहीं शांतिमें भंग न हो जाय हमने श्वास भी मंद कर दिया। प्रार्थनाके श्लोक हमने वहां गाये या नहीं, अिसका स्मरण नहीं है। किन्तु मैंने मन ही मन सोलह अृचाओंका पुरुप-सूक्त वड़ी अुत्कटताके साथ वहां गाया। वादमें लगा कि अितनी शांतिमें तो अपने-आप समाधि ही लगनी चाहिये। पता नहीं कितना समय नौका-विहारमें वीता। अितनेमें डव डव डव करती हुअी दूसरी नाव वहां आ पहुंची। अुसमें जो टोली थी अुसने अेक मंजुल गीत छेड़ा। आसपासकी खोहें अिसकी प्रतिध्वनि करें या न करें अिस दुविधामें संकोचसे अुत्तर दे रही थीं।

नाववालेने कहा, 'अव अिससे आगे जाना असंभव है; यहांसे लौटना ही चाहिये।' अतः दौड़ते मनको पीछे खींचकर हम वोले: 'चलो! पुनरागमनाय च!'

अब यदि जाना हो तो वर्षाके अंतमें, चांदनीके दिन देखकर, दिनरात अिस मूर्तिमंत काव्यमें तैरते रहनेके लिअे ही जाना चाहिये। सचमुच, यह रमणीय स्थान देखकर मनने निश्चय किया कि यदि फिर कभी यहां आना न हो, तो यहांसे निकलना ही नहीं चाहिये।

अक्तूबर, १९३७

४४

धुवांधार

अेक, दो, तीन। धुवांधार अभी अभी मैंने तीसरी बार देख लिया। धुवांधार नाम सुन्दर है। अिस नाममें ही सारा दृश्य समा जाता है। किन्तु अबकी बार अिस प्रपातको देखते देखते मनमें आया कि अिसको धारधुवां क्यों न कहूं? धार गिरती है, फव्वारे अुड़ते हैं और तुरन्त अुसके तुषार बनकर कुहरेके बादल हवामें दौड़ते हैं। अतः धारधुवां नाम ही सार्थक लगता है। मगर यह नाम चल नहीं सकता!

जबलपुरसे गोल गोल पत्थर तथा चमकीले तालाब देखते देखते हम नर्मदाके किनारे आ पहुंचते हैं। रास्तेका दृश्य कहता है कि यह काव्यभूमि है। चारों ओर छोटे-बड़े पेड़ खेल खेलनेके लिअे खड़े हैं। बगलमें अेक बड़ा टीला टूट कर गिर पड़ा है। किन्तु अुसके सिर पर खड़े पेड़ अपनी आधी जड़ें अलग पड़ जाने पर भी शोकमग्न या चिंतातुर नहीं मालूम होते। अैसे पेड़ोंसे जीवन-दीक्षा लेकर ही आगे बढ़ा जा सकता है।

टीला टूटता तो है, किन्तु टूटा हुआ हिस्सा आसानीसे जमींदोज नहीं होता। अिस टीलेने अेक दो मीनार और अेक बड़ा शिखर बना लिया है, जो कहते हैं कि यदि विनाशमें से भी नयी सृष्टिकी रचना न कर पायें तो हम कल्प-कवि कैसे? टीलेके अूपरसे नीचेके पत्थरों और पानीका दृश्य दृढ़ता और तरलताके विचार अेक ही साथ

मनमें पैदा कर रहा था। पुल पार करके हम आगे आये और योगिनियोंकी टेकरीके नीचेका कओी वार देखा हुआ सामान्य दृश्य देखा। यह दृश्य अितना गरीव है कि अुसके प्रति गुस्सा नहीं आता। यहां गरीव कारीगर पत्थरोंसे छोटी-वड़ी चीजें वनाकर वेचनेके लिअे वैठते हैं। सफेद, काले, लाल, पीले, आसमानी और रंगविरंगे संगमरमरके शिवलिंगोंकी वगलमें संग-जराहतके डिव्वे, शिवालय, हाथी और अन्य छोटे-वड़े खिलौने मानो स्वयंवर रचकर खड़े रहते हैं। जिसकी नजरमें जो जंच जाता है वह अुसे अुठाकर ले जाता है। आज ये खिलौने अेक आसन पर वैठे हुअे हैं। कल न मालूम कौनसा खिलौना कहां चला जायगा? कुछ तो हिन्दुस्तानके वाहर भी जायंगे। और वहां वरसों तक धुवांधारका धारावाहिक संगीत याद करके चुपके चुपके सुनायेंगे।

यहांसे धुवांधार तक पैदल जानेकी तपस्या मैंने दो वार की थी। पहली यात्रा रातके समय की थी। दूसरी सुवह स्नानके समय की थी। हरेकका काव्य अलग ही था। आज तीसरा प्रहर पसंद किया था। अिस समय अधिक तपस्या नहीं करनी पड़ी। व्यौहार राजेन्द्रसिंहजीने अपना तैल-वाहन (मोटर) दिया था, अतः हम लगभग धुवांधार तक विना कष्टके पहुंच गये। संग-जराहतके खेतके पास अुतरकर, वहांकी तीन दुकानें पार करके, पत्थरोंके वीचसे होकर हम धुवांधार पहुंचे। पत्थर ज्यों ज्यों अड़चनें पैदा करते थे, त्यों त्यों चलनेका मजा वढ़ता जाता था। अैसा करते करते हम धुवांधारके पास पहुंचे।

प्रपात यानी जीवनका अधःपात। मगर यहां वैसा मालूम नहीं होता। पहली वार गये थे दिसंवरमें और अंधेरेमें। आकाशके वादल चांदके खिलाफ षड्यंत्र रचकर वैठे थे। अतः चांदनी रात होते हुअे भी वहां अमावास्याकी-सी भीषणता थी। अमावास्याकी रातमें आकाशके सितारे अिस भीषणताको हंसकर अुड़ा देते हैं। मगर वादलोंके सामने अिसकी भी आशा न रही। परिणामस्वरूप अुस रातको स्वयं धुवांधारको अपनी भव्यतासे हमें प्रसन्न करना पड़ा। रातकी प्रार्थना करके हमने वह आनंद हजम किया और वापस लौटे।

दूसरी बार गये थे त्रिपुरी कांग्रेसके बाद करीब नौ-दस बजे की बढ़ती हुअी धूपके स्वागतका स्वीकार करते हुअे। धुवांधारके संपूर्ण दर्शन हम अुसी समय कर पाये थे। मार्चका महीना था। अतः पानीमें गरमीकी अृतुका अकाल न था। पहाड़ीकी कुछ टेढ़ीमेढ़ी खुरदरी सीढ़ियां अुतरकर हमने नीचेसे धुवांधारको गिरते देखा था। पानीकी वह गति और फव्वारेकी वह चंचलता चित्तको आश्चर्यकारक ढंगसे स्थिर करती थी। पानीकी ओर अनिमेष देखते ही रहें तो अैसा अनुभव होता है मानो नवनवोन्मेषशालिनी धारायें वेगकी समाधि लगाकर खड़ी हैं! अिसी समय मैं देख सका कि वहांके काअीवाले पत्थर अूपरसे चाहे जैसे दीखते हों, लेकिन अंदरसे तो वे प्रेमका रंग खिलानेवाले (लाल रंगके) ही हैं। पानीके जोरके कारण पत्थरका अेक टुकड़ा अुड़ गया था और अंदरका गुलाबी लाल रंग साफ दिखाअी देने लगा था, मानो अुसे घाव पड़ गया हो।

धुवांधार देखनेका अच्छेसे अच्छा समय है दीपावलीका। बारिश न होनेसे रास्तेमें कहीं कीचड़ नहीं था। वर्षा अृतुमें जब आते हैं तब सारा प्रदेश जलसे भरा होनेके कारण प्रपातके लिअे गुंजाअिश ही नहीं होती। जहां हृदयको हिला देनेवाला प्रपात है, वहीं वर्षा अृतुमें सिरमें चक्कर लानेवाले भंवर दिखाअी देते होंगे। अिन भंवरोंका रुद्र स्वरूप देखनेके लिअे यदि यहां तक आया जा सकता हो, तो मैं यहां आये बिना नहीं रहूंगा। भंवर क्रान्तिका प्रतीक है। अुसका आकर्षण कुछ अनोखा ही होता है। कभी कभी मौतको न्योता देनेवाला भी!

दीपावलीके समय जलराशि सबसे अधिक पुष्ट, प्रपातकी शोभा सबसे अधिक समृद्ध, और मीठी धूपके सेवनके बाद तुषारके बादलोंकी चुटकियां सबसे अधिक आह्लादक होती हैं। आजका दृश्य वैसा ही था, जैसी हमने आशा रखी थी। तुषारके बादल दूरसे ही नजर आते थे। रसोड़ेका धुआं देखकर जिस प्रकार अतिथिको आनंद होता है, अुसी प्रकार अिस धुअेंके बादलको देखकर ही मैं कल्पना कर सका कि आज किस प्रकारका आतिथ्य मिलनेवाला है। धारधुवां जैसा प्रपात

जब देखनेके लिअे जाते हैं, तब वहां बनाया हुआ पटियेका कामचलाअू छोटा पुल भी कलापूर्ण और आतिथ्यशील मालूम होने लगता है। हम परिचित किनारे पर जाकर बैठे ही थे कि स्नेहार्द्र पवनने तुषारकी अेक फुहार हमारी ओर भेजकर कहा, 'स्वागतम्', 'सुस्वागतम्'! अेक क्षणके अंदर हमारा सारा श्रम-स्वेद अुतर गया। हम ताजे हो गये और ताजी आंखोंसे धुवांधारको देखने लगे।

धुवांधार यानी पत्थरोंके विस्तारमें बनी हुअी अर्धचंद्राकार घाटी। अुसमें से जब पानीका जत्था नीचे कूदता है तब बीचमें जो कांचके जैसा हरा रंग दीख पड़ता है, वह जहरके समान डर पैदा करता है। अुसकी बाअीं ओर यानी हमारी दाअीं ओरकी शिला हाथीके सिरकी तरह आगे निकली हुअी है। अुस परसे जब पानी नीचे गिरता है तब मालूम होता है मानो असंख्य हीरोंके हार अेक अेक सीढ़ी परसे कूदते-कूदते अेक-दूसरेके साथ होड़ लगा रहे हैं। ज्यों ज्यों वे कूदते जाते हैं त्यों त्यों हंसते जाते हैं, और पानीको पींज पींजकर अुसमें से सफेद रंग तैयार करते जाते हैं। बीचका मुख्य प्रपात घाटीमें गिरते ही अितने जोरोंसे अूपर अुछलता है कि आतिशबाजीके बाणोंको भी अुससे अीर्ष्या हो सकती है। अेक फव्वारा अूपर अुड़कर जरा शिथिल पड़ता है कि अितनेमें दूसरे फव्वारे नये जोशसे अुसके पीछे पीछे आकर और धक्का देकर अुसे तोड़ डालते हैं और फिर अुसके जलकण पृथ्वीके आकर्षणको भूलकर धुअेंके रूपमें व्योम-विहार शुरू कर देते हैं। ये तुषार जरा अूपर आते हैं कि पवनके झोंके अुन्हें अुड़ाते अुड़ाते चारों ओर फैला देते हैं। धुअेंकी ये तरंगें जब हवामें हलके-गाढ़े रूपमें दौड़ती हैं, तब बादलके अत्यन्त सुन्दर बेलबूटे दिखाअी देते हैं।

और नीचे! नीचेके पानीकी मस्तीका वर्णन तो हो ही नहीं सकता। पानी मानो अद्वैतानंदमें खिल पड़ा। जितना नीचे गिरा, अुतना ही अूपर अुड़ा। अुसने हरे रंगमें से सफेद फेन पैदा किया और जीमें आया वैसा विहार किया। अिस अपूर्व आनंदको याद करके नीचेका पानी बार बार अुमर आता था। चोवीबाट परके साबुनके पानीकी अुपमा यदि अरसिक न होती तो नीचेके पानीके अुभारकी तुलना मैं

अुसीसे करता। मगर धोबीके सावुनका पानी गंदा होता है। अुसमें गति और मस्ती नहीं होती; वेपरवाही और तांडव भी नहीं होता। और न हास्य फीका पड़ते ही चेहरे पर फिरसे निर्मल भाव धारण करनेकी कला अुसके पास होती है। यहांका पानी देखकर धोवीघाटका स्मरण ही क्यों हुआ? अुसमें किसी प्रकारका औचित्य ही नहीं था!

मनुष्य यदि समाधिकी मस्ती चाहता हो, तो अुसे यहां आना चाहिये। अुसे किसी भी कारणसे निराश नहीं होना पड़ेगा।

अिस ओरके (दायें) टीलेकी दो सीढ़ियां अवकी वार मैं फिर अुतरा। अिस वार यहां अुपनिषद् सूझा। अूपर सूरज तप रहा था और मैं गा रहा था —'पूपन्नेकर्षे! यम! सूर्य! प्राजापत्य! व्यूह रश्मीन्; समूह तेजो।' जव पाठका अंत करीव आया और मैं वोला 'ॐ क्रतो स्मर; कृतं स्मर।' तव यकायक तीन-चार सालका मेरा सारा जीवन अेकसाथ अिस जीवन-धाराके सामने खड़ा हुआ और मुझे लगा मानो मैं अपना जीवन अिस मस्त जीवनकी कसौटी पर कस रहा हूं और यह देखकर कि वह पूरी तरह खरा अुतर नहीं रहा है, परेशान हो रहा हूं। दूसरे ही क्षण अिन तीन वर्षोंकी स्मृतिके भी तुपार वनकर आकाशमें अुड़ गये और मैं प्रपातके साथ अेकरूप हो गया। सचमुच यह प्रपात पूर्ण है। और मैं भी अिस पूर्णका ही अेक अंश हूं, अतः तत्त्वतः पूर्ण हूं। हम दोनों वि-सदृश नहीं हैं; अेक ही परम तत्त्वकी छोटी-वड़ी विभूतियां हैं। यह भान जाग्रत होते ही चित्त शांत हुआ और मैं अूपर आया।

चि० सरोजिनी भी यह सारा दृश्य अुत्कट नयनोंसे अघाकर पी रही थी। अिस सारे आनंदको किस तरह समझें, किस तरह हजम करें और किस तरह व्यक्त करें, अिस वातकी मीठी परेशानी अुसकी आंखोंमें दिखाअी दे रही थी।

यहांसे तुरन्त लौटकर चौंसठ योगिनियोंके दर्शन करने थे; नर्मदा-प्रवाहके रक्षक सफेद, पीले, नीले पहाड़ देखने थे। अतः वह जिस प्रकार पीहरसे ससुराल जाते समय दोनों ओरके सुख-दुःखके

मिश्रित भाव अनुभव करती हुअी जाती है, अुसी प्रकार धुवांधारको हार्दिक प्रणाम करके हम वापस लौटे।

हिन्दुस्तानमें अिस प्रकारके अनेक प्रपात अखंड रूपसे बहते रहते हैं और मनुष्यको भव्यताके तथा अुन्मत्त अवस्थाके सबक सिखाते रहते हैं। हजारों साल हुअे — लाखों नहीं हुअे अिसका विश्वास नहीं है — धुवांधार अिसी तरह सतत गिरता रहा है। श्रीरामचंद्रजी यहां आये होंगे। विश्वामित्र और वशिष्ठ यहां नहाये होंगे। चंद्रगुप्त और समुद्रगुप्तके सैनिकोंने यहां आकर जल-विहार किया होगा। श्री शंकराचार्यने यहां बैठकर अपने स्तोत्रोंका सर्जन किया होगा। कलचुरि तथा वाकाटक वंशके वीरोंने अिसी पानीमें अपने घावोंको धोया होगा और अल्हणादेवीने यहीं बैठकर चौंसठ योगिनियोंका स्मारक बनानेका संकल्प किया होगा। और भविष्यकालमें धुवांधारके किनारे क्या क्या होगा, कौन बता सकता है? खुद धुवांधारको ही यह मालूम नहीं है। वह तो सतत गिरता रहता है और तुषारके रूपमें अुड़ता रहता है।

नवंबर, १९३९

४५

शिवनाथ और अीब

कलकत्ता आते और जाते समय अनेक नदियोंसे मुलाकात होती है। अिस प्रदेशका अितिहास मुझे मालूम नहीं है, अिसकी शर्म आती है। यहांके लोग कितने सरल और भले मालूम होते हैं! अुन्होंने यदि मनुष्य-संहारकी कला हस्तगत की होती, तो अुनका नाम अितिहासमें अमर हो जाता। कुछ लोग मरकर अमर होते हैं। कुछ लोग मारनेवालोंके रूपमें अमर होते हैं। मलिक काफूर, काला पहाड़ आदि दूसरी कोटिके लोग हैं।

अिन नदियोंके किनारे लड़ाअियां हुअी हों तो मुझे मालूम नहीं। अिसलिअे मेरी दृष्टिसे अिन नदियोंका जल फिलहाल तो विशेष पवित्र है।

चर्मण्वतीने यज्ञ-पशुओंके खूनका लाल रंग धारण किया। शोण और गंगाने सम्राटोंका महत्त्वाकांक्षी रक्त हजम किया। अिन नदियोंने भी वैसा ही किया हो तो कोअी आश्चर्य नहीं। मगर जब तक मुझे मालूम नहीं है, तब तक अिस अनिश्चयका लाभ मैं अुन्हें देता हूं।

किन्तु अिन नदियोंके किनारे कअी साधुओंने तप अवश्य किया होगा और कृतज्ञतापूर्वक अुनके स्तोत्र भी गाये होंगे। यह भी मुझे मालूम नहीं है। फिर भी मैं अपनेको भारतवासी कहता हूं!

* * *

अेक बार मैं द्रुग गया था तब शिवनाथ नदीका मुझे थोड़ा परिचय हुआ था। गोंड़, भील आदि पर्वतीय जातियोंकी वह माता है। सारे छत्तीसगढ़की तो वह स्तन्यदायिनी है। अुसकी करुण कथा* चित्तको गमगीन करनेवाली है। पुण्य-सलिला नदीकी कहानी क्या अैसी होती है? किन्तु नदी बेचारी क्या करे? विजयी आर्योंने यदि अुसकी कथा गढ़ी होती तो अुसमें अुल्लासका तत्त्व मिल जाता। यह तो हारी हुअी, दबी हुअी और अुलझनमें पड़ी हुअी आदिम-निवासियोंकी जातिके संस्मरणोंके साथ बहनेवाली नदी है! अुसकी कहानियां तो वैसी ही गमगीनी-भरी होंगी।

कलकत्तेके रास्ते पर शिवनाथ नदी बार बार मिलती है और कहती है: 'राजाओंके और साधुओंके अितिहाससे तुम संतोष मत मानना। विजेताओंके और सम्राटोंके अितिहासमें तुम्हें लोक-हृदय नहीं मिलेगा। ब्राह्मण और श्रमण, मुल्ला और मिशनरी, किसीने भी जिनका दुःख नहीं जाना अैसे पहाड़ी लोगोंके दुःख-दर्दका अध्ययन करनेकी दीक्षा मैं तुम्हें दे रही हूं। क्या यह दीक्षा लेनेका साहस तुममें है?'

हिन्दुस्तानकी मूक जनताको वाचाल अेकता देनेके हेतुसे मैं हिन्दुस्तानीका प्रचार कर रहा हूं। अिसी कामके सिलसिलेमें अभी मैं पूना हो आया। अिसी कामके लिअे अब रामगढ़ जा रहा हूं। वहांकी कांग्रेसमें तमाम प्रांतोंके लोग आयेंगे। गांधीजीके आग्रहके कारण कांग्रेसके

---

* देखिये 'दुर्दैवी शिवनाथ'।

अधिवेशन अब देहातोंमें होने लगे हैं। यह सब ठीक है। मगर क्या रामगढ़में भी ये पर्वतीय लोग आयेंगे? बिहारके 'सान्थाल' और 'हो' शायद आयेंगे। किन्तु पता नहीं अिस शिवनाथके पुत्र आयेंगे या नहीं।

*　　　*　　　*

आज सुबहसे अनेक नदियां देखीं। लंबे लंबे और चौड़े पत्थरोंवाली नदी भी देखी और कीचड़वाली नदी भी देखी। जिसके किनारे अेक भी पेड़ नहीं है अैसी नदी भी देखी, और जिसने अेक ओर पेड़ोंकी अेक मोटी दीवार खड़ी की है अैसी नदी भी देखी। सफेद बगुले अुसके पट पर कीचड़में अपने पैरोंकी आकृतियां बना रहे थे। मगर अिस चरण-लिपिमें मैं कोअी अितिहास नहीं पा सका, न किसी दंतकथाका हल खोज सका। नदी आशासे लिखती जाती है और निराशासे अपना लिखा लेख मिटाती जाती है। और नये लेखक-पाठकोंकी राह देखती रहती है।

हम झारसूगुडा जंक्शनके पास जा रहे हैं। अेक छोटा-सा स्टेशन पास आ रहा है। अितनेमें हमारे रास्तेके नीचेसे बहती हुअी अेक सुन्दर नदी हमने देखी। सभी नदियां सुन्दर होती हैं, मगर अिस नदीमें असाधारण सुन्दर आकृतियां बनानेकी कला नजर आयी। पानीके स्रोतमें भंवर पैदा होते होंगे। काअीके कारण पानीको विशेष रूप प्राप्त होता होगा। अूपरसे यह सब देखकर मुझे रवीन्द्रनाथके चित्र याद आये। अिस नदीकी आकृतियां भी बिना कुछ बोले, बिना कोअी बोध दिये, हृदय तक पहुंचती थीं और वहां हमेशाके लिअे अपनी छाप डाल देती थीं। अिसीका नाम है सच्ची कला!

मगर अिस नदीका नाम क्या है? परिचय हो और नाम न मिले, यह कितनी विचित्र स्थिति है! अितनेमें अीब स्टेशन आया। हमने लोगोंसे पूछा, 'अिस नदीका नाम क्या है?' अुन्होंने बताया 'अीब'। 'नदीके नाम परसे ही स्टेशनका नाम पड़ा है।' तब अुसमें औचित्य नहीं है, अैसा कौन कहेगा? मगर मनमें संदेह जरूर पैदा हुआ। यहां भेडेन नामक अेक नदी अीबसे मिलती है। स्टेशन भेडेनके किनारे है। अीब जरा बड़ी है; अिसी कारण भेडेनके साथ

अन्याय करके अुसका नाम स्टेशनको नहीं दिया गया। भेंडेन कोअी मामूली नदी नहीं है। काफी चौड़ी है। दूरसे आती है। मगर वह किसी तरहका गर्व न रखते हुअे अपना पानी औबको सौंप देती है और अपने नामका आग्रह भी नहीं रखती। मैंने औबसे पूछा: 'देखो, अुदारतामें यह भेंडेन तुझसे श्रेष्ठ है या नहीं?' औबने जरा-सा आकृतियोंवाला स्मित करके कहा: "यह तो तुम मनुष्य जानो! भेंडेनने अपना नाम छोड़कर अपना नीर मुझे दे दिया, अिस अुदारताकी तारीफ करनेके बजाय अुससे अर्पणकी दीक्षा लेकर अुसके जैसी बनना मुझे अधिक पसंद है। देखो, अुसका और मेरा नीर अिकट्ठा करके महानदीको देनेके लिअे मैं संबलपुर जा रही हूं। वहां मैं भी अपना नाम छोड़ दूंगी। अिस प्रकार अुत्तरोत्तर नामरूपका त्याग करनेसे ही हम सबको महानदीका महत्त्व प्राप्त हुआ है; और वह भी सागरको अर्पण करनेके लिअे ही।"

और जाते जाते औबने अनुष्टुभ् छंदमें अेक पंक्ति गा सुनाअी:

सर्वे महत्त्वम् अिच्छन्ति कुलं तत् अवसीदति।
सर्वे यत्र विनेतारः राष्ट्रं तन् नाशम् आप्नुयात्॥

* * *

औबका यह संदेश सुनकर ही मैं रामगढ़ गया।

मार्च, १९४०

४६
दुर्दैवी शिवनाथ

['शिवनाथ और अीव' लेखमें जिसका जिक्र आया है, अुस लोककथाका सार वेमेतरा-द्रुगसे लिखे हुअे नीचेके पत्रमें मिलेगा।]

कल और आज शिवनाथ नदीके दर्शन किये। यों तो कलकत्ता आते और जाते समय शिवनाथको अेक दो वार पार करना ही पड़ता है। यहां वड़े अूंचे पुल परसे शिवनाथका प्रवाह अूंचे अूंचे टीलोंके बीचमें बहता हुआ देखनेको मिलता है। कल शामको वालोड़से वापस लौटे तब शिवनाथके किनारे खास तौर पर घूमने गये थे।

चौमासा तो बैठ गया है, किन्तु नदीमें अभी तक पानी नहीं आया है। परिणाम-स्वरूप शिवनाथ किसी विरहिणीके जैसी म्लान-वदना मालूम पड़ी। श्रावण-भादोंमें जो अपने दोनों किनारोंको लांघ कर मीलों तक फैल जाती है, अुसी नदीको अिस तरह अपने ही पटमें अजगरके समान अेक कोनेमें पड़ी हुअी देखकर किसीके भी मनमें विषाद अुत्पन्न हुअे बिना नहीं रहेगा।

द्रुगके लोगोंसे शिवनाथके वारेमें मैंने पूछा: 'यह नदी कहांसे आती है? कितनी लंबी है? आगे अुसका क्या होता है?' परंतु कोअी मुझे ठीक जवाब नहीं दे सका। अिस नदीके माहात्म्यका वर्णन पुराणोंमें कहीं है? अुसके वारेमें कोअी लोकगीत प्रचलित है? कोअी दंतकथा सुनाअी देती है? अेक भी सवालका जवाब 'हां' में नहीं मिला। नदीके वारेमें जानने जैसा होता ही क्या है? रोज सुवह अुससे सेवा लेते हैं; वस, अुससे अधिक अुसका हमारे जीवनसे क्या संबंध है?

अंतमें मैंने द्रुग तहसीलका गेझेटियर मंगवाया। अुसमें अूपरके साधारण सवालोंके जवाब तो दिये ही हैं; मगर अिसके अलावा

शिवनाथके बारेमें अेक लोककथा भी दी हुअी है। यही कथा आज मैं यहां अपनी भाषामें देना चाहता हूं।

शिवा नामक अेक गोंड़ लड़की थी। जंगली गोंड़ जातिकी होते हुअे भी वह संस्कारी और रसिक थी। अुस पर गोंड़ जातिके ही अेक लड़केका दिल बैठ गया। लड़कीके दिलको आकर्षित कर सके, अैसा अेक भी गुण अुसमें नहीं था। स्वच्छंदतासे पेश आना और धमकियां देकर लोगोंसे काम निकालना, बस अितना ही अुसे मालूम था। वह शिवाका ध्यान करता रहता था और अुसे पानेका कोअी रास्ता न देखकर परेशान होता रहता था। आखिर अपनी जातिके रिवाजके अनुसार अुसने मौका देखकर शिवाका हरण किया और राक्षस-पद्धतिसे अुसके साथ विवाह किया!

विवाह-विधि पूरी करना अुसके लिअे आसान था; मगर शिवाको अपनी बनाना आसान काम नहीं था।

शिवा जैसी संस्कारी और भावनाशील लड़की अुसकी ओर भला क्यों देखने लगी? और यह जड़मूढ़ अनुनय जैसी चीजको क्या समझे? अुसने पतिकी हुकूमत चलानेकी कोशिश की। लड़कीने अबलाका सामर्थ्य प्रकट किया। शिवाको लूटकर लानेवाला युवक शिवाके रुद्ध हृदयके सामने हारा। अुसका क्रोध भड़क अुठा। शरीरको ही सब-कुछ समझनेवाला आदमी शरीरके बाहर जा ही नहीं सकता। अुसने अंतमें शिवाको मार डाला और अुसके शरीरके टुकड़े अेक गहरी घाटीमें फेंक दिये!!

जहां शिवाका शव गिरा वहींसे तुरन्त अेक नदी बहने लगी। वही है हमारी यह शिवनाथ, जो आगे जाकर महानदीमें अपना पानी छोड़ देती है।

आज सुबह हम बेमेतरा जानेके लिअे निकले। रास्तेमें अेक दुर्घटना हुअी। हमारी दौड़ती हुअी मोटर अेक बैलगाड़ीसे टकरा गअी और अेक बैलका सींग टूट गया। हम रुके और अुसकी मदद करनेके लिअे दौड़े। मुझे बैलका लटकनेवाला सींग काटनेकी सलाह देनी पड़ी। और जहांसे खून बह रहा था वहां पेट्रोलकी पट्टी बांधनी पड़ी।

सारा वायुमंडल करुण तथा गमगीन बन गया। अिस हालतमें शिव-नाथका दुबारा दर्शन हुआ। यहां नदीका पट सुन्दर है। आसपासके पत्थर जामुनी लाल रंगके थे। नदीका पात्र भी सुन्दर था। प्रतिबिंब काव्यमय मालूम होता था। मगर शिवाकी करुण कथा मनमें रम रही थी। अतः अिस दर्शनमें भी विषादकी ही छाया थी।

शायद शिवनाथकी तकदीर ही अैसी हो। आखिर मनका विषाद कम करनेके लिअे यह पत्र लिख डाला। अब दिल कुछ हलका मालूम होता है।

मअी, १९४०

४७

सूर्याका स्रोत

बारिशके होते हुअे हम कासाका सर्वोदय केंद्र देखने गये। वहां जानेके लिअे ये दिन अच्छे नहीं थे, अिसीलिअे तो हम गये। बारिशके दिनोंमें छोटी-छोटी 'नदियां' रास्ते परसे बहने लगती हैं, अुनमें पानी बढ़ने पर मोटर बसें भी घंटों तक रुकी रहती हैं। हमने सोचा कि हमारे सर्वोदय-सेवक हमारे आदिम-निवासी भाअियोंके बीच कैसे काम करते हैं यह देखनेका यही समय है।

भारतके पश्चिम किनारेके अेक सुंदर स्थानसे मेरा घनिष्ठ परिचय है। बम्बअीके अुत्तरमें करीब सौ मीलके फासले पर बोरडी-घोलवडका स्थान है। वहां मैं महीनों तक रहा था। और वहांके समुद्रकी लहरोंसे रोज खेलता था।* समुद्रका पानी भी जब भाटाके कारण पीछे हटता था तब मील डेढ़ मील तक पीछे चला जाता था। और सारा समुद्र किनारा गीले टेनिस कोर्टके जैसा हो जाता था। हम पांच-दस

* अिस स्थानका वर्णन मैंने अपने 'मरुस्थल या सरोवर' लेखमें विस्तारसे किया है।

लोग अिस गीली रेतीके मैदान पर होकर समुद्रकी लहरें ढूंढ़ने चले जाते थे। जब ज्वार आता तब पानीकी लहरें हमारा पीछा करती थीं और हम किनारेकी ओर दौड़ते आते थे। पानीकी लहरें धावा बोलें और हम अपनी जान लेकर किनारे तक दौड़ते आ जायें, यह खेल बड़े मजेका था। देखते देखते सारा खुला मैदान बड़े सरोवरका रूप ले लेता है और वायु पानीके साथ खेल करती है। अैसे खारे पानीमें और रेतीमें भी अेक जगह तरवडके पेड़ अुगे थे। अुनके चिकने-चिकने पत्ते देखकर मैं कहता कि ये बड़े 'होनहार बिरवान' हैं।

अिस विशाल सरोवर-मैदानमें अुदावरण*-प्रजाकी बहुत बड़ी सृष्टि बसी है। किस्म-किस्मके शंख, किस्म-किस्मके केकड़े और अैसे ही छोटे-मोटे प्राणी वहां रहते थे और अुनके कवच और हड्डियां समुद्र किनारे देखनेको मिलती थीं।

बोरडीमें मैं रहने गया, तब वहां अेक ही अच्छा हाअीस्कूल था। अब वह अेक अच्छा और बड़ा शिक्षा-केंद्र हो गया है। बाल-शिक्षण, प्रौढ़-शिक्षण, नयी तालीम, आदिम-निवासियोंकी तालीम, अध्यापन-केंद्र आदि अनेक संस्थायें वहां पर स्थापित हो गयी हैं। अब तो बोरडी राजनैतिक जाग्रतिका, शिक्षा-वितरणका और समाज-सेवाका अेक प्रधान केंद्र बना हुआ है।

बोरडीके दक्षिणमें मैं अेक दफा चींचणी भी गया था। वहांके कारीगर ठप्पा बनानेकी कलामें सारे हिन्दुस्तानमें अद्वितीय गिने जाते हैं। कांचकी चूड़ियां भी वहां अच्छी बनती हैं।

अबकी बार चींचणी और बोरडीके बीच डहाणू हो आया। यह स्थान भी समुद्रके किनारे है। अुसका प्राकृतिक दृश्य बोरडीसे कम सुन्दर नहीं है।

---

* वातावरण = पृथ्वीके गोलेको घेरनेवाला हवाका आवरण या वायुमंडल।

अुदावरण = पृथ्वी परकी जमीनको घेरनेवाला पानीका आवरण। अुद् = पानी।

पचास पौन सौ वरस पहले ओीरानसे आये हुओे चंद ओीरानी खानदान यहां वसे हुओे हैं। घर पर ओीरानी भापा वोलते हैं। अव ये लोग ओीरानसे प्राचीन कालमें आये हुओे पारसी लोगोंके साथ कुछ-कुछ घुलमिल रहे हैं, और गुजराती और मराठी अुत्तम वोलते हैं। अिन ओीरानियोंके वगीचे और वाड़ियां खास देखने लायक हैं। खेतीके आनुभविक विज्ञानसे और मेहनत-मजदूरीसे अिन लोगोंने लाखों रुपये कमाये हैं। हमारे देशमें वसकर अिन लोगोंने अिस देशकी आमदनी वढ़ायी है और यहांके किसानोंको अच्छेसे अच्छा पदार्थपाठ सिखाया है। ये लोग हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

* * *

डहाणूसे सोलह मीलका फासला तय करके हम कासा गये। मेरे अेक पुराने विद्यार्थी श्री मुरलीधर घाटे वारह-पन्द्रह वरससे ग्राम-सेवाका काम करते आये हैं। अिसी साल अुन्होंने — और अुनकी सुयोग्य धर्मपत्नीने — कासाका केंद्र अपने हाथमें लिया। और देखते-देखते यहांका सांस्कृतिक वातावरण समृद्ध वना दिया। आचार्य श्री शंकरराव भीसेकी प्रेरणासे यह सव काम चल रहा है।

डहाणूसे कासा पहुंचते हुओे सामने अेक वहुत अूंचा पर्वत-शिखर दीख पड़ता है। शिखरका आकार देखते हुओे अिस पहाड़को ऋष्य-शृंग कहना चाहिये। दरयाफ्त करने पर मालूम हुआ कि शिखरके शृंगका पत्थर मजवूत नहीं है। पत्थरको पकड़कर कोओी अूपर चढ़ने जाये तो पत्थरके टुकड़े हाथमें आ जाते हैं। मुझे डर है कि हजार दो हजार वरसके अंदर यह सारा शृंग हवा, पानी और धूपसे घिस जायगा और पहाड़की अूंचाओी अेकदम कम हो जायगी। अिस पहाड़के शिखर पर श्री महालक्ष्मीका मंदिर है। कहा जाता है कि कोओी गर्भिणी स्त्री महालक्ष्मीके दर्शनके लिओे अूपर तक गयी और थक गयी। महा-लक्ष्मीने पुजारीको स्वप्नमें आकर कहा कि अपने भक्तोंके अैसे कष्ट मैं वरदाश्त नहीं कर सकती, मुझे नीचे ले चलो। अव अुसी पहाड़की तराओीमें महालक्ष्मीका दूसरा मंदिर वनाया गया है।

कासाके नजदीक अेक अच्छी-सी नदी वहती है, जिसका नाम है सूर्या। अिस नदीके वारेमें भी अेक लोककथा है।

जव पांडव अिस रास्तेसे तीर्थयात्रा करने जा रहे थे, तव भीमकी अिच्छा हुअी कि स्थान-देवता श्री महालक्ष्मीसे शादी करें। पूछने पर महालक्ष्मीने कहा कि चंद योजनके फासले पर जो सूर्या नदी वहती है अुसके प्रवाहको अगर तुम मोड़कर मेरे अिस पहाड़के पांवके पास ले आओगे तो मैं तुमसे शादी करूंगी। शर्त अितनी ही है कि यह सारा काम अेक रातके अंदर होना चाहिये। अगर सुवहका मुर्गा वोला और तुम्हारा काम पूरा न हुआ तो हमसे तुम्हारी शादी न होगी। भीमने वादा किया। वड़े-वड़े पत्थर लाकर अुसने नदीके प्रवाहको रोक दिया। थोड़ी-सी जगह वाकी थी, अुसके लिअे पत्थर न मिलने पर अुसने अपनी पीठ ही अड़ा दी। फिर तो पूछना ही क्या? नदीका पानी वढ़ने लगा और धीरे-धीरे महालक्ष्मीकी पहाड़ीकी ओर मुड़ने लगा। महालक्ष्मी घवड़ा गयी कि अव अिस निरे मानवीके साथ शादी करनी होगी। देवोंमें चालवाजी वहुत होती है। हारनेकी नौवत आती है तव वे कुछ-न-कुछ रास्ता ढूंढ़ ही निकालते हैं।

अिधर भीम वांधके पत्थरोंके वीच पीठ अड़ाकर राह देख रहा था कि पानी पहाड़ी तक कव पहुंच जाता है। अितनेमें महालक्ष्मीने मुर्गेका रूप धारण किया और सुवह होनेके पहले ही 'कुकूच कू' करके आवाज दी। वेचारा भोला भीम निराश हुआ कि समयके अंदर अपना प्रण पूरा नहीं हो सका। वह अुठा। अुतनी जगह मिलते ही वढ़ा हुआ पानी जोरोंसे वहने लगा और पानीके साथ भीमकी मुराद भी वह गयी!

अिसी तरह धूर्त देवोंका और वलशाली असुरोंका झगड़ा भी अनगिनत लोककथाओंमें और पुराणोंमें पाया जाता है।

हम अनेक हरे-हरे खेतोंको पारकर सूर्याके किनारे पहुंचे। वारिशके दिन थे। पानी खूव वढ़ा हुआ था और भीम-वांधके सिर परसे नीचे कूद पड़ता था। दृश्य वड़ा ही मनोहारी था। जहां पानी जोरसे वहता था, वहां हमने अपनी कल्पनाका भीम वैठा हुआ देखा।

हमने अुसे प्रणाम किया। अुसने विषादमें अपना सिर हिलाया। और वह फिर ध्यानमें मग्न हो गया।

हम लौटकर कासा आये। वहांका काम देखा। आदिम जीवनको प्रकट करनेवाली प्रदर्शनी देखी। कुछ खाना खा लिया, लोगोंसे बातें कीं और फिर बसमें बैठकर महालक्ष्मीका मंदिर देखने गये। रास्तेमें आदिम-निवासी जातिके लोगोंकी कुटियां और अुनके खेत देखे। यह जाति पिछड़ी हुअी जरूर है, किन्तु अुसने अपने जीवनका आनंद नहीं खोया है। महालक्ष्मीका मंदिर पहाड़ीके नीचे अेक रमणीय स्थान पर है। देवीके भक्त दूर-दूर तक फैले हुअे हैं। हर साल अेक बहुत बड़ा मेला लगता है। देखते-देखते अेक लाख लोगोंकी यात्रा भर जाती है। अैसे यात्रियोंके रहनेके लिअे चंद लोगोंने अभी यहां पर अेक अच्छी धर्मशाला बांध दी है। अुसे जाकर देखा। संगमरमरके पत्थर पर दाताओंके नाम खुदे हुअे थे। नाम पढ़कर मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ। सबके सब नाम अफ्रीकाके दक्षिण रोडेशियामें बसे हुअे गुजराती धोबियोंके थे। किसीने सौ शिलिंग दिये थे। किसीने हजार दिये थे। कहां दक्षिण रोडेशिया, कहां गुजरात और कहां थाना जिलेके मराठी लोगोंके बीच यह गुजरातियोंका बनाया हुआ आराम-घर!

स्वराज्य सरकारकी मददसे अिन आदिम-निवासियोंके नवयुवक अब अुत्साहके साथ नयी-नयी बातें सीख रहे हैं और अपनी जातिके अुद्धारकी बातें सोच रहे हैं। मैंने अुनको कहा, तुम अितने पिछड़े हुअे हो कि अपनी जातिके ही अुद्धारके लिअे प्रयत्न करना तुम्हारे लिअे ठीक है। लेकिन मैं तो वह दिन देखना चाहता हूं कि जब तुम लोग केवल अपनी ही जातिका नहीं किन्तु सारे भारतके अुद्धारका सोचने लगोगे। केवल अपनी जातिके ही नहीं किन्तु सारे देशके नेता बनोगे। जो अपनी ही जमातका सोचते हैं, अुनका पिछड़ापन दूर नहीं होता। जो सारी दुनियाका सोचते हैं, सारी दुनियाकी सेवा करते हैं, वही अपनी और अपने लोगोंकी सच्ची अुन्नति करते हैं।

मैंने अपने मनमें प्रश्न पूछा, अगर अिन लोगोंमें भीमके जैसी शक्ति आयी और यहांके अिर्द-गिर्दके सवर्ण, सफेदपोश लोगोंमें स्थानीय

देवता महालक्ष्मीके जैसी चतुराअी आयी तो परिणाम क्या होगा! फिर तो केवल पानीकी सूर्या नदी नहीं बहेगी!

कलियुगका माहात्म्य समझकर नहीं, किन्तु सत्ययुगकी स्थापनाके लिअे हमें अिन आदिम-जातियोंको अपनेमें पूरी तरह समा लेना चाहिये। चार वर्णोंकी पुन: स्थापनाकी बातें और आदिम-जातिके 'अुद्धारकी' परोपकारी भाषा अब हमें छोड़ देनी चाहिये। अिनमें और हममें कोअी भेद ही नहीं रहना चाहिये।

सितम्बर, १९५१

४८

अबरी ओीब

मैं कलकत्तासे वर्धा जा रहा था। गाड़ीमें रातको बिना कुछ ओढ़े सोया था। ओढ़नेकी जरूरत न थी; फिर भी यदि ओढ़ लेता तो चल सकता था। सुबह पांच बजे जब जागा तब हवामें कुछ ठंड मालूम हुअी; और चद्दरकी गर्मी न लेनेका पछतावा हुआ। आखिर 'अब क्या हो सकता है?' कहकर अुठा। कवियोंको जितना भविष्यकाल दिखाअी देता है, अुतना ही बाहरका दृश्य दिखाअी देता था। सारा दृश्य प्रसन्न था, मगर पूरा स्पष्ट नहीं था।

अितनेमें अेक नदी आयी। पुलके दो छोरोंके बीच अुसकी धारायें अनेक पंक्तियोंमें बंट गअी थीं। हरेक नदीके बारेमें अैसा ही होता है। मगर यहां स्पष्ट मालूम होता था कि अिस नदीने कुछ विशेष सौंदर्य प्राप्त किया है। पतले अंधेरेमें प्रभातके समयका आकाश यह तय नहीं कर पाता था कि पानीकी चांदी बनायें या पुराने जमानेका चमकते लोहेका आअीना बनायें?

हम पुलके बीचमें आये। मैं प्रवाहका सौंदर्य निहारने लगा। अितनेमें अैसा लगा मानो किसीने पानीके अूपर सफेद रंग छिड़क

दिया है और धीरे धीरे अुसकी अबरी* बन गअी है। यह रूप देखकर मैं खुश हो गया। अभी अभी दिल्लीमें जामिया मिलियाके छोटे बच्चोंको कागज पर अबरीकी आकृतियां बनाते हुअे मैंने देखा था। मुझे ये प्राकृतिक आकृतियां बहुत आकर्षक मालूम होती हैं।

अिस नदीका नाम क्या है? कौन बतायेगा? मैंने सोचा, नाम न मिला तो मैं अुसे अबरी नदी कहूंगा।

नदी गअी और वह कहांकी है यह जाननेकी मेरी अुत्कंठा बढ़ी। क्योंकि अुसके बाद धुवां छोड़नेवाली अेक दो चिमनियां दिखाअी दी थीं। और निकटके गांवमें बिजलीके दीये भी दिखाअी दिये थे। रेलवेका टाअिम टेबल निकालकर मैंने अुससे पूछा: 'पांच अभी ही बजे हैं। हम कहां हैं?' अुसका जवाब सुनते ही मुंहसे परिचयका आनंदोद्‌गार निकला: 'ओहो! यह तो हमारी अीब है!' रामगढ़ जाते समय अुसने कितनी सुन्दर आकृतियां दिखलाअी थीं! मैंने अुसे कृतज्ञताकी अंजलि भी दी थी। अीबको मैं पहचान कैसे न सका? अबरीका यह कला-विलास सभी नदियां थोड़े बता सकती हैं!

तो अिस अीब नदीने अबरीकी कला कौनसी वर्षा-शालामें सीखी होगी? या शायद दुनियाने अबरी-कला सबसे प्रथम अिसीसे सीखी होगी।

मअी, १९४१

---

* किताबकी जिल्द पर या अुसके अंदर जो रंगीन आकृतियोंवाला कागज अिस्तेमाल किया जाता है, और जिसको अंग्रेजीमें marble paper कहते हैं, अुसके लिअे देशी शब्द है 'अबरी'।

४९

तेंदुला और सुखा

आज मैं अेक अनसोचा और असाधारण आनंद अनुभव कर सका।

हम वर्धासे द्रुग आये हैं। आसपासके दो गांवोंमें राष्ट्रीय ग्रामशिक्षा (बेसिक अेज्युकेशन) शुरू करनेके लिअे शिक्षक तैयार करनेवाली अेक संस्थाका अुद्घाटन करनेको हम सुबह चार बजे द्रुग आ पहुंचे। नहा-धोकर नाश्ता किया और बालोड़के लिअे रवाना हुअे।

द्रुगसे बालोड़ ठीक दक्षिणकी ओर ३७ मील पर है। रास्ता सीधा है। मानो रस्सीसे रेखायें आंककर बनाया गया हो। मीलों तक सीधी रेखामें दौड़ते रहनेमें जिस प्रकार अेकसा-पन होता है, अुसी प्रकार अेक तरहका नशा भी मालूम होता है। बालोड़के पास पहुंचे और किसीने कहा कि यहांसे पास ही तेंदुला बंद और केनाल है। मामूली-सी वस्तु भी स्थानिक लोगोंकी दृष्टिमें बड़े महत्त्वकी होती है। भाअी तामस्करने जब कहा कि व्याख्यानके बाद हम यह बंद देखने चलेंगे तब विशेष अुत्साहके बिना मैंने 'हां' कह दिया था। वहां कुछ देखने योग्य होगा, अैसा मेरा खयाल ही न था। 'हां' कहा केवल स्थानिक लोगोंके आतिथ्यका अुत्साह भंग न होने देनेकी भलमनसाहतके कारण।

खासी ३७ मीलकी जो यात्रा की अुसमें गड्ढे आदि कुछ भी नहीं थे। जमीन सर्वत्र समतल थी। गुजरातकी तरह यहांकी जमीनमें बाड़ोंकी अड़चन भी नहीं है। अिस तरहकी समतल जमीन देखनेके बाद अेकाध नदी-नाला देखनेको मिले, अेकाध बांध नजरके सामने आये तो मनको अुतना व्यंजन मिलेगा, अिस खयालसे मैंने जाना कबूल किया था। जिसने पूनाके बंडगार्डनसे लेकर भाटघरके प्रचंड बांध तक अनेक बांध देखे हैं, अुसका कुतूहल यों सहज जाग्रत नहीं हो सकता।

बेजवाड़ामें कृष्णा नदीका भव्य बांध, गोकाकके पास घटप्रभाका बाल्य-परिचित बांध, लोणावलाके दो तीन आकर्षक बांध, मैसूरमें वृंदा-

वनका पोषण करनेवाला बादशाही कृष्णसागर, दिल्लीके निकट यमुनाका रमणीय 'ओखला' का बांध और नासिकसे मोटरके रास्ते पचास मील दूर जाकर देखा हुआ 'प्रवरा' नदीका सुन्दरतम और रोमांचकारी बांध — अैसे अनेक जलाशय जिसने देखे हैं, वह सिंहगढ़की तलहटीका 'खडक-वासला' जैसा बांध देखकर संतुष्ट भले हो, मगर अुसका कुतूहल बाल्यावस्थामें तो हो ही नहीं सकता।

भावनगरके पासके बोर तालावका वर्णन मैंने लिखा है। बेज-वाड़ाकी कृष्णा नदीको मैंने श्रद्धांजलि अर्पित की है। दूसरोंके बारेमें अब तक कुछ लिखा नहीं है, अिस बातका मुझे दुःख है। फिर भी आज किसी भव्य जलराशिके दर्शन होंगे, अैसी अुम्मीद मुझे न थी। व्याख्यान, संभाषण और भोजन समाप्त करके हम तेंदुला केनाल देखनेके लिअे वाहनारूढ़ हुअे और बांधकी ओर दौड़ने लगे। बांध परसे मोटर ले जानेकी अिजाजत पानेके लिअे अेक आदमी आगे गया था। अुसकी राह देखनेका धीरज हममें न था। अिजाजत मिल ही जायगी, अिस खयालसे हम तेज रफ्तारसे आगे बढ़े और बांधके पास पहुंचे। बांधके अूपर गये, और —

मैं तो अवाक् हो गया!

कितना लंबा और चौड़ा पानीका विस्तार! और पानी भी कितना स्वच्छ!! मानो आकाश ही आनंदातिशयमें द्रवीभूत होकर नीचे अुतर आया हो! और पानीका रंग? जामुनी, नीला, फीरोजी, सफेद और गुलाबी!! और वह भी स्थायी नहीं। आकाशके बादल जैसे जैसे दौड़ते जाते थे, वैसे वैसे पानीका रंग भी बदलता जाता था। छोटी तरंगोंके कारण पानीकी तरलता तो खिलती ही थी; तिस पर अूपरसे अुसमें यह रंग-परिवर्तनकी चंचलता आ मिली। फिर तो पूछना ही क्या था? जहां देखो वहां काव्य डोल रहा था, चमत्कार नाच रहा था। अपना महत्त्व किसके कारण है, यह दोनों ओरके किनारे जानते थे। अतः वे अदबके साथ जलराशिकी खुशामद करते थे।

अिस बांधकी खूबी अुसके विस्तारके अलावा अेक दूसरी विशेषतामें है। तेंदुला और सुखा दोनों नदियां बहनें हैं। तेंदुला बड़ी बहन

है। वह ३०–४० मील दूरसे आती है। अुसके मुकाबलेमें सुखा केवल बालिका है। तीन मील दौड़कर ही वह यहां आ पहुंचती है। ये दोनों जहां अेक-दूसरेके पास आती हैं, वहीं यह प्रेममूर्ति बांध मानो यह कह कर कि 'मेरी सौगंध है तुम्हें जो आगे बढ़ीं तो!' दोनोंके सामने आड़ा सो गया है। करीब तीन मील लंबा बांध अिन दो नदियोंको रोकता है। और फिर अपनी मरजीके अनुसार थोड़ा थोड़ा पानी छोड़ देता है। कच्ची मिट्टीका अितना बड़ा बांध हिन्दुस्तानमें तो क्या सारे संसारमें और कहीं नहीं होगा! बांधके नीचेकी १५ मील तककी अभिमानी जमीन अैसा अुपकारका पानी लेनेसे अिनकार करती है। अतः यह नहर अुसके बादके ६०–७० मील तक दोनों ओरके खेतोंकी सेवा करती है। बांधकी वजहसे अूपरकी बहुत-सी जमीन पानीमें डूब गअी है अिसकी कल्पना केवल आंखोंसे कैसे हो? तलाश करने-पर पता चला कि करीब तीन सौ बीस वर्गमील जमीन पर गिरनेवाला पानी यहां जमा हुआ है। पानीका विस्तार सोलह वर्गमील है। १९१० में अिस बांधका काम आरंभ हुआ और पौन करोड़से अधिक रुपया खर्च होनेके बाद ही वह पूरा हुआ। बारिशमें अिन दोनों नदियोंका पानी अेकत्र होता है। और फिर तो सारा जलमग्न दृश्य देखकर 'सर्वतः संप्लुतोदके' का स्मरण हो आता है। जब बीचका टापू अपना सिर जरा अूंचा करनेका प्रयास करता है, तब अुसकी यह परेशानी देखकर हमें हंसी आती है। आज अिस टापू पर कुछ अूंचे पेड़ 'यद् भावि तद् भवतु' वृत्तिसे अिस बाढ़की प्रतीक्षामें खड़े हैं। अुन्हें अुस लाल किनारवाली किश्तीमें बैठकर थोड़े ही भाग जाना है? अैसे पेड़ जब तक टिक सकते हैं, शानके साथ रहते हैं। और अंतमें जड़ें खुली पड़ने पर पानीमें गिर पड़ते हैं।

गरमीमें जब दो नदियोंके पात्र अलग अलग हो जाते हैं, तब धूप तथा विरहके कारण वे अधिक सूखने न पायें, अिस हेतुसे बीचमें अेक नहर खोदकर दोनोंका पानी अेक-दूसरेमें पहुंचानेका प्रबंध कर दिया जाता है।

जाननेवाले जानते हैं कि नदियोंका भी हृदय होता है। अुनमें वात्सल्य होता है, चारित्र्य होता है और अुन्माद तथा पश्चात्ताप भी होता है। ये दो बहनें यहां जो कुछ करती हैं अुसमें अेक-दूसरेकी शोभाकी अीर्ष्या जरा भी नहीं करतीं। मत्सर या सापत्न-भाव अुनके चेहरे पर बिलकुल नहीं दीख पड़ता। अुन्हें अिस बातका भान है कि बांधरूपी जबरदस्त संयमके कारण अुनकी शक्ति बहुत कुछ बढ़ी है। केवल बहते रहना ही नदीका धर्म नहीं है। फैलना और आशीर्वाद-रूप बनना भी नदी-धर्म ही है, तमाम नदियोंको यह नसीहत देनेके लिअे ही मानो वे यहां फैली हुअी हैं।

नदीके किनारे पेड़ खड़े हों, तो वहां अेक तरहकी शोभा नजर आती है। और ये पेड़ जब अुसके पात्रको ढंकनेका वृथा प्रयत्न करते हैं, तब अिस विफलतामें से भी वे सफल शोभा अुत्पन्न करते हैं।

हम अुस किनारेके पेड़ोंकी मुलाकात लेने गये। समय दोपहरका था। निद्रालु पेड़ नदीके साथ बातें करते करते नींदमें डूब रहे थे और चारों ओर अुष्ण-शीतल शांति फैली हुअी थी। सिर्फ तरह तरहके पक्षी मंद मंजुल कलरव करके अेक-दूसरेको अिस काव्यका आनंद लूटनेके लिअे प्रोत्साहित कर रहे थे।

और लाल मकोड़े, जिन्हें मराठीमें 'वाघमुंग्या' या 'अुंबील' कहते हैं, अेक किस्मके चिकने पदार्थसे पेड़ोंके चौड़े पत्तोंको अेक-दूसरेसे चिपकाकर अिस सारे काव्यको भरकर रखनेके लिअे थैलियां बना रहे थे। मेरी आंखें भी दिलकी थैली बनाकर अुसमें सामनेका दृश्य भरनेके लिअे सारे प्रदेशको चूस रही थीं।

नदीको अिसमें कोअी अेतराज नहीं था।

मार्च, १९४०

५०

अृषिकुल्याका क्षमापन

आज महाशिवरात्रिका दिन है। रोजके सब काम अेक तरफ रखकर सरिता, सरित्पिता और सरित्पतिका ध्यान करनेके निश्चयसे मैं बैठा हूं। सरितायें लोकमातायें हैं। अुनकी 'जीवनलीला' को अनेक प्रकारसे याद करके मैं पावन हुआ हूं। पूर्वजोंने कहा है कि नदीका पूजन स्नान, दान और पानके त्रिविध रूपसे करना चाहिये। मुझे लगा: केवल स्नान-दान-पान ही क्यों? भक्ति ही करनी है तो फिर वह चतुर्विधा क्यों न हो? अैसा सोचकर मैंने नदीका गान करनेका निश्चय किया। 'लोकमाता' और प्रस्तुत 'जीवनलीला' अिन दो ग्रंथोंमें यह गान सुननेको मिल सकता है।

अब जब कि प्रवास कम हो गया है और सरित्पति सागरका निमंत्रण भी कम सुनाअी देने लगा है, मैं दिलमें सोच रहा था कि सरित्पिता पहाड़ोंका कुछ श्राद्ध करूं। अितनेमें अेक छोटीसी पवित्र नदीने आकर कानमें कहा: "क्या मुझे बिलकुल भूल गये?" मैं शरमाया और तुरन्त अुसको स्मरणांजलि अर्पण करके अुसके बाद ही पहाड़ोंकी तरफ मुड़नेका निश्चय किया। यह नदी है कलिंग देशमें केवल सवा सौ मीलकी मुसाफिरी करनेवाली अृषिकुल्या।

अृषिकुल्या नदीका नाम तक मैंने पहले नहीं सुना था। मैं अशोकके शिलालेखोंके पीछे पागल हुआ था। जूनागढ़के शिलालेख मैंने देखे थे। फिर अुड़ीसाके भी क्यों न देखूं? अैसा खयाल मनमें आया। कलिंग देशका हाथीके मुंहवाला धौलीका शिलालेख मैंने देखा था। फिर अितिहास-दृष्टि पूछने लगी कि थोड़ा दक्षिणकी ओर जाकर वहांका जौगढ़का विख्यात शिलालेख कैसे छोड़ सकते हैं? अुसको तृप्त करनेके लिअे गंजामकी तरफ जाना पड़ा। वह प्रवास बहुत काव्यमय था। लेकिन अुसका वर्णन करने बैठूं तो वह अृषिकुल्यासे भी लम्बा हो जायगा।

यह नदी चिलका सरोवरसे मिलनेके बजाय गंजाम तक कैसे गअी और समुद्रसे ही क्यों मिली, अिसका आश्चर्य होता है। शायद सागर-पत्नीका सौभाग्य प्राप्त करनेके लिअे अुसने गंजाम तक दौड़ लगाअी होगी। लेकिन यहांके समुद्रमें कोअी अुत्साह दिखाअी नहीं देता। रेतके साथ खेलते रहना ही अुसका काम है।

अृषिकुल्या वैसे छोटी नदी है, फिर भी शायद नामके कारण अुसकी प्रतिष्ठा बड़ी है। क्योंकि अितनी छोटीसी नदीको कर-भार देनेके लिअे पथमा और भागुवा ये दो नदियां आती हैं। और भी दो-तीन नदियां अुसे आकर मिलती हैं। लेकिन दारिद्र्यके संमेलनसे थोड़े ही समृद्धि पैदा होती है? गरमीके दिन आये कि सब ठनठन गोपाल!

अृषिकुल्याके किनारे अस्का नामका अेक छोटासा गांव है। छोटासा गांव सुन्दर नहीं हो सकता, अैसा थोड़े ही है? जहां नदियोंका संगम होता है, वहां सौंदर्यको अलगसे न्यौता नहीं देना पड़ता। और यहां पर तो अृषिकुल्यासे मिलनेके लिअे महानदी आअी हुअी है! दोनों मिलकर गन्ना अुगाती हैं, चावल अुगाती हैं और लोगोंको मधुर भोजन खिलाती हैं। और जिनको अुन्मत्त ही हो जाना है, अैसे लोगोंके लिअे यहां शराबकी भी सुविधा है। अिस 'देवभूमि' में लोगोंके सुरा-पानको अुचित कहें या अनुचित? जो सुरा पीते हैं सो सुर यानी देव; और जो नहीं पीते सो असुर — अीरानी लोगोंकी सुर-असुरकी व्याख्या अिस प्रकार है।

अृषिकुल्या नाम किसने रखा होगा? अिसके पड़ोसकी दो नदियोंके नाम भी अैसे ही काव्यमय और संस्कृत हैं। 'वंशधारा' और 'लांगुल्या' जैसे नाम वहांके आदिवासियोंके दिये हुअे नहीं प्रतीत होते।

यह सारा प्रदेश कलिंगके गजपति, आंध्रके वेंगी तथा दक्षिणके चोल राजाओंकी महत्त्वाकांक्षाओंकी युद्धभूमि था। तब ये सब नाम चोलके राजेन्द्रने रखे या कलिंगके गजपतियोंने, यह कौन कह सकेगा?

जौगढ़का अितिहास-प्रसिद्ध शिलालेख देखकर वापस लौटते हुअे शामके समय अृषिकुल्याका दर्शन हुआ। संस्कृत साहित्यमें दधिकुल्या, घृतकुल्या, मधुकुल्या जैसे नाम पढ़कर मुंहमें पानी भर आता था।

अृषिकुल्याका नाम सुनकर मैं भक्तिनम्र हो गया और अुसके तट पर हमने शामकी प्रार्थना की।

छोटीसी नदी पार करनेके लिअे नाव भी छोटीसी ही होगी। अुस दिनका हमारा दैव भी कुछ अैसा विचित्र था कि यह छोटीसी नाव भी आधी-परधी पानीसे भरी हुअी थी। अंदरका पानी बाहर निकालनेके लिअे पासमें कोअी लोटा-कटोरा भी नहीं था। अिसलिअे जूते हाथमें लेकर हमने नावमें खुले पांव प्रवेश किया। अिच्छा थी कि नदीमें पांव गीले न हो जायें। लेकिन आखिर नावमें जो पानी था अुसने हमारा पद-प्रक्षालन कर ही दिया। खड़े रहते हैं तो नाव लुढ़क जाती है। बैठते हैं तो धोती गीली होती है। अिस द्विविध संकटमें से रास्ता निकालनेके लिअे नावके दोनों सिरे पकड़कर हमने कुक्कुटासनका आश्रय लिया और अुसी स्थितिमें बैठकर वेद-कालीन और पुराण-कालीन अृषियोंका स्मरण करते करते अुनकी यह कुल्या पार की। तबसे अिस अृषिकुल्या नदीके बारेमें मनमें प्रगाढ़ भक्ति दृढ़ हुअी है। कुक्कुटासनका 'स्थिर-सुख' जब तक याद रहेगा, तब तक निशीथ-कालका वह प्रसंग भी कभी भूला नहीं जायगा।

वहांके अेक शिक्षकके पाससे अृषिकुल्याके बारेमें जानकारी प्राप्त करनेकी कोशिश की। अुन्होंने अुड़िया भाषामें लिखा हुआ अेक दीर्घ-काव्य परिश्रमपूर्वक लिखकर मेरे पास भेज दिया। अब तक अुस काव्यका आस्वाद मैं नहीं ले सका हूं। अृषिकुल्याके प्रति भक्तिभाव दृढ़ करनेके लिअे आधुनिक काव्यकी जरूरत भी नहीं है। मेरे खयालसे महा-शिवरात्रिके दिन किया हुआ अृषिकुल्याका यह क्षमापन-स्तोत्र अुसको मंजूर होगा और वह मुझे अचलोंका अुपस्थान करनेके लिअे हार्दिक और सुदीर्घ आशीर्वाद देगी।

महाशिवरात्रि,
२७ फरवरी, १९५७

५१

सहस्रधारा

पुराना ऋण शायद मिट भी सकता है; किन्तु पुराने संकल्प नहीं मिट सकते। पच्चीस वर्ष पहले मैं देहरादूनमें था, तब सहस्रधारा देखनेका संकल्प किया था। अुत्कंठा बहुत थी, फिर भी अुस समय जा नहीं सका था। कुछ दिनों तक अिसका दुःख मनमें रहा; किंतु बादमें वह मिट गया। सहस्रधारा नामक कोअी स्थान संसारमें कहीं है, अिसकी स्मृति भी लुप्त हो गअी। मगर संकल्प कहीं मिट सकता है?

आचार्य रामदेवजीने बहुत आग्रह किया कि मुझे अुनका कन्या-गुरुकुल अेक बार देख लेना चाहिये। मुझे भी यह विकसित हो रही संस्था देखनी थी। पिछले साल नहीं जा सका था। अतः अिस साल वचन-बद्ध होकर मैं वहां गया। अब प्रकृतिके पीछे पागल नहीं बनना है, अब तो मनुष्योंसे मिलना है, संस्थायें देखनी हैं, राष्ट्रीय सवालोंकी चर्चा करनी है, अच्छे अच्छे आदमी ढूंढ़कर अुन्हें काममें लगाना है, सेवकोंके साथ विचारोंका और अनुभवोंका आदान-प्रदान करना है — आदि विविध धारायें मनमें चल रही थीं। तब सहस्र-धाराका स्मरण भला कहांसे होता? मैं तो हिन्दी-हिन्दुस्तानीकी चर्चामें ही मशगूल था। अितनेमें युवक रणवीर मुझसे मिलने आये। किसीने अुनकी पहचान कराअी। अुन्होंने अपने आप कहा, देहरादूनमें देखने लायक स्थानोंमें फॉरेस्ट कॉलेज है, फौजी पाठशाला है, और प्राकृतिक दृश्योंमें गुच्छुपानी और सहस्रधारा है। आखिरका नाम सुनना था कि पचीस वर्षकी विस्मृतिके पत्थरोंकी कब्रको तोड़कर पुरानी स्मृति और पुराना संकल्प भूतकी तरह आंखोंके सामने खड़े हो गये। अब अिस संकल्पको गति दिये सिवा कोअी चारा ही न था।

तैल-वाहन (मोटर)का प्रबंध हुआ और अुत्तरकी ओर पांच-सात मीलका रास्ता तय करके हम राजपुर पहुंचे। यहींसे अूपर मसूरी जानेका रास्ता है। हम राजपुरसे करीब ढाअी मील पूर्वकी ओर जंगलमें पैदल

चले। ठीक पैंसठ मिनट चलकर हम सहस्रधारा पहुंचे। शामका समय था। पीछेकी ओर सूर्य अस्त होनेकी तैयारी कर रहा था और अुसकी लंबी होती किरणें हमारे सामनेके मार्गको अधिकाधिक लंबा बना रही थीं। पांच-दस मिनटमें हमने मानव-संस्कृतिको छोड़कर जंगलमें प्रवेश किया। पानीके बहावके कारण जमीनमें गहरे खड्डे पड़ गये थे। अुनमें होकर हमें जाना था। हम चार आदमी थे। बातें करते जाते, आसपासका सौंदर्य निहारते जाते और समयका हिसाब लगाते जाते। अमरनाथ, तुंगनाथ, बदरीनाथ विशाल जैसे स्थान जिसने देखे हैं, अुसके सामने मसूरीके पहाड़ क्या चीज हैं? फिर भी काफी वर्षोंके पश्चात् फिरसे हिमालयकी तलहटीमें जाना हुआ, अिससे यह दृश्य भी आंखोंको भव्य मालूम हुआ।

मसूरीके पहाड़ोंमें कभी बार टेकरियां गिर पड़ती हैं, जिसे अंग्रेजीमें 'लैण्ड-स्लिप' या 'लैण्ड-स्लाअिड' कहते हैं। यह दृश्य अैसा दिखाअी देता है मानो किसी सूरमा योद्धाको जबरदस्त चोट लगी हो। बड़े बड़े पर्वत छोटे-बड़े वृक्षोंसे ढंके हों और बीचमें ही अुनका अेक बड़ा हिस्सा टूट जानेसे खुला पड़ गया हो, तो वह दृश्य देखकर हृदयमें कुछ अजीब भाव पैदा होते हैं। अैसे असाधारण प्राकृतिक दृश्य बहुत बड़े होते हैं। और अिस दुर्घटनाका कोअी अिलाज नहीं होता। अतः अैसे घाव विषम नहीं मालूम होते; बल्कि पर्वतका आदरपात्र वैभव ही दिखाते हैं।

हम नीचे अुतरे, फिर चढ़े। फिर अुतरे। खूब चढ़े। वहांसे चक्कर आयें अैसा अुतार आया।

हम स्वेच्छासे चतुष्पाद बनकर आहिस्ता-आहिस्ता नीचे अुतरे। रास्तेमें हर जगह जहां भी अुतरे वहां पत्थरोंकी अेक फैली हुअी सूखी नदी थी ही। वर्षाऋतुमें ये दृशद्वती नदियां अितना कोलाहल करती हैं कि सारी घाटी सहस्र-निनादसे गरज अुठती है; मगर आज तो चारों ओर भीषण शांति थी। छोटे छोटे पक्षी अेक-दूसरेको दूर दूरसे यदि अिशारा न करते, तो यहां खड़े रहनेमें भी दिलमें डर घुस जाता। आखिर अुतार आया और चारों ओर स्लेटवाले पत्थर

नजर आये। जान बचानेके लिअे जब अेकाध तल्लीको पकड़ने जाते, तो अुसका चूरा ही हाथमें आ जाता था!

ज्यों त्यों करके हम नीचे अुतरे। करीब अेक घंटे तक हम चलते रहे। जिनकी मोटरमें आये थे वे भाअी कहने लगे, 'मैं तो यहीं बैठता हूं; आप आगे हो आअिये।' मैंने कहा, 'आपसे हमने वादा किया था कि अेक घंटेमें वापस लौट आयेंगे। मगर सहस्रधारा पहुंचनेके लिअे अेक घंटेसे अधिक समय लगेगा। अतः आप वापस जाअिये और मोटरके साथ समय पर देहरादून पहुंच जाअिये। हम किरायेकी बसमें आ जायेंगे।' रणवीर कहने लगे, 'अब तो दस मिनटमें हम पहुंच जायेंगे। सामनेकी टेकरी पर वह जो सफेद कुटिया दिखाअी देती है अुसके पास ही सहस्रधारा है।'

अितनी दूर आये हैं, तो पांच मिनट और सही, अैसा विचार करके हम आगे बढ़े। पीछे मुड़कर देखनेकी अिच्छा हुअी तो सूरज आकाशमें लटक रहा था और तलहटीकी घाटीके पहाड़ अपने दो हाथ अूंचे करके अुसका स्वागत कर रहे थे, मानो गेंद पकड़नेकी तैयारी कर रहे हों। अूपर अुछाला हुआ बच्चा मांके हाथोंमें पड़ते ही हंसने लगता है और मां प्रसन्न होती है, अैसा ही वह दृश्य था। अैसे समय पर मांके प्रेमके अुभारका मनमें सेवन करें, या बच्चेका विश्वासपूर्ण हास्य विकसित करें, दोमें से किस आनंदके साथ तादात्म्यका अनुभव करें, अिसका निश्चय न होनेसे मन परेशान होता है। अितना ही अेक दृश्य देखनेके लिअे यहां तक आया जा सकता है! मगर संकल्प तो किया था सहस्रधाराका। अतः लंबी सूर्य-किरणोंकी ओरसे हमने मुंह फेरा और आगे बढ़े।

अितनेमें यकायक अेक बड़ा प्रपात धबधबाता हुआ नजर आया। अूंचाअीसे स्वच्छ पानी मजबूत मिट्टीकी प्राकृतिक दीवारसे लुड़कता है, आवाज करता है और अनोखी मस्तीभरी अेकतानतासे नीचे अुतरता है। पासमें कोअी है या नहीं, यह देखनेकी अुसे फुरसत कहां है? क्या होता है अिसकी अुसे कोअी परवाह नहीं है। वह तो धब-धब, धब-धब आवाज करता ही रहता है। पत्थरके

अूपरसे जब पानी गिरता है तब अुतना आश्चर्य नहीं होता। मगर यहां तो अपनी जिद न छोड़नेवाली मिट्टी परसे पानी गिरता है। मैं तो देखता ही रहा। पानीके भव्य दृश्यमें अितना नशा होता है, यह शराबियोंको यदि मालूम हो जाय, तो वे शराबका नशा छोड़कर अहर्निश यहीं आकर बैठे रहें। अेक क्षणके लिअे तो मैं भूल ही गया कि हमें वापस लौटना है। भले अेक क्षणके लिअे, मगर जब हम प्रकृतिके साथ अेकरूप हो जाते हैं तब वह सचमुच अद्वैतानंद होता है। अपना होश भूल जानेके बाद आनंदके सिवा और कुछ रह ही नहीं सकता।

तब क्या जिसे हम जड़ सृष्टि कहते हैं वह जड़ नहीं है, बल्कि अद्वैतानंदकी समाधिमें अेकतान होकर पड़ी है? अिसका जवाब भला कौन दे सकता है? और कौन सुन भी सकता है?

रणबीर कहने लगे, 'अब हम जरा आगे चलेंगे।' अब देरी करनेकी मेरी अिच्छा न थी। मगर थोड़ा बाकी रह गया अैसा विषाद मनमें न रहे अिसलिअे मैं आगे बढ़ा। नीचे पानी बह रहा था। धीरे धीरे हम नीचे अुतरे ही थे कि सुराखारकी महक आने लगी। नीचे अुतरकर थोड़ासा पानी पिया। कहते हैं कि तमाम चर्म-रोगोंके लिअे यह पानी बहुत मुफीद है। अिस पानी और अुसके अद्भुत गुणोंके बारेमें मैं सोच रहा था; किन्तु दिल तो अभी देखे हुअे प्रपातकी धब-धब आवाजके साथ ही ताल साध रहा था। अितनेमें दाहिनी ओर अूपर अेक झुकी हुअी खोहके छतसे पानीकी बूंदें गिरती देखीं। अुनकी आवाज अैसी हो रही थी मानो अत्यंत सौम्य और मूक-प्राय जलतरंग या वृंद-गायन हो।

यही है सच्ची सहस्रधारा। हजारों बूंदें अिस गुफाके अूपरसे और अंदरसे टप टप गिरती हैं। मगर अुनकी आवाज नहीं होती। शांतिके साथ ये बूंदें सतत गिरती रहती हैं। अेक ओरसे हम अूपर चढ़े। वहां अेक गहरी गुफा थी। बीचमें स्तंभके समान पत्थरका भाग था। हम अुसके अिर्दगिर्द घूमे। चारों ओर सहस्रधाराकी बरसात हो रही थी। मालूम होता था मानो सारा पहाड़ पिघल रहा है। हम काफी

भींग गये। अेक घंटा तेजीसे चलकर आनेसे शरीरमें गरमी खूब थी। अिसलिअे भींगते समय विशेष आनंद महसूस हुआ। कितना ठंडा है यहांका दृश्य! यहां रहनेके लिअे मनुष्यका जन्म कामका नहीं। यहां तो वेदमंत्रोंका चार्तुमास्यमें रटन करनेवाले मेंढकोंका अवतार लेकर रहना चाहिये। जो हृदय कुछ समय पहले शक्तिशाली प्रपातके साथ अेकरूप हो गया था, वही यहां अेक क्षणमें अिस रिमझिम रिमझिम सहस्रधाराके बालनृत्यके साथ तन्मय हो गया। मैंने रणवीरको जी भरकर धन्यवाद दिया और कहा, 'अितना हिस्सा यदि देखना बाकी रह जाता, तो सचमुच मैं बहुत पछताता।' बारिशसे रक्षा करनेवाली असंख्य गुफाअें मैंने देखी हैं। मगर ग्रीष्मकालमें भी अपने पेटमें बारिशका संग्रह रखनेवाली गुफा तो पहले-पहल यही देखी। सीलोनके मध्यभागमें अेक स्थान पर चित्रोंवाली अेक बड़ी गुफा है; अुसमें से अेक नन्हा-सा झरना झरता है। मगर अिस प्रकारकी अखंड बारिश तो यहीं पहले-पहल देखी। हमें वापस लौटनेकी जल्दी थी। मगर अिस बारिशको जल्दी नहीं थी। अुसको अपना जीवन-कार्य मिल चुका था। पत्थरों पर जमी हुअी काअीके कारण पांव फिसलते थे; और यहांके सौंदर्य, पावित्र्य और शांतिके कारण पांव यहां ञिपकते थे। जीमें आता था कि जितना अधिक समय अिस स्थितिमें बीते अुतना ही लाभ है।

आखिर वहांसे लौटना ही पड़ा। अब तो दुगुनी रफ्तारसे जाना था। रास्ते पर चंद मजदूर और ग्वाले जल्दी जल्दी चलते हुअे नजर आये। बेचारे गरीब लोग! वे बड़ी कठिनाअीसे अैसे स्थान पर जीवन बिताते हैं। मगर हमें तो अिसी बातकी अीर्ष्या हुअी कि अिन्हें सहस्रधाराकी अमृतमयी दृष्टिके नीचे रहनेको मिलता है।

अुतरते समय तो अुतर गये थे, मगर अब अंधेरेमें चढ़ेंगे कैसे, यह सवाल था। मनमें आया, अेकाध लाठी मिल जाय तो अच्छा हो। वहां अेक देहाती दुकान थी। दुकानदारसे हमने पूछा, 'भैया, अेक अच्छीसी लकड़ी दे दोगे?' मैं अेक कानसे नहीं सुनता, तो दुकानदार दोनों कानोंसे बहरा था! मेरी बात अुसकी समझमें नहीं आती थी। मैं

अधीर बन गया था। आखिर अेक साथीने अिशारेसे अुसको समझाया। अुसने तुरन्त अन्दरसे अपनी बांसकी लकड़ी ला दी। पैसे दिये तो अुसने लेनेसे अिनकार कर दिया। और लकड़ी लेकर मानो मैंने ही अुस पर अहसान किया हो, अैसी धन्यता अपनी आंखोंमें दिखाकर वह कहने लगा, 'ले जाअिये, आप ले जाअिये।' रणवीरने अुसके कानोंमें जोरसे कहा, 'ये मेहमान तो महात्मा गांधीके आश्रमसे आते हैं।' तब अुसकी धन्यता और मेरे संकोचका कोअी पार न रहा। लकड़ी लेकर मैं तो भागा।

अब हमारा बोलना बन्द हो गया। पैर दौड़ते जा रहे थे और मैं मनमें प्रार्थना करता जा रहा था। आकाशमें गुरु और शुक्र चंद्रकी कुछ टीका कर रहे थे।

मोटरवाले भाअी पहाड़के शिखर पर बैठकर हमारी राह देख रहे थे। जब हम मिले तब वे कहने लगे, 'आप दौड़ते गये और दौड़ते आये; और मैं अुतने समय शांतिसे अिस घाटीके भव्य विस्तारका, डूबते हुअे प्रकाशका और पलटते हुअे रंगोंका आनंद लूटता रहा। अब आप बताअिये, अधिक आनंद किसने लूटा?'

मैंने प्रतिध्वनिकी तरह पूछा: 'सचमुच, किसने लूटा?'

दिसंबर, १९३६

५२

गुच्छुपानी *

गुच्छुपानी कुदरतका अेक सुन्दर खेल है। मैं सन् १९३७ में देहरादून गया था, तब अेक दिनकी फुरसत थी। कअी साथियोंने कहा, "चलो हम 'गुच्छुपानी' देखनेके लिअे चलें।" अन्य साथियोंने 'सहस्र-धारा' देखनेका आग्रह किया। गुच्छुपानी नाम तो अच्छा लगा, लेकिन विस्मृतिके आवरणके नीचे दबे हुअे पुराने संकल्पने अपना मत सहस्र-धाराके पक्षमें दिया। अिसलिअे अुस समय गुच्छुपानी देखना रह गया।

१९३९ में कन्या-गुरुकुलके अुत्सवके निमित्तसे देहरादून जाना पड़ा। अिस वक्त गुच्छपानी मुझे बुलाये बगैर थोड़ा ही रहनेवाला था? देहरादूनसे गुच्छुपानी आरामसे जानेके लिअे दो-तीन घंटे काफी हैं। मोटर तो क्या, पैदल आने-जानेमें भी तीन साढ़े-तीन घंटेसे ज्यादा समय नहीं लगता। पहले तो, करीब डेढ़ मील तक मोटरके लिअे बनाया हुआ आस्फाल्टका चकलेप रास्ता हमें धीरे-धीरे अूंचे-अूंचे पेड़ोंके बीचसे होकर अूंचे चढ़ाता है; और सामनेके पहाड़ पर चमकती मसूरीकी गंधर्व-नगरीका दर्शन करवाता है। वहांके बंगलोंकी टेढ़ी-मेढ़ी कतार जब संध्या-किरणोंमें चमकने लगती है तो अैसा आभास होता है मानो चकमकके चौरस टुकड़े बिखरे पड़े हों।

रास्ता छोड़कर हम बायीं ओरके खेतमें अुतरे, तो सामने सालके बाल-वृक्षोंकी अेक घटा दिखाअी देने लगी। अिस घटाके बीचमें होकर पहाड़की अेक लड़की पत्थरोंके साथ खेलती दक्षिणकी ओर दौड़ती जाती है अुसका दर्शन हुआ। अिस समय अुसके पात्रमें पानी नहीं था। सिर्फ टेढ़े-मेढ़े लेकिन चमकीले सफेद पत्थर ही वहां बिखरे हुअे थे। आम तौर पर बिना पानीकी नदी हम पसन्द नहीं करते। लेकिन जब दोनों ओर अूंची-अूंची टेकरियां होती हैं और सारा प्रदेश निर्जन-रम्य

---

* अर्थात् पहाड़को चीरकर बहता झरना।

होता है, तो सूखी हुअी नदी भी भीषण-रमणीय रूप धारण करती है। पानीका प्रवाह भले न हो, लेकिन हरे-हरे जंगलमें से होकर सफेद धवल पत्थरोंकी पट्टी जब पहाड़ोंके बीचसे अपना रास्ता निकालती आगे बढ़ती है, तो मनमें सहज ही खयाल आता है कि ये पत्थर स्कूलके बच्चोंकी तरह खेलमें दौड़ते-दौड़ते यकायक रुक गये हैं।

हम आगे बढ़े, फिर चढ़े, फिर अुतरे। खाअियोंसे होकर गुजरना था, अिसलिअे दूर-दूर देखनेके बजाय आसमानकी ओर देखकर ही संतोष मानना पड़ता था। बीच-बीचमें पीले और सफेद फूलोंका अुड़ाअू-पन देखकर लगता था कि यहां किसीका बंगला होगा; लेकिन दूसरे ही क्षण यकीन हो जाता था कि अैसे दृश्य देखकर ही शहरके बंगले-वालोंको अपने बंगलेके अिर्द-गिर्द फूलके पौधे लगानेका खयाल आया होगा। बंगलेकी चार दीवारें तो कुदरतकी गोदसे बिछुड़े हुअे मानवके लिअे ही हैं। यहां तो कुदरतका विशाल महल है। चार दिशाअें अुसकी चार दीवारें हैं और आसमानका कटाह अुसका गुंबद। रात होनेके पहले ही अिस गुंबदमें चांद-तारोंका चंदोवा नियमपूर्वक ताना जाता है। हवाके बिगड़ने पर चंदोवा मैला न हो अिस दृष्टिसे कभी-कभी अुसके अूपर बादलका पर्दा ढंक दिया जाता है।

फूल खुशीसे हंस रहे थे। क्या मालूम किसको देखकर हंस रहे थे! अपने आनेकी सूचना तो हमने दी नहीं थी और दी भी होती तो अपने शिकारियोंका आगमन अुनको भाता या नहीं यह भी अेक सवाल है।

बीच-बीचमें छोटी झोंपड़ियां और अिन झोंपड़ियोंको अपमानित करनेवाले चूने-मिट्टीके घर भी आते रहते थे। रास्ते और म्युनिसिपैलिटीकी सुविधासे महरूम घर वनश्रीके साथ अच्छी तरहसे हिलमिल गये थे और वहांके देहाती जीवनकी शान बढ़ाते थे। गोरोंकी फौजी नौकरीसे निवृत्त हुअे गुरखे सैनिक यहां कुदरतकी गोदमें निवृत्तिका आनंद महसूस करते हैं और अपनी वृद्ध पहाड़ी हड्डियोंको आराम देते हैं।

हम आगे बढ़े। आगे यानी सीधा आगे नहीं। पहाड़ी पग-डंडियोंके चक्रव्यूहमें तो जैसा रास्ता मिलता जाता है, वैसे आगे बढ़ना

पड़ता है। बायीं ओर जाना हो तो भी कभी-कभी दाहिनी ओरका रास्ता लेकर अुसकी खुशामद करते-करते आगे बढ़ना पड़ता है। चि० चंदनने कहा, "आसपासका सुन्दर दृश्य और आसमानके पल-पलमें बदलते दृश्य हमारा ध्यान अपनी ओर खींचते हैं, लेकिन अेक पलके लिअे भी पैरकी ओरसे असावधान हुअे तो अिस पहाड़ी नदीके पत्थरोंकी तरह लुढ़कना पड़ेगा।" अुसकी बात सच थी। बड़े-बड़े पत्थरों पर पैर रखकर चलनेमें खास मजा आता है। लेकिन वे समानान्तर थोड़े ही होते हैं? अिसलिअे कौनसा पत्थर कहां है, मनुष्यके पांवका बोझ सिर पर आने पर भी अपने स्थानसे डिगे नहीं अैसा धीरोदात्त पत्थर कौन है? — अिस तरह रास्तेका 'सर्वे' करते-करते जहां आगे बढ़ना होता है, वहां हरेक कदममें अपना चित्त लगाना पड़ता है। हाथमें पूनी लेकर सूत कातते समय जैसे तसू-तसूमें हमारा ध्यान भी कतता है, वैसे ही अिस तरहकी पहाड़ी यात्रामें कदम-कदम पर हमारा चित्त यात्राके साथ ओतप्रोत होता है और अिससे ही यात्राका आनंद गहरा होता है।

अब तो अेक लंबी-चौड़ी नदी नीचे दिखाअी देने लगी। दाहिनी ओरकी दरीसे आकर बाअीं ओर दो शाखाओंमें वह विभक्त हो जाती थी। सामनेकी टेकरी परसे तारघरके खंभोंने पांच-सात तारोंकी कतारें शुरू करके अिस पार दूर तलहटीमें अिस तरह झेली थीं, मानो किसी बच्चेने अपने हाथ और अपनी आंखें यथासंभव तान कर नदीकी चौड़ाअी बतानेकी कोशिश की हो।

अुस नदीके पट पर होकर दो छोटे प्रवाह, किसी राजाके अस्त हुअे वैभवकी तरह धीमे-धीमे जा रहे थे। पानी तो बच्चोंके हास्य और रिस जैसा ही निर्मल था। अिच्छा हुअी कि थोड़ा पानी पेटमें पहुंचा दूं। लेकिन धर्मदेवजीकी रसिकता बीचमें आयी। अुन्होंने कहा, "देखिये, सामने झरना दिखाअी देता है। अेक समय था जब मैं अुसका पानी यहां आकर रोज पीता था। चलिये वहीं चलें।"

हम गये। वहां अेक छोटी पहाड़ीकी कमर पर अेक छोटा-सा ताक था। अमृत जैसे झरनेको अुसमें से निकलनेका सूझा। किसी परोपकारी

आदमीको अुस ताकके नजदीक अेक लकड़ीकी परनाली लगानेकी अिच्छा हुअी, अिसलिअे हम लोगोंको जलदान स्वीकारनेमें आसानी हुअी। पानी पीनेके पहले पश्चिमकी ओर ढलते सूर्यको अेक मनोमय अर्घ्य देना मैं न भूला।

अब तो जिस दिशामें सूर्य-किरणें फैल रही थीं, अुस ओर धीरे-धीरे नदीके पटमें हम चढ़ने लगे। आगे क्या दिखाअी देगा अुसकी निश्चित कल्पना नहीं हो सकती थी। नदीका मूल होगा? या अूपरसे पानी गिरता होगा? या सहस्रधाराकी तरह पानीमें गंधक होगा? अैसी अनेक कल्पनाअें मनमें अुठती थीं। अिस झरनेके नामके मुताबिक अुसका रहस्य भी हमारे लिअे गुह्य था। माना जाता है कि गुच्छु शब्द गुह्य परसे आया है।

सुदूर अेक कोटर दिखाअी देता था। वहां पहुंचे तो कुछ और ही निकला। वहां हमें मालूम हुआ कि गुच्छुपानीके मानी क्या हैं।

रेलवे लाअिन डालनेके लिअे जिस तरह पहाड़ तोड़कर सुरंग या टनल खोदी जाती है, अुसी तरह अेक आग्रही झरनेने सारी टेकरीको आरपार बींधकर अपना रास्ता निकाला था। नहीं, नहीं, यह तो गलत अुपमा दे दी। जिस तरह फौलादकी करवत लकड़ी या 'पोरबंदरी' पत्थरको काटती-काटती नीचे अुतरती जाती है, अुसी तरह अिस झरनेने अेक टेकरी सीधी काट डाली है। अिसमें किसी तरकीबसे काम नहीं लिया गया। वज्रकाय पाषाणोंको बींधकर पानी जब आरपार निकल जाता है, तो आश्चर्यचकित मन सवाल पूछ बैठता है कि समर्थ कौन है? अडिग पहाड़ और अुसके प्राचीन पत्थरोंकी अभेद्य दीवारें या पल भरका भी विचार किये बगैर अपना बलिदान देनेको तैयार चंचल और तरल नीर?

अुस विवर या गुफामें घुसनेकी कोशिश करते-करते दिल थोड़ा-सा कांप अुठे तो अुसमें कोअी आश्चर्यकी बात नहीं, अितना अद्‌भुत था वह दृश्य। वह मौतके मुंहमें प्रवेश करने जैसा साहस था। अंदर दाखिल होते ही मुझे तो गीताके ग्यारहवें अध्यायके श्लोक याद आने लगे। फिर भी पहाड़ और जलकी शक्तिके द्वारा

अपना सामर्थ्य व्यक्त करनेवाली प्रकृतिमाताके स्वभाव पर विश्वास रखकर हम लोग अंदर दाखिल हुअे।

अुस टेकरीके कुदरती वज्रलेपमें चुने हुअे काले, पीले और लाल गोल पत्थर अैसे दिखाअी देते थे मानो सीमेन्टसे चुने गये हों। और जलका नम्र प्रवाह पैरके नीचे छोटे-छोटे पत्थरों परसे अपनी विजय-गाथा गाता हुआ दौड़ता चला जा रहा था। सिर अूंचा करके देखा तो पानी द्वारा टेकरीको काटकर बनाअी हुअी खाली बीस-तीस फुटकी दो दीवारें अपने लाखों बरसोंके अितिहासकी गवाही दे रही थीं। मेरे बजाय कोअी भूस्तरशास्त्री यहां आया होता तो पहले वह यह देखता कि यह पत्थर ग्रेनाअीटके हैं या सैंडस्टोनके? फिर दीवारकी अूंचाअी क्या है, पानीका ढाल कितना है, हर दसवें साल पानी कितना गहरा जाता है, अिन सबका हिसाब लगाकर वह अिस कुदरती सुरंगकी अुम्र निश्चित करके कहता, "अिस पहाड़ी प्रवाहका खेल पचास हजार या दो लाख सालोंसे चला आ रहा है।" पासकी दीवारमें फंसे हुअे रंग-बिरंगे पत्थरोंको देखकर वह अुनकी अुम्र पूछता और अुनको जकड़कर बैठी हुअी मिट्टीको वज्रलेप सीमेन्ट होते कितने साल बीते होंगे अुसका हिसाब लगाकर टेकरीकी अुम्र भी (हमारे लिअे) निश्चित कर देता। और यदि अुसको यहां हुअे भूकंपका अितिहास किसीसे मालूम हो जाता तो अपने गणितमें अुसके मुताबिक परिवर्तन करके अुसने नये निर्णय भी दिये होते। अिस वज्रलेप सीमेन्टके बीचमें चमड़े या बारीक जाल जैसी डिजाअिन कैसे बनी और अुनमें से पानीके बारीक फुहारे क्यों निकलते हैं, यह भी बताया होता। सचमुच नक्षत्र-विद्याके समान यह भूस्तर-विद्या भी अद्भुत-रम्य है। मनोविज्ञानसे अुनकी खोज कम अटपटी नहीं है। ये तीन विद्यायें मानव-बुद्धि-बलका अद्भुत-रम्य विलास हैं।

हम अुस गुफामें दूर तक चले गये। अेक जगह अूंचे भी चढ़ना पड़ा। पासमें ही पानीका छोटा-सा प्रपात गिर रहा था। थोड़ा आगे बढ़े तो पत्थर और चूनेसे बंधी हुअी दो दीवारें देखकर कोशिश करने पर भी मैं अपना हंसना रोक न सका। मानवने सोचा कि पहाड़का हृदय बींधकर आरपार निकलनेवाले पानीको हम दो दीवारोंसे रोक सकेंगे!

मेरी भावनाको समझते ही वह विजयी प्रपात मुझसे कहने लगा, "और मैं भी अुसी कारण हंसता हूं।" पहाड़का चीरा हुआ हृदय भग्न होने पर भी भव्य दिखायी देता था। लेकिन मानवकी टूटी हुअी दीवारें अुसके मनोरथकी तरह तिरस्कार और हास्यके भाव पैदा करती थीं। किसी अुद्दाम आदमीको तमाचा पड़े और अुसका मुंह मुरझाया हुआ दिखाअी दे, अिस तरह अिन दीवारोंको अधिक समय तक देखनेकी अिच्छा भी नहीं होती थी। लंबे अर्से तक किसीकी फजीहतके साक्षी भी हम कैसे रह सकते हैं?

अंदर आगे बढ़नेके साथ अुस विवरकी शोभा बढ़ती ही जाती थी। अितनेमें अुन दो दीवारोंके बीच अेक बड़ा पत्थर गिरता गिरता अटका हुआ दिखाअी दिया। अूपरसे वह कूदा होगा। और पासकी स्नेहमयी दीवारोंने अुससे कहा होगा, "अरे भाअी ठहर जा, पानीके खेलमें खलल न पहुंचा।" वेचारा क्या करे! लटका हुआ वहीं खड़ा है। अुलटे सिर लटकते हुअे पानीका खेल मजबूरन देखना अुसकी किस्मतमें लिखा था। अुस पर तरस खाते हुअे हम आगे बढ़े तो अेक दूसरा पत्थर अुसी तरह लटकता हुआ और अपनी पीठ पर अपनेसे तीन गुने बड़े पत्थरका बोझ लादे रुका हुआ दिखाअी दिया। हम अुसके नीचेसे भी गुजरे। अगर पासकी दीवारें जरा (धंसकर) चौड़ी हो जातीं, तो हमारी हड्डियां चकनाचूर हो जातीं और दो-चार क्षणके लिअे पानीका रंग लाल-लाल हो जाता। फिर कुदरत कहती कि मुझे कुछ भी मालूम नहीं है। दो-चार मानव यहां आये होंगे और अुन्होंने अपनी निरर्थक जिज्ञासाकी कीमत चुकाअी होगी। यह बात ध्यानमें रखनेके योग्य थोड़ी ही है! अुनके जैसे दूसरे मानव जब कभी यहां आ पहुंचेंगे तब पत्थरोंमें दबे हुअे कअी अवशेष अुनको मिलेंगे। और वे सच्ची-झूठी कल्पनाओं पर सवार होकर अेकाध प्रकरण खड़ा करेंगे। बस और क्या?

चलते-चलते हम थके तो नहीं, लेकिन ठंडे पानीमें नुकीले पत्थरों पर नंगे पैर चलते-चलते पैर दुखने लगे अिसका अिनकार नहीं हो सकता। लेकिन अुस गुफा-प्रवेशकी अद्‌भुतताका अनुभव करते करते

हम अघा गये। अंदर आगे बढ़ते-बढ़ते भला कितना बढ़ सकते थे? आखिर आगे बढ़नेका हौसला मंद हो गया। लेकिन मन कहने लगा, हारकर वापस कैसे जायं? यहां तक आये हैं तो आरपार जाना ही चाहिये। जो दूसरा सिरा न देखे वह मानवी मन नहीं है।

आगे बढ़ते ही पाट थोड़ा चौड़ा हुआ और पानीकी भीषणता कम हो गयी। अिसलिअे सयाने बनकर हमने मान लिया कि अब आगेका दृश्य नीरस ही होगा। वहां न गये तो चलेगा। हम वापस लौटे। फिर वही दृश्य, वही डर! वही जिज्ञासा और वही भावनायें!!

अुस गुफासे बाहर निकलते निकलते पूरे सोलह मिनट लगे!!! मैंने अपनी आदतके मुताबिक अिस यात्राके स्मारकके तौर पर दो सुन्दर मुलायम पत्थर ले लिये। और अंधेरेमें तेज कदम बढ़ाते-बढ़ाते घर लौटे। मनमें अेक ही सवाल अुठ रहा था: कौन समर्थ है? ये वज्रकाय पुराने पहाड़ या यह नम्र किन्तु आग्रही जीवनधर्मी सत्याग्रही नीर?

५३
नागिनी नदी तीस्ता

जब मैं कुछ साल पहले दार्जिलिंग और कालिंगपांगकी ओर गया था, तब मैंने तीस्ता नदीका प्रथम दर्शन किया था। प्रथम दर्शनसे ही तीस्ताके प्रति असाधारण प्रेम बंध गया। अगर तीस्ताके बारेमें कुछ पौराणिक कथा या माहात्म्य मैं जानता होता तो अुसके प्रति मनमें भक्ति पैदा हो जाती। लेकिन यह तूफानी नदी हिमालयके पहाड़ोंके बीचसे अपना रास्ता निकालती, चट्टानोंसे टकराती, प्रवाहके बीच पड़े हुअे छोटे-बड़े पत्थरोंका मंथन करती और तरह-तरहकी गर्जना करती हुअी जब दौड़ती आती है, तब अुसका अुत्साह, अुसका दृढ़ निश्चय और अुसका अमर्ष देखकर अुसके प्रति प्रेम और आदर बंध जाते हैं, भक्ति नहीं।

जब तीस्ताका प्रथम दर्शन हुआ, तब मनमें संकल्प अुठा कि अिस नदीका पहाड़ी जीवन कुछ तो देखना ही चाहिये। जोरोंसे बहनेवाली पहाड़ी नदीके अूपर जो बेंतके या रस्सीके खतरनाक पुल बांधे जाते हैं, अुन पर खड़े होकर प्रवाहकी ओर देखनेमें अेक विचित्र अनुभव होता है। अैसा लगता है कि यह पुल नदीके प्रवाहका मुकाबला करते हुअे अूपरकी ओर जोरोंसे दौड़ रहा है। जितने ज्यादा समय तक हम ध्यानसे देखते हैं, अुतनी ही यह प्रतीप-गामी भ्रांति बढ़ती जाती है।

अेक दिन मैंने मनमें कहा कि अिसे भ्रांति क्यों मानें? यह अेक तरहकी दीक्षा है। अिस अनुभवके द्वारा निसर्ग हमें कहता है, 'जितनी बेपरवाहीसे यह पानी पहाड़से आकर मैदानकी ओर दौड़ रहा है और सागरको ढूंढ़ रहा है, अुतनी ही बेपरवाहीसे और अदम्य कुतूहलसे अिस प्रवाहके किनारे-किनारे पूरा खतरा मोल लेकर अूपरकी ओर चले जाओ और अिस नदीका अुद्‌गम-स्थान ढूंढ़ लो।'

जब पहाड़की कोअी नदी सरोवरसे निकलकर आती है, तब अुसे सर्‌-यू या सरो-जा कहते हैं। जब वह पर्वत-शिखरोंकी गोदमें अिकट्ठी हुअी हिमराशिसे निकलती है, तब अुसे हैमवती कहना चाहिये। यों तो पर्वतसे निकलनेवाली सब नदियोंका सामान्य नाम पार्वती है ही। हिमालय-पिताकी अिन सब लड़कियोंके नाम अगर अेकत्र किये जायं तो अुनकी संख्या कअी सहस्र हो जायगी।

तीस्ताका असली नाम त्रिस्रोता है। अुत्तर-पूर्व अफ्रीकामें नील नदीके दो अलग-अलग अुद्‌गम हैं और दोनों स्रोत दूर दूरके दो सरोवरोंसे ही निकलते हैं — सफेदरंगी नील और नीलरंगी नील। दोनोंके संगमसे मिश्र देशकी माता बड़ी नील बनती है। अुसी तरह तीस्ता भी तीन स्रोतोंके संगमसे बनी हुअी है। अेक स्रोतका नाम है 'लाचुंग चू' (चू यानी नदी)। यह नदी 'कान् चेन् झौंगा' शिखरके दक्षिणसे निकलती है। दूसरे स्रोतका नाम है 'लाचेन् चू'। यह नदी पाव हुन् री शिखरके अुत्तरसे निकलकर तथा चो ल्हामो और गोरडामा दो सरोवरोंका जल लेकर रास्ता निकालती-निकालती प्रथम पश्चिमकी ओर बहती है, फिर धीमे-धीमे दक्षिणकी ओर मुड़ती है।

अिन दोनोंका संगम जहां होता है, वहां चुंग थांगका बौद्ध-मंदिर है। लाचून् चू और लाचेन् चू अिन दो नदियोंके संगमसे जो नदी बनती है, अुसे पंचहिमाकर (कान् चेन् झौंगा), सीम् व्हो और सिनो लो चू अिन तीन गगनभेदी शिखरोंकी गोदमें जो हिमराशियां हैं अुनका पानी लानेवाली तालूंग चू मिलती है, तब अिन तीन स्रोतोंसे तीस्ता बनती है। और फिर वह सीधी दक्षिणकी ओर बहने लगती है। कुछ आगे जाने पर अुसे दाहिनी और बाअीं ओरसे छोटी-मोटी अनेक नदियां मिलती हैं। अिनमें महत्त्वकी हैं दिक् चू, रोरो चू, रोंगनी चू, रंगपो चू, और बड़ी रंगीत चू।

जहां-जहां दो नदियोंके संगम होते हैं, वहां-वहां अेक बौद्ध मंदिर पाया ही जाता है, जिसे यहांके लोग गोम्पा कहते हैं।

जब मैंने तीस्ताके आकर्षणसे सबसे पहले अिन पहाड़ोंमें प्रवेश किया था, तब मैंने रंगीत नदीका संगम और रंगपो नदीका संगम देखा था। संगमके दोनों स्रोतोंके रंग यहां अलग-अलग होते हैं। अबकी बार अिन दो संगमोंको तो आंख भरके देखा ही, लेकिन सिक्कीमकी राजधानी गंगतोकके पूर्वकी नदी रोरो चू और रोंगनी नदीका संगम भी मैंने सिंगटंगमें देखा। संगम यानी जीवित काव्य।

महाविजय पानेके लिअे अनेक राजाओंकी सेनाअें जैसे अेकत्र होती हैं और अुनकी संकल्प-शक्ति बढ़ती है, वैसे ही अिन सब नदियोंका जल-भार पाकर तीस्ता नदी जलवती, वेगवती और संकल्पशालिनी बनती है और पहाड़ोंसे लड़ते-लड़ते मैदानमें आ पहुंचती है। यहां वह शिलीगुड़ी तक न जाकर जलपायगुड़ीके रास्ते पाकिस्तानमें प्रवेश करती है और रंगपुरका दर्शन करते हुअे आखिरमें ब्रह्मपुत्रसे जा मिलती है।

हमारे पुरखोंने नदियोंके दो विभाग बनाये हैं। जब कोअी नदी अनेक नदियोंका पानी लेकर पुष्ट होती है, तब अुसे युक्तवेणी कहते हैं। सफेद गंगा, श्याम यमुना और 'मध्ये गुप्ता' सरस्वती मिलकर प्रयागराजके पास त्रिवेणी बनती है। पंजाबमें सिंधु सात नदियोंका पानी पाकर युक्तवेणी बनती है। बादमें जाकर जब वह नदी स्वयं अनेक विभागोंमें बंट जाती है और अनेक मुखोंसे समुद्रमें मिलती है,

तब अुसे मुक्तवेणी कहते हैं। नदियोंके जीवनके हम दूसरी तरहसे भी दो विभाग बना सकते हैं। पहाड़ोंका बद्ध जीवन और खुले मैदानका मुक्त जीवन। गंगानदीका पार्वत जीवन हरद्वारके पास खतम होता है। फिर तो जहां जमीन मजबूत है, वहां वह अेक धारा बना लेती है। लेकिन जहां भूमि बंगालके जैसी बिना पत्थरवाली और समतल होती है, वहां अुसकी अनेक धाराअें भी बनती हैं। हम कह सकते हैं कि नदीका पार्वत जीवन कुमारीके जीवनके जैसा अल्हड़ होता है। मैदानमें जाते ही अनेक खेतोंको स्तन्यपान कराते-कराते वह प्रजाओंकी माता बनती है। दार्जिलिंग और कालिंगपांगके पहाड़ोंसे निकलनेके बाद तीस्ताको सिर्फ अेक-दो बंधन सहन करने पड़ते है और वे हैं — असमकी ओर जाने-वाली रेलोंके पुलोंके। अेक है भारतवर्षका नया बनाया हुआ असम-लिंकका पुल और दूसरा है हमारा ही बनाया हुआ लेकिन पाकिस्तानके हाथमें गया हुआ रंगपुरके नजदीकका दूसरा पुल।

तीस्ता नदीका मैदानी जीवन कुछ विचित्र-सा है। तिब्बतकी बहुपति-प्रथाका शायद अुसे स्मरण है। अेक समय था जब तीस्ता गंगा नदीसे मिलती थी। अिन सौ-दो-सौ बरसके अन्दर अुसने अनेक पराक्रम किये हैं और वहांके लोगोंसे 'पागला' नाम भी प्राप्त किया है। आज भी अुसका अेक प्रवाह छोटी तीस्ताके नामसे पहचाना जाता है, दूसरा प्रवाह है बूढ़ी तीस्ता और तीसरा है मरा तीस्ता। अुसने अपना जलभार करतोया नदीको देकर देखा, घाघातको भी दिया। मैदानमें तो वह युक्तवेणी भी बनती है और मुक्तवेणी भी। तीस्ताके चंचल स्वभावको पहचानना और अुसका अनुनय करना मनुष्यके लिअे आसान नहीं है। वह अितना स्थलान्तर करती है कि अुसके अनेक प्रवाहोंको स्थायी नाम देना और अुनको याद करना भी मुश्किल है। कहते हैं कि 'कालिकापुराण' में तीस्ताका जिक्र है। वहां कथा अैसी है कि देवी पार्वती किसी असुरसे लड़ती थीं। वह मत्त असुर कहता था कि मैं शिवजीकी अुपासना करूंगा, लेकिन पार्वतीकी नहीं। पार्वतीका और अुस असुरका घोर युद्ध हुआ। लड़ते-लड़ते असुरको बड़ी प्यास लगी। अुसने शिवजीसे प्रार्थना की कि 'प्रभु, मेरी प्यास बुझा

दो!' और कैसा आश्चर्य! प्रार्थना शिवजीके चरणों तक पहुंचते ही पार्वतीके स्तनोंसे स्तन्यधारा वहने लगी। वही है हमारी तीस्ता। कहते हैं असुरेश्वरकी तृष्णा वुझानेका काम अिस नदीने किया, अिसलिअे अिसका नाम हुआ तृष्णा और तृष्णाका ही प्राकृत रूप है तीस्ता। हमारे ध्यानमें नहीं आता कि नदीको कोअी तृष्णा कैसे कह सकता है। 'तृष्णा' का 'तण्हा' हो सकता है। लेकिन णकारका लोप ही हो जाना ठीक नहीं लगता है।

कुछ भी हो, तीस्ताका जीवन-क्रम शुरूसे आखिर तक आकर्षक और संस्मरणीय है। पहाड़ोंमें जहां ये नदियां वहती हैं, वहां गरमी वहुत रहती है। अिसलिअे मलेरियाके जन्तु, दंश-मशक भी वहुत होते हैं। शायद यही कारण होगा कि तीस्ताके नाम कोअी लोकगीत नहीं पाये जाते हैं।

लेकिन अव तो हम लोगोंने विज्ञान-युगमें प्रवेश किया है। मलेरियाके मच्छरोंका अिलाज हो सकता है। जहां नदी जोरोंसे वहती है, वहां अुस पर यंत्रका जीन कसकर अुससे काफी काम लिया जा सकता है। तीस्ताका अुद्‌गम शायद पांच-सात हजार फुटकी अूंचाअी पर है। जव वह पहाड़ी मुल्क छोड़ती है, तव अुसकी अूंचाअी समुद्रकी सतहसे सिर्फ सात सौ फुटकी होती है। देखते-देखते जो नदी छः हजार फुटकी अूंचाअी खोती है, अुसके पाससे चाहे-सो काम लिये जा सकते हैं। आरेसे लकड़ी चीरनेका और आटा पीसनेका काम तो ये नदियां करती ही हैं। अव अिनसे विजली पैदा करनेका वड़ा काम लिया जायगा। फिर तो सारे सिक्कीम राज्यका रूप ही वदल जायगा।

हमारे धर्मप्राण पूर्वजोंकी यंत्रवुद्धि भी धर्मकार्यमें ही लगती थी। अेक जगह पर हमने देखा कि पहाड़के स्रोतके सामने अेक चक्र रखकर अुसके जरिये 'ओम् मणिपद्मे हुं' के जापका लकड़ीका वल्ला या जाठ घुमाया जाता है। और अिस तरह जो यांत्रिक जाप होता है अुसका पुण्य यंत्रके मालिकको मिलता है।

अैसे पुण्यका वड़ा हिस्सा नदीको ही मिलना चाहिये।

७-१०-'५६

५४

परशुराम कुंड

भारतकी करीब करीब अुत्तर-पूर्व सीमाके पास लोहित-ब्रह्मपुत्रके किनारे ब्रह्मकुंड या परशुराम कुंड नामका अेक तीर्थस्थान है। तिब्बत, चीन और ब्रह्मदेशकी सरहदके पास, वन्य जातियोंके बीच, भारतीय संस्कृतिका यह प्राचीन शिविर था। पश्चिम समुद्रके किनारे सह्याद्रिकी तराअीमें जिसने ब्राह्मणोंको बसाया अैसे भार्गव परशुरामने सारे भारतकी यात्रा करते करते अुत्तर-पूर्व सीमा तक पहुंचकर ब्रह्मकुंडके पास शांति पायी। यह है अिस स्थानका माहात्म्य।

जबसे मैं असम प्रान्तमें जाने लगा तबसे परशुराम कुंड जाकर स्नान-पान-दानका सुख पानेकी मेरी अिच्छा थी। राजनैतिक, भौगोलिक और सामयिक कठिनाअियोंके कारण आज तक वहां न जा सका था। लेकिन जब सुना कि महात्माजीकी चिता-भस्मका विसर्जन अन्यान्य तीर्थोंके जैसा परशुराम कुंडमें भी हुआ है, तब वहां जानेकी अुत्कंठा बढ़ी। अिस साल सुना कि असम प्रान्तके कअी लोकसेवक १२ फरवरीको सर्वोदय मेलेके निमित्त वहां जानेवाले हैं, तब तो मनका निश्चय ही हो गया कि अिस मौकेको छोड़ना नहीं चाहिये। पलाश-वाड़ीके पास कअी बरसोंसे चलनेवाले मोमान आश्रमके श्री भुवनचन्द्र दासको मुझे बुलानेमें कुछ भी तकलीफ न पड़ी।

बार बार भू-भ्रमण करके भूगोल-विद्याको बढ़ानेवाले हमारे जो प्रधान भूगोलविद् पुराणोंमें पाये जाते हैं, अुनमें नारद, व्यास, दत्तात्रेय, परशुराम और बलरामके नाम सब जानते हैं। अिनमें भी व्यास और परशुराम अपनी-अपनी विभूतिकी विशेषताके कारण चिरजीवी हो गये हैं। भारतीय संस्कृतिके संगठन और प्रचारका कार्य महर्षि व्यासने जैसा किया वैसा और किसीने नहीं किया होगा। अिसीलिअे तो अुनको वेद-व्यास (organiser) का अुपनाम मिला। अुनका असली नाम था कृष्ण द्वैपायन।

और परशुराम थे अगस्त्य ऋषिके जैसे संस्कृति-विस्तारक (pioneer of culture)। प्राचीन कालमें मनुष्य-जातिको जीनेके लिअे दारुण युद्ध करना पड़ता था — जंगलोंके साथ और जंगलोंके पशुओंके साथ। जंगलोंने आक्रमण करके मानव-संस्कृतिको कअी बार हजम किया है। जिसका सबूत आज भी कम्बोडियामें आन्कोर वाट और आन्कोर थॉममें मिलता है। अूंचे-अूंचे राजप्रासाद और बड़े बड़े मंदिरोंके शिखरों तक मिट्टीके ढेर लग गये; और जंगलके महा-वृक्षोंने अपनी पताका अुन पर लगा दी। हमारे यहां भी असंख्य छोटे-बड़े मंदिर अश्वत्थ और पीपलकी जड़ोंके जालमें फंसकर टेढ़े-मेढ़े हो गये पाये जाते हैं।

अैसे युगमें परशु (कुल्हाड़ी) लेकर मानव-संस्कृतिका रक्षण और विस्तार करनेका काम किया था भगवान परशुरामने। पुराणकी कथा कहती है कि जन्मके साथ परशुरामके हाथमें परशु था। धनी मां-बापके घर जिसका जन्म हुआ है अुसके बारेमें अंग्रेजीमें कहते हैं कि 'He is born with a silver spoon in his mouth' — चांदीका चम्मच मुंहमें लेकर ही यह लड़का जन्मा है। अैसी ही बात परशुरामकी थी।

परशुराम जातिका ब्राह्मण था, लेकिन अुसके सब संस्कार क्षत्रियके थे। जंगलोंका नाश करनेके लिअे कुल्हाड़ी चलाते चलाते अुसने सम्राट् सहस्रार्जुनके हजार हाथों पर भी कुल्हाड़ी चलायी। और क्षत्रियोंके आतंकसे चिढ़कर अुसने अुनके विरुद्ध २१ बार युद्ध किया। क्षात्र पद्धतिसे क्षत्रियोंका नाश करनेकी कोशिश अिस क्षत्रिय ब्राह्मणने २१ बार की। अुसीका अनुभव अुसके अनुगामी ब्राह्मण क्षत्रिय गौतम बुद्धने अेक गाथामें ग्रथित किया है:

नहि वेरेन वेरानि संमंतीध कुदाचनं ।

अिस परशुरामके क्रोधी पिताने अपने अन्य पुत्रोंको आज्ञा दी कि 'तुम्हारी माता कुलटा है, अुसे मार डालो।' अुन्होंने अिनकार किया। जमदग्निकी क्रोधाग्नि और भी बढ़ गयी। अुसने परशुरामको

ओर मुड़कर कहा, 'बेटा, तुम मेरा काम करो। अिस रेणुकाको मार डालो।' कुल्हाड़ी चलानेकी आदतवाले आज्ञाधारी पुत्रको सोचना नहीं पड़ा। अुसने माताका सिर तुरन्त अुड़ा दिया। पिता प्रसन्न हुअे और कहा, 'चाहे जितने वर मांग। तूने मेरा प्रिय काम किया है।' पुत्रको अब मौका मिल गया। पिताकी सारी तपस्या चार वरमें अुसने निचो ली। 'मेरी माता फिरसे जीवित हो। मेरे भाअियोंको आपने शाप देकर जड़ पाषाण बनाया है वे भी जीवित हों, अपनी हत्या और सजाकी बात वे भूल जायं। मैं मातृहत्याके पापसे मुक्त हो जाअूं, और चिरजीवी बनूं।' पिताने कहा, 'और तो सब दे दूंगा, लेकिन मातृ-हत्याका पाप धो डालनेकी शक्ति मेरी तपस्यामें भी नहीं है।' मायूस होकर परशुराम वहांसे चला गया। आगे जाकर परशुधर रामको धनुर्धर रामने परास्त किया, क्योंकि युद्धशास्त्र बढ़ गया था। परशुकी अपेक्षा धनुष-बाणकी शक्ति अधिक थी; और दूर तक पहुंचती थी। परशुरामने भारत-भ्रमणमें सारी आयु बितायी। अनेक तीर्थोंका और संतोंका दर्शन किया। चित्तवृत्तिमें अुपशमका अुदय हुआ और लोहित-ब्रह्मपुत्रके किनारे ब्रह्म-कुंडमें अुसके हाथकी कुल्हाड़ी छूट गयी। यही शस्त्र-संन्यासके अिस तीर्थस्थानका माहात्म्य है। परशु-रामकी जीवन-कथामें पश्चिम किनारेसे लेकर अुत्तर-पूर्व सिरे तकका भारतका, किसी जमानेका, सारा अितिहास आ जाता है। परशुराम कुंडकी यात्रा करके कअी साधु-संतोंने यहांकी वन्य जातियोंको भारतकी संस्कृतिके संस्कार दिये हैं। अिस प्रदेशका लोक-मानस कहता है कि रुक्मिणी हमारे यहांकी ही राजकन्या थी, अिसलिअे श्रीकृष्ण हमारे दामाद होते हैं।

जिस तरह प्राचीन कालके सांस्कृतिक अग्रदूत यहां आये, वैसे 'अवेर' का अुपदेश करनेवाले बुद्ध भगवानके शिष्य भी यहां आये होंगे। बौद्ध भिक्षु हिमालय लांघकर तिब्बत भी गये थे, और जहाजके रास्ते चीन भी गये थे। अुसके बाद असम प्रान्तमें अहिंसा धर्मकी नयी बाढ़ आयी श्री शंकरदेवके जमानेमें। श्री शंकरदेव असली शाक्त थे। अुस पंथके दुराचारसे अूबकर वे वैष्णव हुअे और अुन्होंने सारे

असम प्रान्तमें धर्मोपदेश, नाटच, संगीत, चित्रकारी आदि द्वारा समाज-शुद्धिका और संस्कृति-विस्तारका काम दीर्घकाल तक किया। अिसी तरह चैतन्य महाप्रभुके वैष्णव धर्मका प्रचार मणिपुरकी तरफ हुआ। शंकरदेवका प्रभाव असम प्रान्तके पर्वतीय लोगोंमें पड़ना अभी बाकी है।

अहिंसा-धर्मकी ताजी और सबसे बड़ी बाढ़ महात्मा गांधीजीके सत्याग्रह-स्वराज्य-आन्दोलनसे असम प्रान्तमें पहुंची। अुसका अधिकसे अधिक असर पड़ना चाहिये खासी, नागा, मिशमी, अबोर, डफला आदि पहाड़ी जातियों पर। अिसके लिअे शिलांग, कोहीमा, मणिपुर, सादिया आदि प्रधान केन्द्रोंके अिर्दगिर्द अनेक आश्रमोंकी स्थापना करना जरूरी है।

अिनमें सादिया अेक अैसा स्थान है जिसके आसपास ब्रह्मपुत्रको मिलनेवाली अनेक नदियों और अुपनदियोंका पंखा बनता है। नोआ डिहंग, टेंगापानी, लोहित, डिगारू, देवपाणी, कुण्डिल, डिबंग, सेसेरी, डिहंग, लाली आदि अनेक नदियां अपना पानी दे देकर ब्रह्मपुत्रको जलपुष्ट बनाती हैं। सादियासे अनेक रास्ते अनेक दिशामें जाकर अनेक वन्य जातियोंकी सेवा करते हैं। खुद सादियाके अिर्दगिर्द जो चुलेकाटा मिशमी लोग रहते हैं वे स्वभावके सौम्य हैं। अिसीलिअे शायद अुनके अंदर सभ्य समाजके कअी दुर्गुण और रोग फैल गये हैं। मूल ब्रह्मपुत्रका अुत्तरी नाम दिहंग है। अुसके भी अूपर जब वह मानस सरोवरसे निकलकर हिमालयके समानांतर पूरबकी ओर बहती आती है, तब अुसे सानपो कहते हैं।

अिन सब नदियोंके किनारे हमारे जो पहाड़ी भाअी रहते हैं अुनको अपनाना हमारा परम कर्तव्य है। यह काम सरकारके जरिये पूरी तरह नहीं होगा। अुसके लिअे परशुराम और बुद्धके जैसे संस्कृति-धुरीण महापुरुषोंकी आवश्यकता है। अर्थात् अुनके पास नयी दृष्टि, नयी शक्ति और नया आदर्श होना चाहिये।

यह सारा काम कौन करेगा ? भारतके नवयुवकोंका और युवतियोंका यह काम है। अीसाअी मिशनरियोंने अपनी दृष्टिसे भला-बुरा

बहुत कुछ काम किया है। अुनकी नीयत हमेशा साफ रही है, अैसा भी हम नहीं कह सकते। अैसी हालतमें देशके नेताओंको चाहिये कि वे दीर्घ दृष्टिसे अिन सब स्थानोंका निरीक्षण करें और नवयुवकोंको मानवताके नामसे शुद्ध संस्कृतिकी प्रेरणा देनेके लिअे अिस प्रदेशमें भेजें।

वर्धा, २१-३-'५०

५५

दो मद्रासी बहनें

अिन दो बहनोंके प्रति मेरी असीम सहानुभूति है। मद्रास शहरने जैसा अिनका महत्त्व बढ़ाया है, वैसी ही अिनकी अुपेक्षा भी की है।

यों तो मद्रास शहरका महत्त्व भी कृत्रिम है। न अुसके पास कोअी सुन्दर पर्वत है, न कोअी महानदीकी खाड़ी है। तिजारतकी दृष्टिसे या फौजी दृष्टिसे मद्रासका कोअी असली महत्त्व नहीं है। लेकिन अितिहास-क्रमके कारण अंग्रेजोंको यही स्थान पसन्द करना पड़ा। यहांके स्थानिक लोगोंका प्रेम अिस शहरके प्रति कम था अैसा तो कोअी नहीं कह सकते। जिन भारतीयोंने या धीवर आदिवासियोंने अिस शहरका नामकरण 'चन्नपट्टनम्' यानी सुवर्णनगरी किया होगा, क्या अुन्होंने अिस शहरके भाग्यके बारेमें पहलेसे सोचा होगा?

कुछ भी हो, जबसे अंग्रेजोंने यहां अपनी कोठी डाली तबसे अिस शहरका भाग्य और वैभव बढ़ता ही गया है और अैसे शहरकी सेवा करनेवाली अिन दो बहनोंका भाग्य भी बदलता गया है। अेकका नाम है 'कूवम्' और दूसरीका नाम है 'अड्यार'। ये दोनों नदियां पूर्वगामी होकर बंगालके अुपसागरसे यानी पूर्व-समुद्रसे मिलती हैं।

मद्रास और अुसके अिर्दगिर्दकी भूमि बिलकुल समतल है। यहां छोटे-बड़े अनेक तालाब व सरोवर हैं। लेकिन अब अुनकी कोअी शोभा नहीं रही।

तर्क-बुद्धि कहती है कि जमीन अगर समतल हो और पथरीली न हो, तो नदीको अपना पात्र सीधा खोदनेमें या चलानेमें कोअी बाधा नहीं होनी चाहिये। लेकिन नदियोंका अैसा नहीं है। कुछ हद तक नदी अेक ओर झुकेगी, वहांसे थककर मोड़ लेगी और दूसरी ओर पहुंच जायगी। फिर आगे बढ़ते हुअे दिशा बदल देगी। और अिस तरह नागमोड़ी वक्रगतिसे आगे बढ़ती जायगी।

पहाड़ी नदियोंकी तो लाचारी होती है। पर्वत और टेकरियोंके बीच जहांसे मार्ग मिले, अुसी मार्गसे जानेके लिअे वे बाध्य होती हैं। तीस्ता कहेगी, "मैं स्वभावसे नागिनी नहीं हूं। वक्रगति मेरा स्वभाव नहीं, किन्तु वह मेरा भाग्य है।" काश्मीरमें बहनेवाली वितस्ता या झेलम अपना अैसा बचाव नहीं कर सकेगी। करीब करीब चक्राकार घूमते जाना और आगे बढ़नेका तनिक भी अुत्साह नहीं रखना, यह है काश्मीर-तल-वाहिनी वितस्ताका स्वभाव। बिहारमें बहनेवाली असंख्य नदियोंके बारेमें भी यही कहा जा सकता है। किसी समय मुझे बिहार प्रांतमें अनेक जगह हवाअी जहाजसे मुसाफिरी करनी पड़ी थी। पता नहीं कितनी बार बिहारके आकाशको मैंने अनेक दिशाओंसे बींध दिया होगा। हवाअी-जहाजकी दूर दूरकी लम्बी मुसाफिरीमें भी काफी अूंचाअीसे मैंने बंगाल और बिहारकी नदियां देखी हैं और अुनका वक्र-मार्ग-नैपुण्य देखकर अुनका आदर किया है।

भारत-भूमिका अेक बड़ा मानचित्र बनाकर अुस पर अगर केवल नदियोंके मार्गकी रेखाअें खींची जायें तो वह वक्र-रेखाओंका महोत्सव बड़ा ही चित्ताकर्षक होगा। नदीको दाहिनी ओर और बायीं ओर मुड़े बिना संतोष ही नहीं होता। अेक ओरके अूंचे किनारेको घिसते जाना और दूसरी ओरके निम्न किनारेको हर साल डुबोकर कुछ समयके लिअे वहां जल-प्रलयका दृश्य खड़ा करना यह नदियोंकी वार्षिकी क्रीड़ा ही है।

लेकिन जब नदियां बड़े-बड़े शहरोंकी बस्तीमें फंस जाती हैं, अथवा दयालु होकर अपने दोनों ओर मनुष्यको बसने देती हैं, तब अुनका यह स्वच्छंद विहार सदाके लिअे बंद हो जाता है और तबसे अुनका जीवन तांगा खींचनेवाले घोड़ेके जैसा हो जाता है। अैसी हालतमें नदियां अगर अपना मोड़ कायम रखें तो भी अुनकी शोभा तो नष्ट हो ही जाती है।

लंदनमें टेम्स नदी, पेरिसमें सीन नदी और लिस्बनमें टेगस नदी अिन तीनोंकी बंधन-दुर्दशा देखकर मेरा हृदय कअी बार रोया है। और जब मानिनी और स्वच्छंद विहारिणी नील-नदी लाचार होकर अल्काहेरा (कायरो) शहरके बीचसे जाती है, तब तो दुःखके साथ क्रोध भी जाग्रत होता है। और नदीका अपमान करनेवाली मानव-जातिका शासन कैसे किया जाय अैसे विचार भी मनमें अुठते हैं।

अड्यार और कूवम् अिन दोमें से कूवम्‌को बंधनका दुःख ज्यादा सहन करना पड़ा है, क्योंकि वह शहरके बीचसे घूमती है। अड्यार शहरके दक्षिण किनारे पर होनेसे अुसे कुछ अवकाश मिला है।

लेकिन — यहां पर भी लेकिन आ गया है — जहां मनुष्यने अपमान नहीं किया, वहां अिस सरिताका सरित्पतिने अपमान किया है। विचारी अुत्साहके साथ समुद्रको मिलने जाती है और बेकदर समुद्र अूंची-अूंची लहरोंके साथ रेत ला-लाकर अुसके सामने अेक बहुत बड़ा बांध या सेतु खड़ा कर देता है।

देवी वासंतीका ब्रह्मविद्या-आश्रम जब सबसे पहले मैं देखने गया था, तब सागर-सरिता-संगमकी भव्यता देखनेके हेतु नदीके मुख तक पहुंच गया था। और क्या देखता हूं — खंडिता अड्यार अपना पानी ला-लाकर मार्ग-प्रतीक्षा कर रही है और समुद्र अपने खड़े किये हुअे बांधके अुस ओर लहरोंका विकट हास्य हंस रहा है। समुद्रके प्रति मनमें क्रोध तो आया ही। क्या अिसमें तनिक भी दाक्षिण्य नहीं है? थोड़ा-सा तो मार्ग देता। लेकिन सरिता और सरित्पतिके बीच फैले हुअे सेतु परसे चलते चलते मनमें यही विचार आया कि अड्यारके अपमानमें मैं भी शरीक हूं। सेतु परसे अुस पार जानेके

वाद वापस तो आना ही पड़ा। अुसके वाद आज तक कओ वार मद्रास गया हूं, भगवती अड्यारका दर्शन भी किया है, लेकिन अुस वांघ परसे जानेका जी ही नहीं हुआ।

कूवम्के पानीसे अड्यारका पानी ज्यादा स्वच्छ मालूम होता है। वहांकी हवा स्वच्छ होनेसे पानी चमकीला भी दीख पड़ता है। अिस नदीके वीच अुत्तरकी ओर अेक लक्ष्मीपुत्रका सफेद प्रासाद है। वह नदीकी शोभाको भ्रष्ट नहीं करता। नदीके कारण वह ज्यादा अुठाव-दार हो गया है।

मैं जव जव अड्यार गया हूं, अुसके किनारेके नारियलका मीठा पानी मैंने पिया है और अुसीको अुस लोकमाताका प्रसाद माना है। अड्यारके साथ कूवम्का दर्शन भी होता ही है। लेकिन अुसके लिअे तो आज तक मनमें दया ही दया पैदा हुअी है, हालांकि मद्रासके सेंट जॉर्ज फोर्टके कारण अुसकी शोभा साधारण कोटिकी नहीं है।

अंग्रेजोंने अड्यारसे लेकर कूवम् तक अेक छोटी नहर दौड़ायी है, जिसे अुन्होंने 'वकिंगहेम केनाल' का नाम दिया है। अिस केनालसे क्या लाभ हुआ है सो तो मैं नहीं जानता। लेकिन अुसका नाम जितनी दफा मैंने सुना अुतनी दफा वह मुझे अखरा ही है।

ये नदियां मद्रास शहरके वीच न होतीं तो शायद अिन्हें मैं श्रद्धांजलि भी नहीं दे पाता। लेकिन अिनका माहात्म्य और सौन्दर्य वढ़ानेका काम मद्रासके हाथों नहीं हो सका। मद्रासने अिनसे सेवा ली, लेकिन अिनकी सेवा नहीं की, यह विषाद तो मद्रासके वारेमें मनमें रह ही जाता है।

२ जून, १९५७

५६

प्रथम समुद्र-दर्शन

पिताजीका तबादला सातारासे कारवार हो गया और हम लोगोंने सातारासे हमेशाके लिअे विदा ली। घर पर नरशा नामका अेक बैल था। अुसे हमने मामाके घर बेलगुंदी भेज दिया। महादूको छुट्टी देनी ही पड़ी। बेचारेने रो-रो कर आंखें सुर्ख कर लीं। नौकरानी मथुराको छोड़ते समय मांने अुसको अपनी अेक पुरानी किन्तु अच्छी साड़ी दे दी और अुसने हम सबको बहुत दुआयें दीं। घरके बहुत सारे सामान-असबाबको ठिकाने लगाकर हम पहले शाहपुर गये और वहां कुछ रोज रहकर वेस्टर्न अिण्डिया पेनिनशुलर रेलवेसे मुरगांव गये। रास्तेमें गुंजीके स्टेशन पर पानीके फव्वारे छूट रहे थे, जिन्हें देखनेमें हमें बड़ा मजा आया। लोंढ़े पर गाड़ी बदल कर हम डब्ल्यू० आअी० पी० रेलवेके डिब्बेमें बैठ गये।

गोवा और भारतकी सरहद पर कैसल रॉक स्टेशन है। वहां पर कस्टमवालोंने हम सबकी तलाशी ली। हमारे पास चुंगीके लायक भला क्या हो सकता था? लेकिन सफरमें बच्चोंके खानेके लिअे डिब्बे भर-भरकर छोटे-बड़े लड्डू लिये थे। अुन्हें देखकर कस्टम्सके सिपाहीके मुंहमें पानी भर आया। अुसने निःसंकोच लड्डू हमसे मांग ही लिये। वह बोला, "आपके ये लड्डू हमें खानेको दे दीजिये।" मैंने सोचा कि हमारे लड्डू अब यहीं पर खतम हो जायेंगे। मांका दिल पिघल गया और वह बोली, "ले भैया, अिसमें क्या बड़ी बात है?" लेकिन पिताजीने बीचमें दखल देते हुअे कहा, "दूसरे किसीको भी दे दो, लेकिन अिस सिपाहीको देना तो रिश्वत देने जैसा है।"

सिपाही बोला, "हम किसीसे कहने थोड़े ही जायेंगे? आपके पास चुंगीके लायक चीजें मिली होतीं और हमने आपसे चुंगी वसूल न की होती, तो आपका लड्डू देना रिश्वतमें शुमार हो जाता।"

पिताजीका कहना न मानकर मांने अुन तीनोंको अेक-अेक बड़ा लड्डू दिया। घीमें तले हुअे और चीनीकी चाशनीमें पगे हुअे लड्डू अुन बेचारोंने शायद अुससे पहले कभी खाये न होंगे। अुन्होंने लड्डुओंके टुकड़े अपने मुंहमें ठूंसकर अपने गालोंके लड्डू बना लिये।

पिताजीकी ओर देखकर मां बोली, "क्या मैं घरके चपरासियोंको खानेको नहीं देती थी? ये तो मेरे लड़कोंके समान हैं। अिन्हें खानेको देनेमें शर्म किस बातकी? आज तक अैसा कभी नहीं हुआ कि किसीने मुझसे कुछ मांगा हो और मैंने देनेसे अिनकार किया हो। आज ही आपकी रिश्वत कहांसे टपक पड़ी?"

कैसल रॉकसे लेकर तिनअी घाट तककी शोभा देखकर आंखें तृप्त हो गयीं। यह कहना कठिन है कि अुसमें देखनेका आनन्द अधिक था या अेक-दूसरेको बतानेका। हमने दाहिनी तरफकी खिड़कियोंसे बायीं तरफकी खिड़कियों तक और फिर बायीं तरफकी खिड़कियोंसे दाहिनी तरफकी खिड़कियों तक नाच-कूदकर डिब्बेमें बैठे हुअे मुसाफिरोंके नाकों-दम कर दिया।

फिर आया दूध-सागरका प्रपात। वह तो हमसे भी जोरशोरसे कूद रहा था। हमने अिससे पहले कोअी जल-प्रपात नहीं देखा था। अितना दूध बहता देखकर हमको बड़ा मजा आया। हमारी रेलगाड़ी भी बड़ी रसिक थी। प्रपातके बिलकुल सामनेवाले पुल पर आकर वह खड़ी हुअी और पानीकी ठंडी-ठंडी फुहार खिड़कीमें से हमारे डिब्बेमें आकर हमको गुदगुदाने लगी। अुस दिन हम सोनेके समय तक जल-प्रपातकी ही बातें करते रहे।

हम मुरगांव पहुंच गये। आजकल मुरगांवको लोग मार्मागोवा कहते हैं। हम स्टेशन पर अुतरे और रेलकी बहुतसी पटरियोंको लांघकर अेक होटलमें गये। वहां भोजन करनेके बाद मैं अिधर-अुधर पड़ी हुअी सीपियां लेकर खेलने लगा। अितनेमें केशू दौड़ता हुआ मेरे पास आया। अुसकी विस्फारित आंखें और हांफना देखकर मुझे लगा कि अुसके पीछे कोअी बैल पड़ा होगा।

अुसने चिल्लाकर कहा, 'दत्तू, दत्तू जल्दी आ! जल्दी आ! देख, वहां कितना पानी है! अरे फेंक दे वे सीपियां। समुद्र है समुद्र! चल मैं तुझे दिखा दूं।' वचपनमें अेकका जोश दूसरेमें आ जानेके लिअे अुसके कारणको जान लेनेकी जरूरत नहीं हुआ करती। मुझमें भी केशू जैसा जोश भर गया और हम दोनों दौड़ने लगे। गोंदूने दूरसे हमको दौड़ते देखा तो वह भी दौड़ने लगा; और हम तीनों पागल जोर-जोरसे दौड़ने लगे।

हमने क्या देखा! सामने अितना पानी अुछल रहा था जितना आज तक हमने कभी नहीं देखा था। मैं आश्चर्यसे आंखें फाड़कर वोला, 'अववववव . . . ! कितना पानी!' और अपने दोनों हाथोंको अितना फैलाया कि छातीमें तनाव पैदा हो गया। केशू और गोंदूने भी अपने अपने हाथोंको फैला दिया। अगर अुस हालतमें पिताजीने हमको देख लिया होता, तो अुन्होंने कैमेरा लाकर हमारी तस्वीरें खींच ली होतीं। 'कितना पानी है! अितना सारा पानी कहांसे आया? देखो तो, धूपमें कैसा चमकता है!' हम अेक-दूसरेसे कहने लगे। वड़ी देर तक हम समुद्रकी तरफ देखते रहे फिर भी जी नहीं भरा। अव अिस पानीका किया क्या जाय? विलकुल क्षितिज तक पानी ही पानी फैला हुआ था और अुससे चुप भी न रहा जाता था। अुसके साथ हम भी नाचने लगे और जोर-जोरसे चिल्लाने लगे, "समुद् द्र! समुद् द्र!! समुद् द्र!!!" हर वार 'समुद्र' शब्दके 'मुद्र' को अधिकसे अधिक फुलाकर हम वोलते थे। समुद्रकी विशालता, लहरोंके खेल और दिगन्तकी रेखाका दृश्य पहली ही वार देखनेको मिला। अिससे हमें जो अत्यधिक आनन्द हुआ अुसे प्रकट करनेके लिअे हमारे पास अन्य कोअी साधन ही न था। जिस तरह समुद्रकी लहर अुभरकर, फूल-कर फट जाती है, अुस तरह हम समुद्रकी रट लगाकर तालके साथ नाचने लगे; लेकिन हम लहरें तो थे नहीं, अिसलिअे अन्तमें थक कर अिधर-अुधर देखने लगे तो अेक तरफ अेक अेक कमरे जितनी वड़ी अींटें चुनी हुअी हमने देखीं। अुनमें से कुछ टेढ़ी थीं तो कुछ सीधी। अुस समय मुझे दुकानमें रखी हुअी सावुनकी वट्टियां और

दियासलाअीकी डिब्बियोंकी अपमा सूझी। वास्तवमें वह मुरगांवका चह था, जो वड़ी वड़ी अींटोंसे बनाया गया था। शिवजीके सांड़की तरह समुद्रकी लहरें आ आकर अुस चहके साथ टक्कर ले रही थीं।

हम घर लौटे और समुद्र कैसा दिखता है अुसके वारेमें घरके अन्य लोगोंको जानकारी देने लगे। समुद्रके नक्कारखानेमें वेचारे दूध-सागरकी तूतीकी आवाज अव कौन सुनता?

सूर्य समुद्रमें डूव गया। सव जगह अंधेरा फैल गया। हम खाना खाकर चहके साथ लगे हुअे जहाज पर चढ़ गये। लोहेके तारोंका जो कठड़ा जहाजमें होता है, अुसके पासकी वेंच पर वैठकर गोंदू और मैं यह देखने लगे कि अूंट जैसी गर्दनवाले भारी वोझ अुठानेके यंत्र (क्रेन) वड़े-वड़े वोरोंको रस्सोंसे वांधकर कैसे अूपर अुठाते हैं और अेक तरफ रख देते हैं। हमारे सामनेके क्रेनने अेक वड़े ढेरमें से वोरे निकालकर हमारे जहाजके पेटको भर दिया। यंत्रोंकी घर्र घर्र आवाजके साथ मल्लाह जोर जोरसे चिल्लाते, 'आवेस! आवेस! — आन्या! आन्या!' जव वे 'आवेस' कहते तव क्रेनकी जंजीर कस जाती और 'आन्या' कहते तव वह ढीली पड़ जाती। कहते हैं कि ये अरवी शब्द हैं।

हम यह दृश्य देखनेमें मशगूल थे कि अितनेमें हमारे पीछेसे, मानो कानमें ही 'भों ओं ओं...' की वड़े जोरकी आवाज आयी। हम दोनों डरके मारे वेंचसे झट कूद पड़े और पागलकी तरह अिधर-अुधर देखने लगे। हमारे कानोंके परदे गोया फटे जा रहे थे। अितने नजदीक अितने जोरकी आवाज वर्दाश्त भी कैसे हो? कहां तो दूरसे सुनाअी देने-वाली रेलकी 'कू...अू...अू...' वाली सीटी और कहां यह भैंसकी तरह रेंकनेवाली 'भों ओं...' की आवाज! आखिरकार वह आवाज रुक गअी; लकड़ीका पुल पीछे खींच लिया गया, आने-जानेके रास्ते परसे निकाला हुआ कंटीला कठड़ा फिरसे लगा दिया गया और 'धस धस' करते हुअे हमारे जहाजने किनारा छोड़ दिया। देखते देखते अंतर वढ़ने लगा। किसीने रूमालको हवामें फहराकर तो किसीने सिर्फ हाथ हिलाकर अेक-दूसरेसे विदा ली। अैसे मौकों पर चंद लोगोंको

कुछ न कुछ भूली हुअी बात जरूर याद आ जाती है। वे जोर-जोरसे चिल्लाकर अेक-दूसरेको वह बताते हैं और दूसरा आदमी अुसकी तसल्लीके लिअे 'हां हां' कहता रहता है, फिर भले अुसकी समझमें खाक भी न आया हो।

जमीनसे हमारा संबंध कट गया। और हम समुद्रके पृष्ठ पर जहाजके जरिये आगे बढ़ने लगे। यह सब मजा देखकर हम अपनी अपनी जगहों पर बैठ गये। जहाजमें सब जगह बिजलीकी बत्तियां थीं। रेलमें अलग ढंगके दीये थे। वहां खोपरेके और मिट्टीके मिले हुअे तेलमें जलनेवाली बत्तियां कांचकी हंडियोंमें लटकती रहती थीं। यहां दीवारोंमें छोटे छोटे कांचके गोलोंके अंदर बिजलीके तार जलकर धीमी रोशनी दे रहे थे।

समुद्रका और समुद्र-यात्राका वह हमारा प्रथम अनुभव था।

५७

छप्पन सालकी भूख

सन् १८९३ के करीब मैं पहली बार कारवार गया था। मार्मागोवा बंदरगाह परसे जब मैंने पहली बार चमकता समुद्र देखा, तब मैं अवाक् हो गया था। रातको नौ बजे हम स्टीमरमें बैठे। स्टीमरने किनारा छोड़कर समुद्रमें चलना शुरू किया, और मेरा दिमाग भी अपना हमेशाका किनारा छोड़कर कल्पना पर तैरने लगा। सुबह हुअी और हम कारवार पहुंचे। स्टीमरसे नावमें अुतरना आसान न था। प्रत्येक नावके साथ अुलांडियां (outriggers) बंधी हुअी थीं। मेरे मनमें सवाल अुठा कि जान-बूझकर अिस तरहकी असुविधा क्यों की होगी? बादमें मैं अुलांडियोंकी अुपयोगिताको समझ सका।

सफरकी थकान अुतरते ही हम समुद्रके किनारे फिरने जाने लगे। किनारे परसे समुद्रमें तीन पहाड़ दिखाअी देते थे। अुनमें से अेक देवगढ़का था, दूसरा मधलिंग-गढ़का और तीसरा था कूर्मगढ़का। देवगढ़

पर दीप-स्तंभ था। यह अुसकी विशेषता थी। अिस दीप-मीनारके पास अेक पतली ध्वज-डंडी मुश्किलसे दीख पड़ती थी। समुद्र-किनारे खेलते-खेलते थक जानेके बाद दीप-मीनारका जलता दीया सर्व प्रथम देखनेकी हमारे बीच होड़ लगती थी। कभी-कभी मनमें यह विचार अुठता था कि पानीके अिसी विशाल पट परसे जब हम कारवार आये तब रातको स्टीमरमें से देवगढ़ क्यों न देखा?

किसी स्टीमरके आनेके वक्त देवगढ़की ध्वज-डंडी पर लाल ध्वज चढ़ाया जाता था। अुसे देखकर कारवार बंदरगाहके नजदीककी ध्वज-डंडी पर भी ध्वज चढ़ाया जाता था। यहांका आदमी दूरबीन लेकर देवगढ़की ओर ताकता रहता था। वहां ध्वज दिखाअी देने पर वह यहां भी ध्वज चढ़ाता था। कभी-कभी मैं दूर देवगढ़ पर चढ़ा हुआ ध्वज देख सकता था और भाअू गोंदूको आश्चर्यचकित कर देता था।

अेक दफा मैंने पिताजीसे पूछा, "देवगढ़ पर दीया कौन जलाता है? ध्वज कौन फहराता है?" अुन्होंने जवाब दिया, "वहां अेक खास आदमी रखा गया है। शाम होते ही वह दीया जलाता है। दूरसे आती हुअी आगबोटको देखकर वह ध्वज चढ़ाता है। देवगढ़का दीया देखकर नाविकोंको पता चलता है कि कारवारका बंदरगाह आ गया। वे जानते हैं कि दीयेके नीचे चट्टान है। अिसलिअे वे दीयेके पास नहीं जाते।"

"दीप-मीनारकी संभाल करनेवाले मनुष्यके लिअे खानेकी क्या सुविधा होगी? वह मीठा पानी कहांसे लाता होगा?" मैंने सवाल किया।

"नावमें बैठकर खाने-पीनेकी सब चीजें वह कारवारसे ले जाता है। देवगढ़ पर शायद टांका या कुआं होगा, जिसमें बारिशका पानी जमा कर रखते होंगे।"

"क्या हम वहां नहीं जा सकते? चलें, हम भी अेक दफा वहां हो आयें। वहां हमेशा रहनेमें तो कैसा मजा आता होगा। शाम होते ही दीया जलाना; और आगबोटकी सीटी बजते ही ध्वज चढ़ाना। बस,

अितना ही काम? बाकीका सारा समय अपना! हम जिस तरह चाहें व्यतीत कर सकते हैं। न कोअी हमसे मिलने आवेगा, न हम किसीसे मिलने जायंगे। चलें, अेक दफा हम वहां हो आयें।"

पिताजीने हमारे घरके मालिक रामजीसेठ तेलीसे पूछा। अुन्होंने अपने जहाजके कप्तानसे बातचीत की। और दूसरे ही दिन देवगढ़ जाना तय हुआ। हम सब गाड़ीमें बैठकर बंदरगाह पर गये। बड़ी किश्तीमें बैठने पर खूब मजा आया। पाल फैले और डोलते डोलते हम चले। जहाज सुन्दर डोलता था, लेकिन जल्दी आगे बढ़नेका नाम न लेता था। बहुत समय लगा तो पिताजीने रामजीसेठसे कारण पूछा। रामजीसेठने कप्तानसे पूछा। अुसने कहा, "पवन अनुकूल नहीं है, टेढ़ा है। पवनकी दिशाका खयाल करके पाल चढ़ाये गये हैं। जहाज आगे बढ़ता है, लेकिन देवगढ़ पहुंचते-पहुंचते शाम हो जायेगी।" मुझे तो कोअी आपत्ति न थी। सारा दिन डोलनेका आनन्द मिलेगा और शाम होते ही दीप-मीनारका दीया नजदीकसे देखनेको मिलेगा। लेकिन अितनी अच्छी बात पिताजीके ध्यानमें न आयी। अुन्होंने कहा: "यह तो ठीक नहीं है।" कप्तानने कहा, "पवन प्रतिकूल है। अिसके सामने हम क्या करें? थोड़ी दूर जानेके बाद यदि यही पवन जोरसे बहने लगा तो अितना अंतर काटना भी मुश्किल है।" रामजीसेठने पिताजीसे पूछा, "अब क्या करें?" पिताजीने कहा, "और कोअी अुपाय ही नहीं है। वापस जायेंगे।"

हुक्म हुआ, "वापस चलो।" पालोंकी व्यवस्था बदल दी गयी। किस तरह यह सब फेरफार किया जाता है, यह देखनेमें मैं मशगूल था। अितनेमें हमारा जहाज धक्के तक वापस आ पहुंचा। अितनी दूर जानेमें अेक घंटा लगा था। लेकिन वापस आनेमें पांच मिनट भी न लगे! घर लौटते वक्त सिर्फ तांगेके घोड़े ही जल्दी नहीं करते।

हम जैसे गये वैसे ही खाली हाथ लौट आये। फीके मुंह मैं घर आया, मानो अपनी फजीहत हुअी हो। सहपाठियोंसे मैंने अितना भी न कहा कि हम देवगढ़ जानेको निकले थे।

अिसके वाद करीव पांच साल तक मैं कारवार रहा। लेकिन फिर कभी मैंने देवगढ़ जानेकी कोशिश न की। सूर्यास्तके समय देवगढ़का दीया दिखने पर मैं अपने मनसे यह सवाल पूछता था कि अुस परीके देशमें क्या होगा? चालीस वर्षके वाद, यानी आजसे दस वर्ष पहले फिर अेक दफा मैं कारवार गया था। लेकिन तव भी देवगढ़ न जा सका।

अिस वार यह निश्चय करके ही कारवार गया कि देवगढ़ देखे विना नहीं लौटूंगा। वहांके मित्रोंसे मैंने कह दिया था कि देवगढ़के लिअे अेक दिन जरूर रखें।

देवगढ़में देखने लायक खास तो कुछ नहीं है। लेकिन छप्पन सालका वचपनका मेरा संकल्प देवगढ़के साथ संलग्न था। अुसको मुक्त करनेकी जरूरत थी।

देवगढ़ कारवारके किनारेसे लगभग तीन मील दूर समुद्रमें आया हुआ अेक वेट है। कारवार वंदरगाहकी यह सवसे वड़ी शोभा है। समुद्रकी सतहसे पहाड़ीकी अूंचाअी २१० फुट है और अुस परकी दीप-मीनार ७२ फुट अूंची है।

शरावबंदीके कारण कस्टम्सवालोंको समुद्रका पहरा देना पड़ता है। अुसके लिअे अुनके पास अेक वाफर* होती है। अुसके द्वारा हमें ले जानेकी व्यवस्था की गअी थी। हमारा यह सैरका कार्यक्रम दूसरे कर्तव्यरूप कार्यक्रमोंके आड़े न आवे अिसलिअे हम सुवह जल्दी अुठे और वंदरगाह पर पहुंच गये। हम अितने अरसिक नहीं थे कि सुवहकी प्रार्थना और जलपान घर पर करते। खलासी लोग जरा देरसे आये, अतः घोड़ेकी तरह दौड़ती हुअी हमारी वाफरके तालके साथ चल रही हमारी प्रार्थना सुननेके लिअे कारवारके पहाड़के पीछेसे सविता नारायण भी आ पहुंचे। सविता नारायणको जन्म देकर कृतार्थ प्राची कितनी खिल अुठी थी! समुद्रके पांनी भी प्राचीकी प्रसन्नताके कारण चमकती लहरोंके साथ आये थे। मैंने जमीनकी ओर देखा। दाहिनी ओर कारवारका वंदरगाह

* भापके अेंजिनसे चलनेवाली नाव — स्टीमलॉंच।

छोटी-बड़ी नौकाओंको जगाता था और खेलाता था। अुसके पासकी घाटीके नारियलके पेड़ पवनकी राह देखते खड़े थे। शनिवारकी तोप, जो आजकल छूटती नहीं है, ध्वजदंड परसे मुंह फाड़कर नाहक डराती थी। अुसके बाद सरोके पेड़ कारवारकी चौड़ाओको नापते हुअे काळी नदी तक फैले थे। जिस तरह भारतीय युद्धके राजा विश्वरूपके मुंहमें दौड़े, अुसी तरह तीन-चार जहाज काळी नदीके मुंहमें घुस रहे थे। और सदाशिव-गढ़का पहाड़ सहज भ्रूसंकोच करके सारे प्रदेशकी रक्षा करता था।

प्रार्थना पूरी होने पर हमारी बाफरने समुद्रकी पीठ पर जो रास्ता आंका था और अुस पर जो डिज़ाअिन शीघ्रतासे अदृश्य हो रही थी अुस ओर मेरा ध्यान गया; अुस डिज़ाअिनमें मुक्तवेणीकी हरेक खूबी प्रकट हुअी थी।

तुझे देवगढ़ दिखाये बगैर रहूंगा ही नहीं, अैसा निश्चय करके व्यवस्थाके सब ब्योरोंकी ओर सावधानीसे ध्यान रखनेवाले भाअी पद्मनाथ कामतने मुझे दक्षिणकी ओरके पहाड़की तराअीके नीचे फैला हुआ चंद्रभागी किनारा दिखाया। किसी समय युरोपियन स्त्रियां वहां नहाती होंगी। अिसलिअे अुसका नाम Ladies Beach (युवती-तट) पड़ा है।

गोवाकी संस्कृतिसे ओतप्रोत कवि बोरकर भी हमारे साथ सफरमें आये थे। हमारे आनंदकी वृद्धि करनेके लिअे भाअी कामत अपने साथ चित्रकार श्री रमानंदको लाये थे। रमानंदने पिताकी और बड़े मेहमानोंकी सन्निधिमें शोभा दे अैसी नम्रता धारण करके ठीक-ठीक आत्म-विलोपन किया था। लेकिन बीच समुद्रमें आते ही पहाड़, बादल, सूरज, पक्षी, जहाजके पाल और समुद्रकी अूर्मियां अिन सबके प्रभावके नीचे अुनकी कलाधर आत्मा हमारी हस्तीका भान भूल गयी और वे अनेक दिनोंके भूखे किसी खाअूकी तरह आसपासके काव्यका अनिमेष दृष्टिसे भक्षण करने लगे। हमने अंगुलि-निर्देश करके अुनकी ओर दूसरोंका ध्यान खींचा। लेकिन अिससे अुनका ध्यान नहीं बंटा। सिर्फ नन्हीं कुन्दाकी चंचल आंखें सब ओर घूमती थीं।

हमारे कवि तो शास्त्रोक्त भक्तिसे हमारी प्रार्थना पूरी होनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। प्रार्थना पूरी होते ही अुन्होंने सागरकी लहरोंका अेक खलासी गीत छेड़ा। गीतका प्रकार चाहे खलासी ढंगका हो, लेकिन अंदरके भाव खलासी हृदयके न थे। अुस गीतके द्वारा भोले खलासी नहीं बोलते थे, बल्कि मस्तीमें आये हुअे कवि अपनी अभिजात भावनाके फव्वारे छोड़ रहे थे। यह सच है कि अुस दिन हमारी टोलीमें कोअी स्वस्थ (Sober) न था। हिन्दू स्कूलके आचार्य श्री कुलकर्णी भी आनंदमें आ गये थे। चि० सरोजने तो अपना स्थान छोड़कर बॉयलरके आगे खड़ा रहना पसंद किया था। अपने स्वभावके प्रतिकूल जाकर अुसने अग्रगामित्व स्वीकार किया था। यह देखकर मुझे आनन्द हुआ। मैंने अुसको मंचर सरोवरमें काव्यका पान किये हुअे नारायण मलकानीकी याद दिलाअी। अितने संकेतसे ही हम दोनों सारी वस्तुस्थितिका मूल्यांकन कर सके!

समुद्रके पानी परसे आने-जानेके अनेक प्रकार हैं और हरेक प्रकारमें अलग-अलग रस होता है। लहरोंके थपेड़े खाते हुअे बाहुबल्से तैरते-तैरते दूर अंदर तक जानेमें अेक प्रकारका आनंद है। छातीके नीचे अुछलती लहरों पर सवार होनेका लुत्फ जिसने अुठाया है वह कभी अुसको भूल नहीं सकता। नदीके पानीकी तरह समुद्रका पानी हमें डुबा देनेके अिंतजारमें नहीं रहता। समुद्रका पानी किसीका भोग लेगा तो निरुपाय होकर ही। नहीं तो अुसकी नीयत हमेशा तैराकोंको तारनेकी ही रहती है।

संकरी और लम्बी नावमें बैठकर अेक ही डांड़से हरेक लहरके सामने चढ़-अुतर करना अेक दूसरा आनंद है। दो लहरोंके बीच नाव टेढ़ी हो जाय तो मुसीबतमें आ जायेंगे। अितना अगर संभाल लिया तो समुद्रके आनंदके साथ अेकरूप होनेके लिअे अिससे अधिक अच्छा साधन मिलना मुश्किल है।

बड़ी नावमें दो-दोकी टुकड़ीमें बैठकर बल्ले मारनेका सांघिक आनंद आनंदका तीसरा प्रकार है। हम मौन धारण करके यह आनंद

नहीं लूट सकते। तालका नशा अितना मादक होता है कि अुससे गायन अचूक फूट निकलता है।

वाफरमें बैठनेका आनंद अिन तीनोंसे कुछ कम है। वह अिसलिअे कि अुसको चलानेमें मानवका बाहुबल बिलकुल खर्च नहीं होता। नियंत्रण-चक्र हाथमें पकड़नेवालेकी भुजाको कसरत होती है। अुतने ही पुरुषार्थका अवकाश वाफरमें मिलता है। लेकिन वाफरके द्वारा पानीको चीरते हुअे जानेका आनंद सारे शरीरको मिलता है। वाफर जब सीधी दौड़ती जाती है तब अुसकी गति हमारी रग-रगमें पहुंचती है। मोटर चलानेके आनंदसे वाफर चलानेका आनंद अनेक गुना बढ़कर है।

अिस आनंदको लूटते-लूटते और यह विचार करते-करते कि समुद्रका पानी यहां कितना गहरा होगा, हम देवगढ़की ओर चले। मुझे अेक विचार आया, जो पानी सबसे नीचे है वह अूपरके पानीके भारसे कुचल नहीं जाता होगा? अूपरके पानीसे नीचेका पानी अधिक गाढ़ा और घना होना ही चाहिये। अमुक मछलियां तो अुस गाढ़े पानीको बींधकर नीचे अुतर ही नहीं सकती होंगी। पारेके सरोवरमें अगर हम पड़ें तो लकड़ीके टुकड़ेकी तरह अुसके अूपर ही तैरते रहेंगे। अमुक प्रकारकी मछलियोंका भी नीचेके गाढ़े पानीमें यही हाल होता होगा।

ज्यों-ज्यों देवगढ़का बेट नजदीक आता गया, त्यों-त्यों आस-पासके छोटे-छोटे बेट और चट्टानें स्पष्ट दीखने लगीं। आकाश और समुद्र जहां मिलते हैं वह क्षितिज-रेखा भी आज बहुत ही स्पष्ट थी। मानो कोअी सूअीसे दिखा रहा है कि यहां पृथ्वी पूरी होती है और स्वर्ग शुरू होता है।

दो जहाज अपने पालमें पवन भरकर सफरको रवाना हुअे थे। अुन पालोंके पेटमें पवनके साथ अुगते सूर्यकी किरणें भी घुस गअी थीं। अैसा महसूस होता था कि अिस भारसे पाल फट जायेंगे। पाल अितने चमकते थे कि वे रेशमके हैं या हाथी-दांतके, यह तय करना मुश्किल था। जब पवन पालमें घुसता है तब केलेके पानकी डिजाअिन अुसमें अधिक शोभती है।

अब हम देवगढ़के बिलकुल नजदीक आ गये थे। सारी पहाड़ी टेकरी छोटे-बड़े पेड़ोंसे ढंकी हुअी थी। अूपरकी दीप-मीनार अपना दरजा संभालकर आकाशकी ओर अंगुलि-निर्देश कर रही थी। अब बाफरके लिअे आगे जाना असंभव था। बाकीका थोड़ा और छिछला अंतर काटनेके लिअे हमारी बाफरने अपने साथ अेक नन्हा-सा किकर बांध-लिया था। अुस छोटीसी नावमें हम अुतरे और बेटके किनारे पहुंचे। अुतरते ही पके बेरके लाल-लाल फलोंने हमारा स्वागत किया। हम अूपर चढ़ते-चढ़ते बड़े-बड़े वृक्षोंकी शाखायें तथा बरगदकी जड़ें निहारते-निहारते दीप-मीनारकी तलहटी तक पहुंचे। दीप-मीनारके दीप-कार अेक भले मुसलमान थे। अुन्होंने हमारा स्वागत किया। बेट पर दीप-मीनारके कारण कुछ लोग रहते थे। अुनके कारण थोड़े बकरे और मुरगे भी रहते थे (और समय समय पर बा-कायदा मरते भी थे)। समुद्र किनारेसे अुड़ते-अुड़ते आकर यहांके पेड़ों पर आराम करनेवाले और प्राकृतिक काव्यके फव्वारे छोड़नेवाले पक्षी तो अृषि-मुनियों जैसे ही पवित्र माने जाने चाहिये।

बाफरमें बैठकर हमने सुबह आत्माकी अुपासना की थी, यहां अेक चट्टान पर बैठ कर सबोंने पेटकी अुपासना की। आसपासकी शोभा अघाकर देखनेके बाद दीप-मीनारके पेटमें होकर हम अूपर गये।

दीयेमें से 'विश्वतो' निकलती किरणोंको खूबीसे मोड़कर पानीके पृष्ठभागके समानांतर अुनका बड़ा प्रवाह दौड़ानेके लिअे अनेक प्रकारके बिल्लोरी कांचसे बनायी हुअी दो ढालोंको हमने सर्वप्रथम देखा। पेराबोला और हाअीपरबोलाके गणितका अुसमें पूरा अुपयोग किया जाता है। शंकुछेदका* रहस्य जो जानता है वही अिसका रहस्य समझ सकेगा। अुसके बाद अुस दीयेका बुरका अेक ओर खिसकाकर हमने दूर तक सामुद्रीय शोभा निहारी और अितनेसे संतोष न पाकर हम दीयेके आसपासकी गैलरीमें जाकर स्वतंत्रतासे दसों दिशाअें देखने लगे।

---

* Conic sections.

जिस दृश्यको देखनेकी अभिलाषा मैं छप्पन सालसे सेता आया था, वह दृश्य आज देखा। आंखोंको पारण मिला। अैसा लगता था मानो सारा बेट अेक बड़ा जहाज है, दीप-मीनार अुसका मस्तूल (mast) है, और हम अुस पर चढ़कर चारों ओर पहरा देनेवाले खलासी हैं। यह सच है कि जहाजके मस्तूलकी तरह यह दीप-मीनार डोलती न थी, लेकिन अभी-अभी बाफरका सफर किये हुअे हमारे 'पियक्कड़' दिमाग अिस त्रुटिको दूर कर रहे थे।

अितनी अूंचाअीसे चारों ओर देखनेमें अेक अनोखा आनंद आता है। कुतुबमीनार परसे हिन्दुस्तानकी अनेक राजधानियोंका स्मशान देखनेसे मनमें जो विषाद पैदा होता है सो यहां नहीं होता। यहांसे दिखनेवाले समुद्रमें प्राचीन कालसे आजतक अनेक जहाज डूब गये होंगे, लेकिन अुसकी गमगीनी यहांके वातावरणमें बिलकुल नहीं दीख पड़ती। समुद्रमें भूत और भविष्यके लिअे स्थान ही नहीं होता। वहां वर्तमानकाल और सनातन अनंतकाल, अिन दोनोंका ही साम्राज्य चलता है। जब तूफान होता है तब लगता है कि यही समुद्रका सच्चा और स्थायी रूप है। और जब आजकी तरह सर्वत्र शांति होती है तब लगता है कि तूफान तो माया है। सचमुच समुद्रका मुंह बुद्ध भगवानकी शांति और अुनके अुपशमको व्यक्त करनेके लिअे ही सिरजा गया है।

अितने बड़े समुद्रको आशीर्वाद देनेकी शक्ति पितामह आकाशमें ही हो सकती है। आकाश शांत चित्तसे चारों ओर फैल गया था और समुद्र पर रक्षणका ढक्कन ढांकता था। ढक्कन पर कुछ भी डिज़ाअिन न थी; यह पक्षियोंसे सहन न होता था। अतः वे अुस पर तरह तरहकी रेखाअें खींचनेका अस्थायी प्रयत्न करते थे। जिस तरह बच्चे किसी गंभीर आदमीको हंसानेके लिअे अुसके सामने डरते डरते थोड़ी वानर-चेष्टाअें करके देखते हैं, अुसी तरह समुद्रका नीला रंग आकाशकी नीलिमाको हंसानेका प्रयत्न कर रहा था।

भगवानका अैसा विराट दर्शन होते ही भगवद्गीताका ग्यारहवां अध्याय याद आना चाहिये था, लेकिन अितने प्राचीन कालमें जानेके

पहले अुत्तेजित चित्तने आरामके लिअे अेक नजदीकका ही प्रसंग पसंद किया। बीस साल पहले मैं लंकाके दक्खिनी छोर पर देवेन्द्रसे भी आगे मातारा गया था, तब वहांकी दीप-मीनार पर चढ़कर दोपहरकी धूपमें अैसा ही, बल्कि अिससे भी अनेक गुना विशाल, दृश्य देखा था। वहां नजरकी त्रिज्या बनाकर मनुष्य जितना चाहे अुतना बड़ा वर्तुल खींच सकता था। अुस वर्तुलका दक्षिणार्ध हिन्द महासागरको दिया गया था और अुत्तरार्ध नारियलके पत्तोंकी लहरें अुछालते और दोपहरकी धूपमें चमकते वनसागरको अर्पण हुआ था। यहां देवगढ़ परसे पूर्वकी ओर सूर्यनारायणके पादपीठकी तरह शोभायमान पर्वत दिखाअी देता था। अुसके नीचे फैला हुआ कारवारका समुद्र शांतिसे चमकता था। अुस परकी नावोंकी डिजाअिन बिलकुल हलकी हलकी थी। और पश्चिमकी ओर तो अरबस्तानकी याद दिलाता अेक अखंड महासागर ही था। यह दृश्य हृदयको व्याकुल करनेवाला था।

'नमोऽस्तु ते सर्वत अेव सर्व'—अितने ही शब्द मुंहसे निकल सके।

* * *

अिस बीच हमारे लज्जाशील चित्रकारने अेक कोनेमें बैठकर पासकी अेक बड़ी चट्टानका और आसपासके समुद्रका अेक चित्र खींचा। घर आते ही अुन्होंने मुझे वह भेंट कर दिया। आज मेरी छप्पन सालकी भूख तृप्त हुअी थी। अिस प्रसंगके स्मारकके तौर पर मैंने अुसको प्रसन्नतासे स्वीकार किया।

दीप-मीनारका काव्य आखिर पूर्णताको पहुंचा।

मअी, १९४७

५८

मरुस्थल या सरोवर

किसी घटनाके नियमित हो जानेसे क्या अुसकी अद्‌भुतता मिट जाती है?

छः घंटे पहले पानी कहीं भी नजर नहीं आता था। अुत्तरसे लेकर दक्षिण तक सीधा समुद्र-तट फैला हुआ है। पश्चिमकी ओर जहां आकाश नम्र होकर धरतीको छूता है वहां तक — क्षितिज तक — पानीका नामोनिशान नहीं है, अेक भी लहर नहीं दीखती। यह स्थान पहली बार देखनेवालेको लगेगा कि यह कोअी मरुस्थल है। बारिशके कारण केवल भींग गया है। या यों लगेगा कि यह कोअी दलदल है, जिस पर केवल घास नहीं है। जहां तक दृष्टि पहुंच सकती है वहां तक सीधी समतल जमीन देखकर कितना आनंद मालूम होता है। अैसी समतल जमीन तैयार करनेका काम किसी अिंजीनियरको सौंपा जाय, तो अुसे बेहद मेहनत करनी पड़ेगी। मगर यह है कुदरतकी कारीगरी। अूंचे अूंचे पहाड़ोंमें भव्यता होती है, जब कि अैसे समतत* प्रदेशोंमें विशालता, विस्तीर्णता होती है। हम अिस विशालताका पान करनेमें मग्न थे, अितनेमें दूर क्षितिज पर जहाजके जैसा कुछ नजर आया। जमीन पर जहाज? क्या बात है? अितनेमें दक्षिणसे लेकर अुत्तर तक फैली हुअी अेक भूरी रेखा गहरी होने लगी। बीच बीचमें अुस पर सफेद लहरें दिखाअी देने लगीं। पानीका कटक आया। सेनापतिके हुक्मके अनुसार 'अेक-कतार' में लहरें आगे बढ़ने लगीं। आया, आया, पानी आगे आया! वह आधे पट पर फैल गया! सूरज आकाशमें चढ़ता जाता था, धूप बढ़ती जाती थी और लहरोंका अुन्माद भी बढ़ता जाता था। क्या ये लहरें अीश्वरका सौंपा

---

* सम-तत = stretched evenly. अुदाहरणके लिअे, गंगामुखके पासका सुन्दरवनका प्रदेश समतत कहलाता था।

हुआ कोअी असाधारण कार्य करनेके लिअे चली आ रही हैं? वे यमदूत जैसी नहीं, बल्कि देवदूतके जैसी मालूम होती हैं। जंगलमें जैसे भेड़ियोंकी टोलियां छलांग मारती, कूदती-फांदती आती हैं, वैसे ही लहरें आगे बढ़ने लगीं। जहां नीरव भींगा हुआ मरुस्थल था, वहां अुछलती गरजती लहरोंका सागर फैल गया। ज्वार पूरे जोशमें आ गया। लहरें आती हैं और किनारेसे टकराती हैं। जरा ताककर अुनकी ओर घंटे आधे घंटे तक देखते रहिये, तुरन्त मनमें स्फुरित होगा कि लहरें जड़ नहीं बल्कि सचेतन हैं। अुनका भी स्वभाव-धर्म है। चारों ओर पानी ही पानी दिखाअी देता था। बायीं ओरके ताड़-वृक्ष पानीमें डोलने लगे। मालूम होता था मानो अभी डूब जायेंगे। भानजेको लम्बे अर्सेके बाद मिलने आया हुआ देखकर समुद्रकी मौसी मरजाद-बेल स्नेहसे तर हो गअी है। और लहरोंका मद तो अुतरता ही नहीं है। हाथीके समान दौड़ रही हैं, और किनारे पर वप्र-क्रीड़ाका अनुभव कर रही हैं। कितना अद्‌भुत दृश्य है! जमीन ढालू हो, अुतार हो, और पानी नदीकी तरह बहता हो, तब कोअी आश्चर्य नहीं मालूम होता। नीचेकी ओर बहते रहना तो पानीका स्वभाव-धर्म है। मगर समतल भूमि पर, जहां पानी नहीं था वहां बारिश या बाढ़के बिना पानी दौड़ता हुआ आये और जमीन पर फैलता जाये, यह कितने अचरजकी बात है! जहां अभी अभी हम दौड़ते और घूमते थे वहां पांव न जम सकें अैसी जलाकार स्थिति कैसे हुअी होगी? अितने थोड़े समयमें अितना बड़ा विपर्यास! जहां हवामें हाथ हिलाते हुअे हम घूम रहे थे, वहां अब अुछलती हुअी लहरोंके बीच हाथकी पतवारें चलाकर तैरनेका आनंद लूट रहे हैं। मानो घोड़े पर बैठकर सैर करने निकले हों। अिस ज्वारके समय यदि कोअी यहां आकर देखे तो अुसे लगेगा कि खारे पानीका यह छलकता हुआ सरोवर हजारों वर्षोंसे यहां अिसी तरह फैला हुआ होगा। किन्तु थोड़ी देर खड़े रहकर देखनेकी तकलीफ कोअी अुठाये तो अुसे मालूम होगा कि अितने बड़े महायुद्धके जैसे आक्रमणका भी अंत आता है। लहरोंने अपनी लीला जिस तरह फैलाअी, अुसी तरह अुसे समेटनेका भी समय आया। अीश्वरका कार्य मानो

समाप्त हुआ। अीश्वरने मानो अपनी प्राणशक्ति वापस खींच ली। अब अेक अेक लहर किनारेकी ओर दौड़ती आती है, फिर भी यह साफ दिखाअी दे रहा है कि पानी पीछे हट रहा है।

चला; पानी हटने लगा। क्या समुद्रके अुस पार बड़ा गड्ढा है, जिसे भर देनेके लिअे यह सारा पानी दौड़ता जा रहा है? आगेकी लहरोंको वापस लौटते देखकर बादमें आयी हुअी लहरें बीचमें ही विरस हो जाती हैं, और दौड़ते दौड़ते ही हंस पड़ती हैं। सागरके पानीका अंदाज भला कौन लगाये? अुसे किस तरह नापें? अितना पानी आया क्यों और जा क्यों रहा है? क्या अुसे कोअी पूछनेवाला नहीं है? या कोअी पूछनेवाला है अिसीलिअे वह अितना नियमित रूपमें आता है और जाता है? ज्यों-ज्यों सोचने लगते हैं, त्यों-त्यों अिस घटनाकी अद्भुतताका असर मन पर होने लगता है। ज्वार और भाटा क्या चीज है? समुद्रका श्वासोच्छ्वास? अुनका अुपयोग क्या है? ज्वार और भाटा यदि न होते तो समुद्रका क्या हाल होता? समुद्र-जीवी प्राणियोंके जीवनमें क्या क्या परिवर्तन होता? चंद्र और सूर्यका आकर्षण और पृथ्वीकी सतहसे सागरका विभाजन आदि चर्चाअें तो ठीक हैं; मगर अिनके पीछे अुद्देश्य क्या है यह जाननेकी ओर ही मन अधिक दौड़ता है। पर यह जिज्ञासा अभी तक तृप्त नहीं हुअी है।

जितनी बार हम ज्वार और भाटा देखते हैं, अुतनी ही बार वे समान रूपसे अद्भुत लगते हैं। और अिस बातकी प्रतीति होती है कि अीश्वरकी सृष्टिमें चारों ओर वह ज्ञानमय प्रभु सनातन रूपसे विराजमान है।

'सर्व समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः' कहकर हृदय अुसे प्रणाम करता है। सृष्टि महान है तो अुसका सिरजनहार विभु कैसा होगा? अुसे कौन पहचानेगा? क्या खुद अुसे अिस बातकी परवाह होगी कि कोअी अुसे पहचाने?

बोरडी, १ मअी, १९२७

५९

चांदीपुर

मुझे डर था कि पिछली बार चांदीपुरमें जो दृश्य मैंने देखा था वह अबकी बार देखनको नहीं मिलेगा। अतः मनको समझाकर कि विशेष आशा नहीं रखनी चाहिये, चांदीपुरके लिअे हम चल पड़े। फिर भी चांदीपुर तो चांदीपुर ही है! अुसकी सामान्य शोभा भी असामान्य मानी जायगी।

कलकत्ता-कटकके रास्ते पर बालासोर या बालेश्वर नामका अेक कस्बा है। चांदीपुर वहांसे आठ मील पूर्वकी ओर समुद्र-किनारे बसा हुआ है। सरकारके फौजी विभागने अिस स्थानका कुछ अुपयोग किया है। मगर अिससे अुसका महत्त्व बढ़ा नहीं है। यहांसे तीन मीलकी दूरी पर जहां बूढ़ी-बलंग नदी समुद्रसे मिलती है, वहां सुन्दर बन्दरगाह बनाया जा सकता है। हवा खानेका सुन्दर स्थान भी वह बन सकता है। मगर अभी तक वैसा बन नहीं पाया है। आज चांदीपुरका महत्त्व अुसकी सनातन प्राकृतिक शोभाके कारण ही है। अिसीलिअे मैंने अुसे पूर्व दिशाकी बोरडीका नाम दिया है।

बम्बअीके अुत्तरमें घोलवड़ स्टेशनसे डेढ़ मील पर बोरडी नामक जो स्थान है, वहांका समुद्र जब भाटेके समय पीछे हटता है, तब डेढ़ दो मीलका पट खुला छोड़ देता है और अुसका पानी लगभग क्षितिजके पास पहुंच जाता है। सारा समुद्र-तट मानो देवताओंका या दानवोंका भींगा हुआ टेनिस-कोर्ट हो, अितना सीधा और समतल मालूम होता है। और जब ज्वारके समय पानी बढ़ने लगता है तब देखते ही देखते सारा तट पानीसे भरकर सरोवरकी तरह छलकने लगता है। मुहूर्तमें गीला मरुस्थल और मुहूर्तमें छिछला सरोवर, अैसी यह प्रकृतिकी लीला देखकर मुझे विस्मय हुआ था। अुसका वर्णन जब मैंने लिखा तब स्वप्नमें भी यह खयाल नहीं हुआ

कि ठीक अिसी प्रकारके अेक स्थानका सर्जन प्रकृतिने पूर्वकी ओर भी कर रखा है।

राष्ट्रभाषा-प्रचारके सिलसिलेमें जब मैं अिसके पहले कलकत्तासे अुत्कल आया था, तब बालासोरका काम पूरा करके चांदीपुर देखनेके लिअे खास तौर पर यहां आया था। रास्तेमें जगह-जगह पानीके गड्ढोंमें अुगे हुअे नील-कमल देखकर मेरे हर्षका पार नहीं रहा था। कमल यानी प्रसन्नताका प्रतीक। सुन्दरता, कोमलता, ताजगी और पवित्रता जब अेकत्र हुअीं तब अुन्होंने कमलका रूप धारण किया। कमल जब सफेद होता है तब वह तपस्विनी महाश्वेताका स्मरण कराता है। वही कमल जब लाल होता है तब गंधर्व-नगरी पर राज्य करनेवाली कादंबरीकी शोभा दिखलाता है। किन्तु नील-कमल तो प्रत्यक्ष कुंजविहारी श्रीकृष्णकी ही भूमिका अदा करता मालूम होता है। संभव है हमारे देशमें नील-कमल अधिक देखनेको नहीं मिलते, अिसलिअे मुझे अैसा लगा हो। मगर अिस मार्ग पर नील-कमलोंको देखकर मुझे अपार आनंद हुआ अिसमें कोअी संदेह नहीं।

बालासोरसे चांदीपुरका रास्ता लगभग सीधा है। किनारेके डाक-बंगलेके दरवाजे तक पहुंच जाते हैं तब तक भी समुद्रका दर्शन नहीं होता। मगर जब होता है तब वह अपनी विशालतासे चित्तको हर लेता है। पिछली बार जब हम गये थे तब ज्वार धीरे धीरे बढ़ रहा था, और नाजुक लहरें क्षितिजके साथ समानान्तर रेखा बनाकर धीमे धीमे आगे बढ़ रही थीं। क्षितिजसे किनारे तक आते समय लहरें अितनी सीधी और समानान्तर आती थीं, मानो कोअी दो-तीन मील लम्बी तनी हुअी रस्सीको खींचकर आगे ला रहा हो। मेरे साथ यदि कोअी विद्यार्थी होता तो मैं अुसे समझा देता कि नोटबुकमें जो रेखायें खींचते हैं, वे अिसी तरह सुन्दर और समानान्तर खींचनी चाहिये। जमीन जब सब ओरसे समतल होती है तब अंग्रेज लेखक अुसे टेनिस-कोर्टकी अुपमा देते हैं। मगर कहां टेनिस-कोर्ट और कहां मीलों तक फैली हुअी लम्बी और चौड़ी सिकता-स्थली!

यह सारा दृश्य जी भरकर देखा। मन तृप्त होने पर भी देखा। सामनेसे देखा, बाजूसे देखा। हम कितने पुण्यशाली हैं, अिस धन्यताके भानके साथ देखा। और फिर मनमें विचार आया : अब अिसका क्या करना चाहिये? अुसके बारेमें लिखना तो था ही। राजाको जब रत्न मिलता है तब वह अुसे अपने खजानेमें पहुंचा ही देता है। रमणियोंके हाथमें जब फूल आते हैं तब वे अपने जूड़ेमें जब तक अुन्हें लगा नहीं लेतीं तब तक अुन्हें संतोष नहीं होता। प्रकृतिके अुपासक लेखकको जब कोअी दृश्य पान करनेके लिअे मिलता है, तब वह जब तक अुसे लेख-बद्ध या कविता-बद्ध नहीं करता तब तक अुसे चैन नहीं पड़ता। मगर यह तो घर जानेके बाद ही हो सकता है। अभी यहां क्या करना चाहिये? प्रकृतिका विस्तार चौड़ा हो या अूंचा, अुसका आस्वाद केवल आंखोंसे नहीं लिया जा सकता। पांवोंको भी अुनका हिस्सा देना ही पड़ता है।

हम डाक-बंगलेकी अूंचाअीसे खिसकती और हंसती हुअी बालू पर दौड़ते हुअे नीचे अुतरे। अितनेमें अिधर-अुधर दौड़ते और पृथ्वीके अुदरमें लुप्त होते हुअे बड़े बड़े माणिक हमने देखे। कैसा सुन्दर अुनका लाल चमकीला तरल रंग था! मखमलमें जैसी फीकी और गहरी लाली होती है, वैसी ही छटा प्रकाशके कारण माणिकमें भी दिखाअी देती है। यही लावण्य हमने अिन दौड़नेवाले रत्नोंमें देखा। ये केकड़े जितने आकर्षक थे, अुतने ही भयावने भी थे। डर लगता था कि आकर कहीं काट लेंगे तो अुनके जैसा ही लाल खून पांवोंमें से निकलने लगेगा। मगर वे जितने डरावने थे अुतने ही डरपोक भी थे। मनुष्योंको देखकर झट अपने घरोंमें छिप जाते थे। हम अुनके पीछे दौड़े और अुनकी दौड़धूप देखनेका आनंद प्राप्त किया।

दौड़ते-दौड़ते हमने डिब्बियोंके जैसी छोटी-बड़ी सीपें देखीं। अुनके अूपरकी आकृतियां देखकर मुझे विश्वास हो गया कि अिनके आकार देखकर ही यहांके मंदिरोंके कलश तैयार किये गये होंगे। सुपारीके आकारकी अपेक्षा यह आकार कलाकी दृष्टिसे कहीं ज्यादा सुन्दर है।

चि०· मदालसाने अैसी कअी डिब्बियां चुन लीं। अुनके आरपार सुराख होनेसे अुनकी माला बनानेकी कल्पना सहज सूझ सकती थी।

समुद्रका तट, अुसकी लहरें, लाल केकड़े और ये सीपें अिन सबकी बातें करते करते हम वापस लौटे। कुछ नील-कमल भी हमने साथ ले लिये और भारतवर्षके दर्शनमें अेक और कीमती वृद्धि हुअी अैसे संतोषके साथ घर लौटे।

अबकी जब फिरसे बालासोर आये, तब अिस सारे दृश्यका प्रत्यक्ष स्मरण हो आया और अुसे श्रद्धाकी अंजलि अर्पण करनेके लिअे फिर चांदीपुर जानेका कार्यक्रम हमने तय किया।

आकाशमें बादल घिरे हुअे थे। फिर भी हमने यह आशा रखी थी कि चांदीपुर पहुंचने पर पानीमें से निकलते हुअे सूर्यके दर्शन करेंगे। अतः साढ़े तीन बजे अुठकर नित्यविधि पूरी की; चार बजे डॉ० भुवनचंद्रजीकी मोटर मंगवाअी और मोटर-वेगसे आठ मीलका अंतर तय किया। रास्तेमें न तो खड्डे थे, न श्रीकृष्णकी आंखोंसे होड़ करनेवाले नील-कमल थे। मुझे लगभग यही विश्वास था कि वे लहरें भी हमें देखनेको नहीं मिलेंगी। अष्टमीका चांद आकाशमें फीका चमक रहा था। अतः मैंने माना था कि यहां सिर्फ छलकता हुआ शांत सरोवर ही दिखाअी देगा। हम अपने परिचित डाक-बंगलेके आंगनमें आये और मैंने देखा कि पानी तो कबका वापस लौट चुका है। दूर मटियाला पानी बालूके ढेरके समान मालूम होता था। सिर्फ बालूका पट अधिकाधिक खुलता जा रहा था। यदि हम चार-छह ही मिनट पहले पहुंचे होते, तो सूर्यको पानीमें पांव रखते हुअे देख पाते। आसमानमें बादल थे, पर सूर्यके पासका क्षितिज स्वच्छ और सुन्दर था। बादलोंके धब्बे सूर्यकी शोभाको बढ़ा रहे थे। सूर्यको देखकर अपना हमेशाका श्लोक भी बोलना मुझे नहीं सूझा। मैंने केवल अंजलि बनाकर अर्घ्य अर्पण किया और दूर समुद्रसे निकले हुअे सूर्यनारायणका अुपस्थान किया। मनमें मनुका श्लोक प्रकट हुआ :

आपो नारा अिति प्रोक्ता आपो वै नर-सूनवः।
ता यदस्य अयनं जातम् अिति नारायण स्मृतः॥

अितनेमें चि० अमृतलालने गीत गाया:

'प्रथम प्रभात अुदित तव गगने।'

नीचे बालू पर पहुंचते हमें देर न लगी। शरमीले केकड़ोंने अपने-अपने बिलोंमें घुसकर हमारा स्वागत किया।

समुद्रके लौटनेवाले पानीने दूरसे ही हमें अिशारेसे पूछा: 'यहां तक आना है?' पानीके निमंत्रणका अिनकार भला कैसे किया जाय?

हम आगे बढ़े। बीच बीचमें दो-चार अंगुल गहरा पानी देखकर पैर छपछपाते हुअे चलने लगे। कभी सूर्यको देखनेका मन हो जाता, तो कभी पीछे मुड़कर किनारेकी ओर देखनेका भी हो जाता। थोड़े सरोके पेड़, अेक-दो कुटियां और जकात-विभागका झंडा चढ़ानेका अूंचा स्तंभ — अिनसे अधिक आकर्षक वहां कुछ नहीं था। अिससे तो पांवतलेके पानीमें प्रतिबिंबित बादलोंकी शोभा ही अधिक आनंद देती थी। पीछे हटनेवाले पानीकी मोहिनीके पीछे पीछे हम कितने ही दूर चले जाते। किन्तु हम यह बात भूले नहीं थे कि हमारे सामने दूसरा भी कार्यक्रम है, और समयके बजटके बाहर यहां अधिक मौज नहीं की जा सकती। किनारेसे कितनी दूर आ गये, अिसका हिसाब लगानेके लिअे कदम गिनते गिनते हम वापस लौटे। दो दो फुटके कदम भरते हुअे हमने अेक हजार कदम गिने और दौड़ते हुअे माणिकोंकी रत्नभूमि तक पहुंचे। अूपर चढ़कर देखते हैं तो नटखट पानी धीरे-धीरे हमारे पीछे आ रहा है और पानीको आता हुआ देखकर कुछ मछुअे बालूके पटमें अपना जाल खंभोंके सहारे फैला रहे हैं!

पुरानी कहानियां समाप्त होती हैं, 'खाया, पिया और राज किया' वाक्यसे। हमारे वर्णन ज्यादातर पूरे होते हैं अिन शब्दोंके साथ: 'प्रार्थना की और बादमें नाश्ता किया।' अेक भाअीने बताया कि आजकल यहां जब फौजी आदमी तोपें छोड़ते हैं तब भूकंपकी तरह सारी बस्ती कांप अुठती है। तैयार हुआ जानलेवा माल अच्छी तरह अुतर गया है या नहीं, यह जांचनेका स्थान यही है। आवाज चाहे जितनी बड़ी हो, क्रांतिके बाद जिस प्रकार शांतिकी स्थापना होती

है, अुसी प्रकार आवाज आकाशमें विलीन हो जाती है और अंतमें नीरवता ही वाकी रहती है।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

मअी, १९४१

६०

सार्वभौम ज्वार-भाटा

हरेक लहर किनारे तक आती है और वापस लौट जाती है। यह अेक प्रकारका ज्वार-भाटा ही है। वह क्षणजीवी है। वड़ा ज्वार-भाटा वारह वारह घंटोंके अंतरसे आता है। वह भी अेक तरहकी वड़ी लहर ही है। वारह घंटोंका ज्वार-भाटा जिसकी लहर है, वह ज्वार-भाटा कौनसा है? अक्षय-तृतीयाका ज्वार यदि वर्पका सवसे वड़ा ज्वार हो, तो सवसे छोटा ज्वार कव आता है?

हम जो श्वास लेते हैं और छोड़ते हैं वह भी अेक तरहका ज्वार-भाटा ही है। हृदयमें धड़कन होती है और अुसके साथ सारे शरीरमें खून घूमता है, वह भी अेक तरहका ज्वार-भाटा ही है। वाल्यकाल, जवानी और वुढ़ापा भी वड़ा ज्वार-भाटा है। अिस प्रकार ज्वार-भाटेका क्रम विशालसे विशालतर होकर सारे विश्व तक पहुंच सकता है। जहां देखें वहां ज्वार-भाटा ही ज्वार-भाटा है। राष्ट्रोंका ज्वार-भाटा होता है। संस्कृतियोंका ज्वार-भाटा होता है। धार्मिकतामें भी ज्वार-भाटा होता है। हरेक भाटेके वाद ज्वारको प्रेरणा देनेवाले तो हैं रामचंद्र और कृष्णचंद्र जैसे अवतारी पुरुप। समुद्रके ज्वार-भाटेको प्रेरणा देनेवाले चंद्र परसे ही क्या राम और कृष्णको चंद्रकी अुपमा दी गअी होगी? कवि कहते हैं कि दोनोंका रूप-लावण्य आह्लादक था, अिसी परसे अुन्हें चंद्रकी अुपमा दी गअी है। और कवि जो कहते हैं वह ठीक ही होना चाहिये। मगर अैसा क्यों न कहा जाय कि

धर्मके भाटेको रोकनेवाले और नये ज्वारको गति देनेवाले वे दोनों धर्मचंद्र थे, अिसीलिअे अुन्हें चंद्रकी अुपमा दी गअी है? यह कारण अब तक भले न बताया गया हो, मगर आजसे तो हम यही मानेंगे कि धर्म-सागरके चंद्रके नाते ही अुनका नाम रामचंद्र और कृष्णचंद्र रखा गया है।

जलके स्थान पर स्थल और स्थलके स्थान पर जल जो कर सकती है, वह 'अघटित-घटना-पटीयसी' अीश्वरकी माया कहलाती है। अिस मायाका यहां हमें रोज दर्शन होता है। फिर भी हम भक्ति-नम्र क्यों नहीं होते? अद्‌भुत वस्तु रोज होती है, अिसलिअे क्या वह निःसार हो गअी? मेरे जीवन पर तीन चीजोंने अपने गांभीर्यसे अधिकसे अधिक असर डाला है: हिमालयके अुत्तुंग पहाड़, कृष्ण-रात्रिका रत्नजटित गहरा आकाश और विश्वात्माका अखंड-स्तोत्र गानेवाला महार्णव। तीन हजार साल पहले या दो हजार साल पहले (हजारका यहां हिसाब ही नहीं) भगवान बुद्धके भिक्षु तथागतका संदेश देश-विदेशमें पहुंचाकर अिसी समुद्र-तट पर आये होंगे। सोपारासे लेकर कान्हेरी तक, वहांसे घारापुरी तक और थाना जिले व पूना जिलेकी सीमा पर स्थित नाणाघाट, लेण्याद्रि, जुन्नर आदि स्थानों तक, कार्ला और भाजाके प्राचीन पहाड़ों तक और अिस तरफ नासिककी पांडव-गुफाओं तक शांति-सागर जैसे बौद्ध भिक्षु जिस समय विहार करते थ, अुस समयका भारतीय समाज आजसे भिन्न था। अुस समयके प्रश्न आजसे भिन्न थे। अुस समयकी कार्य-प्रणाली आजसे भिन्न थी। किन्तु अुस समयका सागर तो यही था। अुन दिनों भी यह अिसी प्रकार गरजता होगा। होगा क्या, गरजता था। और 'दृश्यमात्र नश्वर है, कर्म ही अेक सत्य है; जिसका संयोग होता है अुसका वियोग निश्चित है; जो संयोग-वियोगसे परे हो जाते हैं, अुन्हींको शाश्वत निर्वाण-सुख मिलता है।'—यह संदेश आजकी तरह अुस समय भी महासागर देता था। आज वह जमाना नहीं रहा। महासागरका नाम भी बदल गया। मगर अुसका संदेश नहीं बदला। ज्वार-भाटेसे जो परे हो गये, अुन्हींको शाश्वत शांति

मिलनेवाली है। वे ही बुद्ध हैं। वे ही सु-गत हैं। वे सदाके लिअे चले गये। ज्वार फिरसे आयेगा। भाटा फिरसे आयेगा। परन्तु वे वापस नहीं आयेंगे। तथागत सचमुच सु-गत हैं।

वोरडी, ७ मअी, १९२७

६१

अर्णवका आमंत्रण

समुद्र या सागर जैसा परिचित शब्द छोड़कर मैंने अर्णव शब्द केवल आमंत्रणके साथ अनुप्रासके लोभसे ही नहीं पसन्द किया। अर्णव शब्दके पीछे अूंची-अूंची लहरोंका अखंड तांडव सूचित है। तूफान, अस्वस्थता, अशांति, वेग, प्रवाह और हर तरहके बंधनके प्रति अमर्ष आदि सारे भाव अर्णव शब्दमें आ जाते हैं। अर्णव शब्दका धात्वर्थ और अुसका अुच्चारण, दोनों अिन भावोंमें मदद करते हैं। अिसीलिअे वेदोंमें कअी बार अर्णव शब्दका अुपयोग समुद्रके विशेषणके तौर पर किया गया है। खास तौरसे वेदके विख्यात अघमर्षण सूत्रमें जो अर्णव-समुद्रका जिक्र है, वह अुसकी भव्यताको सूचित करता है।

अैसे अर्णवका संदेश आजके हमारे संसारके सामने पेश करनेकी शक्ति मुझे प्राप्त हो, अिसलिअे वैदिक देवता सागर-सम्राट् वरुणकी मैं वंदना करता हूं।

जहां रास्ता नहीं है वहां रास्ता बनानेवाला देव है वरुण। प्रभंजनके तांडवसे जब रेगिस्तानमें बालूकी लहरें अुछलती हैं, तब वहां भी यात्रियोंको दिशा-दर्शन करानेवाला वरुण ही है। और अनंत आकाशमें अपने पंखोंकी शक्ति आजमानेवाले त्रिखंडके यात्री पक्षियोंको व्योममार्ग दिखानेवाला भी वरुण ही है। और वेदकालके भुज्युसे लेकर कल ही जिसकी मूछें अुगी हैं अैसे खलासी तक हरेकको समुद्रका रास्ता दिखानेवाला जैसे वरुण है, वैसे ही नये नये अज्ञात क्षेत्रोंमें

प्रवेश करके नये नये रास्ते बनानेवाले यमराज या अगस्तिको हिम्मत और प्रेरणा देनेवाला दीक्षागुरु भी वरुण ही है।

वरुण जिस प्रकार यात्रियोंका पथ-प्रदर्शक है, अुसी प्रकार वह मनुष्य-जातिके लिअे न्याय और व्यवस्थाका देवता है। 'ऋतम्' और 'सत्यम्' का पूर्ण साक्षात्कार अुसे हुआ है; अिसलिअे वह हरेक आत्माको सत्यके रास्ते पर जानेकी प्रेरणा देता है। न्यायके अनुसार चलनेमें जो सौंदर्य है, समाधान है और जो अंतिम सफलता है, वह वरुणसे सीख लीजिये। और यदि कोअी लोभी, अदूरदृष्टि मनुष्य वरुणकी अिस न्यायनिष्ठाका अनादर करता है, तो वरुण अुसको जलोदरसे सताता है, जिससे मनुष्य यह समझ ले कि लोभका फल कभी भी अच्छा नहीं होता।

अपना मूल्य घट न जाये अिस खयालसे जिस प्रकार परम-मंगल, कल्याणकारी, सदाशिव रुद्ररूप धारण करते हैं, अुसी प्रकार रत्नाकर समुद्र भी डरपोक मनुष्यको अट्टहास्य करनेवाली लहरोंसे दूर रखता है। कोमल वनस्पति और गृह-लंपट मनुष्य अपने किनारे पर आकर स्थिर न हो जायें, अिसलिअे ज्वार-भाटा चलाकर वह सब लोगोंको समझाता है कि तुम लोगोंको मुझसे अमुक अन्तर पर ही रहना चाहिये।

समुद्रके किनारे खड़े रहकर जब लहरोंको आते और जाते देखा, अमावस्या और पूर्णिमाके ज्वारको आते और जाते देखा, और बुद्धि कोअी जवाब नहीं दे सकी तब दिल बोल अुठा, 'क्या अितना भी समझमें नहीं आता? तुम्हारे श्वासोच्छ्वासकी वजहसे जिस प्रकार तुम्हारी छाती फूलती है और बैठती है, अुसी प्रकार विराट सागरके श्वासोच्छ्वासकी यह धड़कन है; अुसका यह आवेग है। जमीन पर रहनेवाले मनुष्यने जो पाप किये और अुत्पात मचाये हैं, अुनको क्षमा करनेकी शक्ति प्राप्त हो अिसीलिअे महासागरको अितना हृदयका व्यायाम करना पड़ता है!

जो लहरें दुर्बल लोगोंको डराकर दूर रखती हैं, वही लहरें विक्रमके रसियोंको स्नेहपूर्ण और फेनिल निमंत्रण देती हैं और कहती

हैं: 'चलिये! अिस स्थिर जमीन पर क्यों खड़े हैं? अिस तरह खड़े रहेंगे तो आप पर जंग चढ़ने लगेगा। लीजिये, अेक नाव, हो जाअिये अुस पर सवार, फैला दीजिये अुसके पाल और चलिये वहां जहां पवनका प्राण आपको ले जाय। हम सब हैं तो सागरके बच्चे, किन्तु हमारा शिक्षागुरु है पवन। वह जैसे नचाये वैसे हम नाचते हैं। आप भी यही व्रत लीजिये, और चलिये हमारे साथ।' जिस दिलमें अुमंग होती है, वह अैसे निमंत्रणको अस्वीकार नहीं कर सकता।

बचपनमें सिंदबादकी कहानी आपने नहीं पढ़ी? सिंदबादके पास विपुल धन था, जमीन-जागीर आदि सब कुछ था। अपने प्रेमसे अुसका जीवन भर देनेवाले स्वजन भी अुसके आसपास बहुत थे। फिर भी जब समुद्रकी गर्जना वह सुनता था तब अुससे घरमें रहा नहीं जाता था। लहरोंके झूलेको छोड़कर पलंग पर सोनेवाला पामर है। दिलने कहा: 'चलो!' और सिंदबाद समुद्रकी यात्राके लिअे चल पड़ा। अुसमें काफी हैरान हुआ। अुसे मीठे अनुभवोंकी अपेक्षा कड़वे अनुभव अधिक हुअे। अतः सही-सलामत वापस लौटने पर अुसने सौगंद खाअी कि अब मैं समुद्र-यात्राका नाम तक नहीं लूंगा।

किन्तु अंतमें यह था तो मानवी संकल्प। अिस संकल्पको सम्राट् वरुणका आशीर्वाद थोड़े ही मिला था! कुछ दिन बीते। गृहस्थी जीवन अुसे फीका मालूम होने लगा। रातको वह सोता था, किन्तु नींद नहीं आती थी। लहरें अुसके साथ लगातार बातें किया करती थीं। अुत्तर-रात्रिमें जरा नींदका झोंका आ जाता तो स्वप्नमें भी लहरें ही अुछलतीं और अपनी अंगुलियां हिलाकर अुसे पुकारतीं। बेचारा कहां तक जिद पकड़कर रहे? अनमना होकर जरा-सा घूमने जाता, तो अुसके पैर अुसे बगीचेका रास्ता छोड़कर समुद्रकी सफेद और चमकीली बालूकी ओर ही ले जाते। अंतमें अुसने अच्छे अच्छे जहाज खरीदे, मजबूत दिलवाले खलासियोंको नौकरी पर रखा, तरह तरहका माल साथमें लिया और 'जय दरिया पीर' कहकर सब जहाज समुद्रमें आगे बढ़ा दिये।

यह तो हुआी काल्पनिक सिंदवादकी कहानी। किन्तु हमारे यहांका सिंहपुत्र विजय तो अैतिहासिक पुरुष था। पिता अुसे कहीं जाने नहीं देता था। अुसने बहुत आजिजी की, किन्तु सफल नहीं हुआ। अंतमें अूबकर अुसने शरारत शुरू की। प्रजा त्रस्त हुआी और राजाके पास जाकर कहने लगी: 'राजन्, या तो आपके लड़केको देशनिकाला दे दीजिये या हम आपका देश छोड़कर बाहर चले जाते हैं।' पिता बड़े बड़े जहाज लाया। अुनमें अपने लड़केको और अुसके शरारती साथियोंको बिठा दिया और कहा, 'अब जहां जा सकते हो, जाओ। फिर यहां अपना मुंह नहीं दिखाना।' वे चले। अुन्होंने सौराष्ट्रका किनारा छोड़ा, भृगुकच्छ छोड़ा, सोपारा छोड़ा, दाभोळ छोड़ा; ठेठ मंगलापुरी तक गये। वहां पर भी वे रह नहीं सके। अतः हिम्मतके साथ आगे बढ़े और ताम्रद्वीपमें जाकर बसे। वहांके राजा बने। विजयके पिताने अपने लड़केको वापस आनेके लिअे मना किया था; किन्तु अुसके पीछे कोअी न जाये, अैसा हुक्म नहीं निकाला था। अतः अनेक समुद्र-वीर विजयके रास्ते जाकर नयी नयी विजय प्राप्त करने लगे। वे जावा और बालिद्वीप तक गये। वहांकी समृद्धि, वहांकी आबहवा और वहांका प्राकृतिक सौंदर्य देखनेके बाद वापस लौटनेकी अिच्छा भला किसे होती? फिर तो घोघाका लड़का सारा पश्चिम किनारा पार करके लंकाकी कन्यासे विवाह करे यह लगभग नियम-सा बन गया।

अिधर बंगालके नदीपुत्र नदी-मुखेन समुद्रमें प्रवेश करने लगे। जिस बंदरगाहसे निकलकर ताम्रद्वीप जाया जा सकता था, अुस बंदरगाहका नाम ही अुन लोगोंने ताम्रलिप्ति रख दिया। अिस प्रकार ताम्रद्वीप — लंकामें अंग-वंगके बंगाली, अुड़ीसाके कलिंग और पश्चिमके गुजराती अेकत्र हुअे। मद्रासकी ओरके द्रविड़ तो वहां कबके पहुंच चुके थे। अिस प्रकार पूर्व, पश्चिम और दक्षिण भारत अब अपने-अपने अर्णवोंके आमंत्रणके कारण लंकामें अेक हुआ।

भगवान बुद्धने निर्वाणका रास्ता ढूंढ़ निकाला और अपने शिष्योंको आदेश दिया कि 'अिस अष्टांगिक धर्मतत्त्वका प्रचार दसों दिशाओंमें

करो।' खुद अुन्होंने अुत्तर भारतमें चालीस साल तक प्रचार-कार्य किया। अपना राज्य आसेतु-हिमाचल फैलानेके लिअे निकले हुअे सम्राट् अशोकको दिग्विजय छोड़कर धर्म-विजय करनेकी सूझी। धर्म-विजयका मतलब आजकी तरह धर्मके नाम पर देश-देशांतरकी प्रजाको लूटकर, गुलाम बनाकर, भ्रष्ट करना नहीं था, बल्कि लोगोंको कल्याणका मार्ग दिखाकर अपना जीवन कृतार्थ करनेका अष्टांगिक मार्ग दिखाना था। जो भगवान बुद्ध खुद गैंडेकी तरह अकुतोभय होकर जंगलमें घूमते थे, अुनके साहसिक शिष्य अर्णवका आमंत्रण सुनकर देश-विदेशमें जाने लगे। कुछ पूर्वकी ओर गये, कुछ पश्चिमकी ओर। आज भी पूर्व और पश्चिम समुद्रके किनारों पर अिन भिक्षुओंके विहार पहाड़ोंमें खुदे हुअे मिलते हैं। सोपारा, कान्हेरी, घारापुरी आदि स्थल बौद्ध मिशनरियोंकी विदेश-यात्राके सूचक हैं। अुड़ीसाकी खंड-गिरि और अुदय-गिरिकी गुफायें भी अिसी बातका सबूत दे रही हैं।

अिन्हीं बौद्ध-धर्मी प्रचारकोंसे प्रेरणा पाकर प्राचीन कालके ओसाओी भी अर्णव-मार्गसे चले और अुन्होंने अनेक देशोंमें भगवद्-भक्त ब्रह्मचारी ओशुका संदेश फैलाया।

जो स्वार्थवश समुद्र-यात्रा करते हैं, अुन्हें भी अर्णव सहायता देता है। किन्तु वरुण कहता है, "स्वार्थी लोगोंको मेरी मनाही है, निषेध है। किन्तु जो केवल शुद्ध धर्म-प्रचारके लिअे निकलेंगे, अुन्हें तो मेरे आशीर्वाद ही मिलेंगे। फिर वे महिन्द या संघमित्ता हों या विवेकानंद हों। सेंट फ्रान्सिस जेवियर हों या अुनके गुरु अिग्नेशियस लोयला हों।"

अब अर्णवकी मदद लेनेवाले स्वार्थी लोगोंके हाल देखें। मकरानी लोग बलूचिस्तानके दक्षिणमें रहकर पश्चिम सागरके तटकी यात्रा करते थे। अिसलिअे हिन्दुस्तानकी तिजारत अुन्हींके हाथमें थी। आग्रहके साथ वे अुसको अपने ही हाथोंमें रखना चाहते थे। अतः अेक वरुणपुत्रको लगा कि हमें दूसरा दरियायी रास्ता ढूंढ़ निकालना चाहिये। वरुणने अुससे कहा कि अमुक महीनेमें अरबस्तानसे तुम्हारा जहाज भर-समुद्रमें छोड़ोगे तो सीधे कालीकट तक पहुंच जाओगे। अेक-दो

महीनों तक तुम हिन्दुस्तानमें व्यापार करना और वापस लौटनेके लिअे तैयार रहना; अितनेमें मैं अपने पवनको अुलटा वहाकर जिस रास्ते तुम आये अुसी रास्तेसे तुम्हें वापस स्वदेशमें पहुंचा दूंगा। यह किस्सा अी० स० पूर्व ५० सालका है।

प्राचीन कालमें दूर दूर पश्चिममें वाअिकिंग नामक समुद्री डाकू रहते थे। वे वरुणके प्यारे थे। ग्रीनलैंड, आअिसलैंड, ब्रिटेन और स्कैन्डिनेवियाके बीचके ठंडे और शरारती समुद्रमें वे यात्रा करते थे। आजके अंग्रेज लोग अुन्हींके वंशज हैं। समुद्र किनारे पर स्थित नॉर्वे, ब्रिटेन, फ्रांस, स्पेन और पुर्तगाल देशोंने वारी वारीसे समुद्रकी यात्रा की। अिन सब लोगोंको हिन्दुस्तान आना था। बीचमें पूर्वकी ओर मुसलमानोंके राज्य थे। अुन्हें पारकर या टालकर हिन्दुस्तानका रास्ता ढूंढ़ना था। सबने वरुणकी अुपासना शुरू की और अर्णवके रास्तेसे चले। कोअी गये अुत्तर ध्रुवकी ओर, कोअी गये अमरीकाकी ओर। चंद लोगोंने अफ्रीकाकी अुलटी प्रदक्षिणा की और अंतमें सब हिन्दुस्तान पहुंचे। समुद्र यानी लक्ष्मीका पिता। अुसमें जो यात्रा करे वह लक्ष्मीका कृपापात्र अवश्य होगा। अिन सब लोगोंने नये नये देश जीत लिये, धनदौलत जमा की। किन्तु वरुणदेवका न्यायासन वे भूल गये। वरुणदेव न्यायका देवता है। अुसके पास धीरज भी है, पुण्यप्रकोप भी है। जब अुसने देखा कि मैंने अिनको समुद्रका राज्य दिया, किन्तु अिन लोगोंने राजाके अुचित न्याय-धर्मका पालन नहीं किया, तब वरुणराजाने अपना आशीर्वाद वापिस ले लिया और अिन सब लोगोंको जलोदरकी सजा दी। अब ये देश हिन्दुस्तान और अफ्रीकासे जो संपत्ति लाये थे, अुसका अुपयोग आपसमें लड़नेके लिअे करने लगे हैं और अपने प्राणोंके साथ वह सारी संपत्ति जलके अुदरमें पहुंचा रहे हैं। समुद्र-यान हो या आकाश-यान हो, अंतमें अुसे समुद्रके जलके अुदरमें पहुंचना ही है। अब वरुणराजा क्रुद्ध हुअे हैं। अुन्हें अब विश्वास हो गया है कि सागरसे सेवा लेनेवालोंमें यदि सात्विकता न हो तो वे संसारमें अुत्पात मचानेवाले हो जाते हैं। अब तक अुन्होंने विज्ञानशास्त्रियों और ज्योतिषशास्त्रियोंको, विद्यार्थियों और लोकसेवकोंको

समुद्र-यात्राकी प्रेरणा दी थी। अब वे हिन्दुस्तानको नये ही किस्मकी प्रेरणा देना चाहते हैं: हिन्दुस्तानके सामने अेक नया 'मिशन' रखना चाहते हैं। क्या अुसे सुननेके लिअे हम तैयार हैं?

हम पश्चिम समुद्रके किनारे पर रहते हैं। दिन-रात पश्चिम सागर*का निमंत्रण सुनते हैं। अब तक हम बहरे थे। यह संदेश हमारे कानों पर जरूर पड़ता था; किन्तु अंदर तक नहीं पहुंच पाता था। अब यह हालत नहीं रही है। युरोपकी महाप्रजाने हमारे अूपर राज्य जमाकर हमें मोहिनीमें डाल रखा था। अब यह मोहिनी अुतर गयी है। अब हमारे कान खुल गये हैं। संसारके नक्शेकी ओर हम नयी दृष्टिसे देखने लगे हैं। अब हम समझने लगे हैं कि महासागर भूखंडोंको तोड़ते नहीं, बल्कि जोड़ते हैं। अफ्रीकाका सारा पूर्व किनारा और कलकत्तासे लेकर सिंगापुर आल्बनी (ऑस्ट्रेलिया) तकका पूर्वकी ओरका पश्चिम किनारा हमें निमंत्रण देता है कि "अीश्वरने तुम्हें जो ज्ञान, चारित्र्य और वैभव दिया है, अुसका लाभ यहांके लोगोंको भी पहुंचाओ।" अेक ओर अफ्रीका है, दूसरी ओर जावा है, बाली है, ऑस्ट्रेलिया है, टास्मानिया है और प्रशांत महासागरके असंख्य टापू हैं। ये सब अर्णवकी वाणीसे हमें पुकार रहे हैं। अिन सब स्थानोंमें सागरसे प्रेरणा लेकर अनेक मिशनरी गये थे। किन्तु वे अपने साथ सब जगह शराब ले गये, वंश-वंशके बीचका अूंच-नीच भाव ले गये। अीसा मसीहको भूलकर सिर्फ अुनका बायबल ले गये। और अिस बायबलके साथ अुन्होंने अपने अपने देशका व्यापार चलाया। अर्णव अुन्हें जरूर ले गया था। किन्तु वरुण अुन पर नाराज हुआ है। हम भारतवासी प्राचीन कालमें चीन गये, यवनोंके देश ग्रीस तक गये, जावा और बालीकी ओर गये। हमने 'सर्वे सन्तु निरामयाः' की

---

* हमारे अिस पड़ोसीको हम 'अरबी समुद्र' के नामसे पहचानते हैं, यह विचित्र बात है! विलायतसे आनेवाले गोरे लोग अुसे 'अरबी समुद्र' भले कहें। हमारे लिअे तो वह बम्बअी समुद्र या पश्चिम सागर है। यही नाम हमें चलाना चाहिये।

संस्कृतिका विस्तार किया। किन्तु हमने अुन स्थानोंमें अपने साम्राज्यकी स्थापना करनेकी दुर्बुद्धि नहीं रखी। दूसरोंके मुकाबलेमें हमारे हाथ साफ हैं। अतः वरुणका हमें आदेश हुआ है — अर्णव हमें आमंत्रण दे रहा है और कह रहा है, "दूसरे लोग विजय-पताका लेकर गये; तुम अहिंसा धर्मकी तिरंगी अभय-पताका लेकर जाओ और जहां जाओ वहां सेवाकी सुगंध फैलाते रहो। शोषणके लिअे नहीं, बल्कि पिछड़े हुअे लोगोंके पोषण और शिक्षणके लिअे जाओ। अफ्रीकाके शालिग्राम वर्णके तुम्हारे भाओी तुम्हें पुकार रहे हैं। पूर्वकी ओरके केतकी सुवर्ण वर्णके तुम्हारे भाओी तुम्हारी राह देख रहे हैं। अिन सब लोगोंकी सेवा करनेके लिअे जाओ और सब लोगोंसे कहो कि अहिंसा ही परम धर्म है। अुच्चनीच भाव, अभिमान, अहंकार जैसी हीन वृत्तियोंको अिस धर्ममें स्थान नहीं हो सकता। भोग और अैश्वर्य, दोनों जीवनके जंग हैं (जीवनको दूषित करनेवाले हैं)। संयम और सेवा, त्याग और बलिदान, यही जीवनकी कृतार्थता है। यह धर्म जिन लोगोंने समझा है, वे सब निकल पड़ो। पूर्व सागर और पश्चिम सागरके बीचमें दक्षिणकी ओर घुसनेवाला हजारों मीलका किनारा तैयार करके हिन्दुस्तानको हिन्द महासागरमें जो स्थान दिया गया है, वह समुद्र-विमुख होनेके लिअे हरगिज नहीं है। वह तो अहिंसाके विश्वधर्मका परिचय सारे विश्वको करानेके लिअे है।"

युरोपके महायुद्धके अंतमें दुनियाका रूप जैसा बदलनेवाला होगा वैसा बदलेगा। किन्तु असंख्य भारतीय प्रवास-वीर अर्णवका आमंत्रण सुनकर, वरुणसे दीक्षा लेकर, धीरे-धीरे देश-विदेशमें फैलेंगे, अिसमें कोअी संदेह नहीं है। सागरके पृष्ठ पर हमारे अनेकानेक जहाज डोलते हुअे देख रहा हूं। अुनकी अभय-पताकाओंको आकाशमें लहराते देख रहा हूं और मेरा दिल अुछल रहा है। अर्णवके आमंत्रणको अब मैं खुद शायद स्वीकार नहीं कर सकता, फिर भी नौजवानोंके दिलों तक अुसे पहुंचा सकता हूं, यही मेरा अहोभाग्य है। वरुण-राजाको मेरा नस्मकार है! जय वरुणराजकी जय!!

- अक्तूबर, १९४०

६२

दक्षिणके छोर पर

१

धनुष्कोटीमें मैं पहले-पहल आया अुसको अब करीब बीस साल हो चुके हैं। जहां तक मुझे स्मरण है, श्री राजाजीने मेरे साथ श्री वरदाचारीजीको भेजा था। वरदाचारी ठहरे रामायणके भक्त। रास्ते भर रामायणकी ही रसिक बातें चलीं। हम धनुष्कोटी पहुंचे और वरदाचारीजीकी सनातनी आत्मा श्राद्ध करनेके लिअे तड़पने लगी। अेक योग्य ब्राह्मणका पता लगाकर वे अिस विधिमें मशगूल हो गये और हम लोग आमने-सामने गरजनेवाले रत्नाकर और महोदधिकी भव्य शोभा देखनेके लिअे स्वतंत्र हो गये।

दो नदियोंका संगम या प्रयाग अनेक स्थानों पर देखनेको मिलता है। संगमका काव्य आर्योंके हृदय या मस्तिष्क तक पहुंचा कि तुरन्त अुन्हें वहां यज्ञ-याग करनेकी सूझी ही हैं। यज्ञ-यागके लिअे अैसे प्रकृष्ट या प्रशस्त स्थानको वे प्र-याग कहते हैं।

जब दो नदियां मिलती हैं तब अधिकतर अंग्रेजी Y के जैसी आकृति बनती है। महाराष्ट्रमें कह्लाड़के पास दो नदियां आमने-सामने आकर मिलती हैं और बादको समकोणमें अेक ओर बहती हैं। अुनकी अंग्रेजी T जैसी पांच किनारोंकी आकृति बनती है। दो नदियां आमने-सामने आकर अेक-दूसरेको गले लगाती हैं, अिसलिअे अुसे प्रीति-संगम कहते हैं।

गंगासे जहां यमुना मिलती है वहां पर भी लगभग T के जैसी ही आकृति बनती है। सिर्फ अुसमें गंगा सीधी जाती है और यमुना किसी आग्रहके बिना और कुछ संभ्रम (घुमाव)के साथ गंगासे मिलती है।

यमुना प्रथम तो 'आत्मनि अप्रत्यय' दिखाअी देती है। किन्तु गंगासे मिलते ही दोनों बहनें अुल्लासके अुन्मादमें आ जाती हैं; और

अिस डरसे कि यदि अेक-दूसरेमें झट ओतप्रोत हो गओीं तो मिलनेका आनंद मिट जायगा, दूर दूर तक दोनों कम-ज्यादा मिला ही करती हैं। धर्मकवियोंने अिस स्थानको 'प्रयाग-राज' जैसा गौरवभरा नाम यों ही नहीं दिया है।

किन्तु जब कोओी नदी सागरसे मिलती है तब यह सागर-सरिता-संगमका अुन्माद शिव-पार्वतीके मिलनके समान अद्भुत-रम्य होता है। अिसका वर्णन भक्तवृत्तिसे या संतानकी भाषामें हो ही नहीं सकता। मनुष्यको यह भूल कर कि वह मनुष्य है, और अपनी शक्तिसे भी अधिक अूंचे अुड़कर सागर-सरिताके अिस अ-समान संगमका वर्णन करना होगा।

मगर धनुष्कोटीमें तो विष्णु और महादेवके मिलनके समान दो समुद्रोंका सागर-संगम है। रत्नाकर मानार (Manar)की ओरसे आता है। महोदधि पाल्क (Palk) की सामुद्रधुनीका प्रतिनिधि है। अिन दोनोंको झट कैसे मिलने दिया जाय? पृथ्वीने मानो राम-धनुषकी कमानदार कोटि बीचमें आड़ी डालकर अेक कोस तक अिन दोनोंको मिलनेसे रोका है। अिधर रत्नाकर अुछलता है तो अुधर महोदधि गरजता है और पवनकी सूचनाके अनुसार वे अपने-अपने प्रवाहको दौड़ाते हैं।

और अिन दोनोंका सलाह-मशविरा कैसा अनोखा होता है! महोदधि यदि हरा रंग धारण करता है तो रत्नाकर पूरा नीला हो जाता है; और जब रत्नाकर पर हरा रंग चढ़ता है तब महोदधि आकाशको भी दीक्षा दे सके अैसा गहरा नीला रंग बहाने लगता है।

जब तक अुन्हें लगता है कि मिलनेकी अिच्छा होने पर भी मिला नहीं जा सकता, तब तक दोनों क्रोधसे तमतमाते रहते हैं। क्षण क्षणमें नया क्रोध जताते हैं। और अेक बार मिलनेकी छूट मिली कि अैसी शांति और सहजता चेहरे पर दिखाकर दोनों मिलते हैं, मानो मिलनेकी दोनोंको कोओी अुत्सुकता ही नहीं थी। मिलना था अिसलिअे मिल लिये! व्याकुलताको मानो दूर ही छोड़ दिया।

जहां दोनोंका प्रत्यक्ष मिलन होता है, वहां तो सरोवरकी शांति ही फैली रहती है। और अिसमें आश्चर्य क्या है? अद्वैतमें आनंदकी परिसीमा ही हो सकती है, अुन्मादको स्थान कैसे हो सकता है?

धनुष्कोटीके छोर पर खड़े खड़े अेक वार गोल चक्कर लगाकर देख लेना चाहिये। जहांसे चलकर आते हैं अुतनी जमीनकी जीभको छोड़ दें तो सब ओर महासागरकी विशाल जलराशिका क्षितिजके साथ वनता वलय ही देखनेको मिलता है।

रंगून या कराची जाते समय वीच समुद्रमें चारों ओर समुद्र-वलय और क्षितिज-वलय मिलकर अेक हो जाते हैं, अुसकी मस्ती कुछ कम नहीं होती। मनमें यह कल्पना आये विना नहीं रहती कि पानीके अिस क्षितिज-विस्तार पर आकाशका अुतना ही वड़ा किन्तु अनंत गुना अूंचा ढक्कन रखा हुआ है, और अिस वड़े भारी डिव्वेमें अेक छोटे जहाज पर वैठे हुअे 'तुच्छ' हम मोतियोंकी तरह संगृहीत किये गये हैं। ज्यों-ज्यों अिस परिस्थिति पर हम अधिक सोचते हैं, त्यों-त्यों मनमें अपनी तुच्छताका अधिकाधिक भान हमें होने लगता है।

धनुष्कोटीकी वात अिससे अलग है। पृथ्वीके साथ हम अनुवद्ध हैं, पैर तले मजवूत जमीन है और यह जमीन धीरे धीरे फैलकर अेक विशाल देश और खंडकी ओर ले जा सकती है — यह खयाल हमें न सिर्फ आश्वासन देता है, बल्कि प्रचंड आत्म-विश्वासके अधिकारी वनाता है। धनुष्कोटीके छोर पर मैं जितनी वार पहुंचा हूं, अुतनी वार मुझे मनुष्यके आत्म-गौरवका भान विशेष रूपसे हुआ है। अिसीलिअे वहां अपनी 'भूमिका' पर स्थिर रहकर मैं सागरकी अुपासना कर सका हूं।

जव जव मैं मंडपम् छोड़कर पुल परसे पामवन गया हूं, तव तव अिस प्रदेशका 'रघुवंश' में लिखा हुआ कालिदासका वर्णन मुझे याद आया है। कालिदासकी वर्णन-शक्ति मुझमें भले न हो,

किन्तु अिस वारेमें मेरे मनमें तनिक भी संदेह नहीं कि मैं अुनका समान-वर्मा हूं। मैं 'कवियशःप्रार्थी' थोड़े ही हूं कि कालिदासके साथ अपना नाम देनेमें संकोच करूं? मुझ पर हंसनेवाले टीकाकारोंको मैं अेक टीकाकार कविका ही वचन सुना दूंगा : 'पर्वते परमाणौ च पदार्थत्वं प्रतिष्ठितम्।'

मगर मैं जव धनुष्कोटीके पास आता हूं, तव कालिदासको भूल जाता हूं और लंकामें किस तरह पहुंचा जाय अिस अुधेड़वुनमें पड़े हुअे हनुमानकी दृष्टिसे दक्षिणकी ओर देखने लगता हूं। जिन जिन वानर-यूथ-मुख्योंने सेतुकी कल्पना की और अुसे कार्यरूपमें परिणत किया, अुनकी दृष्टिसे तलाअीमानारकी दिशामें देखने लगता हूं। और अिस प्रकार कल्पनाको दौड़ाते दौड़ाते जव थक जाता हूं, तव चारों धामकी यात्रा पूरी करके रामेश्वर पहुंचे हुअे वृद्ध यात्रियोंका हृदय धारण करके कल्पना करता हूं : "अेक पूर्ण जीवन लगभग पूरा करके मैंने भारत-वर्षके जितने ही विशाल जीवन-प्रदेशकी यात्रा कर ली। अव वापस लौटकर क्या करना है? अिहलोकका काम ज्यों त्यों पूरा कर लिया। सफलता मिली हो या विफलता, वही जीवन फिरसे नहीं विताना है। अव तो यह सारा जीवन पीठके पीछे रहे यही अच्छा है। मुड़कर अुसकी ओर देखनेका स्मरण-रस भी अव नहीं रहा है। अव तो साम्प-रायका, परजीवनका परमार्थकी दृष्टिसे विचार करनेमें ही श्रेय है।" जव अिस प्रकारकी विचार-परंपरा मनमें अुठती है, तव मन अेक प्रकारसे वेचैन हो अुठता है, और दूसरे प्रकारसे परम शांतिका अनुभव करता है।

अवकी वार जव मैं धनुष्कोटी आया, तो परंपराके अनुसार मैंने महोदधिमें स्नान किया। महासागरसे क्षमा भी मांगी। किन्तु मनमें तो अेक ही विचार आया कि यहां अव फिरसे नहीं आना होगा। सीलोन कभी जाना है। मगर धनुष्कोटीके जो दर्शन किये, वे अंतिम हैं। यह विचार मनमें क्यों आया, कहना मुश्किल है। किन्तु अिसमें संदेह नहीं कि मनमें तृप्तिका विचार अिसी वार अुत्पन्न हुआ।

२

रामेश्वर-धनुष्कोटीके बाद कन्याकुमारी। अेक स्थान यदि भव्य है तो दूसरा भव्यतर है। यहां दो नहीं बल्कि तीन सागरोंका संगम है। संगमका यह वायुमंडल अभेद-भक्तिके आनंदके समान है। 'यहां हिन्द महासागर पूरा होता है,' 'यहां बम्बअीका यानी पश्चिम समुद्र शुरू होता है' और 'यहां बंगालका पूर्व समुद्र शुरू होता है'—यों न तो यहां कह सकते हैं, न मान सकते हैं। यहां भारतवर्षका दक्षिणका छोर है और तीनों सागर अुसको तीनों ओरसे लिपटे हुअे पड़े हैं। संगम तो हम कहते हैं। सागरोंके लिअे यहां संगमके जैसा कुछ भी नहीं है। संगमकी कल्पना हमारी है। सागरोंसे यदि पूछेंगे तो वे कहेंगे कि जिस भेदका अस्तित्व ही नहीं है, अुसके मिट जानेकी बात भी भला कैसे करें? 'सं-गम' की कल्पना ही बिलकुल गलत है। कहना ही हो तो अुसको 'सं-भवन' कहिये। जहां पूर्ण अेकता है वहां किसी भी हिस्सेको चाहे जो नाम दे सकते हैं। नाम और रूपका द्वैत यहां फीका पड़ जाता है, घुल जाता है, और फिर शुद्ध अद्वैत ही अपनी अखंड मस्तीमें गर्जना करता है।

कन्याकुमारीमें मैंने जिस भव्यताका अनुभव किया है, वैसी भव्यता हिमालयको छोड़कर और गांधीजीके जीवनको छोड़कर अन्यत्र कहीं भी अनुभव नहीं की है।

कन्याकुमारीका महत्त्व मैंने पहले-पहल गांधीजीके ही मुंहसे सुना था। वे शायद ही किसी दृश्यका वर्णन करते हैं। किन्तु कन्याकुमारीसे आश्रममें लौटनेके बाद अुन्होंने मेरे सामने अिस स्थानका अुत्साहपूर्वक वर्णन किया था।

सन् १९२७ में जब मैंने अुनके साथ दक्षिण हिन्दुस्तानकी यात्रा की थी, तब नागर-कोविल पहुंचते ही अुन्होंने अपने मेजबानसे खास तौर पर सिफारिश की कि 'काकाको कन्याकुमारी जाना है; मोटरका बंदोबस्त कर दीजिये।' अुस दिन अुन्होंने दो बार पूछताछ की कि काकाके कन्याकुमारी जानेका प्रबंध हुआ या नहीं।

पू० बाको ललचानेमें मुझे कोओी कठिनाओी नहीं हुओी। दूसरे दो भाओी भी हमारे साथ हो गये।

जिस दृश्यकी प्रशंसा पू० बापूजीके मुंहसे सुनी थी, वह दृश्य देखनेकी मेरी अुत्कंठा बहुत बढ़ गओी थी। यहां पहुंचनेके बाद तो अुसका नशा ही चढ़ गया। अुसके बाद जितनी बार यहां आया हूं, वही नशा मुझ पर चढ़ा है।

और आश्चर्यकी बात तो यह है कि अिस नशेके साथ ही मनमें ब्रह्मचर्यके बारेमें भी गहरे विचार अुठे बिना नहीं रहते। देवी कन्याकुमारीका यह स्थान है, अिसीलिअे ये विचार मनमें अुठते हों, अैसी बात नहीं है। मैंने तो अैसा कभी नहीं माना। स्वामी विवेकानंदने अिस स्थान पर वही नशा अनुभव किया था, यह जाननेके कारण भी यहां आते ही मेरे मनमें ब्रह्मचर्यके विचार नहीं अुठते। गांधीजीकी भव्यताकी भव्य साधनाके साथ भी ये विचार संलग्न नहीं हैं। किन्तु ये विचार स्वयंभू रूपसे मनमें अुठते ही हैं।

अिस समय (ता० ५–१–१९४७) तीसरी दफा मैं यहां आया हूं। आते ही सबसे पहले समुद्रकी लहरें, आकाशके बादल, पूर्व-पश्चिमके क्षितिज और पीछेकी पहाड़ियां — सब स्नेहियोंको मैंने देख लिया।

आज पौषका महीना है और शुक्ल पक्षकी त्रयोदशी है। आज चंद्र रोहिणीमें या मृगमें होना चाहिये। हम मंजिल-ब-मंजिल मोटरकी रफ्तारसे कन्याकुमारीकी ओर जब दौड़ रहे थे, तभीसे चंद्र आकाशमें अूंचा चढ़कर अिस ताकमें बैठा था कि कब सूर्यास्त हो और कब मैं आकाश पर अधिकार करूं। संध्याको अपना वर्ण-विलास फैलानेके लिअे अुसने अधिक अवकाश नहीं दिया। फिर भी जितना अवकाश मिला अुतनेमें ही संध्याने रंगोंके अनेक सुन्दर दृश्य दिखला दिये।

सूर्यास्त देखनेकी हमारी बड़ी अभिलाषा थी। किन्तु पश्चिमके बादलोंने कुछ अुलाहना देते हुअे हमसे कहा, 'क्या किसीका अस्त देखनेकी अुत्कंठा रखी जा सकती है? वास्तवमें सूर्यका अस्त होता ही नहीं है। आपकी दृष्टिसे ही प्रकाशका अस्त होता है। अुसके लिअे

सूर्यको देखनेके बदले अुदय या अस्तके अवसरों पर वह जो अेक-रूपता धारण करता है अुसके रंगको ही क्यों नहीं देख लेते?'

अुदये सविता रक्तो रक्तश्चास्तमने तथा।
संपत्तौ च विपत्तौ च महताम् अेक-रूपता॥

यह श्लोक बादलोंने भी बचपनमें कंठस्थ कर लिया होगा!

सूर्य जब क्षितिजके नीचे गया, तब बादलोंके गवाक्षोंमें से सूर्य-प्रकाशकी लाल किरणें अूपर तक फैलीं। और अूपर फैलीं अुससे भी अधिक दक्षिण तथा अुत्तरकी ओर फैल गअीं। गवाक्ष अधिक नहीं थे, किन्तु जो थे वे बहुत बड़े थे। अतः किरणें अैसी दीखती थीं मानो लाल रंगके पट्टे खींचे गये हों। और आकाश अपने वैभवमें प्रतिष्ठित मालूम होता था। मैंने माना था अुससे कुछ अधिक समय तक यह शोभा कायम रही; अिससे अुसीको देखते रहनेकी अभिलाषा रखनेवाला मन कुछ तृप्त-सा हुआ।

जहां कुमारीके न-हुअे-विवाह-के अक्षत बिखरे हुअे हैं, अुस ओरकी शिला पर हम लहरोंका तांडव देखनेके लिअे जा बैठे। देखते ही देखते संध्या पश्चिममें विलीन हो गअी और चंद्रका राज्य आरम्भ हुआ। बादलोंने आकाशको घेर लेनेका मनसूबा अभी पूरा नहीं किया था, अितनेमें दक्षिणकी ओरके बादलोंमें से अेक बड़ा सितारा चमकने लगा। वह दूसरा कौन हो सकता था? स्वयं अगस्ति महाराज दक्षिण-पूर्व दिशा पर आरूढ़ हो रहे थे। सौभाग्यसे यमुना और याममत्स्य भी तिरछी रेखामें आकाशमें दिखाअी दिये। दक्षिण दिशाका ध्यान करनेका फल मिला। संतुष्ट हुअी आंखोंसे हमने अुत्तरकी ओर दृष्टि डाली। वहां आकाशमें देवयानी (कैसियोपिया) का M अूपर तक चढ़ा हुआ था। अुसके नीचे लगभग क्षितिजके पास अेक ताड़के जितनी अूंचाअी पर अुसी ताड़के पत्तेका आसन बनाकर ध्रुवकुमारने हमें अपना सुभग दर्शन दिया। देवयानी और ध्रुवको देखते देखते दृष्टि पश्चिमकी ओर मुड़ी; वहां हंसने बताया कि श्रवण तो कबके अस्त हो गये हैं। अतः पूर्वकी ओर देखा। ब्रह्महृदयने कहा कि ब्रह्ममंडलका विस्तार अितनेमें ही कहीं होना चाहिये।

हमने फिर दक्षिणकी ओर मुंह किया। अगस्ति अितना अूंचा नहीं आया था कि हम अुसकी कुटियाकी कल्पना कर सकें। किन्तु व्याध तो दिखना ही चाहिये। व्याध चाहे जितना तेजस्वी हो, तो भी बादलोंके मोटे स्तरको वह किस तरह बींध सकता है? फिर हमने अपनी दृष्टिसे बादलोंका स्तर भेदनेका प्रयत्न किया। संदेह हुआ कि बादलोंका जो हिस्सा कुछ विशेष अुजला मालूम होता है अुसीके पीछे व्याध होना चाहिये। बादलोंके अुस पार व्याधका प्रकाश और अिस पार हमारी दृष्टि — दोनोंके हमलेसे बादल पतले हुअे; और जिस प्रकार पतले परदेके पीछेसे नाटकके पात्र दिखाअी देते हैं, अुसी प्रकार व्याध दिखाअी देने लगा। देखते ही देखते व्याध पूर्ण रूपमें सामने आया और अुसके बाद व्याध, अगस्ति, यमुना और याममत्स्यकी शोभा तेलुगु अक्षरोंकी शिरोरेखा जैसी दिखाअी देने लगी।

अभी मृग दिखाअी देगा, रोहिणी चमकेगी, प्रश्वन झांकेगा, अैसी आशासे हम आकाशकी ओर ताक रहे थे, अितनेमें रजनीनाथने अपने आसपास कुंडल फैलाया और अिस सुवर्ण-वलयके साथ आकाशमें बादल भी बढ़े। आकाशमें चंद्रिका फैली हो तो भी क्या? रातके बादल हमारा ध्यान बहुत आकर्षित नहीं कर सकते थे। अतः हमने अत्यन्त काले समुद्रके गंभीर जल पर नाचते सफेद फेनकी चमकती हुअी रेखाओंकी पंक्तियां देखकर ही आंखोंको तृप्त किया।

समुद्रके जल पर और आकाशके बादलों पर विविध रंगोंके नाच जी भरकर देखनेके बाद यह गंभीरता अितनी तृप्तिदायक मालूम हुअी कि अिस तृप्तिके साथ स्थितप्रज्ञका आदर्श गानेमें और संध्याकी अुपासना करनेमें अनोखा आनंद आया। यह सागर पूर्ण है। अुस पर फैला हुआ आकाश पूर्ण है। अिन दोनोंके दर्शनसे जीवनकी संध्याके समय हृदयमें अुद्भूत हमारा शांति-प्रधान आनंद भी पूर्ण है। अब अिस त्रिविध पूर्णतामें से कुछ भी निकाल लीजिये या कुछ भी अुसमें जोड़ दीजिये, पूर्णत्वमें कोअी कमी नहीं होगी। पायी हुअी पूर्णता कम हो सकती है, क्योंकि वह सच्ची पूर्णता नहीं है। सावी हुअी पूर्णता स्थायी है; क्योंकि अिस विरासतके साथ ही

हम पैदा हुअे थे। वहां तक पहुंचनेमें विलंब हुआ यही दोष है। जो पूर्णता साधी वह आत्मसात् हो गअी। अब वहांसे चढ़ने-अुतरनेका प्रश्न ही नहीं है।

जो विराट् है, अनन्त है, वृहत्तम है, अुसके साथ अेकरूप होनेके वाद जो जीवन स्वाभाविक रूपमें जिया जा सकता है, वही सच्चा ब्रह्मचर्य है। वासनाको दवा देने पर वह फिर कभी अुछल सकती है। वासनाको मार डालने पर वह भूतकी तरह हैरान कर सकती है। वासनाको तृप्त करनेके अुपाय किये जायं तो व्यसनकी तरह वह सदाके लिअे चिपक जायगी और बढ़ेगी। वासनाका स्वागत किया जाय तो दिमागमें वह मंडराने लगेगी। वासनाका तो मुकाबला करके अुससे पूछना चाहिये कि तू कौन है? मित्रके रूपमें शत्रुता करने आयी है या जीवनको समृद्ध करनेकी साधनाके रूपमें आयी है? वासना जब तक स्पष्ट और खुली नहीं होती, तब तक ही वह मोहक मालूम होती है। मोह अस्पष्टताका होता है, अेकांगी दर्शनका होता है। वासनाके वश होनेमें मुख्य मदद अंधेपनकी ही होती है। वासनाका अंधा विरोध भी अुसको मजबूत ही बनाता है। दो आंखोंसे देखकर हम वासनाको पहचान नहीं सकते। अुसकी ओर महादेवजीकी तरह तीन आंखोंसे देखना चाहिये। फिर अुसकी शत्रुता अपने-आप खतम हो जाती है।

वासनाका सामना केवल तपस्यासे नहीं हो सकता; सच तो यह है कि प्रज्ञाके स्थिर होनेके वाद वासनाका विरोध ही नहीं करना पड़ता।

जीवनमें जब तक हमें अपूर्णताका भान है, तब तक हम यह नहीं कह सकते कि ब्रह्मचर्य सिद्ध हुआ है। अपूर्णता स्वयं वाधक नहीं है। वालकमें अपूर्णता कम नहीं होती। वह निर्मल भावसे जीवन जीता रहता है और अुसकी अपूर्णता स्वाभाविक क्रमसे कम होती जाती है। अपूर्णताका भान हुआ कि तुरंत मनुष्य पामर वन जाता है। सागरकी तरह पूर्ण होनेके वाद लहरें चाहे अुतनी अुछलती-कूदती रहें, पानीका जत्था चाहे वहां दौड़ता रहे; किन्तु सागरको वहनेकी आवश्यकता नहीं रहती। वह 'आत्मनि तृप्तः' है, अिसीलिअे अुसको अपनी मर्यादा

छोड़नेकी जरूरत नहीं होती। अुसको अपनी मर्यादाका भान ही नहीं है; अिसीलिअे अनायास, अभावित रूपमें मर्यादाका पालन अुसके द्वारा होता रहता है। यही सच्चा ब्रह्मचर्य है।

प्रार्थना पूरी की और पिछले चार दिनके संस्मरण लिखनेकी अूर्मि जागी। कुछ लिखनेके बाद ही नींद आ सकी।

दूसरे दिन ब्राह्म-मुहूर्तमें भूतकी तरह मैं समुद्र-तट पर जा बैठता, किन्तु बारिशने रोक दिया। प्रार्थनाके समय समुद्र-तट पर जाते-जाते फिरसे आकाशकी ओर देखा। दक्षिण दिशा अितनी साफ, सुन्दर और पारदर्शक थी कि पूर्वकी ओर जमे हुअे बादलों पर मनमें गुस्सा आया। अुन्होंने यदि दक्षिणका अनुकरण किया होता तो अुनका क्या बिगड़ जाता?

दक्षिण दिशामें त्रिशंकु बराबर खड़ा था। जय-विजय अुसके द्वारपालोंका काम कर रहे थे। 'कैरीना' या झूठा क्रॉस अेक ओर जाकर पड़ा था। अुन दोनोंके बीच कुछ अैसे सुन्दर तारे चमक रहे थे, जो वर्धा या बंबअीके लोगोंको जीवनमें कभी भी देखनेको नहीं मिलते।

अुत्तरकी ओर सप्तर्षि पूर्ण नम्रताके साथ फैले हुअे थे। ध्रुव रातकी तरह करीब करीब जमीनको छूने जा रहा था। स्वाति और चित्रा सिर पर चमक रहे थे। हस्त कुछ टेढ़ा हो गया था। पश्चिमकी ओर चंद्र अस्त हो चुका था, किन्तु चंद्रिका अभी अपना अस्तित्व बता रही थी। पुनर्वसुकी नावमें से केवल प्रश्वन ही बादलोंको भेदकर झांक रहा था। अकेला तारा अेकाकी अपने स्वभावके अनुसार प्रश्वन और मघासे किट्टी करके दूर जा कर खड़ा हो गया था। मघाका हंसिया फाल्गुनीके चौकोनको संभाल रहा था। पूर्वकी ओर विशाखाके नीचे गुरु और शुक्र शोभायमान थे। और ये दोनों काफी अूंचे चढ़ आये थे, अिसलिअे पतली अनुराधा, टेढ़ी ज्येष्ठा और नुकीला मूल अुनको सहारा दे रहा था। गुरु और शुक्र जब पारिजातके पास आते हैं, तब अिन तीनोंकी तुलना सुन्दर होती है। और मंगलके अुनके पास न होनेका दुःख नहीं होता।

मुझे हिन्दुस्तानकी अेक ज्योतिर्मयी व्याख्या सूझी है। कन्याकुमारीके दक्षिणमें यदि हम जायें तो ध्रुव दिखाअी नहीं देता; और कश्मीरके अुत्तरकी ओर जायें तो दक्षिण दिशामें अगस्ति दिखाअी नहीं देता। अतः मैंने यह व्याख्या बनाअी है कि जिस प्रदेशमें ध्रुव और अगस्ति दोनों दिखाअी पड़ते हैं वही हमारा भारत देश है।

प्रार्थनाके बाद, सब प्राणियोंको जो अुदर-भरण नामक यज्ञकर्म करना पड़ता है अुसे हमने भी पूर्ण किया और नहानेके लिअे तैयार किये हुअे कुंडमें अुतरे। नये ढंगसे बनाये हुअे अिस कुंडमें समुद्रका पानी निरन्तर आता रहता है। आधा कुंड चार फुट गहरा है। बाकीका आठ फुट गहरा है। कपड़े बदलनेके लिअे दो कमरे भी बनाये गये हैं। अिस तरहकी सुघड़ व्यवस्था धार्मिक पुण्यको कम करती है, अैसा नहीं मानना चाहिये। नहाकर हम कन्याकुमारीके दर्शन करने गये। यह मंदिर त्रावणकोरके हिन्दू राज्यमें है, अतः हरिजनोंके लिअे वह बहुत समयसे खुला कर दिया गया है। मंदिरके द्वार पर सरकारका घोषणापत्र लगा है कि जो जन्म या धर्मसे हिन्दू हैं, वे ही अिस मंदिरमें प्रवेश कर सकते हैं।

मंदिरका स्थापत्य सादा किन्तु प्रशस्त है। पत्थरके खंभों पर छतके तौर पर पत्थर ही आड़े रखनेके कारण अन्दरसे सारा मंदिर तहखानेकी तरह मालूम होता है। देवीकी मूर्ति पूर्व दिशाकी ओर देखती है। किन्तु अुस ओरका बाहरका दरवाजा बंद होनेसे देवीको समुद्रका दर्शन नहीं होता, न समुद्रको देवीका दर्शन होता है! बेचारे बंगालसागरने कभी यह दावा नहीं किया होगा कि वह जन्म या धर्मसे हिन्दू है! और समुद्र होनेके कारण मर्यादाका अुल्लंघन करके भी वह मंदिरमें प्रवेश कर नहीं सकता!!

कन्याकुमारीकी कथा बड़ी करुण है। यहांके किनारे पर बिखरी हुअी अक्षतके जैसी सफेद मोटी रेत, माणिकके चूर्ण जैसी लाल रेतका गुलाल और स्याहीचूसके तौर पर अुपयोगमें लाअी जानेवाली काली रेत—ये सब प्राकृतिक चीजें अुस करुण कहानीको और भी करुण बनानेमें मदद करती हैं। संसारके सभी महाकाव्य यदि करुणान्त होते हैं,

तो हिन्द महासागरकी अधिष्ठात्री देवी कन्याकुमारीकी कथा भी करुणान्त हो यही अुपपन्न है। करुण रसमें जो गहराअी होती है, अुसीके द्वारा जीवनकी प्रतीति हो सकती है।

दुःखं सत्यं सुखं माया; दुःखं जन्तोः परं धनम्।
. . . . . . दुःखं जीवन-हृद्‌गतम्॥

छिछला जीवन मानता है कि सुख ही जीवनकी अनुभूति है, जीवनका सार-सर्वस्व है। अिस भ्रमको मिटानेका काम दुःखको सौंपा गया है। दुःखसे परास्त न होकर जो मनुष्य जीवनकी साधनाके तौर पर दुःखको स्वीकार करता है, वही सुख-दुःखसे परे होकर जीवन-समृद्धिका आनंद भोग सकता है। यह आनंद सुख-दुःखातीत होनेके कारण सागरके जैसा गंभीर और आकाशके जैसा अनंत होता है।

अिस आनंदके भाग्यमें किसीके साथ विवाह-बद्ध होना नहीं लिखा है!

दिसम्बर, १९४७

६३

कराची जाते समय

[अेक पत्रसे]

वम्बअीके जागरणका अृण अदा करनेके लिअे मैं जल्दी सो गया था। सुवह चार वजे अुठा। स्टीमर डोलती हुअी आगे वढ़ रही थी। यहां कहीं भी जमीन दिखाअी नहीं देती। अूपर आकाश और नीचे पानी। पानी पर मनुष्यका कितना विश्वास है! जमीनके नजरसे ओझल रहते हुअे भी दिनरात वह समुद्र पर यात्रा कर सकता है। संस्कृतमें पानीको जीवन कहते हैं। 'प्यासके समय जो पेटमें अुतरता है वह है जीवन; और तूफानके समय जिसके पेटमें हमें अुतरना पड़ता है वह है मरण।' अैसे पानीके लिअे हमारे पूर्वजोंने दो भिन्न शब्दोंकी कल्पना नहीं की।

प्रार्थनाके लिअे साथियोंको जगाअूं या नहीं, अिसका विचार थोड़ी देर मनमें चला। फिर मनके साथ तय किया कि जहाजके हिंडोलेमें सोये हुअे अिन बच्चोंको जगानेके बजाय सबकी ओरसे अकेले ही धीमी आवाजमें प्रार्थना कर लेना अच्छा है। लेकिन अिसको सामुदायिक प्रार्थना कैसे कहें? मनमें आया, चलो समीपके कैनवासके मोटे परदे हटाकर देख लूं कि प्रार्थनामें साथ देनेके लिअे कोअी तारे जागते हैं या नहीं? अनुराधाने कहा कि 'हम अभी अभी जागे हैं। कृष्णचंद्रके आनेकी तैयारी है।'

अितनेमें अपने दो सींग अूंचे करके चंद्र बोला, 'तैयारीको कोअी सींग अुगने बाकी नहीं है। मैं आ ही गया हूं।' अुसने बायें हाथमें पारिजात धारण किया था; अिससे वह विशेष सुंदर मालूम होता था। देखते ही देखते अभिजितने क्षितिज परसे सिर अूंचा किया और बादमें स्वाति, अभिजित और पारिजातके त्रिकोणका अेक बड़ा पिरामिड पूर्व-क्षितिज पर खड़ा हो गया। अिन सबको साथमें लेकर मैंने अपनी प्रार्थना पूरी की।

अितनेमें चंद्र कुछ अूपर आया और हमारे जहाजसे लेकर चंद्रके पांवों तक अेक सुनहरी पट्टी पानी पर चमकने लगी। मुझे लगा, चंद्रलोक जानेके लिअे यह कितना आसान और सीधा रास्ता है! जहाजसे अुतरकर चलनेकी ही देर है। किन्तु पाश्चात्य लोग कहते हैं कि चंद्रलोकमें पागल लोग ही रहते हैं। अतः फिर सोचा कि अितनी मेहनतके बाद यदि वहां अपने समान-धर्मा और जाति-भाअी ही मिलनेवाले हों, तो यह तकलीफ क्यों अुठाअी जाय?

* * *

मुझे आकाशके बादल बहुत पसंद हैं। छोटा हो या बड़ा, सफेद हो या काला, पूरा हो या टूटा-फूटा, बादल मुझे आनंद ही देता है। मगर रातके बादल मुझे बिलकुल पसंद नहीं। अुनका आकार और रंग आकर्षक भले ही हो, मगर तारोंके बीच वे भूतोंकी तरह — या हत्यारोंकी तरह — लुकते-छिपते जाते हैं, यही मुझे पसंद नहीं है।

अुषःकालके पहले आकाश कितना सात्त्विक रमणीय मालूम होता था! चांदनीमें समुद्रकी लहरें — लहरें काहेकी? नाजुक वीचिमाला

या हल्का स्मित करने पर सागरबाबाके चेहरे पर पड़ी हुआी शिकनें —ठीक गिनी जा सकें अितनी स्पष्ट थीं। मगर अिन विघ्नसंतोषी बादलोंने बीचमें आकर सब कुछ चौपट कर दिया।

हम जोरोंसे आगे बढ़ रहे थे। पूर्वकी ओर, यानी हमारे दाहिनी ओर, जमीन दिखाअी दे रही है या केवल भ्रम है, अिस अुधेड़बुनमें मैं पड़ा था। अितनेमें यकायक दीये दिखाअी दिये। विश्वास हुआ कि हम श्रीकृष्णकी द्वारिकाके समीप पहुंचे हैं। थोड़े अंतर पर दीयोंका दूसरा झुंड चमक रहा था। अुसमें अेक दीपस्तंभका प्रकाश किसी वृद्धकी स्मृतिकी तरह बीच-बीचमें स्पष्ट हो अुठता था। अुसके बाद अेक मिलकी चिमनीसे धुअेंकी अेक शांत नदी क्षितिजके साथ समानांतर बहने लगी।

आकाशके तारोंको देखा और तेरा स्मरण हुआ। पता नहीं, सुबहकी अुषाके साथ तेरी क्या दोस्ती है? हम मिले अुससे पहले ही बोरडीमें मैंने पूर्व दिशाको अनसूया नाम दे दिया था। 'जीवननो आनंद' (जीवनका आनन्द) में 'अनसूया प्राची' वाली टिप्पणी अवश्य देख लेना।

* * *

३०-१२-'३७

६४

समुद्रकी पीठ पर

[कलकत्तासे रंगून जाते हुअे]

शामके चार बजे होंगे। हमारा जहाज रवाना हुआ। धूप सौम्य हो गअी थी। मंद-मंद हवा बह रही थी। पानी पर नाचनेवाली सूर्यकी चमकमें पीलापन आने लगा था। लाल लाल 'बोयां' से कतराकर जहाज आगे बढ़ने लगा। दोनों किनारों पर जहाज दिखाअी देते थे; छोटी छोटी नावें दिखाअी देती थीं। सेंट विलियमका किला छोड़कर हम आगे बढ़े। कुछ बंदरोंमें छोटे-मोटे जहाज बनाये जा रहे थे। दोनों ओरकी जमीन पानीकी सतहसे बहुत अूंची न थी। अतः दोनों ओर दूर दूरका प्रदेश दिखाअी देता था। किन्तु चित्तको तृप्ति हो

अैसा कोअी दृश्य न था। अिस तरहकी बड़ी नदियां जहां समुद्रसे मिलने जाती हैं, वहांके किनारे बहुत गंदे होते हैं। ज्वार-भाटेके कारण भींगे हुअे कीचड़में दौड़धूप करनेवाले केकड़ोंके सिवा और कुछ दिखाअी ही नहीं देता।

ज्यों ज्यों हम आगे बढ़ते गये, नदी चौड़ी होती गअी। दूरके किनारे पर जब सफेद बालू दिखाअी दी, तभी जाकर मनको कुछ शांति महसूस हुअी। सुन्दरवनका प्रदेश पार किया; रात होनेसे पहले हम डायमंड हार्बरके पास आ पहुंचे। हमारा जहाज अब लहरोंके साथ डोलने लगा। जरा देर तक जहाजके डेक पर खड़े रहकर हमने हिन्दुस्तानके किनारेको लुप्त होते देखा। किन्तु बादमें तो चक्कर आने लगे। अतः खाना खाकर हम सो गये। सोनेके पहले प्रार्थनाके अंतमें गिरधारीने रवीन्द्रनाथका 'आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे' यह सुन्दर गीत गाया। अुसे सुननेके लिअे कअी लोग जमा हो गये। और अुस गीतके प्रतापसे हमारे बिस्तर अच्छी तरह फैलानेमें किसीको अीर्ष्या नहीं हुअी।

सुबह सबसे पहले मैं जागा। अरुणोदय भी नहीं हुआ था। आकाशमें जिस प्रकार चांद चलता है, अुसी प्रकार जहाज अकेला अकेला पानी काटता हुआ चला जा रहा था। अुस समयकी शांति कैसी अनोखी थी! जहाजके पेटमें यंत्ररूपी हृदय यदि अपनी धड़कन न सुनाता, तो बाहरकी शांति अितनी सुन्दर न मालूम होती। चारों ओर समुद्र मानो लोहे या सीसेके ठंडे रसके समान फैला हुआ था। मैं जहाजके छत पर जा खड़ा हुआ। ज्यों ज्यों जहाज डोलता था, त्यों त्यों पानी अूपर चढ़ता या नीचे जाता था। चारों ओर लहरें ही लहरें! लहरें जब अेक-दूसरेसे टकराती हैं तब अुनमें से फेन निकलता है। अंधेरेमें भी यह फेन चमकता है, और अिस चमककी टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओंसे विचित्र प्रकारकी आकृतियां तैयार होती हैं। जहाज जब डोलता है, तब अुसका असर हमारे दिमाग पर होता है। अुसमें यदि हम लहरोंके अखंड और सनातन नृत्यकी लीला निहारने लगें तब तो अुसका नशा ही चढ़ने लगता है।

आगे जाकर लहरें अुठनी बंद हो गअीं। सागरका हृदय जगह जगह अूपर अुठता और नीचे बैठता था। सामान्यतः लहरोंको अूपर अुठते और फूटते हुअे देखनेमें अेक तरहका आनन्द मालूम होता हैं। किन्तु अुसमें अुतना गांभीर्य नहीं होता। ध्वनिकाव्यका रहस्य जिस प्रकार शब्दोंमें स्पष्ट करनेसे कम हो जाता है, अुसी प्रकार लहरोंके फूटनेसे होता है। किन्तु जब लहरें अंदर ही अंदर अुछलती हैं और समा जाती हैं, तब अुनका सूचन विविध, अनंत और अस्पष्ट या अव्यक्त रहता है। अंधेरा होते हुअे भी हवा जब साफ होती है तब व्योम और सागरका मिलन-वर्तुल हमारा ध्यान खींचे बिना नहीं रहता। क्षितिजके पास लहरोंका सवाल ही नहीं होता। समुद्रके कालेपनकी तुलनामें अंधेरा आकाश भी अुजला मालूम होता है। वेदकालके अृषियोंको जिस प्रकार जीवन-रहस्य दिखाअी दिया होगा, अुसी प्रकार क्षितिज रातके समय दिखाअी देता है। अृषियोंको अनंत कालके आध्यात्मिक तत्त्व अनंत आकाशमें चमकनेवाले तारोंके समान स्पष्ट मालूम होते हैं, जब कि पार्थिव जीवनका भविष्यकाल अुनकी आर्ष दृष्टिके सामने भी सागरकी वारि-राशिके समान अज्ञात और अव्यक्त ही रहता है।

अिस प्रकार ध्यान और कल्पनाका खेल चल रहा था, अितनेमें

> 'आंधारेर गाये गाये परश तव
>
> सारा रात फोटाक तारा नव नव।'

यह शोभा कम होने लगी और अरुणोदयने पूर्व दिशा निश्चित कर दी। मैंने यह काव्य देखनेके लिअे जीवतराम (कृपालानी) को जगाया। किन्तु अुनके अुठनेके पहले ही गिरधारी जागा और कहने लगा, 'मुझे बताअिये, क्या है, मुझे बताअिये।' मैं भला अुसको क्या बताता? वहां कोअी पक्षी या जहाज थोड़े ही था जो अुंगली दिखाकर कुछ बताता? मैंने अुससे कहा, 'वह जो लाल आकाश दिखाअी पड़ता है अुसे देखो। थोड़ी देरमें वहां सूरज अुगेगा।'

अब समुद्रने अपना रंग बदला। पूर्वकी ओरसे मानो लाल जामुनी रंगका प्रपात बहता चला आ रहा था। और आश्चर्य तो

यह था कि पश्चिमकी ओर भी अुसी रंगकी प्रतिक्रिया हुअी थी। हां, पश्चिमकी ओर समुद्रसे अधिक आकाशने ही अुस रंगको ग्रहण कर लिया था। पूर्वकी प्रसन्नता बढ़ने लगी। लाल रंगमें चमक आ गअी। कुंकुमका सिंदूर बना, और सिंदूरसे सुवर्ण बना। बम्बअीकी ओर रहनेवाले हम लोग पश्चिम किनारेके समुद्रमें होनेवाले सूर्यास्तकी शोभा कअी बार देख सकते हैं, किन्तु सागर-मंथनसे निकली हुअी लक्ष्मीके समान अुदय हो रही अुषाकी वर्धमान शोभा देखनेका आनंद अनोखा ही होता है। आकाश ज्यों ज्यों हंसने लगा, समुद्रके मुख पर आनंद और लज्जाकी रेखाअें बढ़ने लगीं, मानो दो हमअुम्र नौजवानोंके बीच विनोद चल रहा हो।

अेक ओर प्रभातका यह विकास देखनेके लिअे दिल ललचाता था, तो दूसरी ओर जहाजके डोलनेसे सिरमें चक्कर आने लगे थे। मनमें आया, थोड़ी देरके लिअे लहरें रुक जायं और जहाज स्थिर हो जाय तो कितना अच्छा हो। मगर समुद्रकी लहरें और मनुष्यके मनोरथ कभी रुके हैं? अूबकर आरामकुर्सी पर लेटनेका मैं सोच रहा था, अितनेमें बालसूर्यका बिम्ब पानीमें नहाकर बाहर निकला। अुगते हुअे सूर्यके बिंब पर अेक विशिष्ट तरलता होती है: मानो सूर्य ठंडे पानीमें से कांपता हुआ बाहर निकल रहा हो। और पानीमें जो प्रकाश बिखरा होता है वह अैसा दीखता है मानो सूर्यका धुला हुआ अंगराग हो। सूर्यका बिंब पूरा बाहर निकला कि मैंने सविता-नारायणका ध्यानमंत्र गाया: 'ध्येयः सदा सवितृ-मंडल-मध्यवर्ती' अित्यादि।

जीवतरामसे अिस प्रकारकी गंभीरता जरा भी सहन नहीं होती। वे यकायक बोल अुठे, 'बस कीजिये। कैसी बानर-भाषा बोल रहे हैं!' मैंने अुनसे कहा, 'आप गलती कर रहे हैं। यह आपकी भाषा नहीं है, यह तो संस्कृत है।' विनोदमें भक्तिका अुभार नष्ट हो गया। प्रार्थना ज्यों त्यों पूरी की। और जहाजमें रोज जिसमें से पार होना पड़ता है अुस भयंकर दिव्यकी चिन्ता करने लगे। शौचके लिअे जहाजके डेक परसे नीचे जाना होता है। नीचेका हिस्सा वैसे भी हमेशा गंदा रहता है। किन्तु सुबहके समय तो वह मानो नरकके

साथ मुकाबला करता है। वहांकी हवा गंदी और खारी होती है। जगह जगह लोग कै कर देते हैं। अंजिनकी भापसे निकलनेवाली अेक तरहकी दुर्गंध और खलासियोंके रसोड़ेसे ठीक अुसी समय निकली हुअी प्याज और मछलीकी बदबू — दोनोंके मिश्रणमें से पार होकर शौचकूपमें प्रवेश करनेकी अपेक्षा समुद्रमें कूदना मुझे कम कष्टदायी मालूम होता। हमारे बसकी बात होती तो तीन दिन तक हम शौच जाना ही छोड़ देते। किन्तु —

जा तो आये, पर हम तीनोंके चेहरे अैसे हो गये थे कि अेक-दूसरेकी ओर देखनेकी भी अिच्छा नहीं होती थी। कोअी टोली झगड़ा करनेके लिअे जाये और काफी मार खाकर वापस लौटे, तब जिस प्रकार अपने सर्वसाधारण अनुभवका कोअी जिक्र तक नहीं करता, अुसी प्रकार हमने अिस दिव्यका नाम तक नहीं लिया।

मैंने गिरधारीसे कहा, 'चलो, खाने बैठो।' अुसने कहा, 'मुझे भूख नहीं है।' जीवतरामने भी खानेसे अिनकार कर दिया। मैंने कहा, 'भले आदमी, धूप बढ़ेगी तब चक्कर आने लगेंगे। फिर खाना असंभव हो जायगा। अभी ठंडा पहर है। पेट भरकर खा लो। धूपके पहले सब हजम हो जायगा।' गिरधारी पूछने लगा, 'कसरत किये बिना हजम हो जायगा?' मैंने जवाब दिया, 'हम सब लोगोंकी ओरसे यह जहाज ही कसरत कर रहा है। अतः तुम अुसकी फिक्र मत करो।' गिरधारी मेरी बात समझ नहीं पाया। वह मेरा मुंह ताकता रहा। हम तीनोंने पेटभर खा लिया। तीनोंमें जीवतराम पक्के थे। अुन्होंने केवल रसवाले फल ही खाये। मैंने अपनी पसंदकी चीजें खायीं और अूपरसे अेक पूरा नींबू चूस लिया। बेचारे गिरधारीको अुत्तम केलोंका स्वाद लग गया। अुसने पेट भर कर केले ही खाये। लेकिन अेक दो घंटोंके भीतर ही वह अितना पछताया कि बादमें सारी यात्रामें अुसने केलेका कभी नाम तक नहीं लिया।

दोपहर हुअी। मैं अपनी कमजोरी जानता था। मैंने अपना बिस्तर बिछाकर हाथ-पांव फैला दिये। हाथमें दूसरा नींबू लिया और आंखें मूंदकर लेट गया। मद्रासकी ओरका कोअी जहाज

कलकत्ता जा रहा होगा। अुसे दूरसे देखकर लोग कहने लगे, 'वह देखो जहाज, वह देखो जहाज।' अितनेमें दोनों जहाजोंने 'भों ओं...' करके अेक-दूसरेका अभिवादन किया। किन्तु मैंने तो आंखें मूंदकर कल्पनाके द्वारा ही यह सारा दृश्य देख लिया। गिरधारीसे रहा नहीं गया। वह चटसे अुठकर खड़ा हो गया। ज्यों ही वह खड़ा हुआ, अुसके केलोंने पेटमें रहनेसे अिनकार कर दिया। वह घबड़ा गया। मैंने लेटे लेटे ही अुसे पानी दिया। अदरकका टुकड़ा दिया। थोड़ा शांत होनेके बाद वह मेरे बिस्तर पर आकर लेट गया। किन्तु अेक बार बिलोया हुआ पेट क्या तुरन्त शांत हो सकता है?

हम डेक पर लेटे थे। वहां अेक ओर अूपरकी कैबिनमें दो देशी ओसाअी बैठे थे। अुनमें से अेकको कै होने लगी। वह ज्यों-ज्यों जोरसे कै करता था, त्यों-त्यों अुसका मित्र अुसका मजाक अुड़ाता था। 'वन हिगिन्स, अुलटी करोअिंग' आदि मित्रके अुद्‌गार अुसकी कै से भी अधिक जोरोंसे निकलने लगे। गिरधारी घड़ीभर हंसता था और फिर पछताता था।

अैसा करते करते शाम हो गअी। शामको मुझमें कुछ जान आयी। हमने फिरसे कुछ खा लिया; किन्तु वह किसीको अनुकूल नहीं आया। शामकी शोभा मैंने बैठे बैठे ही निहारी। लोग कहते थे, 'अब हम काले पानीमें आये हैं।' और सचमुच पानीका रंग डर पैदा करे अितना काला था। लोग कहते, 'अब अंदमान दिखाअी देगा।' कोअी कहता, 'नहीं, हमारा जहाज अुससे काफी दूर है। वह टापू नहीं दिखाअी देगा।'

संध्याकी शोभा कुछ निराली ही थी। प्रातःकालके रंग और संध्याके रंग समान नहीं होते। अुदय और अस्त समान हो ही कैसे सकते हैं? अुदय वर्धमान बाल्यकाल है, जब कि अस्त विजयी वीरके निधनके समान शोकपूर्ण होता है। अुषाके मुख पर मुग्ध हास्य होता है, जब कि संध्याकी मुखमुद्रा पर क्षणजीवी अुल्लास और विलास होता है। समुद्रके रंग फिर बदलने लगे। सूर्य अस्त हुआ और देखते ही देखते धीरे धीरे तारोंका पारिजात खिलने लगा।

जहाज पर बिजलीके सौम्य दीये तो कभीके चमकने लगे थे। मुझे ये दीये बचपनसे ही बहुत पसंद हैं। वे अितने सौम्य होते हैं कि समीपका सब कुछ दिखाअी देता है; फिर भी वे आंखोंको चौंधिया नहीं पाते। अंधेरेको नष्ट करके अपना साम्राज्य जमानेकी महत्त्वाकांक्षा अुनमें नहीं होती। अंधेरेके साथ मीठा समझौता करके 'तुम भी रहो, हम भी रहेंगे' की जीवन-नीति वे पसंद करते हैं। शहरोंके बिजलीके दीये नये अध्यापककी तरह अपना सारा प्रकाश अुंडेल देना चाहते हैं, जहाजके दीये योगियोंके समान 'आत्मन्येव संतुष्ट' होते हैं।

बिस्तर पर लेटे लेटे हम अिन दीयोंकी बातें कर रहे थे। अितनेमें हमारा जहाज 'भों ओं. . .' करके रंभाया। मैं तुरंत समझ गया कि अुसने कहीं दूसरी भैंस देखी है। अितनेमें दूरसे रंभानेकी आवाज आअी। मैं अुठकर बैठ गया। रातके समय समुद्रमें जहाज देखना मुझे बहुत पसंद है। बिजलीकी बत्तियोंकी अेक लम्बी पंक्ति और अूंचे मस्तूल पर लगे दो लाल बड़े दीये भूतकी तरह जब अंधेरेमें दौड़ते हैं, तब अैसा लगता है मानो हमने परियोंके संसारमें प्रवेश किया है। जहाज ज्यों-ज्यों अपना रुख बदलता जाता है, त्यों-त्यों सामनेका दृश्य भी नये नये ढंगसे खिलता जाता है। और जहाज जब दूर चला जाता है और लुप्त होने लगता है, तब तो यह दृश्य नींदके कारण चलनेवाली स्मृति-विस्मृतिके बीचकी आंखमिचौनीके समान ही मालूम होता है। आकाशके तारोंकी ओर देखता देखता मैं सो गया।

तीसरे दिन सुबह पानी बरसने लगा। जहाजके अेक अीसाअी कारकुनने आकर हम सबको नीचे जानेको कहा। लोग अिसका कारण तुरन्त न समझ पाये। अुसने कहा, 'अेक बड़ा बवंडर आग्नेय दिशासे अिस ओर आता मालूम हो रहा है।' अिसको साअिक्लोन कहते हैं। साअिक्लोनमें यदि जहाज फंस जाय तो वह बहुत बड़ी आफत मानी जाती है। बहुतसे जहाज साअिक्लोनमें फंसकर डूब गये हैं। अुस कारकुनने कहा, 'यदि यहीं डेक पर आप लोग बैठे रहेंगे तो शायद आंधीसे अुड़ भी जायं।' लोग डरके मारे अेकके बाद अेक नीचे चले गये। हमने नीचे जानेसे साफ अिनकार कर दिया। अुसने हमें समझानेकी

कोशिश की। हमने कहा, 'आंधी आयेगी तो अिन वड़े वड़े रस्सोंको पकड़कर पड़े रहेंगे।'

'किन्तु वारिशसे आप भींग जायेंगे।'

'भींग जायेंगे तो सूख भी जायेंगे।'

हमारी जिद देखकर वह चला गया। पानी आया। अच्छा खासा आया। आंधीका घेरा तीन चार मीलका होता है। सौभाग्यसे वह हमारे जहाज तक नहीं आयी। धूमकेतुकी तरह अुसके चारों ओर पूंछें होती हैं। अैसी अेक पूंछका तमाचा हमारे जहाजको भी कुछ लगा। हम काफी भींग गये। अतः नीचे जानेके वदले अूपर कैविनमें जा वैठे।

आखिर रंगून आया। वंदरगाह पर अुतरनेवाले लोगोंकी और अुन्हें लेने आये हुअे अिष्टमित्रोंकी भीड़का पार नहीं था। डॉ० प्राणजीवन मेहता खुद हमें लेनेके लिअे वंदरगाह पर आये थे। हमने देखा कि रंगूनमें जगह जगह रवरके रास्ते हैं। अतः गाड़ियां दौड़ती हैं तव सिर्फ घोड़ोंके टापोंकी ही आवाज सुनाअी देती है।

अुस दिन हमें अैसा लगता रहा, मानो हमारे पांवोंके नीचेकी जमीन डोल रही है। अेक दिनके आरामके वाद ही दिमागसे तीन दिनका समुद्र अुतर सका।

मार्च, १९२७

६५

सरोविहार

हमें रंगूनके समीपका प्रख्यात सरोवर देखना था। युरोप खंडकी आकृतिके जैसा अिस सरोवरका आकार भी टेढ़ा-मेढ़ा है। अुसमें कअी खाड़ियां, अंतरीप तथा जलडमरूमध्य हैं। रंगून कोंकणके ही अक्षांश पर है तथा समुद्रके पास है, अिसलिअे वहांकी वनश्री भी मुझे कोंकणके जितनी ही खुशनुमा मालूम हुअी। चारों ओर बड़े बड़े वृक्ष। सृष्टिने मानो अपना सारा ही वैभव दिखानेके लिअे बाहर निकाला हो। वनश्री और जलदेवताका जहां मिलन होता है, वहां लक्ष्मी बिना बुलाये आ ही जाती है। हम तीसरे पहर अुस सरोवरके पास जा पहुंचे। काफी समय तक अुसके किनारे किनारे घूमे। सरोवरका सौंदर्य हर कोनेसे भिन्न भिन्न प्रकारका मालूम होता था। कुछ रूप-गर्वित वृक्ष सारे समय सरोवरके दर्पणमें अपना दर्शन किया करते थे।

घूमते-घूमते हमारा धीरज खतम हुआ। सरोवर तो अीश्वरने नौका-विहारके लिअे ही बनाया है। हबशी जॉनको बुलाकर हम अुसकी नावमें जा बैठे और बिना किसी अुद्देश्यके अनेक दिशाओंमें घूमते रहे। बीचमें अेक टापू था। अुससे मुलाकात किये बिना भला वापस कैसे लौटा जा सकता था? टापू पर अेक सुंदर आराम-गृह बना हुआ था। अुसकी सीढ़ियोंकी दोनों दीवारों पर सीमेंटके बनाये हुअे दो भयानक अजगर लम्बे होकर पड़े थे। नाव चलाते चलाते अेक मोड़ लेते ही श्वेडेगॉन पॅगोडा अपने अूंचे शिखरके साथ दर्शन देता है। आगरेके किलेसे ताजमहल देखनेमें जो मजा आता है, वैसा ही मजा यहां मालूम होता था। वस्तुके समीप जाने पर अुसका सम्पूर्ण सौंदर्य प्रकट होता है; किन्तु अुसका काव्य तो दूरसे ही खिलता है। यह खूबी जाननेसे ही क्या चांद, सूरज तथा अगणित सितारे हमसे अितने दूर दूर विचरते होंगे?

शाम हुअी अिसलिअे हमें मजबूरन वापस लौटना पड़ा। सरोवरने शकुंतलाकी तरह हमें वापस आनेका निमंत्रण तो दिया ही था। अतः दूसरे

दिन नहानेका कार्यक्रम तय करके हमारी अेक बड़ी टोली वहां जानेके लिअे रवाना हुअी। वहां पहुंचने पर हमारे साथके लोगोंने बताया, 'गोरे लोगोंके बोटिंग क्लबके कारण सरोवरमें नहानेकी मनाही है।' सुबह होते ही जिस प्रकार कुमुद बंद हो जाता है, अुसी प्रकार मेरा अुत्साह मिट गया। अितनी मेहनतके बाद रसपूर्ण सरोवरमें तैरनेके आनंदसे वंचित रहना भला किसको पसंद होगा? मगर हमारे साथी सत्याग्रही थोड़े ही थे! वे खुलेआम कानूनका विरोध करनेके बजाय चुपचाप कानून तोड़ना ही अधिक पसंद करनेवाले थे। अुन्होंने अेक अैसा अेकान्त स्थान बहुत पहलेसे ढूंढ़ लिया था, जहां न तो गोरे लोगोंकी नावें पहुंच सकती थीं, न अुनकी दृष्टि। मैंने यहां आते ही देखा कि अिस स्थानका सौंदर्य अन्य स्थानोंसे कतअी कम नहीं है। अेकांतमें चोरीसे नहानेमें कुछ अनोखा ही आनन्द आया। गिरधारीको तैरना नहीं आता था, अुसका श्रीगणेश भी यहीं हुआ। पानीमें तैरते रहनेका अनुभव पहले-पहल होने पर मनुष्यको जो आनंद होता है, अुसको यदि कोअी अुपमा देनी हो तो अंडा तोड़कर बाहर आये हुअे पक्षीके आनंदकी ही दी जा सकती है। धूप तेज हो गअी फिर भी गिरधारी बाहर आनेका नाम नहीं लेता था। आधा घंटा और पानीमें रहने देनेके लिअे वह मुझसे अंग्रेजीमें विनती करने लगा। अुसे न मानता तो वह बंगलामें विनती करता, मानो भाषा बदलनेसे विनतीमें अधिक जोर आता हो। अुसको मैं नाराज कैसे करता? हमने मनसोक्त जल-विहार किया।

यदि ययातिको भी जीवनका आनंद छोड़ना पड़ा, तो फिर हमारे तैरनेके आनंदका अंत हुआ अिसमें आश्चर्य ही क्या? थके हुअे किन्तु हल्के बदन हम वापस लौटे। रास्तेमें अनन्नासके बगीचे थे। अैसा मालूम होता था मानो दूर दूर तक कंटीले अनन्नासोंके फव्वारे ही जमीनमें से अूपर अुड़ रहे हों। अनन्नासका अितना बड़ा बगीचा मैंने पहले कभी नहीं देखा था। अतः पेटमें भूख होते हुअे भी और यहां अनन्नासकी प्राप्तिकी कोअी अुम्मीद न होते हुअे भी काफी देर तक हम वहां देखते खड़े रहे।

मार्च, १९२७

६६

सुवर्णदेशकी माता अैरावती

अीरावती कहें या अैरावती? मैं समझता हूं कि अीरा नामकी घास परसे ही नदीका नाम अीरावती पड़ा होगा। अिसके किनारेकी पौष्टिक घास खाकर मदमत्त बने हुअे हाथीको अैरावत कहते होंगे; या फिर अिद्रके अैरावत जैसी महाकाय और गजगतिसे चलनेवाली अिस नदीको देखकर किसी बौद्ध भिक्षुको लगा होगा, 'चलो, अिसीको हम अैरावती कहें।'

परन्तु अैतिहासिक कल्पना-तरंगोंमें बहना बैठे-ठाले लोगोंका काम है। मुसाफिरको यह नहीं पुसाता।

अैरावती नदी हिन्दुस्तानमें होती तो संस्कृत कवियोंने अुसके बारेमें अैरावती जितना ही लंबा-चौड़ा काव्य-प्रवाह बहा दिया होता। ब्रह्मदेशके कवियोंने अपनी अिस माताके विषयमें अनेक काव्य यदि लिखे हों तो हमें पता नहीं। ब्रह्मी भाषा न तो हमारी जन्मभाषा है, न शास्त्रभाषा या राजभाषा है। अपने पड़ौसीकी भाषा सीखनेकी प्रवृत्ति हममें है ही कहां? बरसों तक परदेशमें रहें तो हम वहांकी भाषा बोल सकते हैं, किन्तु अुस भाषाके साहित्यका आस्वाद लेनेका श्रम हम कभी नहीं करते। कोअी अंग्रेज ब्रह्मी भाषा सीखकर ब्रह्मी कविताका अंग्रेजी अनुवाद हमें दे दे तो ही शायद हम अुसे पढ़ेंगे।

कोअी भी देश अैरावती जैसी नदी पर गर्व कर सकता है या अुसका कृतज्ञ हो सकता है। ब्रह्मदेशमें रंगूनसे अुत्तरकी ओर ठेठ मंडाले तक हम ट्रेनमें यात्रा कर चुके थे। वहांसे नजदीकके अमरापुरा जाकर हमने अैरावतीके प्रथम दर्शन किये। यदि पहलेसे हमें मालूम हो जाता कि अमरापुराके समीप प्रचंड बौद्ध मूर्तियां हैं, तो हमने भगवान बुद्धके दर्शनसे ही अैरावतीके विहारका आरंभ किया होता।

यहां पर भी नदीका पाट खूब चौड़ा है। नदीका प्रवाह धीरोदात्त गजगतिसे चलता है। अैसी नदीकी पीठ पर नाव या 'वाफर' (स्टीमर) में वैठकर यात्रा करना जीवनका अेक वड़ा सौभाग्य ही है।

अमरापुरासे मंडाले वापस जाकर हम 'वाफर' में वैठे। समुद्रकी यात्रा अलग है और नदीकी यात्रा अलग। नदीमें लहरें नहीं होतीं। दोनों ओरका किनारा हमारा साथ देता रहता है। और हमें अैसा नहीं मालूम होता कि जीवनका नाम धारण किये हुअे किन्तु जान लेनेवाले अेक महाभूतके शिकंजेमें हम फंसे हुअे हैं। पृथ्वीके गोलेकी हवामें चलनेवाली सनातन यात्राके समान ही नदीकी यात्रा शांत और आह्लादक होती है। आज भी जव अिस अैरावतीकी यात्राका मैं स्मरण करता हूं, तव मुझे द्रौपदीके जैसी मानिनी नर्मदाकी चाणोद-कर्नाली तरफकी यात्रा, सीताके जैसी ताप्तीकी सागर-संगम तककी यात्रा, काशी-तल-वाहिनी भारतमाता गंगाकी यात्रा, मथुरा-वृंदावनकी कृष्णसखी कालिंदीकी यात्रा, कश्मीरके नंदनवनमें पार्वती वितस्ताकी यात्रा और वनश्रीके पीहर-सदृश गोमंतक प्रदेशकी और केरलकी जलयात्रा, सभी अेकसाथ याद आ जाती हैं। अिनमें भी मन तृप्त हो जाय अितनी लंवी यात्रा तो वितस्ता और अैरावतीकी ही है। अैरावती नदी सिंधु, गंगा, व्रह्मपुत्रा और नर्मदाकी वरावरी करने-वाली है। अैरावतीका पाट और प्रवाह देखते ही मनमें अैसा भाव अुठता है, मानो यह किसी महान साम्राज्य पर राज्य करनेवाली कोअी सम्राज्ञी हो! आराकान और पेगुयोमा अैरावतीकी रक्षा अवश्य करते हैं, किन्तु अुसकी प्रतिष्ठा वनाये रखनेके लिअे वे आदरपूर्वक दूर ही खड़े रहते हैं।

हमारा जहाज चला। शाम होते ही जिस प्रकार कामधेनुके वत्स मांके पास दौड़े आते हैं, अुसी प्रकार आसपासके विस्तीर्ण प्रदेशके श्रमजीवी कृपीवलोंके ठटके ठट अैरावतीके किनारे अिकट्ठा होते हैं। हमारा जहाज मानो अेक चलता-फिरता वाजार ही था। कोअी छोटा-मोटा वंदरगाह आने पर वह लोगोंको न्यौता देनेके लिअे सीटी वजाता। वस, अुमड़ती हुअी चींटियोंकी तरह लोग दौड़ते दौड़ते आते और तरह तरहकी खाने-पीनेकी चीजें, कपड़े, वेंतके वर्तन, कारीगरीकी वस्तुअें तथा अन्य चीजें जहाज पर फैल जातीं। जहाजमें

भी चंद व्यापारी अपना अपना माल लिये हुअे तैयार ही रहते। पक्षियोंके कलरवकी तरह लेन-देनका शोरगुल शुरू हो जाता। भाषा यदि हम समझते तो अिस शोरगुलसे अूब जाते। किन्तु यहां तो लोग लड़ें-झगड़ें या रोयें-चिल्लायें, हमारे लिअे सब अेक-सा ही था। मानो अेक बड़ा नाटक खेला जा रहा हो। विनिमय पूरा होते ही जहाज छूटता था। ब्यानेकी तैयारीमें हो अैसी भैंसकी तरह हमारा जहाज डोलता डोलता चलता था। जहाजके अेक कमीने गोरे अधिकारीके साथ हमारा कुछ झगड़ा हो जानेसे यात्राके आरंभमें ही सारा मजा किरकिरा हो गया था। किन्तु मंद मंद पवनमें यह सब अुड़ गया, और हम कुदरतकी तरह प्रसन्न हो गये।

फिर अेक बंदरगाह आया। यहां कुछ विशेष व्यापार चलता होगा। छोटी-बड़ी असंख्य नावें नदीके किनारे कीचड़में लोट रही थीं। ढोरोंकी पीठ पर जिस प्रकार मक्खियां भिनभिनाती हैं, अुसी प्रकार देहाती बच्चे अिन नावोंके बीच कूद और खेल रहे थे। ब्रह्मी लोग गोदन गुदानेके बड़े शौकीन होते हैं। अुनके केवड़ेके रंग जैसे चमड़े पर लाल और हरे गोदने बड़े ही सुन्दर मालूम होते हैं। महाराष्ट्रके गांवोंमें लोगोंका यह विश्वास है कि अिस जन्ममें शरीर पर जेवरोंकी आकृति गोदनेसे अगले जन्ममें सोनेके जेवर मिलते हैं और ललाट पर टीका या चंद्रमा गोदनेसे स्त्रीको अखंड सौभाग्य मिलता है। कुछ अिसी तरहका विश्वास शायद यहांके लोगोंमें भी होगा, क्योंकि यहांके बहुतसे देहाती कमरसे घुटनों तक सारे शरीरमें तरह तरहकी आकृतियोंवाली लुंगी गुदाते हैं। अिसीलिअे जब वे नहानेके लिअे नदीमें नंगे घुस पड़ते हैं, तब बगैर कपड़ोंके भी नंगे नहीं मालूम होते हैं। जहाज कहीं अधिक समय तक ठहरता, तब हम किनारे पर अुतरकर आसपासके गांवोंमें घूम आते थे। ब्रह्मी घरों और मोहल्लोंसे हमारी आंखें अच्छी तरह परिचित हो चुकी थीं। अुनकी भाषा यद्यपि हम समझ नहीं पाते थे, फिर भी अिन निर्व्याज देहातियोंका जीवन हमारे लिअे परिचित-सा हो गया था। राजनीतिज्ञ और व्यापारी लोगोंके राग-द्वेषोंको यदि हम अलग कर दें और धार्मिक तथा अधार्मिक लोगोंकी कल्पना-सृष्टिको अेक ओर रख

दें, तो मनुष्य-जाति सर्वत्र समान ही है। मैं समझता हूं कि दुनियाभरमें सारे गांव रूप और स्वभावमें समान ही होंगे।

प्रवाहके साथ मानो ताल देनेवाले स्तूप और मंदिर भी वीच वीचमें मिल जाते थे। अूंची अूंची टेकरियां और शिखर मनुष्यको हमेशा ही प्रिय लगते हैं। अुसमें भी नील नदी जैसी अैरावती जब चारों दिशाओंमें अपनी कृपाका अुत्पात फैलाती है, तव ये अूंचे अूंचे स्थान ही मनुष्यके लिअे आश्रय-स्थान वन जाते हैं। मनुष्य अुनके प्रति अपनी कृतज्ञता यदि मंदिर वनवाकर प्रकट न करे तो भला किस प्रकार करे? प्रकृतिने हमें सिखाया है कि हरे पत्तोंमें पीले परिपक्व फल अपनी सारी मस्ती दिखा सकते हैं। अिस सवकसे सीख कर यहांके लोगोंने पेड़ोंके वीचमें मंदिर वनवाकर अुन पर आकाशकी अनंतताका दर्शन करानेवाली सोनेकी अुंगलियां अूंची अुठा रखी हैं। जो लोग यह मानते हैं कि प्रकृतिकी शोभाको मनुष्य वढ़ा नहीं सकता, अुन्हें अेक वार यहां आकर ये शिखर जरूर देखने चाहियें।

दोपहरका समय था। अंग्रेजी जाननेवाले अेक व्रह्मी कॉलेजियनके साथ हम वातें कर रहे थे। अितनेमें अेक शांत आवाज सुनाअी दी। छिंदवीन नदी अपना कर-भार लेकर अैरावतीसे मिलने आयी थी। कितना भव्य था दोनोंका प्रेम-संगम! वह दृश्य अैसा था मानो रामदास और तुकाराम अेक-दूसरेसे मिल रहे हों अथवा भवभूति शतरंज खेलनेवाले कालिदासको अपना 'अुत्तर-रामचरित' सुना रहे हों।

कल्पना द्वारा तो मैं छिंदवीनके अज्ञात प्रदेशमें शान-राज्यों तककी सैर कर आया। हाथमें तीर-कमान या कुल्हाड़ी लेकर घूमनेवाले कअी निश्चित और निर्भय वनवासी मुझे वहां मिले। जरा-सा संदेह होने पर जान लेनेवाले और विश्वास वैठ जाने पर जान न्यौछावर करनेवाले अिन प्रकृतिके वालकोंका दर्शन सभ्यताके कीचड़को धो डालनेवाले मंगल-स्नान जैसा था। जहाजका पक्षी कितना ही क्यों न अुड़े, अंतमें जिस प्रकार वह जहाज पर ही लौट आता है, अुसी प्रकार कल्पना भी जंगलकी सैर करके फिर जहाज पर आ गयी। क्योंकि हम पकोकु वंदरगाह पर आ पहुंचे थे।

पकोकुके पास कीचड़वाली नदीमें नहाकर और वहीं आतिथ्य स्वीकार करके हम फिर जहाज पर सवार हुअे और मिट्टीके तेलके कुअें खनेके लिअे येननजांव तक गये। कहा जा सकता है कि यहां पर अमेरिकन मजदूरोंका राज चलता है। आसपास वनश्री नहींके बराबर है। यहां अेक ओर अिन मिट्टीके तेलके कुओंका आधुनिक क्षेत्र और दूसरी ओर टेकरी पर स्थित छोटेसे प्राचीन बौद्ध मंदिरका तीर्थक्षेत्र, दोनोंको देखकर मनमें कअी विचार अुठे। मंदिरकी कारीगरीमें हाथीके मुंहवाला अेक पक्षी खुदा हुआ था। वैसे ही अन्य अनेक मिश्रण यहां दिखाअी दिये। निकटके मठमें कुछ बौद्ध साधु आलापके साथ सायंकालकी प्रार्थना या अैसी ही कोअी दूसरी विधि कर रहे थे। अैरावती मानो बिना किसी पक्षपातके मिट्टीके तेलके कुओंके पंपोंका शोरगुल भी अपने हृदय पर वहन करती है और 'अनिच्चा वत संखारा अुप्पादव्यय-धम्मिणो' का श्रांत या चिरंतन संदेश भी वहन करती है। अमेरिकाका सामर्थ्य भले बेजोड़ हो, लेकिन वह भूखंड अभी बच्चा ही कहा जायगा न? अुसको जीवनका रहस्य अितनी जल्दी कैसे हाथ लगेगा? अुसे तो नदीके किनारे तीन तीन हजार फुट गहरे कुअें खोदकर मिट्टीका तेल निकालनेकी ही सूझेगी। संसारके सब सृष्ट पदार्थ पैदा होते हैं और मिट जाते हैं। सभी नश्वर और व्यर्थ हैं, असार हैं। सार तो केवल अिससे बचकर निर्वाण प्राप्त करनेमें है — अिस बातको कौनसा अमेरिकन मान सकता है? किन्तु अैरावती नदी नव-अुत्साहके कारण कभी ज्ञानसे अिनकार नहीं करेगी, और न ज्ञानके भारसे अुत्साहको खो बैठेगी। अुसे तो महासागरमें विलीन होना है और अिस विलीनताके आनंदको सदा जाग्रत और बहता रखना है।

येननजांवसे हम प्रोम तक गये और वहां अैरावतीसे विदा हुअे। यहांसे आगे चलकर यह महानदी अनेक मुखोंसे सागरको मिलती है। अैरावती सचमुच सुवर्णदेशकी माता है।

मार्च, १९२७

६७

समुद्रके सहवासमें

[अफ्रीका जाते समय]

बम्बअीसे मार्मागोवा तक हिन्दुस्तानका पश्चिमी किनारा दिखाअी देता था। मां जब तक आंखोंसे ओझल नहीं होती तब तक बच्चेको जिस प्रकार यह विश्वास रहता है कि मैं मांके साथ ही हूं, अुसी प्रकार हिन्दुस्तानका किनारा दिखता रहा तब तक अैसा नहीं लगा कि हमने हिन्दुस्तान छोड़ दिया है। मार्मागोवा छोड़कर हमारे जहाज 'कंपाला' ने स्वदेशके साथ समकोण बनाते हुअे सीधे विशाल समुद्रमें प्रवेश किया। देखते देखते हिन्दुस्तानका किनारा आंखोंसे ओझल हो गया और चारों ओर केवल पानी ही पानी दिखाअी देने लगा। रात हुअी और आकाशकी आबादी बढ़ी। परिणामस्वरूप अकेलापन बहुत कम महसूस होने लगा। किन्तु जैसे जैसे हम भूमध्य-रेखाकी ओर बढ़ने लगे, वैसे वैसे हवा और बादलोंकी चंचलता बढ़ने लगी। मौसम अच्छा होनेसे समुद्र शांत था। लहरें जरा जरा-सी हंसकर बैठ जाती थीं। कुछ लहरें कच्ची छींककी तरह अुठते-अुठते ही शांत हो जाती थीं। समुद्रका रंग कभी आसमानी स्याहीकी तरह नीला हो जाता, तो कभी कालास्याह। और जहाज पानी काटता हुआ जब आगे बढ़ता, तब दोनों ओर अुसका जो सफेद फेन फैलता, अुसके अनेक अबरी बेलबूटे बन जाते। नीले रंगके साथ अुनकी शोभा अेक किस्मकी मालूम होती, काले रंगके साथ दूसरे किस्मकी। शुरू शुरूमें समुद्रके चेहरे पर लहरोंके अलावा चमड़े पर पड़ी हुअी झुर्रियोंकी-सी स्पष्ट छाप दिखाअी देती। कभी कभी ये झुर्रियां लुप्त हो जातीं और पानी चमकते हुअे बर्तनोंकी तरह सुन्दर दिखाअी देता। जहाज आहिस्ता आहिस्ता डोलता हुआ चल रहा था। जहाज जब कदमें छोटे होते हैं, तब अधिक डोलते हैं। बड़े जहाज अपनी धीरगतिको आसानीसे नहीं छोड़ते। सामनेसे जब लहरें आती हैं, तब जहाज डोलनेके

अलावा घुड़सवारकी तरह आगे-पीछे भी हिलता है, जिसे अंग्रेजीमें 'पिचिंग' कहते हैं। यह 'पिचिंग' लम्बे समय तक जारी रहे तो मनुष्यको अच्छा नहीं लगता, वह अनुकूल भी नहीं आता। किन्तु अुसे रोका कैसे जाय? झूलते-झूलते अुकता जाने पर झूला बंद करके अुस परसे अुतरा जा सकता है। किन्तु यहां तो अेक बार जहाजमें बैठे कि आठ दिन तक अुसका हिलना और डुलना स्वीकार किये सिवा कोअी चारा ही नहीं रहता। कभी कभी मनमें संदेह पैदा होता है कि दोनों गतियोंके मिश्रणसे कहीं चक्कर तो न आने लगेंगे? मनमें यह डर भी पैठ जाता है कि चक्करकी शंका मनमें अुठी अिसीलिअे अब चक्कर भी आने लगेंगे। खाते समय स्वादपूर्वक खाते हों, तो भी मनमें यह संदेह बना रहता है कि खाया हुआ पेटमें रहेगा या नहीं? अिस संदेहको मिटाना आसान बात नहीं है। खैर जो हो, हमने तो अपने आठों दिन खूब आनंदमें बिताये। लोगोंने हमें डरा दिया था कि अन्तके चार दिन बड़े कठिन जायंगे; किन्तु वैसा कुछ भी नहीं हुआ। हां, भूमध्य-रेखा जिस दिन पार की अुस दिन कुछ समय तक हवा खूब तेज चली। किन्तु अुससे हम गमगीन नहीं हुअे।

चारों ओर जब पानी ही पानी होता है तब कुछ समय तक मजा आता है। बादमें सारा वायुमंडल गंभीर बन जाता है। यह गंभीरता जब कम हो जाती है तब आंखोंको अकुलाहट मालूम होती है। हमारी पूरी सृष्टि मानो अेक जहाजमें ही समा जाती है। विशाल समुद्रकी तुलनामें वह कितनी छोटी और तुच्छ लगती है! समुद्रकी दया पर जीनेवाली! अुसे छोड़कर चारों ओर पानी ही पानी होता है। अितने सारे पानीका आखिर अुद्देश्य क्या है? जमीन पर होते हैं तब हम चाहे अुतना विशाल खंड क्यों न देखें, मनमें कभी यह खयाल नहीं आता कि अितनी सारी जमीन किसलिअे बनाअी गयी है? विशाल और अनंत आकाशको देखकर भी अैसा नहीं लगता कि अितने बड़े आकाशका निर्माण किसलिअे हुआ है? किन्तु समुद्रका पानी देखकर यह विचार मनमें अवश्य अुठता है। जमीनकी अभ्यस्त आंखें पानीका अखंड विस्तार देखते देखते अकुला जाती हैं, और

अंतमें थककर क्षितिजमें छाये हुअे बादलोंको देखकर विश्राम पाती हैं। मगर ये बादल तो अक्सर बिना आकारके और अर्थहीन होते हैं। आकाश जब मेघाच्छन्न हो जाता है तब अुसकी अुदासी असह्य हो अुठती है। अीश्वरकी कृपा है कि अिस अकुलाहटका भी अंतमें अंत आता है और खुली आंखें भी अंतर्मुख हो जाती हैं तथा मन गहरे विचारमें डूब जाता है।

रातके समय और खास कर बड़े तड़के तारे देखनेमें बड़ा आनंद आता था। किन्तु 'पूरा आकाश तो नहीं ही देखने देंगे' अैसा कहकर बादल बच्चोंकी तरह आकाशके चेहरे पर अपने हाथ घुमाते रहते थे। अुनकी दयासे जिस समय आकाशका जितना हिस्सा दिखाअी देता, अुसीको पढ़ लेना हमारा काम रहता था। गुरुवारका प्रातःकाल होगा। जहाज सीधा चल रहा था। अुसके मुख्य स्तंभके ठीक पीछे शर्मिष्ठा थी। स्तंभकी आड़में भाद्रपदाकी चौकोन आकृति जैसे वैसे जम गयी थी। नीचे अुतरते हुअे ध्रुवकी बगलमें देवयानी निकल रही थी। पौने पांच बजे और त्रिकाण्ड श्रवण सिर पर खस्वस्तिककी जगह लटकने लगा। हंस, अभिजित और पारिजात, तीनोंका मिलकर अेक सुन्दर चंदोवा बन गया था। बाअीं ओर गुरु, चंद्र और शुक्र अेक कतारमें आ गये थे। चंद्रकी चांदनी अितनी मंद थी कि अुसे छांछकी अुपमा भी नहीं दी जा सकती थी। सामने देखा तो बाअीं ओर वृश्चिक अपने अनुराधा, ज्येष्ठा और मूलके साथ लटक रहा था, जब कि दाअीं ओर स्वाति अस्त हो रही थी। बेचारा ध्रुवमत्स्य लगभग क्षितिजसे मिल गया था।

दूसरे दिन चंद्रका पक्षपात ध्रुवकी ओर हो गया। सप्तर्षिके दर्शन करके हम सोने जा रहे थे, अुस समय आकाशमें पुनर्वसुकी नावको हमारे साथ दक्षिणकी यात्रा पर रवाना हुअी देखकर बड़ी खुशी हुअी। पुनर्वसुकी नावमें बैठनेकी चित्राकी अभिलाषा अभी तक अतृप्त ही रही है। शायद मघा नक्षत्रकी अीर्ष्या अिसमें रुकावट डालती होगी। शनिवारके दिन चंद्र और शुक्रकी युति सुन्दर मालूम हुअी। आखिर आखिरमें अिन दोनोंने कुछ नीला-सा रंग धारण कर

लिया था। भाद्रपदाकी चौड़ी नाली यहां खूब अूंची चढ़ी हुअी दिखती थी।

ध्रुव कलसे लुप्त हो गया था।

सुवह जब अुषा स्वागत करनेके लिअे स्मित करती है, तब सारे क्षितिज पर चांदीके जैसी चमकीली किनारी बन जाती है। अिसके बाद समुद्र प्रसन्नताके साथ हंसने लगता है और अुषाके प्रगट होनेके लिअे गुलाबी अवकाश देता है।

शनिवारको सामनेसे आता हुआ अेक जहाज दिखाअी दिया। अपने दीयेका प्रकाश चमकाकर अुसने हमारे जहाजका अभिवादन किया। हमारे जहाजने भी अुसका अभिवादन किया ही होगा। दोनों जहाज यदि बहुत समीप आ जाते, तो दोनों भोंपू बजाते। किन्तु जहां आवाज नहीं पहुंचती, वहां प्रकाशके द्वारा बातें करनी पड़ती हैं। पूरे चार दिनके अेकान्तके बाद हमारे जहाजके जैसी ही दूसरी अेक सृष्टिको जीवन-पट पर विहार करते देखकर अत्यंत आनंद हुआ। हमारे जहाजके लोग अफ्रीकाके सपने देख रहे थे। सामनेवाले जहाजके यात्री हिन्दुस्तानके सपने देख रहे थे। हरेक जहाजके यात्रियोंके मनोव्यापारोंका योग लगाया जाय तो कैसा मजा आये!

जहाज परके यात्रियोंकी तीन जातियां होती हैं। प्रतिष्ठाकी अस्पृश्यता भोगनेवाले होते हैं पहले वर्गके यात्री। अुन्हें अधिक सुविधायें मिलती हैं, यह बात छोड़ दीजिये। किन्तु अुनका बड़प्पन अिस बातमें है कि अुनके राज्यमें दूसरा कोअी प्रवेश नहीं कर पाता। अूपरी डेकका बहुत-सा हिस्सा अुनके आराम और खेल-कूदके लिअे सुरक्षित रखा जाता है। दूसरे वर्गके यात्रियोंको भी अच्छी खासी सुविधायें मिलती हैं। लेकिन तीसरे वर्गके यात्रियोंकी गिनती तो मनुष्योंमें होती ही नहीं। अुनके झुंड भेड़-बकरियोंकी तरह कहीं भी ठूंस दिये जाते हैं। लगातार आठ दिन तक मनुष्यको पशु-जीवन बिताना पड़े, यह कोअी मामूली मुसीबत नहीं है।

और अब दूसरे और तीसरे वर्गके बीचमें अेक 'अिन्टर' का वर्ग बनाया गया है। वह पशु और मनुष्यके बीचका वानर-वर्ग कहा जा सकता है। अुसमें काफी भीड़ होते हुअे भी अितनी गनीमत है कि यात्री मनुष्यकी तरह सो सकते हैं।

हम जहाज पर हैं, यह मालूम होते ही अनेक लोग हमसे बातें करनेके लिअे आने लगे। अुसमें भी हमारे सुबह-शाम प्रार्थना करनेके समाचार जब जहाजके खलासियों तक पहुंचे, तब अुन्होंने हमें नीचेके डेक पर शामकी प्रार्थना करनेके लिअे बुलाया। करीब सभी खलासी सूरत जिलेके थे। भजनके पूरे रसिया। वे अनेक भजन जानते और ताल-स्वरके साथ गा सकते थे। अुनकी भजन-मंडली जब जमती तब वे सारे दिनकी थकावट और जीवनकी सारी चिन्ताअें भूल जाते थे। यह जानते हुअे भी कि नीले रंगकी पोशाक पहनकर सारे दिन यंत्रकी तरह काम करनेवाले लोग यही हैं, यह सच नहीं मालूम होता था। अुनके समक्ष मैंने अनेक प्रवचन किये। मैंने अुन्हें यह समझानेकी कोशिश की कि अुनका जीवन अेक तरहकी साधना ही है। मैंने यह भी बताया कि जमीन पर ही दीवारें खड़ी की जा सकती हैं; समुद्र पर नहीं। अतः खलासियोंके समाजमें जात-पांतकी दीवारें नहीं होनी चाहिये। अुन्हें तो दरिया-दिल बनना चाहिये।

हम लोग अिस प्रकार भजनमें तल्लीन रहते थे, अुसी बीच जहाज परके कअी गोवानी लोगोंने अेक रातको स्त्री-पुरुषोंके अेक नाचका आयोजन किया। अिसके लिअे अुन्होंने जो चंदा अिकट्ठा किया, अुसमें हमको भी शरीक किया। अिसलिअे हम हकदार प्रेक्षक बने!

गोवाके अीसाअी लोगोंमें युरेशियन नहींके बराबर हैं। धर्मसे अीसाअी किन्तु रक्तसे शुद्ध हिन्दुस्तानी लोगोंने पश्चिमके जो संस्कार अपनाये हैं, अुनका असर देखने लायक होता है। कुछ युगल नृत्य-कलाका संयमपूर्वक आनंद ले रहे थे; कुछ अैसे गंभीर, अलिप्त और यांत्रिक ढंगसे नाच रहे थे, मानो कोअी सामाजिक रस्म अदा कर रहे हों; जब कि कुछ युगल नृत्यके नियम मंजूर करें अुतनी पूरी छूट लेकर नृत्यमें तथा अेक-दूसरेमें लीन हो रहे थे। अेक दो युगलोंकी

अुम्र और अूंचाअी अितनी असमान थी कि मनमें यही विचार आता कि अितनी बड़ी विडंबनाका भोग अुन्हें कैसे बनना पड़ा। संकरी जगहमें अितने सारे लोगोंका नृत्य जैसे तैसे पूरा हुआ। अंत तक जागनेकी अिच्छा न होनेसे ग्यारह बजनेसे पहले ही हम लोग सो गये।

हमारा जहाज पश्चिमकी ओर यानी पृथ्वीकी दैनंदिन गतिसे अुलटी दिशामें चल रहा था। अतः लगभग हररोज हमें घड़ीके कांटे घुमाने पड़ते थे। जहाजकी ओरसे हमें सूचना मिलती थी कि 'मध्यरात्रिमें आधा घंटा कम करो' या 'अेक घंटा कम करो।' सृष्टिके नियमको समझकर हम अितना नुकसान अुठानेको तैयार हो जाते थे। अफ्रीका पहुंचने तक हमने कुल मिलाकर ढाअी घंटे खोये थे। (बेल्जियन कांगो जाने पर अेक घंटा और खोना पड़ा था।)

भूगोलके तथ्य न जाननेवाले पाठकोंको अितना कह देना आवश्यक है कि रेखांशकी हर पंद्रह डिग्री पर अेक घंटा बढ़ाना या खोना पड़ता है। और प्रशांत महासागरमें जब जहाज अेशिया और अमेरिकाके बीच १८० रेखांश पर होते हैं, तब अुन्हें आते या जाते अेक पूरा दिन बढ़ाना या घटाना पड़ता है। अिस रेखांशको अंग्रेजीमें 'डेट लाअिन' कहते हैं। हमारे यहां जिस तरह अधिक मास आता है, अुसी तरह 'डेट लाअिन' पर जाते हुअे अेक अधिक दिन आता है, जब कि आते हुअे अेक दिनका क्षय होता है।

आठ दिनसे न तो कोअी अखबार देखनेको मिला, न डाक, न मुलाकाती, न कोअी शहर या गांव — यहां तक कि सौगंद खानेके लिअे कोअी पहाड़ या टापू भी देखनेको नहीं मिला! अैसी स्थितिमें जब घंटेके घंटे और दिनके दिन चुपचाप चले आते हैं, तब वार और तारीखका भी ठिकाना नहीं रहता। हमारे जहाजकी अूंचाअीका हिसाब करते हुअे जब मैंने अिस बातकी जांच की कि हमारे अिर्दगिर्द क्षितिज तक कितना समुद्र फैला हुआ है, तब जहाजवालोंसे मालूम आ कि हमारी आंखें २५० वर्गमीलका समुद्र अेक चक्करमें पी सकती थीं।

कैसी महाशांति थी! वह भी डोलती, झूलती, बहती किन्तु स्थिर शांति आकाशके आशीर्वादके नीचे अुमड़ रही थी। Swelling and rolling peace — abiding and abounding. पता नहीं किस तरह, अिस शांतिके सेवनके साथ मुझमें मानव-प्रेम अुमड़ रहा था और सारी मनुष्य-जातिसे स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति कह रहा था। मानव-जातिका अितिहास आज भी कुल मिलाकर सुन्दर नहीं बन पाया है। अिसी समुद्रने कितने ही अन्याय और अत्याचार देखे होंगे। कितने ही गुलामोंकी आहें यहांकी हवामें मिली होंगी। और कितनी ही प्रार्थनाअें सूर्य, चंद्र और तारों तक पहुंच कर भी व्यर्थ गअी होंगी। अितना होते हुअे भी यदि मनुष्य-रक्तके कारण समुद्रमें लाली नहीं आअी, दु:खियोंकी आहोंसे यहांकी हवा कलुषित नहीं हुअी और लोगोंकी निराशासे आकाशकी ज्योतियां मंद नहीं पड़ीं, तो मनुष्य-जातिका थोड़ासा अितिहास पढ़कर मेरा मानव-प्रेम किसलिअे संकुचित या कम हो? यदि मैं अपने असंख्य दोषोंको भूलकर अपने आप पर प्रेम कर सकता हूं, और अपने विषयमें अनेक तरहकी आशायें बांध सकता हूं, तो मेरे ही अनंत प्रतिबिंबरूप मानव-जातिको मेरा प्रेम कम क्यों मिले?

अैसी भावनाके साथ अफ्रीकाकी भूमि पर विषम रूपसे चलनेवाले मनुष्य-जातिके त्रिखंड सहकारको देखनेके लिअे मैं मोम्बासा पहुंचा।

अिन आठ दिनोंमें खूब पढ़ने-लिखनेकी जो अुम्मीद मैंने रखी थी, वह पूरी नहीं हुअी। किन्तु ये आठ दिन जीवनके दर्शन, चिंतन और मननसे भरपूर थे।

नवंबर, १९५०

६८

रेखोल्लंघन

भूमध्य-रेखा (equator) पृथ्वीकी कटि-मेखला है। सीलोनके दक्षिणमें पहुंचा था तब यह सोचकर मन कितना अस्वस्थ हुआ था कि यहां तक आये फिर भी भूमध्य-रेखा तक नहीं पहुंच सके! सीलोनके दक्षिणमें गाल, देवेन्द्र और मातारा तक गये तब भी छठी डिग्रीसे ज्यादा दक्षिणमें नहीं जा सके। कन्याकुमारी गया तब मुश्किलसे आठवीं डिग्री तक ही पहुंचा था। चि० सतीश सिंगापुर था तब वहां जानेकी अेक बार अिच्छा हुअी थी — अुसे मिलनेके लिअे नहीं, परंतु भूमध्य-रेखा लांघ सकूंगा अिस लोभसे। फिर जब नक्शेमें देखा कि सिंगापुर भी भूमध्य-रेखाके अिस ओर ही है तब वह अुत्साह नहीं रहा।

लेकिन भूमध्य-रेखामें अैसा क्या है? जमीन पर या पानी पर सफेद, काली या पीली लकीर नहीं खींची गअी है। फिर भी भूमध्य-रेखाका प्रदेश काव्यमय है अिसमें कोअी शक नहीं।

अुस प्रदेशका स्मरण करता हूं और मुझे शान्तादुर्गा और अर्ध-नारी नटेश्वरका स्मरण होता है। शान्तादुर्गा अेक ओर शुभंकरी शान्ता है, तो दूसरी ओर भयंकरी दुर्गा है। महादेवका भी अैसा ही है। अुनका दक्षिण मुख सौम्य शिव है और वाम मुख अुग्र रुद्र है। अर्ध-नारी नटेश्वर अेक ओर स्त्रीरूप हैं, तो दूसरी ओर पुरुषरूप हैं। हमारे समन्वयवादी पूर्वजोंने हरि-हरेश्वरकी कल्पना अिसी तरह की है। शिव और विष्णु दोनोंके मिलनेसे हरि-हरेश्वर बने हैं।

भूमध्य-रेखा पर अिसी तरह परस्पर विरोधी ऋतुओंका मिलन है। अुत्तर गोलार्धमें जब गर्मीका मौसम होता है तब दक्षिण गोलार्धमें जाड़ेका। अेकमें जब वसंत होता है तब दूसरेमें शरद्। भूमध्य-रेखा

अेक अैसा प्रदेश है जहां गर्मी और जाड़ेके मौसम हस्तांदोलन कर सकते हैं। और प्रौढ़ा शरद् भी बाल वसंतको खेला सकती है।

अैसी जगह अगर अखंड शान्ति ही रहे तो वहांका जीवन अलोना हो जाय! खिलाड़ी कुदरतसे यह कैसे सहा जाय? गंगा-यमुनाके धवल-श्यामल पानीका संगम तो हमेशा नाचा करे, और अुत्तर-दक्षिणका मिलन नृत्य न करे, यह कैसे चले?

आज भूमध्य-रेखा पर आये हैं। यहां पवन अखंड रूपसे नाचता है। चंचलता कहीं स्थिर हुअी हो तो यहीं। यहांकी कुदरत अेक हाथसे गर्मीकी पीठ पर थपकियां देती है, तो दूसरा हाथ जाड़ेकी पीठ पर फेरती है।

भूमध्य-रेखा यानी तराजूमें तौला हुआ पक्षपात-रहित न्याय। अुत्तर-ध्रुव दीख पड़े और दक्षिण-ध्रुव नहीं, अैसा यहां नहीं चल सकता। यहांके आकाशमें मृग नक्षत्रके पेटमें पहुंचा हुआ वाण अिधर या अुधर झुक या ढल नहीं सकता। सीधा पूर्वमें अुग कर खस्वस्तिक (Zenith) को छूकर वह पश्चिममें डूबेगा। यही अेक धन्य प्रदेश है जहां खस्वस्तिक विषुववृत्त पर विराजमान हो सकता है। जैसे भूमि पर भूमध्य-रेखा होती है, वैसे आकाशमें विषुववृत्त (celestial equator) होता है। अितना लिखते हैं वहां हमारा रंगीन अभिनंदन करनेके लिअे अेक अिन्द्र-धनुप आगे दाहिनी ओर निकल आया है। अब तृप्ति हुअी। लेकिन समस्त मानव तृप्तियोंकी तरह वह अगर अल्पजीवी न हो तो पेट फूट जाय। और पेट नहीं तो आंखें फूट जायें। यह कैसे पुसा सकता है? अब दक्षिण गोलार्धमें क्या क्या देखने-जाननेको मिलेगा, क्या क्या अनुभव होगा, अैसी अुत्सुकता जाग्रत होने लगी है। भूमध्य-रेखा पहली बार लांघ सके अुसकी धन्यता सदा साथ रहेगी।

मअी, १९५०

६९

नीलोत्री

(१)

अफ्रीकाकी यात्रा करनेमें अेक अुद्देश्य था अुत्तर-पूर्व अफ्रीकाकी माताके समान अुत्तर-वाहिनी नील नदीके अुद्गम-स्थान नीलोत्रीके दर्शनका। गंगोत्री और जमनोत्रीकी यात्रा करनेके बाद अभी अभी अैसा लगने लगा था कि नीलोत्रीकी यात्रा करनी ही चाहिये। वह दिन अब निकट आ गया था। जुलाअीकी पहली तारीखको सुबह ही हमने कंपाला छोड़कर जिजाके लिअे प्रस्थान किया। अपने जरूरी कामके कारण श्री अप्पासाहब आज नैरोबी वापस चले गये और हम मोटर लेकर अपने रास्ते चल पड़े।

कंपालासे जिजा तकका रास्ता सुन्दर है। अनेक छोटी-छोटी और चौड़ी पहाड़ियां चढ़ती-अुतरती हमारी मोटर हमारे और नीलोत्रीके बीचका बावन मीलका फासला काटती गअी और हमारी अुत्कंठा बढ़ाती गअी। यह कितने बड़े सौभाग्यकी बात थी कि जिजा तक पहुंचनेके पहले ही हमारा संकल्प पूरा हुआ और हमें नीलोत्रीके दर्शन हो गये! दाअीं ओर विक्टोरिया या अमरसरका सरोवर दूर तक फैला हुआ है। अुसमें से सहज-लीलासे छलांग मारकर नील नदी जन्म लेती है! हम नदीके पुल पर पहुंचे। मोटरसे अुतरे और दाअीं ओर मुड़कर रिपन फॉल्सके नामसे मशहूर अेक छोटे-से प्रपातमें हमने नील नदीके दर्शन किये।

प्रपातके तुषारोंसे पैर ढंक गये हैं। सिर पर मुकुट चमक रहा है। और पीछे अेक हरा-भरा वृक्ष मुकुटको अधिक सुशोभित कर रहा है। देवीके दोनों हाथोंमें धानकी पूलियां हैं और मुंह पर प्रसन्न वात्सल्य खिल रहा है— अैसी मूर्ति कल्पनाकी नजरमें आअी। मूर्ति नीले रंगकी नहीं थी, बल्कि श्यामवर्णकी ओर जरा झुकती हुअी गोरी ही थी। सारे बदन पर पानीकी धारायें बह रही थीं। जिससे देवीके मुख परका हास्य अधिक सुन्दर मालूम हो रहा था।

जी भरकर दर्शन करनेके वाद हमने वाओं ओर देखा। दाओं ओरका पानी हमारी दिशामें दौड़ा चला आ रहा था। वाओं ओरका पानी हमसे दूर दूर दौड़ा जा रहा था। दोनोंका असर विलकुल भिन्न था। हमें मालूम था कि दाओं ओर रिपन प्रपात है, और वाओं ओर जरा दूर ओवेन प्रपात है। हमारे देशमें अुसे कोओ प्रपात हरगिज नहीं कहेगा। पानीकी सतहमें कुछ फुटका अंतर पैदा हो जानेसे ही क्या प्रपात वन जाता है? प्रपात तो तभी कहा जा सकता है जव पानी धव-धव गिरता हो, जितना गिरे अुतना ही फिर अुछलता हो और फेन तथा तुषारके वादल अिर्दगिर्द नाचते हों।

यात्राके अंतमें लोग तुरन्त जाकर मंदिरोंमें जो देवताका दर्शन करते हैं, अुसे यात्रियोंकी परिभाषामें 'धूल-भेंट' कहते हैं। यात्रा पैदल की हो, सारे शरीर पर धूल छाओ हो और अुत्कंठाके कारण अुसी स्थितिमें दौड़कर अिष्ट देवताके चरणोंनें गिर रहे हों या मिल रहे हों, तो अुसे धूल-भेंट कहते हैं। हम तो मोटरकी रफ्तारसे आये थे। सुवह थोड़ा-सा पानी गिरा था; अिससे रास्ते पर भी धूल नहीं थी। अतः अिस प्रथम दर्शनको 'भीनी-भेंट' ही कह सकते थे। यदि 'भाव-भीनी' कहें तो वह और अधिक यथार्थ वर्णन होगा। मूर्ति गीली, जमीन गीली, आंखें गीली और अनेक मिश्र-भावोंसे ओतप्रोत हृदय भी गीला। 'अद्य मे सफलं जन्म, अद्य मे सफलाः क्रियाः' यह पंक्ति जिसने प्रथम गाओ होगी, वह मेरे जैसे असंख्य यात्रियोंका प्रतिनिधि ही होगा।

नीलमाताके अिस प्रथम दर्शनको हृदयमें संग्रह करके हमने जिजामें प्रवेश किया। गुजरात विद्यापीठके किसी समयके विद्यार्थी अेडवोकेट श्री चंदुभाओ पटेलके यहां हमारा डेरा था। पुराने विद्यार्थियोंके यहां आतिथ्य अनुभव करना जितना आनंद-दायक होता है, अुतना ही कड़ा और कठिन भी होता है। घरकी अच्छीसे अच्छी सुविधायें हमें देकर खुद अड़चन भोगनेमें वे आनंद मानते होंगे; किन्तु हमें संकोच अनुभव हुअे विना कैसे रह सकता है?

अब हम नीलोत्रीके विधिवत् दर्शनके लिअे निकल पड़े। हम वहां पहुंचे जहां अमरसरका जल शिलाओंकी किनार परसे नीचे अुतरता है और नील नदीको जन्म देता है। जल्दी जल्दी पानीके पास जाकर पहले पैर ठंडे किये। आचमन करके हृदय ठंडा किया और क्षणभरके लिअे अुस स्थानका ध्यान किया। मेरी आदतके अनुसार ओशोपनिषद्, मांडुक्य अुपनिषद् या अघमर्षण सूक्त मुंहसे निकलना चाहिये था। किन्तु अेकाअेक यह श्लोक निकला:

ध्येय: सदा सवितृ-मंडल-मध्यवर्ती
नारायण: सरसिजासन-सन्निविष्ट:।
केयूरवान् मकर-कुंडलवान् किरीटी
हारी हिरण्मय-वपुर् धृत-शंख-चक्र:॥

नील नदीके तट पर भिन्न भिन्न समय पर और भिन्न भिन्न स्थान पर तीन बार नीलाम्बाका ध्यान किया और हर बार मुंहसे अचूक रूपमें यही श्लोक निकला। अब मुझे मिश्र देशकी संस्कृतिके पुराणोंमें यह खोज करनी है कि क्या नील नदीका भगवान् सूर्यनारायणके साथ कोअी खास संबंध है?

मैं यदि संस्कृतका कवि होता तो अिस नदीके पानीमें रहनेवाली मछलियों, पानी पर अुड़नेवाले वाचाल पक्षियों और अुसके किनारे लोटनेवाले किन्नोका (हिपोपोटेमस) की धन्यताके स्तोत्र गाता। नील नदीके किनारे जो वॉटर वर्क्स हैं, अुसकी देखभाल करनेके लिअे नियुक्त अेक गुजराती सज्जनके भाग्यसे अुन्हींकी भाषामें ओर्ष्या प्रकट करके मैंने संतोष माना: "आप कितने धन्य हैं कि आपको अहोरात्र नीलोत्रीके दर्शन होते रहते हैं, और यहांसे न हटनेके लिअे आपको तनख्वाह दी जाती है!" यह देखने या पूछनेके लिअे मैं वहां रुका नहीं कि अुनको अिस तरहकी धन्यता महसूस होती है या नहीं।

मेरी दृष्टिसे नदियां दो प्रकारकी होती हैं। पहाड़से निकलनेवाली और सरोवरसे निकलनेवाली। पहलीको मैं शैलजा या पार्वती कहूंगा; और दूसरीको सरोजा। (आशा है संसार भरके कमल मुझे क्षमा

करेंगे।) शैलजा नदियोंका अुद्‌गम बहुत छोटा, पतला और लगभग तुच्छ जैसा होता है। अतः अुनके प्रति आदर अुत्पन्न करनेके लिअे बड़े-बड़े माहात्म्य लिखने पड़ते हैं। गंगोत्रीके पास गंगाका प्रवाह कभी-कभी अितना छोटा हो जाता है कि सामान्य मनुष्य भी अुसके अेक किनारे अेक पैर और दूसरे किनारे दूसरा पैर रख कर खड़ा हो सकता है। सरोजा नदियोंकी बात अलग है। विशाल और स्वच्छ वारि-राशिमें से जीमें आये अुतना पानी खींचकर वे बहने लगती हैं। और अुनके चलने-बोलनेमें जन्मसे ही धनी श्रीमन्त होनेका आत्मभान होता है।

नीलोत्रीकी यात्रा करनेका अेक और भी अदम्य आकर्षण था। महात्मा गांधीके पार्थिव शरीरको दिल्लीके राजघाट पर अग्निसात् करनेके पश्चात् अुनकी अस्थि और चिता-भस्मका विसर्जन हिन्दुस्तान तथा संसारके अनेकानेक पुण्य-स्थानोंमें किया गया था। अुनमें से अेक स्थान नीलोत्री है।

हम जिंजा नगरीके सार्वजनिक मेहमान थे। अतः यहांके लोगोंने हमारी अुपस्थितिसे 'लाभ अुठाने' की ठानी और जहां चिता-भस्मका विसर्जन किया गया था, अुसके पास अेक कीर्तिस्तंभ खड़ा करनेकी बात तय हो चुकनेसे अुसका शिलान्यास मेरे हाथों करानेका प्रबंध किया।

२ जुलाअी, १९५० को अधिक आषाढ़ कृष्ण तृतीयाके दिन सुबह सैकड़ों लोगोंकी अुपस्थितिमें मैंने यह विधि पूरी की। अिस अुत्सवके लिअे गांधीजीका अेक बड़ा चित्र सामने रखा गया था। अुसकी नजर मुझ पर पड़ते ही मैं बेचैन हो अुठा। वैदिक विधि पूरी होनेके पश्चात् मैंने गांधीजीके जीवनके बारेमें थोड़ासा प्रवचन किया और बताया कि अफ्रीका ही अुनकी तपोभूमि है। फोटो वगैरा खींचनेकी आधुनिक विधिसे मुक्त होते ही किनारेके अेक पत्थर पर बैठकर नील-माताके सुभग जल-प्रवाह पर मैंने टकटकी लगाअी और अंतर्मुख होकर ध्यान किया। अुस समय मनमें विचार आया कि यूरोप, अफ्रीका और अेशिया, अिन तीनों महाखंडोंके बल्कि अमेरिकाके भी महान और सामान्य आबालवृद्ध स्त्री-पुरुष यहां आयेंगे, सर्वोदयके ऋषि महात्मा

गांधीके जीवन, जीवन-कार्य और अंतिम बलिदानका यहां चिन्तन करेंगे और मनुष्य मनुष्यके बीचका भेदभाव भूलकर विश्व-कुटुंबकी स्थापना करनेका व्रत लेंगे। भविष्यके अिन सारे प्रवासियोंको मैंने वहांसे अपने प्रणाम भेजे।

(२)

नील नदीकी दो शाखायें हैं। श्वेत और नील। जिंजाके समीप जिसका अुद्‌गम होता है वह श्वेत शाखा है। नीलशाखा भी सरोजा ही है। अीथियोपिया (जिसे हम हब्शियाना (अेबिसीनिया) कहते हैं) देशमें ताना नामक अेक सरोवर है। अिस सरोवरमें से नील शाखा निकलती है। ये शाखायें लाखों बरससे बहती रही हैं और अपने किनारे रहनेवाले पशु-पक्षी और मनुष्योंको जलदान देती रही हैं। मगर युरोपियन लोगोंको जिस चीजका पता न हो वह अज्ञात ही कही जायगी। अेक दृष्टिसे अुनका कहना सही भी है। दूसरे लोग नदीके किनारे रहते हुअे भी यदि अिसकी खोज न करें कि यह नदी असलमें आती कहांसे है और आगे कहां तक जाती है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि अुन लोगोंको सारी नदीका ज्ञान है। मसलन्, तिब्बतके लोग मानसरोवरसे निकलनेवाली सांनपो (विशाल प्रवाह) नदीको जानते हैं। वे लोग अधिकसे अधिक अितना ही जानते हैं कि यह नदी पूर्वकी ओर बहती बहती जंगलमें लुप्त हो जाती है। अिधरसे हमारे लोग ब्रह्मपुत्रका अुद्‌गम खोजते खोजते अुसी जंगलके अिस ओरके सिरे तक पहुंचे। आगेका वे कुछ नहीं जानते। जब कभी अंग्रेजोंने प्रतिकूल परिस्थिति होते हुअे भी अिन जंगलोंको पार किया, तभी वे यह स्थापित कर सके कि तिब्बतकी सांनपो नदी ही अिस ओर आअी है और अन्य कअी छोटी-बड़ी नदियोंका पानी लेकर ब्रह्मपुत्र बनी है।

नील नदीका अुद्‌गम खोजनेवालोंमें मि० स्पीक अंतमें सफल हुअे और अुन्होंने यह सिद्ध किया कि जिंजाके पास सरोवरसे जो नदी निकलती है वही मिश्र-माता नील है।

ये स्पीक साहब हिन्दुस्तान सरकारकी नौकरीमें थे। अुन्हें पता चला कि प्राचीन हिन्दू लोग मिश्र यानी आजके अिजिप्तके बारेमें काफी जानकारी रखते थे। अुन्होंने जांच करके यह मालूम किया कि संस्कृत पुराणोंमें कहा गया है कि नील नदीका अुद्‌गम मीठे पानीके अमरसरसे हुआ है, अिसी प्रदेशमें चंद्रगिरि है, ठेठ दक्षिणमें मेरु पर्वत स्थित है, आदि। पुराणोंमें से कुछ संस्कृत श्लोकोंका अुन्होंने अनुवाद करवा लिया और अुसके सहारे नीलके अुद्‌गमकी खोज करनेका निश्चय किया।

वे पहले झांझीबार गये और वहांसे सब तैयारी करके केनिया प्रदेश पार करके युगान्डा गये। वहां अुन्हें अमरसरवाला 'अच्छोद' सरोवर मिला। (अच्छ—सुअच्छ=स्वच्छ। अुद—अुदक=पानी। मीठे पानीके सरोवरको अच्छोद कह सकते हैं।) और वहांसे निकलनेवाली नील नदी भी मिली। अुन्होंने यह सिद्ध किया कि सुदान और अिजिप्तमें बहनेवाली नदी यही है। अिस बातको अभी पूरे सौ साल भी नहीं हुअे हैं।

अफ्रीका खंड सचमुच वहां रहनेवाली अनेक अफ्रीकन जातियोंका देश है। अिस प्रदेशके बारेमें युरोपियन लोगोंको पूरी जानकारी नहीं थी, यह कोअी वहांके लोगोंका दोष नहीं है। युरोपके और खास करके अरबस्तानके लोग अफ्रीकाके किनारे जाकर वहांके लोगोंको पकड़ लेते थे और अपने अपने देशमें ले जाकर अुन्हें गुलामके तौर पर बेचते थे। पकड़े हुअे लोगोंमें स्त्रियां भी होती थीं और बच्चे भी होते थे। किन्तु लुटेरे अुनका मनुष्यके नाते खयाल क्यों करने लगे?

कुछ मिशनरी लोगोंको सूझा कि अैसे जंगली लोगोंकी आत्माके अुद्धारके लिअे अुन्हें अीसाअी बनाना चाहिये। जिस गहन प्रदेशमें लोभी व्यापारी भी जानेकी हिम्मत नहीं कर पाते, वहां ये अुत्साही धर्म-प्रचारक पहुंच जाते और वहांकी भाषा सीखकर लोगोंको अीसा मसीहका 'शुभ-संदेश' सुनाते।

आगे चलकर युरोपके राजाओंने अफ्रीका खंडको आपसमें बांट लिया। अिसमें नियम यह रखा कि जिस देशके मिशनरियोंने जितना

प्रदेश ढूंढ़ निकाला (!) हो अुतना प्रदेश अुस देशके राजाकी मिल्कियत माना जाय। अिसमें अेक बार अैसा हुआ कि स्टेन्ली नामक किसी मिशनरीने अिंग्लैंडके राजासे कांगो नदीके विस्तारका प्रदेश 'ढूंढ़ने' के लिअे मदद मांगी। अिंग्लैण्डके राजाने यानी पार्लियामेन्टने यह मदद नहीं दी। अतः वह बेल्जियमके राजाके पास गया। राजा लिओपोल्ड लोभी और अुत्साही था। अुसने अुसे सब तरहकी मदद दी। परिणाम-स्वरूप जब अफ्रीका खंडका बंटवारा हुआ तब कांगो नदीके विस्तारका प्रदेश बेल्जियमके हिस्सेमें गया! बेल्जियम कांगोका यह प्रदेश करीब हिन्दुस्तान जितना बड़ा है। वहांसे रबड़ प्राप्त करनेके लिअे गोरे लोगोंने वहांके वाशिंदों पर जो जुल्म गुजारे , अुनका वर्णन पढ़कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं, अैसा कहना अल्पोक्ति ही होगी। भावनाशील मनुष्य यदि ये वर्णन पढ़े तो अुसका खून जम जायगा। फिर भी गोरे लोगोंने यहांके वाशिंदोंको धीरे धीरे 'सुधारा' अवश्य है। अब ये लोग कपड़े पहनते हैं, बालोंमें तरह तरहकी मांगें निकालते हैं और शराब भी पीते हैं। अिस प्रकार अुनमें से बहुतसे अीसाअी बन गये हैं!

हमारे यहांके लोगोंने युगान्डामें जाकर कपासकी खेती बढ़ाअी। राज्यकर्ताओंकी मददसे वहां बड़ी बड़ी 'अेस्टेटें' बनाअीं और करोड़ों रुपये कमाये। हमने भी वहांके लोगोंको सुधारा है; दरजी-काम, बढ़अीगीरी, राजकाम, रसोअी-काम आदि धंधोंमें हमने अुनकी मदद ली, अिसलिअे वे लोग धीरे धीरे अिसमें प्रवीण हो गये। हिन्दुस्तानके कपड़ों और विलायतसे आनेवाली शराब आदि अनेक प्रकारकी चीजें बेचनेकी दुकानें खोलीं और अुन लोगोंको जीवनका आनंद भोगना सिखाया!

गोरे और गेहुंअे रंगके लोगोंके अिस पुरुषार्थकी साक्षी नील नदी यहां चुपचाप बहती रहती है और अपना परोपकार अपने दोनों तटों पर दूर दूर तक फैलाती रहती है।

हमारे देशमें गंगा नदीका जो महत्त्व है, वही महत्त्व अधिक अुत्कट रूपसे अुत्तर-पूर्व अफ्रीकामें नील नदीका है। अिजिप्तकी मिश्र या मिसर संस्कृतिका स्थान दुनियाकी सबसे महत्त्वपूर्ण पांच-छः प्राचीन

संस्कृतियोंमें है। अुसका असर युरोपके अितिहास पर ही नहीं, बल्कि अुसके धर्म पर भी पड़ा है। हमारे यहां जैसी चार वर्णोंवाली संस्कृति विकसित हुआी, वैसी ही संस्कृति प्राचीन मिश्र देशमें भी देखनेको मिलती है और अुसका प्रतिबिंब यूनानी दार्शनिक अफलातूनकी 'समाज-रचना' पर पड़ा हुआ मिलता है। चार वर्णोंवाली संस्कृति अुस कालके लिअे चाहे जितनी अनुकूल और भव्य मानी गअी हो, फिर भी तूफानी युरोप अुसे हजम नहीं कर सका। युरोपमें जो अीसाअी धर्म फैला है, अुसका पालन-पोषण अिजिप्तमें कुछ कम नहीं हुआ है। किन्तु वहां विकसित हुअे वैराग्य, तपस्या तथा देह-दमनको काफी आजमानेके बाद युरोपने अुसे छोड़ दिया। फिर भी युरोपकी संस्कृतिकी जड़ें ढूंढ़नी हों तो अिजिप्तके अितिहासमें प्रवेश करना ही पड़ता है और अिस अितिहासका निर्माण कुछ हद तक नील नदीका ऋणी है।

जिस तरह नदीका पानी आगे ही आगे बहता है, पीछे नहीं जा सकता, अुसी तरह अिजिप्तकी संस्कृति नील नदीके अुद्‌गमकी ओर युगान्डा प्रदेशमें नहीं पहुंच सकी, यह बात हमारा ध्यान आकर्षित किये बिना नहीं रहती। अिजिप्तके लोग यदि अमरसरके आसपास आकर बसे होते, तो अफ्रीकाका ही नहीं बल्कि दुनियाका अितिहास भिन्न प्रकारसे लिखा जाता।

हमारे देशमें नदियोंके जितने अुद्‌गम हम देखते हैं, वे सब जंगलोंमें या दुर्गम प्रदेशोंमें होते हैं। और ये अुद्‌गम छोटे भी होते हैं। नील नदीका अुद्‌गम विशाल है, अिसकी तो कोअी बात नहीं। किन्तु अुद्‌गमके काव्यमें कमी अिस बातसे आ गअी है कि वहां अेक शहर बसा हुआ है। हमारे यहां कृष्णा और अुसकी चार सहेलियां सह्याद्रिके जिस प्रदेशसे निकलती हैं, वह प्रदेश दुर्गम और पवित्र था। संतोंने वहां शिवजी महाबलेश्वरकी स्थापना की थी। किन्तु अंग्रेजोंने अुसको अपना ग्रीष्म-नगर बनाकर अुस तपोभूमिको विहार-भूमि या विलास-भूमि बना डाला, अिस बातका स्मरण मुझे जिजामें हुअे बिना नहीं रहा।

और अब तो वहां ओवेन फॉल्सके सामने अेक बड़ा बांध बांधकर बिजली पैदा की जायगी। संसारका यह अेक अद्‌भुत बांध होगा। अुसकी शक्ति युगांडामें ही नहीं, सुदान और अिजिप्त तक पहुंचनेवाली है। अिससे अनाज बढ़ेगा। अकाल दूर होगा। असंख्य अश्वत्थामाओं (हॉर्स-पावर) जितनी शक्ति मनुष्यकी सेवाके लिअे मिलेगी। अतः अैसी प्रवृत्तिको तो आशीर्वाद ही देना चाहिये। फिर भी हृदय कहता है कि मनुष्य-जाति अिसके बदले कुछ अैसी चीज खोनेवाली है, जिसकी पूर्ति बड़ेसे बड़े वैभवसे भी नहीं हो सकेगी।

नील नदी माता थी, देवी थी। अब वह वर्तमानकालकी लोकधात्री दाअी बननेवाली है!

नवंबर, १९५०

७०

वर्षा-गान

कालिदासका अेक श्लोक मुझे बहुत ही प्रिय है। अुर्वशीके अंतर्धान होने पर वियोग-विह्वल राजा पुरूरवा वर्षा-ऋतुके प्रारंभमें आकाशकी ओर देखता है। अुसको भ्रांति हो जाती है कि अेक राक्षस अुर्वशीका अपहरण कर रहा है। कविने अिस भ्रमका वर्णन नहीं किया; किन्तु वह भ्रम महज भ्रम ही है, अिस बातको पहचाननेके बाद, अुस भ्रमकी जड़में असली स्थिति कौनसी थी, अुसका वर्णन किया है। पुरूरवा कहता है — "आकाशमें जो भीमकाय काला-कलूटा दिखाअी देता है, वह कोअी अुन्मत्त राक्षस नहीं किन्तु वर्षाके पानीसे लबालब भरा हुआ अेक बादल ही है। और यह जो सामने दिखाअी देता है वह अुस राक्षसका धनुष नहीं, प्रकृतिका अिन्द्र-धनुष ही है। यह जो बौछार है, वह बाणोंकी वर्षा नहीं, अपितु जलकी धाराअें हैं और बीचमें यह जो अपने तेजसे चमकती हुअी नजर आती है, वह

मेरी प्रिया अुर्वशी नहीं, किन्तु कसौटीके पत्थर पर सोनेकी लकीरके समान विद्युल्लता है!"

कल्पनाकी अुड़ानके साथ आकाशमें अुड़ना तो कवियोंका स्वभाव ही है। किन्तु आकाशमें स्वच्छन्द विहार करनेके बाद पंछी जब नीचे अपने घोंसलेमें आकर अितमीनानके साथ बैठता है, तब अुसकी अुस अनुभूतिकी मधुरिमा कुछ और ही होती है। दुनियाभरके अनेकानेक प्रदेश घूमकर स्वदेश वापस लौटनेके बाद मनको जो अनेक प्रकारका संतोष मिलता है, स्थैर्यका जो लाभ होता है और निश्चिन्तताका जो आनन्द मिलता है, वह अेक चिर-प्रवासी ही बता सकता है। मुझे अिस बातका भी संतोष है कि कल्पनाकी अुड़ानके बाद जल-धाराओंके समान नीचे अुतरनेका संतोष व्यक्त करनेके लिअे कालिदासने वर्षा-ॠतुको ही पसन्द किया।

* * *

आजकल जैसे यात्राके साधन जब नहीं थे और प्रकृतिको परास्त करके अुस पर विजय पानेका आनन्द भी मनुष्य नहीं मनाते थे, तब लोग जाड़ेके आखिरमें यात्राको निकल पड़ते थे और देश-देशान्तरकी संस्कृतियोंका निरीक्षण करके और सभी प्रकारके पुरुषार्थ साधकर वर्षा-ॠतुके पहले ही घर लौट आते थे।

अुस युगमें संस्कृति-समन्वयका 'मिशन' (जीवन-कार्य) अपने हृदय पर वहन करनेवाले रास्ते अनेक खण्डोंको अेक-दूसरेसे मिलाते थे। जीवन-प्रवाहको परास्त करनेवाले पुलोंकी संख्या बहुत कम थी —जो थे, वे सेतु ही थे। अुन सेतुओंका काम था, जीवन-प्रवाहको रोक लेना और मनुष्योंके लिअे रास्ता कर देना। लेकिन जब जीवनको यह बंधन असह्य-सा मालूम होने लगता था, तब सेतुओंको तोड़ डालना और पानीके बहावके लिअे रास्ता मुक्त कर देना प्रवाहका काम होता था। यह था पुराना क्रम। यही कारण था कि नदी-नालोंका बढ़ा हुआ पानी रास्तों और सेतुओंको तोड़े, अुसके पहले ही मुसाफिर अपने-अपने घर लौट आते थे। अिसीलिअे वर्षा-ॠतुको वर्षकी 'महिमामयी ॠतु' माना है।

असलमें 'वर्ष' नाम ही वर्षासे पड़ा है। 'हमने कुछ नहीं तो पचास बरसातें देखी हैं!' जिन शब्दोंसे ही हमारे बुजुर्ग प्रायः अपने अनुभवोंका दम भरते हैं।

*　　　　*　　　　*

बचपनसे ही वर्षा-ऋतुके प्रति मुझे असाधारण आकर्षण रहा है। गरमीके दिनोंमें ठण्डे-ठण्डे ओले बरसानेवाली वर्षा सबको प्रिय होती है। लेकिन बादलोंके ढेरोंसे लदी हुअी हवाअें जब बहने लगती हैं, बिजलियां कड़कती हैं और यह महसूस होने लगता है कि अब आकाश तड़क कर नीचे गिर पड़ेगा, तबकी वर्षाकी चढ़ाअी मुझे बचपनसे ही अत्यन्त प्रिय है। वर्षाके जिस आनन्दसे हृदय आकण्ठ भरा हुआ होने पर भी अुसे वाणीके द्वारा व्यक्त न कर पाअूंगा और व्यक्त करने जाअूंगा तो भी अुसकी तरफ हमदर्दीसे कोअी ध्यान नहीं देगा, जिस खयालसे मेरा दम घुटता था।

*　　　　*　　　　*

आसपासकी टेकरियों परसे हनुमानके समान आकाशमें दौड़नेवाले बादल जब आकाशको घेर लेते थे, तब अुसे देखकर मेरा सीना मानो भारसे दब जाता था। लेकिन सीने परका यह बोझ भी सुखद मालूम होता था। देखते-देखते विशाल आकाश संकुचित हो गया, दिशाअें भी दौड़ती-दौड़ती पास आकर खड़ी हो गअीं और आसपासकी सृष्टिने अेक छोटेसे घोंसलेका रूप धारण किया। जिस अनुभूतिसे मुझे वह खुशी होती थी जो पक्षी अपने घोंसलेका आश्रय लेने पर अनुभव करता है।

लेकिन जब हम कारवार गये और पहली बार ही समुद्र-तट परकी वर्षाका मैंने अनुभव किया, तबके आनन्दकी तुलना तो नयी सृष्टिमें पहुंचनेके आनन्दके साथ ही हो सकती है।

*　　　　*　　　　*

बरसातकी बौछारोंको मैंने जमीनको पीटते बचपनसे देखा था। लेकिन अुसी वर्षाको मानो बेंतसे समुद्रको पीटते देखकर और

समुद्र पर अुसके सांट अुठे देखकर अितने बड़े समुद्रके बारेमें भी मेरा दिल दया और सहानुभूतिसे भर जाता था। बादल और वर्षाकी धाराओं जब भीड़ करके आकाशकी हस्तीको मिटाना चाहती थीं तो अुसका मुझे विशेष कुछ नहीं लगता था, क्योंकि बचपनसे ही मैं अिसका अनुभव करता आया था। लेकिन वर्षाकी धाराओं और अुनके सहायक बादल जब समुद्रको काटने लगते थे तब मैं बेचैन हो जाता था। रोना नहीं आता था, लेकिन जो-कुछ अनुभव करता था अुसे व्यक्त करनेके लिअे 'फूट-फूटकर' यह शब्द काममें लेनेकी अिच्छा होती है। वर्षा चाहे तो पहाड़ों पर धावा बोल सकती है, चाहे खेतोंको तालाब और रास्तोंको नाले बना सकती है; लेकिन समुद्रको अपनी दरी समेटनेके लिअे बाध्य करना मर्यादाका अतिक्रमण-सा मालूम होता था। अवज्ञाके अिस दृश्यको देखनेमें भी मुझे कुछ अनुचित-सा प्रतीत होता था।

* * *

मेरी यह वेदना मैंने भूगोल-विज्ञानसे दूर की। मैं समझने लगा कि सूर्यनारायण समुद्रसे लगान लेते हैं और अिसीलिअे तप्त हवामें पानीकी नमी छिपकर बैठती है। यही नमी भापके रूपमें अूपर जाकर ठण्डी हुआी कि अुसके बादल बनते हैं, और अन्तमें अिन्हीं बादलोंसे कृतज्ञताकी धारायें बहने लगती हैं, और समुद्रको फिरसे मिलती हैं।

गीतामें कहा गया है कि यह जीवन-चक्र प्रवर्तित है अिसीलिअे जीवसृष्टि भी कायम है। अिसी जीवन-चक्रको गीताने 'यज्ञ' कहा है। यह यज्ञ-चक्र यदि न होता तो सृष्टिका बोझ भगवानके लिअे भी असह्य हो जाता। यज्ञ-चक्रके मानी हो हैं परस्परावलंबन द्वारा सधा हुआ स्वाश्रय। पहाड़ों परसे नदियोंका बहना, अुनके द्वारा समुद्रका भर जाना; फिर समुद्रके द्वारा हवाका आर्द्र होना; सूखी हवाके तृप्त होते ही अुसका अपनी समृद्धिको बादलोंके रूपमें प्रवाहित करना और फिर अुनका अपने जीवनका अवतार-कृत्य प्रारंभ करना — अिस

भव्य रचनाका ज्ञान होने पर जो संतोष हुआ वह अिस विशाल पृथ्वीसे तनिक भी कम नहीं था।

तबसे हर बारिश मेरे लिअे जीवन-धर्मकी पुनर्दीक्षा बन चुकी है।

*　　　*　　　*

वर्षा-ऋतु जिस तरह सृष्टिका रूप बदल देती है, अुसी तरह मेरे हृदय पर भी अेक नया मुलम्मा चढ़ाती है। वर्षाके बाद मैं नया आदमी बनता हूं। दूसरोंके हृदय पर वसन्त-ऋतुका जो असर होता है, वह असर मुझ पर वर्षासे होता है। (यह लिखते-लिखते स्मरण हुआ कि साबरमती जेलमें था तब वर्षाके अन्तमें कोकिलाको गाते हुअे सुनकर 'वर्षान्ते वसंत' शीर्षकसे अेक लेख मैंने गुजरातीमें लिखा था।)

*　　　*　　　*

गरमीकी ऋतु भूमाताकी तपस्या है। जमीनके फटने तक पृथ्वी गरमीकी तपस्या करती है और आकाशसे जीवन-दानकी प्रार्थना करती है। वैदिक ऋषियोंने आकाशको 'पिता' और पृथ्वीको 'माता' कहा है। पृथ्वीकी तपश्चर्याको देखकर आकाश-पिताका दिल पिघलता है। वह अुसे कृतार्थ करता है। पृथ्वी बालतृणोंसे सिहर अुठती है और लक्षावधि जीवसृष्टि चारों ओर कूदने-विचरने लगती है। पहलेसे ही सृष्टिके अिस आविर्भावके साथ मेरा हृदय अेकरूप होता आया है। दीमकके पंख फूटते हैं और दूसरे दिन सुबह होनेसे पहले ही सबकी-सब मर जाती हैं। अुनके जमीन पर बिखरे हुअे पंख देख-कर मुझे कुरुक्षेत्र याद आता है। मखमलके कीड़े जमीनसे पैदा होकर अपने लाल रंगकी दोहरी शोभा दिखाकर लुप्त हुअे कि मुझे अुनकी जीवन-श्रद्धाका कौतुक होता है। फूलोंकी विविधताको लजाने-वाले तितलियोंके परोंको देखकर मैं प्रकृतिसे कलाकी दीक्षा लेता हूं। प्रेमल लताअें जमीन पर विचरने लगीं, पेड़ पर चढ़ने लगीं और कुअेंकी थाह लेने लगीं कि मेरा मन भी अुनके जैसा ही कोमल और 'लागूती' (लगौहां) बन जाता है। अिसलिअे बरसातमें जिस

तरह बाह्य सृष्टिमें जीवन-समृद्धि दिखाओ देती है, अुसी तरहकी हृदय-समृद्धि मुझे भी मिलती है। और वारिश शेष होकर आकाशके स्वच्छ होने तक मुझे अेक प्रकारकी हृदय-सिद्धिका भी लाभ होता है। यही कारण है कि मेरे लिअे वर्षा-ॠतु सब ॠतुओंमें अुत्तम ॠतु है। अिन चार महीनोंमें आकाशके देव भले ही सो जायं, मेरा हृदय तो सतर्क होकर जीता है, जागता है और अिन चार महीनोंके साथ मैं तन्मय हो जाता हूं।

'मधुरेण समापयेत्' के न्यायसे वसन्त-ॠतुका अन्तमें वर्णन करनेके लिअे कालिदासने 'ॠतुसंहार' का प्रारंभ ग्रीष्म-ॠतुसे किया। मैं यदि 'ॠतुभ्यः' की दीक्षा लूं और अपनी जीवन-निष्ठा व्यक्त करने लगूं, तो वर्षा-ॠतुसे अेक प्रकारसे प्रारंभ करके फिर और ढंगसे वर्षा-ॠतुमें ही समाप्ति करूंगा।

जुलाअी, १९५२

अनुबन्ध

[सामाजिक जीवनके लिअे अत्यंत अुपयोगी अुद्योग-हुनर सीखते या चलाते हुअे कदम-कदम पर जिस ज्ञानकी या जानकारीकी जितनी जरूरत हो, अुतना पूरा ज्ञान अुस वक्त ढूंढ़ लेना और अुसे अपनाना यह जीवनको समृद्ध करनेका स्वाभाविक तरीका है। जीनेके लिअे जो भी प्रवृत्ति करनी पड़े, अुसके साथ सम्बन्ध रखनेवाली अिधर-अुधरकी सब जानकारी हासिल करनेसे बड़ा संतोष होता है और बा-मौके हासिल की हुअी जानकारी आसानीसे हजम होती है और जीवनमें घुलमिल जाती है।

यह सब देखकर शिक्षाशास्त्रियोंने पढ़ाअीका यह नया तरीका चलाया है कि जीवन जीते हुअे अेवं जीविकाका हुनर सीखते और चलाते हुअे जो भी जरूरी ज्ञान लेना या देना पड़े, अुसीको शिक्षाका जरिया बनाया जाय। अिस पद्धतिको अनुबंध या 'को-रिलेशन' कहते हैं।

संस्कृत ग्रंथोंके प्राचीन टीकाकार अिसी शैलीका सहारा लेकर किसी भी ग्रंथको समझाते समझाते अनेक विषयोंकी जानकारी दे देते हैं। और अगर मूल लेखक अनेक विद्या-विशारद रहा और अुसके ग्रंथमें अुन विद्याओंके तत्त्वोंका जिक्र आया, तो टीकाकार अुन सब विद्याओंका जरूरी ज्ञान अपनी टीकामें भर ही देते हैं।

आजकलकी पढ़ाअीकी पाठ्य-पुस्तकोंके साथ नोट्स या टिप्पणियां दी जाती हैं। किताबें अंग्रेजीमें और टिप्पणियां भी अंग्रेजीमें। अिस तरह परभाषा द्वारा पढ़नेकी कृत्रिम स्थितिके कारण विद्यार्थी लोग नोट्स रटने लगे और रटी हुअी चीज अिम्तहानमें लिखकर परीक्षा पास करने लगे। अिस परिस्थितिके कारण नोट्स देनेकी प्रथा काफी बदनाम हो चुकी है और अच्छे-अच्छे शिक्षाशास्त्री दर्सी किताबों पर नोट्स देना अपनी शानके खिलाफ मानते हैं। और कभी-कभी अैसे नोट्स निन्दाके पात्र भी होते हैं।

लेकिन अगर अनुबंधकी दृष्टिसे टिप्पणी लिखी जाय और मौका पाकर जरूरी विविध ज्ञान देनेकी कोशिश की जाय, तो यह पद्धति हर तरहसे अिष्ट और लाभदायी ही है।

मेरे कअी अध्यापक-मित्रोंने मेरी चंद किताबें अपनी टिप्पणियों द्वारा विभूषित की हैं। अिसमें मैंने अुन्हें अपना सहयोग भी दिया है। जहां विद्यार्थियोंको और अध्यापकोंको बड़े पुस्तकालयकी सहूलियत नहीं मिलती, वहां तो अिन टिप्पणियोंके द्वारा ही किताबकी पढ़ाअी संतोपकारक हो सकती है। किताबोंके अूपर स्वभापामें लिखी टिप्पणियां देनेसे अनुबंधका बहुतसा काम हो जाता है। अिसलिअे शिक्षा-कलाके प्रवीण अध्यापकोंके द्वारा दी हुअी टिप्पणियोंको मैंने 'अनुबंध' के जैसा ही माना है। मुझे आशा है कि अगर किसी अध्यापकको यह किताब पढ़ानेका मौका आ जाय, तो वे अिन टिप्पणियोंका अनुबन्धके खयालसे ही अुपयोग करेंगे। अध्यापककी मददके बिना जो नवयुवक अिस किताबको टिप्पणियोंके साथ पढ़ेंगे, अुन्हें अिनके द्वारा अनुबन्धका कुछ खयाल आ जायगा। का० का०]

मुखपृष्ठका श्लोक

विश्वस्य मातरः ० 'अिस प्रकार जितनी नदियोंका स्मरण हुआ अुनके नाम मैंने सुना दिये। ये सब विश्वकी माताअें हैं, और सभी शक्तिशाली हैं तथा महान फल देनेवाली हैं।'

धृतराष्ट्रके प्रश्नके अुत्तरमें संजय जब भारतवर्षका वर्णन करता है, तब भारतकी नदियोंके नाम सुनानेके बाद अुपसंहारमें वह अुक्त वचन कहता है। महाभारतके भीष्मपर्वके नवें अध्यायके ३७वें तथा ३८वें श्लोकोंके पहले दो-दो चरण लेकर यह श्लोक बनाया गया है।

यथास्मृति : भाव यह है कि नदियां हैं तो अनेक, किन्तु जितनी मुझे याद आयीं अुतनीके नाम मैंने सुना दिये। ३७वें श्लोकके अंतके दो चरणोंमें यह स्पष्ट कहा गया है :

तथा नद्यस्त्वप्रकाशाः शतशोऽथ सहस्रशः।

अिसी तरह जो ज्ञात नहीं हैं अैसी तो सैकड़ों और सहस्रों नदियां हैं।

[अिसमें संजयकी (और लेखककी भी ?) अपने देशके प्रति भक्ति दिखाअी देती है। 'सुजला सुफला' माताओंकी विपुलता कोअी कम न समझ वैठे, अैसी अतिस्नेहसे पैदा होनेवाली पापशंका भी क्या अिसमें होगी ?]

जीवनलीला

पृ० ३ ग्राम्य: गांवमें रहनेवाले। ॠग्वेदमें अिस शव्दका अिस अर्थमें प्रयोग किया गया है।

पृ० ५ डलयोः सावर्ण्यम्: ड तथा ल समान वर्ण हैं। 'डलयोर-भेदः' भी कहते हैं।

पृ० ७ लिम्पतीव ० अंधेरा मानो अंगोंको लीपता है और नभ मानो अंजनकी वर्षा करता है।

पृ० ९ देशका मतलव . . . भी हैं: अपभ्रंश भाषाके निम्न पद्यसे तुलना कीजिये:

सरिहिं न सरेहिं न सरवरेहिं नहि अुज्जाणवर्णेहिं।
देस रवण्णा होन्ति वढ निवसन्तेहिं सुअणेहिं ॥

[हे मूढ़, देश न सरितासे रमणीय वनता है, न सरोंसे; न सरोवरोंसे वनता है, न अुद्यान-वनोंसे। वल्कि अुसमें वसनेवाले सुजनोंसे रमणीय वनता है।]

सरिता-संस्कृति

पृ० ११ क्षेमेन्द्र: ग्यारहवीं सदीके अेक काश्मीरी पंडित कवि। कहते हैं कि अिन्होंने चालीससे अधिक ग्रंथोंकी रचना की थी, जिनमें 'भारतमंजरी', 'वृहत्कथामंजरी', 'नृपावलि, 'सुवृत्ततिलक', 'औचित्य-विचारचर्चा', 'कविकंठाभरण' आदि ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

पृ० १२ मीनलदेवी: कर्णाटककी चंद्रावती नगरीकी राजकन्या, कर्णदेव सोलंकीकी पत्नी, सिद्धराज जयसिंहकी माता; घोलकाका विख्यात 'मलाव' तालाव तथा वीरमगामका 'मुनसर' तालाव अिसीने वनवाये थे। अिसने सोमनाथके दर्शनके लिअे जानेवाले हर यात्री पर लगाया गया कर वंद करवा दिया था। यह वड़ी प्रजावत्सल रानी थी।

अुर्वशी : 'अुर्' देशकी अुर्वशी।

नदी-मुखेनैव समुद्रम् आविशेत्

पृ० १४ कूल-मर्यादा : कूल=किनारा। किनारेकी मर्यादा। 'कुल-मर्यादा' शब्द परसे यह शब्द बनाया गया है।

नामरूपको त्यागकर . . . जाती है : मुंडकोपनिषद्का निम्न वचन याद कीजिये :

> यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रे
> अस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।

[जिस प्रकार बहती हुअी नदियां नामरूपको त्यागकर समुद्रमें अस्त हो जाती हैं।]

अुपस्थान

पृ० १५ अुपस्थान : वंदना, पूजा, अुपासना। जैसे, सूर्यका या संध्याका अुपस्थान।

हमारे पूर्वजोंकी नदी-भक्ति : लेखक सरस्वतीपुत्र सारस्वत हैं, अिस बातका यहां स्मरण हुअे बिना नहीं रहता।

भक्तिके अिन अुद्‌गारोंका श्रवण करके : भक्तिका श्रवण करके; श्रवण-भक्ति करके। अुद्‌गार=वचन। (प्रेम और आदरपूर्वक सुनना भी भक्तिका ही अेक पुण्यप्रद प्रकार है।)

संस्कृति-पुष्ट : संसारकी बहुतसी संस्कृतियोंका विकास नदियोंके किनारों पर ही हुआ है। अुदाहरणके लिअे, अिजिप्त (मिस्र)की संस्कृति नील नदीके किनारे विकसित हुअी है। खाल्डिया (अिराक) की संस्कृति युफ्रेटिस और टैग्रिसके किनारे; चीनकी संस्कृति यांग्सेक्यांग तथा होआंगहोके किनारे; मध्य अेशियाकी संस्कृति अमु और सरके किनारे और भारतकी संस्कृति पंचसिंधु, गंगा-यमुना, तापी-नर्मदा और कृष्णा-गोदावरीके किनारे विकसित हुअी है।

पृ० १६ भगवान सूर्यनारायणके प्रेमके बारेमें : ताप्ती—तपती सूर्यकी पुत्री मानी जाती है। वह संवरण राजाकी पत्नी और कुरुकी

माता थी। गुजराती कवि प्रेमानंदके नामसे चलनेवाले 'तपत्याख्यान' में जिसकी कथा है।

पृ० १७ 'अितिहासका अुषाकाल' : सामान्य तौरसे 'अुष:काल' शब्द अुपयोगमें लाया जाता है। किन्तु यहां जान-बूझ कर 'अुषाकाल' शब्दका प्रयोग किया गया है। स्थानीय अितिहासमें कहा गया है कि ब्रह्मपुत्रके अुत्तर किनारे पर तेजपुरके पास बाणासुर और अुषा रहते थे।

अुषा-अनिरुद्धकी कथा भागवतके दशम स्कंधके ६२–६३ वें अध्यायमें आती है। बलिके पुत्र बाणासुरकी कन्या अुषाको अेक बार स्वप्नमें किसी सुंदर युवकसे समागम हुआ। स्वप्नके अुड़ जाने पर वह अुसके वियोगसे बड़बड़ाने लगी। अुसकी सखी चित्रलेखाने यह बड़बड़ाहट सुनी। पूछने पर अुषाने स्वप्नकी बात कह सुनायी और कहा कि अिस पुरुषसे विवाह किये बगैर मैं जीवित नहीं रह सकती। चित्रलेखाने अेकके बाद अेक अनेक चित्र खींचकर अुसे दिखाये। अंतमें कृष्णके पौत्र अनिरुद्धकी तस्वीर देखकर अुसने कहा, यही है वह पुरुष जिसको मैंने स्वप्नमें देखा था।

अिसके अनंतर चित्रलेखा योगबलसे द्वारका जाती है। वहांसे सोते अनिरुद्धको पलंगके साथ अुठाकर ले आती है। अुषा-अनिरुद्ध गांधर्व विधिसे विवाह कर लेते हैं और चार महीने साथमें बिताते हैं। अुषाके पिताको जब पता चलता है कि अुषाके मंदिरमें कोअी पुरुष रहता है, तब वह क्रोधके मारे वहां जाकर अनिरुद्ध पर टूट पड़ता है। दोनोंके बीच युद्ध होता है। अिसमें बाणासुर अनिरुद्धको नागपाशसे बांधकर गिरफ्तार कर लेता है।

अिधर द्वारकामें अनिरुद्धकी खोज शुरू होती है। नारदने आकर खबर दी कि अनिरुद्धको तो शोणितपुर (आजकलके तेजपुर)में बाणासुरने कैद कर रखा है। अिससे क्रुद्ध होकर यादव शोणितपुर पर हमला करते हैं और बाणको हराकर अुषा-अनिरुद्धके साथ बड़ी धूमधामसे द्वारका वापस लौटते हैं।

संभूय-समुत्थानका सिद्धान्त : अेकत्र होकर अुन्नति करनेका सिद्धान्त। Joint Stock का सिद्धान्त। स्मृतियोंमें यह शब्द मिलता है।

पृ० १८ समुद्रसे मिलने जाते . . . एक जानेवाली : दक्षिण गुजरातमें वलसाड़के पासकी 'वांकी' नदी भी अपने नामकी ही तरह टेढ़ी-तिरछी होती हुअी ठेठ समुद्रके पास आकर अैसी टेढ़ी होती है कि दो तीन मील अुत्तर दिशाकी ओर वहकर औरंगासे मिलती है और अुसीके साथ समुद्रसे जा मिलती है।

पृ० २० गति देनी होगी : वासना-पीड़ित भूतोंको मांत्रिक गति देते हैं अुस प्रकार।

१. सखी मार्कण्डी

पृ० ३ मार्कण्डी : वेलगांवसे नौ मीलकी दूरी पर लेखकके गांव वेलगुंदीके पास वहनेवाली छोटीसी नदी।

वैजनाथ : (सं० वैद्यनाथ) वेलगांवका अेक पहाड़। वैद्योंके कहे अनुसार अिस पहाड़ पर मूल्यवान वनस्पतियां हैं।

हमारे तालुकेका : कर्णाटकके वेलगांव तालुकेका।

पृ० ४ मार्कण्डेय : मृकंडु मुनिका पुत्र, मार्कण्ड।

साधू सुंदर ० मध्यकालके अेक कवि द्वारा रचित मार्कण्डेय अुपाख्यानमें ये पंक्तियां आती हैं। मराठी स्त्रियोंमें कअियोंको ये मुखाग्र होती हैं।

मृत्युंजय : महादेवजीका नाम। यह अलुक् समास है। अिसमें विभक्तिके प्रत्ययका लोप नहीं होता। तुलना कीजिये : धनंजय, समितिंजय, गणंजय (dictator)।

अुसकी आयुधारा : कथामें कहा गया है कि अुसे सात या चौदह कल्पका आयुष्य मिला था। अिस परसे जव किसीको दीर्घजीवी होनेका आशीर्वाद दिया जाता है, तव 'मार्कण्डायुर्भव' कहा जाता है। किन्तु अिस लेखमें अिसका अर्थ है यह नदीरूपी आयुधारा। यह लेखककी कल्पना है।

पृ० ५ भाअी-दूज : कार्तिक सुदी दूज। अिस दिन यमुनाने अपने भाअी यमको अपने घर बुलाकर अुसकी पूजा की थी तथा अुसको खाना खिलाया था। अिसलिअे अिस दिनको यम-द्वितीया भी कहते हैं। अिस

दिन बहन अपने भाओीकी पूजा करती है और खाना खिलाते समय नीचेका मंत्र बोलकर अुसे आचमन करवाती है:

भ्रातस् तवानुजाताऽहं भुंक्ष्व भक्तम् अिदम् शुभम्।
प्रीतये यमराजस्य यमुनाया विशेषतः॥

[हे भैया, मैं आपकी छोटी बहन हूं। मेरा पकाया हुआ यह शुभ अन्न आप भक्षण कीजिये, जिससे कि यमराज और खास करके अुनकी बहन यमुना प्रसन्न हो जायं।]

बहन बड़ी हो तो 'भ्रातस्तवाग्रजाताहं' कहती है।

मृगनक्षत्र: भाओी-दूज जाड़ेमें आती है। अुन दिनों मृगनक्षत्र सारी रात आकाशमें होता है। अैसी 'मृगनीता रात्रयः'।

लावण्य: (सं० लवण+य) मिठास, झलक, यौवनकी कांति। अुसका लक्षण:

मुक्ता-फलेषु छायायाः तरलत्वम् अिवान्तरा।
प्रतिभाति यद् अंगेषु तल्लावण्यम् अिहोच्यते॥

२. कृष्णाके संस्मरण

पृ० ५ सातारा: कृष्णाके किनारे स्थित नगर। लेखकका जन्म-स्थान। यह शाहु आदि महाराष्ट्रके राजाओंकी राजधानी था।

श्री शाहु महाराज: शिवाजीका पौत्र। संभाजीका पुत्र। अुसका नाम शिवाजी था। औरंगजेबने अुसका नाम शाहु रखा था। छुटपनमें अुसको दिल्लीके दरबारमें कैद रहना पड़ा था। वहांके भोगे हुअे अैश-आरामके कारण अुसने राज्यका कारोबार अपने प्रधान—पेशवाको सौंप दिया था और स्वयं सातारामें रहता था।

पृ० ६ हम बच्चे: लेखक तथा अुनके भाओी।

'वासुदेव': मोरपंखोंकी टोपी पहनकर भजन गाते हुअे भीख मांगनेवाले अेक याचक संप्रदायके लोग।

वेण्या: साताराकी अेक छोटीसी नदी।

'नरसोबाची वाड़ी': कृष्णाके किनारे कुरुंदवाड़के समीप यह स्थान है। यह दत्तात्रेयका तीर्थस्थान है।

पृ० ७ अमृत-खेत: अमृत जैसे मीठे फल देनेवाले खेत।

जिसने अेकाध वार . . . अिच्छा करेगा: सिक्खोंके गुरु नानकशाके संबंधमें अेक लोककथा प्रचलित है। कहते हैं कि वे स्वर्गमें गये, किन्तु वहां पर भी वे अुदास रहने लगे। भगवानने अिसका कारण पूछा, तो जवाव मिला: 'स्वर्गमें सव कुछ है। किन्तु मकअीके भुट्टे नहीं हैं, न सरसोंकी सव्जी है। यह खानेके लिअे पृथ्वी पर वापस जानेकी अिच्छा होती है।'

लोक-मानस ही अैसी कथाअें गढ़ सकता है।

सांगली: कृष्णाके तट पर स्थित अेक शहर। स्वातंत्र्यपूर्व कालकी अेक रियासत।

अेकश्रुति: यह वैदिक शव्द है। अिसका अर्थ है, 'जिसमें विविधता न हो अैसा।' वेदोंमें तीन प्रकारके अुच्चार वताये गये हैं: अुदात्त, अनुदात्त और स्वरित। अिनमें से किसी अेकको लेकर विना किसी प्रकारका फर्क किये लगातार अुच्चारण करना 'अेकश्रुति' अुच्चार या आवाज है। अंग्रेजी 'मोनोटोनस'।

श्रीसमर्थ: स्वामी रामदास। श्री शिवाजी महाराजके गुरु। वे ब्रह्मचारी थे। अुन्होंने अनेक मठोंकी स्थापना की तथा धर्म-प्रचार किया। 'दासवोध', 'मनोवोध' आदि प्रख्यात ग्रंथोंके रचयिता।

पृ० ८ घोरपडे: संताजी। शिवाजीके अेक सेनापति। राजारामके समयमें धनाजी और संताजी घोरपडे अिन दो सेनापतियोंके वीच वहुत वड़ा विरोध था। घोरपडे मुराररात्र (१७०४–१७७७) भी शाहूके मुख्य सरदारोंमें से अेक थे। अपने पराक्रमसे सारा कर्णाटक जीतकर अिन्होंने गुत्तीमें राजधानीकी स्थापना की थी, अिसलिअे अुन्हें 'गुत्तीकर घोरपडे' भी कहते थे। चन्दा साहवके साथ पेशवाओंका त्रिचिनापल्लीमें जो घोर युद्ध हुआ, अुसमें अिन्होंने पेशवाओंको विजय दिलायी। अिसलिअे शाहुने अुन्हें कर्णाटककी 'सरदेशमुखी' और त्रिचिनापल्लीके किलेकी 'सूवेदारी' दे दी थी। अन्तमें हैदरने अुन्हें कैद करके चांदीकी हथकड़ी-वेड़ी पहनाकर कपालदुर्गमें रखा था। वहीं अुनका अंत हुआ।

पटवर्धन: परशुराम भाअू (१७३९–१७९९) सवाअी माधवराव पेशवाके समयके वड़े सेनापति। वड़े शूरवीर तथा वहादुर थे। हैदरके साथ जो युद्ध हुआ, अुसमें अिनके अेकके पीछे अेक तीन घोड़े मारे गये, किन्तु वे घवड़ाये नहीं। १७८१ में अुन्होंने अंग्रेज सेनापति गोडार्डको परास्त किया। १७९६ में नाना फडनवीससे अिनकी कुछ अनवन हो गअी। अिसलिअे फडनवीसने अिनको कैद कर लिया। १७९८ में वे रिहा हुअे। किन्तु फौरन पट्टणकुडीके युद्धमें शामिल हुअे और वहीं लड़ते लड़ते मारे गये।

नाना फडनवीस: (१७४२–१८००) मराठाशाहीके अंतिम कालके अेक महान चतुर राजनीतिज्ञ।

रामशास्त्री प्रभुणे: (१७२०–१७८९) पेशवाअी जमानेके अेक प्रख्यात न्यायशास्त्री। वीस सालकी अुम्र तक वे निरक्षर ही थे। जिस साहूकारके यहां वे नौकरी करते थे, अुसने अिनसे कुछ मर्मभेदी वचन कहे। अत: ये पढ़नेके लिअे काशी चले गये और वड़े विद्वान धर्मशास्त्री वने। १७५१ में पेशवाओंके दरवारमें अुन्होंने सेवा स्वीकार की और १७५९ में मुख्य न्यायाधीश वने। वे अत्यंत निःस्पृह थे। वड़े माधवराव अिनकी सलाहके अनुसार चलते थे। नारायणरावके खूनके लिअे राघोवाको देहांत प्रायश्चित्त लेनेकी वात अुन्होंने विना किसी हिचकिचाहटके कही थी।

देहू: अिन्द्रायणी नदीके किनारे स्थित अेक गांव। पूनाके पास है। महाराष्ट्रके संत तुकारामका गांव होनेसे पवित्र माना जाता है।

आळंदी: अिन्द्रायणी नदीके किनारे वसा हुआ अेक गांव। पूनासे अधिक दूर नहीं है। यहां श्री ज्ञानेश्वरने जीवित अवस्थामें समाधि ली थी। देहू-आळंदीकी नदी अिन्द्रायणी भीमा नदीसे मिलती है। यह भीमा पंढरपुरके पास टेढ़ी वहती है, अिसलिअे वहां अुसे चंद्र-भागा कहते हैं। अिसके वाद ही वह वड़ी होकर कृष्णासे मिलती है।

तुंगभद्रा: तुंगा और भद्रा, ये दो नदियां मिलकर तुंगभद्रा वनती है। देखिये: 'मुळा-मुठाका संगम' (पृ० ११)। तुंगभद्राके किनारे हंपीके पास कर्णाटक साम्राज्यकी राजधानी विजयनगर वसा हुआ था।

तेलंगण: त्रिलिंगका प्रदेश। 'जिसके पेटमें कृष्णाकी अेक बूंद भी पहुंच चुकी है, वह अपना महाराष्ट्रीयपन कभी भूल नहीं सकता।' और 'कृष्णामें पक्षपाती प्रांतीयता नहीं है।'—क्या अिन दो वचनोंके बीच विरोध है? लेखकका कहना है कि महाराष्ट्रके सद्‌गुणोंके प्रति मनमें आदरभाव तो रहने ही वाला है; किन्तु तीनों प्रांतोंके प्रति आत्मीयता जाग्रत होने पर मनमें संकीर्णता आ ही नहीं सकती।

पहाड़की अस्थियां: पत्थर।

पृ० ९ जीवनकी लीला: जीवन यानी जल और जीवन यानी जिंदगी। यहां अुसका दोनों अर्थोंमें प्रयोग किया गया है।

अनंतबुआ मरढेकर: काकासाहबके प्रिय सुहृद्, जिनकी पवित्र स्मृतिमें काकासाहबने अपनी 'हिमालयकी यात्रा'* पुस्तक अर्पण की है।

श्रीसमर्थ रामदास स्वामी तथा अुनके शिष्योंने जो अनेक मठ स्थापित किये हैं, अुनमें 'मरढे मठ' भी अेक है। अिस मठके गृहस्थाश्रमी मठपतियोंके वंशमें अनंतबुआका जन्म हुआ था। अिनके पिता पुराणिक तथा कीर्तनकार थे। अनंतबुआ प्रथम मराठी ट्रेनिंग कॉलिजमें शिक्षक थे। बादमें वे काकासाहबसे पहले बड़ौदाके 'गंगनाथ विद्यालय' में शरीक हुअे। अिस विद्यालयके लिअे चंदा अिकट्ठा करनेके हेतुसे वे बड़ौदा राज्यमें सर्वत्र घूमते थे। अुनका मासिक खर्च कभी भी दस रुपयेसे अधिक नहीं हुआ। संस्थाके नियमके अनुसार अुन्हें खर्चके अलावा जेबखर्चके लिअे पांच रुपये अधिक लेने पड़ते थे। वे अिन पांच रुपयोंका अुपयोग विद्यार्थियोंके लिअे अथवा हिसाबमें गलती हुअी हो तो अुसमें जोड़नेके लिअे करते थे। रहन-सहनमें अिनकी तुलना गुजरातके प्रसिद्ध रचनात्मक कार्यकर्त्ता श्री रविशंकर महाराजसे की जा सकती थी। अुनके पवित्र जीवनको देखकर कअी लोग अुनसे कंठी मांगते थे। किन्तु अुन्होंने कभी किसीको कंठी नहीं दी। वे कहा करते थे कि 'मुझमें यह योग्यता नहीं है।'

---

* हिन्दीमें 'हिमालयकी यात्रा' नवजीवन प्रकाशन मंदिरकी ओरसे प्रकाशित हो चुकी है। कीमत २-०-०, डा० खर्च ०-१५-०।

हृदयकी भावनासे: आदरभावसे। लेखकके प्रति वे असाधारण आदरभाव रखते थे अिसलिअे।

बड़े भाअी: राष्ट्रीय शिक्षाका कार्य वे लेखकके पहलेसे करते आ रहे थे और लेखककी दृष्टिमें अधिक त्यागी थे अिसलिअे।

गंगोत्री: हिमालयका अेक तीर्थस्थान। गंगा यहींसे निकलती है। असलमें गंगाका अुद्गम होता है 'गोमुख' से, जो गंगोत्रीसे करीब चौदह मील दूर है।

अमरनाथ: यह तीर्थस्थान काश्मीरमें है। यहां अेक गुफामें बर्फका स्वयंभू शिवलिंग पाया जाता है।

अमर हुअे: स्वर्गवासी हुअे।

वाअी: कृष्णाके किनारे पर स्थित पवित्र तीर्थस्थान। यहां संस्कृत विद्याकी परंपरा अुत्तम रूपमें सुरक्षित है।

वाअीके . . . गंगाका: वाअीके लोग प्रेमभक्ति-पूर्वक कृष्णाको गंगा कहते हैं।

शिरस्नान: वर्षाॠतुमें वाअीके कुछ मंदिर नदीके पानीमें कलश तक पूरे डूब जाते हैं।

स्वराज्य-ॠषि: स्वराज्यका 'ध्यान' करनेवाले, स्वराज्यके लिअे 'तपश्चर्या' करनेवाले और स्वराज्यका 'मंत्र' देनेवाले। 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है' लोकमान्यका यह वचन प्रसिद्ध है।

पृ० १० पट-वर्धन: पट=वस्त्र; वर्धन=वृद्धि करनेवाले। द्रौपदी वस्त्र-हरणका किस्सा याद कीजिये।

चरखे भी . . . अुतनी ही संख्यामें: बीस लाख चरखे चलानेकी बात तय हुअी थी।

बेजवाड़ा: आंध्र प्रांतका अेक मुख्य शहर। यह भी कृष्णाके तट पर ही है।

श्री अब्बास साहब: (१८५४–१९३६) नित्य-युवा देशभक्त श्री अब्बास तैयबजी। तीसरी महासभा (कांग्रेस) के प्रमुख श्री बदरुद्दीन तैयबजीके भतीजे। बादमें अुन्हींके दामाद। पूर्व जीवनमें आप बड़ौदा राज्यकी बड़ी अदालतके न्यायाधीश थे। अुत्तर जीवनमें आप

पर गांधीजीका असर हुआ। अुस समय गुजरातके सार्वजनिक जीवनमें आपने महत्त्वका हिस्सा अदा किया था। पंजाबके हत्याकांडकी तहकीकातमें, असहयोग आंदोलनमें, तिलक-स्वराज्य-फंड अिकट्ठा करनेमें, सरकारी शालाओं तथा परदेशी कपड़ोंकी दुकानों पर चौकी करनेमें, खादी-फेरीमें, हिन्दू-मुस्लिम-अेकताके प्रयत्नोंमें, बाढ़-संकट-निवारणमें, रानीपरज लोगोंकी मदद करनेमें, बारडोलीके आन्दोलनमें तथा नमक-सत्याग्रहके समय धरासणाके आगर पर हुअे सत्याग्रहका नेतृत्व करनेमें आपकी अनेकविध देशसेवाको प्रगट होते हमने देखा है।

श्री पुणतांबेकर: बम्बअीके राष्ट्रीय महाविद्यालयके अुस समयके आचार्य। आप बैरिस्टर थे। बादमें बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें अितिहासके मुख्य अध्यापकके तौर पर तथा नागपुर विश्वविद्यालयमें राजनीति-विभागके मुख्य अध्यापकके तौर पर आपने काम किया था।

गिदवाणीजी: गुजरात विद्यापीठके पहले कुलनायक (वाअिस-चान्सलर) और गुजरात महाविद्यालयके पहले आचार्य। पूरा नाम: असुदमल टेकचंद गिदवाणी। गुजरातमें आनेके पहले आप दिल्लीके रामजस कॉलेजके प्रिन्सिपाल थे।

कृष्णाम्बिका: कृष्णामैया।

रामशास्त्री: रामशास्त्री प्रभुणे बाअीके पास कृष्णाके तट पर रहे थे अिसलिअे।

नाना फडनवीस: बाअीके पास मेणवलीमें रहते थे अिसलिअे।

'राष्ट्रीय' हिन्दी: शुद्ध हिन्दी तो है प्रान्तीय हिन्दी। अनेक भाषाओंके असरसे बनी हुअी हिन्दीका नाम है राष्ट्रीय हिन्दी!!

जन्मकाल्का: लेखकके जन्मकालका।

३. मुळा-मुठाका संगम

पृ० ११ अपवादके बिना . . . नहीं चलते: Exception proves the rule. 'अुत्सर्गाः सापवादाः'।

मिसिसिपी-मिसोरी: अिसकी लंबाअी ५४२१ मीलकी है। ये दोनों नदियां जहां मिलती हैं, वहांका पट ५००० फुट चौड़ा है।

द्वन्द्व समासमें : दोनों पद समान कक्षाके होते हैं, अिस बात पर यहां जोर दिया गया है।

सीता-हरणसे लेकर . . . तकका अितिहास : कहते हैं कि रावण जब सीताको अुठाकर ले गया था, तब सीताकी साड़ीका पल्ला हंपीके पास अेक बड़ी शिला पर घिस गया था, जिसकी रेखायें अुस शिला पर अब तक दिखाअी देती हैं! विजयनगरके साम्राज्यका कारोबार भी तुंगभद्राके तट पर ही चलता था। अिस साम्राज्यकी स्थापना सन् १३४६ में हुअी थी। अिसका विस्तार कृष्णासे लेकर कन्याकुमारी तक था। सवा दो सौ साल तक मुसलमानोंके हमलोंका सामना करके सन् १५६५ में अिस साम्राज्यका अंत हुआ। अिसका पूरा अितिहास 'अे फरगॉटन अेम्पायर' नामक अंग्रेजी पुस्तकमें तथा 'विजयनगरके साम्राज्यका अितिहास' नामक हिन्दी पुस्तकमें दिया गया है।

खडक-वासला : पूनासे सिंहगड़ जाते समय बीचमें यह स्थान है। यहां पूनाका जलागार (वॉटर वर्क्स) है। स्वतंत्र भारतके 'राष्ट्ररक्षा विद्यालय' के लिअे भी यही स्थान पसंद किया गया है। देखिये पृ० १३

मुंडी टेकरियां : संन्यासीके जैसी; जिनके सिर पर अेक भी पेड़ नहीं है अैसी।

चिन्ताजनक : मनुष्य जब चितामें रहता है तब अुसकी आंखें बार-बार खुलती-बन्द होती रहती हैं। सितारे भी सारी रात अिसी तरह झिलमिलाते रहते हैं। यहां अर्थ है पानीके हिलनेसे होनेवाली झिलमिलका प्रतिबिंब।

बांग : यह फारसी लफ्ज है। मस्जिदमें नमाजके पहले 'नमाजका समय हुआ है, नमाज पढ़नेके लिअे आअिये,' अैसा बतानेके लिअे बड़े जोरकी जो आवाज दी जाती है अुसको बांग कहते हैं। अरबीमें अिसीको अजान कहते हैं। यहां बांग शब्दका सामान्य अर्थ पुकार है।

लकड़ी-पुल : शायद पहले यह पुल लकड़ीका रहा हो या अिसके पासमें ही लकड़ी बेची जाती रही हो। अहमदाबादके लोहेके 'अेलिसब्रिज' को भी 'लकड़िया पुल' कहते हैं।

पृ० १२ ओंकारेश्वर : यहां अेक स्मशान है। दूसरा स्मशान लकड़ी-पुलके पास है।

कॅप्टन मॅलेट : पेशवाअीको नष्ट करनेके लिअे षड्यंत्र रचनेवाला अंग्रेज।

भांडारकर : डॉ० सर रामकृष्ण गोपाल भांडारकर। संस्कृत विद्या और प्राच्य विद्याके संशोधनमें पारंगत। प्रार्थना समाजके नेता।

गुजरातके अेक लक्ष्मीपुत्र : कर्वे विश्वविद्यालयके साथ जिनका नाम जोड़ा गया है वे सर विट्ठलदास दामोदरदास ठाकरसी।

अुत्तुंग-शिरस्क : अूंचे सिरवाली।

नम्रनामधेय : नम्र नामवाली। मकान तो बड़े राजमहलके जैसा है, किन्तु अुसका नाम है 'पर्णकुटी'। अिसी मकानमें गांधीजीने दो बार अनशन किया था।

यरवडाका कैदखाना : छोटे-बड़े असंख्य देशवीरोंके और खास तौरसे गांधीजीके कारावासके कारण तथा वहां हुअे हरिजनोंके मताधिकार संबंधी करारके कारण यह कैदखाना देशमें और समस्त दुनियामें प्रसिद्ध हो चुका है। गांधीजी अिसको 'यरवडा मंदिर' कहते थे।

प्राणहरणपटु : प्राण लेनेमें कुशल।

भिक्षाधीश : भिक्षाके अधिकारी भिखारी। लक्षाधीशके साथ तुक मिलानेके लिअे अिस शब्दकी योजना की गअी है।

पृ० १३ निसर्गोपचार भवन : सन् १९४४ में जेलसे रिहा होनेके बाद गांधीजीने निसर्गोपचारका प्रचार किया था। अुसी दरमियान वे कुछ समय तक अिस निसर्गोपचार भवनमें रहे थे। अुरुलीकांचनमें भी अुन्होंने अेक नया निसर्गोपचार केंद्र खोला था, जो अब तक चल रहा है।

सिंहगढ़का निवास : लेखकको क्षयरोग हुआ था, तब वे काफी समय तक सिंहगढ़में रहे थे। अुस बातका यहां जिक्र है।

४. सागर-सरिताका संगम

पृ० १४ सरोंका वन : लेखककी 'स्मरण-यात्रा' में 'सरो पार्क' नामक प्रकरण देखिये। (यह पुस्तक हिंदीमें नवजीवन प्रकाशन मंदिरकी

ओरसे प्रकाशित हुअी है; की० ३–८–०, डा० खर्च १–२–०।) अिसमें काकासाहबकी छठे वरससे लेकर अठारह वरस तककी जीवन-यात्राका वर्णन है।

जब कि अपनी मर्यादाको . . . सामने हो जाता है : चंद्रके असरके कारण जब सागरमें भाटा आता है तब पानी रास्ता बना देता है; और ज्वारके समय अुभरकर जब नदीमें घुस जाता है तब सामने हो जाता है।

पृ० १६ जमनोत्री : हिमालयमें अुत्तराखंडका अेक तीर्थस्थान। यहींसे यमुना निकलती है।

महाबलेश्वर : यह कृष्णाका अुद्गम-स्थान है। यह स्थान सातारामें है।

त्र्यंबक : नासिकके पासका स्थान। यह गोदावरीका अुद्गम-स्थान है।

अुद्गमकी खोज : "मेरी धारणा है कि गंगोत्री, जमनोत्री, केदार, बदरी, अमरनाथ, खोजरनाथ, मानसरोवर, राकसताल, परशुराम कुंड, अमरकंटक, महाबलेश्वर, त्र्यंबक आदि सारे तीर्थस्थान नदीका अुद्गम खोजनेकी प्राकृतिक जिज्ञासाके ही परिणाम हैं। अुत्तरी ध्रुवके आसपास रहनेवाले आर्य लोग जिस प्रकार अिस बातकी खोज करनेके लिअे बाहर निकले कि हमें अुष्णता देनेवाला सूर्य कहांसे अुदय होता है और कहां अस्त होता है, और चारों महाद्वीपोंमें फैल गये, अुसी प्रकार हिन्दुस्तानकी संतानें अपने-अपने ढोर-बछेरू लेकर, या अकेले ही, नदीके अुद्गमकी खोज करती हुअी घूमी हों तो कोअी आश्चर्य नहीं।" — 'हिमालयकी यात्रा', प्रकरण २१, पृ० १०९।

अजंताकी गुफाओंके पास भी अेक छोटीसी नदीका अुद्गम है।

शंकरराव गुलवाड़ीजी : कारवारकी ओरके अेक सर्वोदय कार्यकर्ता।

कवि बोरकर : गोवाके कोंकणी तथा मराठी भाषाके प्रसिद्ध कवि।

५. गंगामैया

पृ० १७ देवव्रत भीष्म : शांतनु और गंगाके आठवें पुत्र देवव्रत। अपने पिता शांतनु सत्यवती नामक धीवर-राजकी कन्यासे विवाह कर सकें, अिसलिअे अुन्होंने आजीवन ब्रह्मचारी रहनेकी भीषण प्रतिज्ञा

ली थी और अुसे पाला था। अिसलिअे वे भीष्मके नामसे प्रसिद्ध हुअे। अिसी कारण आज भी जब कोअी बड़ी प्रतिज्ञा लेता है, तब अुस प्रतिज्ञाको हम 'भीष्म प्रतिज्ञा' कहते हैं। भीष्म=भीषण, भयंकर।

आर्योंके बड़े-बड़े साम्राज्य : हर्षका, मौर्योंका आदि।

कुरु पांचाल : दिल्लीके आसपासका प्रदेश कुरु और गंगा-यमुनाके बीचका प्रदेश पांचाल कहा जाता था।

अंग-वंगादि : गंगाके दायें तट पर जो प्रसिद्ध राज्य था अुसका नाम था अंग। चंपा अुसकी राजधानी थी। यह नगरी आजकलके भागलपुरके स्थान पर या अुसके आसपास कहीं थी। वंग कहते हैं पूर्व बंगालको। अिसमें बंगालके समुद्र-तटका भी समावेश होता था। अुत्तर बंगालका नाम था गौड़ या पुंड्र।

पृ० १८ जब हम गंगाका दर्शन करते हैं . . . स्मरण हो आता है : गंगाके तट पर सिर्फ खेती और व्यापारका ही विकास नहीं हुआ है, बल्कि काव्य, धर्म, शौर्य और भक्ति — संक्षेपमें पूरी संस्कृतिका विकास हुआ है।

श्री जवाहरलाल नेहरूने अपनी 'डिस्कवरी ऑफ अिंडिया' नामक पुस्तकमें भारतकी नदियोंके बारेमें लिखते हुअे गंगाके सिलसिलेमें अिस प्रकार लिखा है :

"... and the Ganga, above all *the* river of India, which has held India's heart captive and has drawn uncounted millions to her banks since the dawn of history. The story of the Ganga, from her source to the sea, from old times to new, is the story of India's civilization and culture, of the rise and fall of empires, of great and proud cities, of the adventure of man and the quest of the mind which has so occupied India's thinkers, of the richness and fulfilment of life as well as its denial and renunciation, of ups and downs, and growth and decay, of life and death." p. 43

". . . और गंगा तो खास तौर पर भारतकी नदी है। अितिहासके अुषःकालसे यह भारतके हृदय पर अपनी सत्ता जमाती आयी

है और अपने तटों पर असंख्य लोगोंको आकर्षित करती आयी है। गंगाके अुद्गमसे लेकर सागरके साथके अुसके संगम तककी और प्राचीन कालसे लेकर अर्वाचीन काल तककी अुसकी कहानी, भारतकी संस्कृतिकी और अुसकी सभ्यताकी कहानी है — साम्राज्योंके अुत्थान और पतनकी, विशाल और गौरवशाली नगरोंकी, मानवके साहसोंकी तथा भारतके चिंतकोंको व्यग्र रखनेवाले तत्त्वोंके अन्वेषणकी, जीवनकी समृद्धि और सफलताकी तथा निवृत्ति और संन्यासकी, अुतार और चढ़ावकी, वृद्धि और क्षयकी, जीवन और मरणकी कहानी है।"

अुत्तरकाशी : गंगोत्रीसे निकलनेके बाद गंगा जहां सर्वप्रथम अुत्तर-वाहिनी होती है वह स्थान। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ३५।

देवप्रयाग : भागीरथी और अलकनंदाका संगमस्थान। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २५।

लक्ष्मणझूला : हृषीकेशके पास गंगा नदी पर यह स्थान है। यहां पहले छीकोंका पुल था। अब वहां लोहेकी सांकल और सीखचोंका झूलनेवाला पुल है। यहीं लक्ष्मणजीका मंदिर है। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २३।

विकराल दंष्ट्रा : विकराल दाढ़। तुलना कीजिये : 'बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालम्'। गीता, ११–२४; 'दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि'। गीता, ११–२५

त्रिवेणी संगम : गंगा, यमुना और (गुप्त) सरस्वतीका संगम। प्रयागमें तीनों नदियोंके प्रवाह अेकत्र हो जाते हैं, अिसलिअे वहां अुनको 'युक्तवेणी' कहते हैं। बंगालमें अेक प्रवाहमें से अनेक प्रवाह बन जाते हैं, अिसलिअे वहां अुनको 'मुक्तवेणी' कहते हैं। देखिये पृ० १५४ की टिप्पणी।

वर्धमान : बढ़ती हुअी।

गंगा शकुन्तला जैसी . . . दीखती है : देखिये पृष्ठ २१।

शर्मिष्ठा और देवयानीकी कथा : दैत्यगुरु शुक्राचार्यकी कन्या देवयानीके साथ दैत्यराज वृषपर्वाकी कन्या शर्मिष्ठाकी मित्रता थी। अेक दिन दोनों जलक्रीड़ाके लिअे गयीं। नहानेके बाद देवयानी पहले

मगध साम्राज्य: समुद्रगुप्तके समय अिस साम्राज्यका विस्तार सिन्धुसे लेकर कावेरी तक था।

'दाक्षिण्य': संस्कृत भाषामें दाक्षिण्य शब्दके दो अर्थ होते हैं —दक्षिण दिशा और विनयी स्वभाव। लेखकने यहां दोनों अर्थ सूचित किये हैं। 'दाक्षिण्य धारण कर' अिन शब्दोंमें अुन्होंने अिस बातका वर्णन किया है कि यहांसे ये दोनों नदियां दक्षिणकी ओर बहने लगती हैं, और यह भी बताया है कि वे विनय धारण करती हैं। विनयके अर्थमें दाक्षिण्यका लक्षण अिस प्रकार दिया गया है:

दाक्षिण्यं चेष्टया वाचा परचित्तानुवर्तनम्।

[केवल सद्भावके कारण वाणी और वर्तनसे दूसरेकी वृत्तिके अनुकूल होना—यही दाक्षिण्य है।]

पृ० २० सगरपुत्र: सूर्यवंशी राजा बाहुने शत्रुओंसे पराजित होने पर राजपाट छोड़ दिया और वह हिमालयके जंगलोंमें भाग गया। वहीं अुसका अवसान हुआ। अुस समय अुसकी अेक रानी यादवी सगर्भा थी। अुसकी सौतने गर्भका नाश करनेके हेतुसे यादवीको खुराकमें जहर खिला दिया। परन्तु गर्भनाश नहीं हुआ और अुसे पुत्र हुआ। वह 'गर' नामक जहरके साथ पैदा हुआ अिसलिअे 'सगर' कहलाया। सगर बड़ा हुआ तब अुसने अपने पिताका राज्य शत्रुसे वापिस ले लिया। अुसकी शैल्या नामक अेक रानी थी। अुसने असमंजस् नामक अेक पुत्रको और अेक पुत्रीको जन्म दिया। अुसकी दूसरी रानी थी वैदर्भी। अुसने अेक मांसपिंडको जन्म दिया, जिसमें से साठ हजार पुत्र पैदा हुअे। सगरने ९९ यज्ञ करनेके बाद जब सौवां यज्ञ शुरू किया और घोड़ेको छोड़ा, तब अिन्द्रने अुसकी चोरी की और पातालमें जाकर कपिल मुनिके आश्रममें अुसे बांध आया। अिधर सगरके साठ हजार पुत्रोंने घोड़ेकी खोज शुरू की। अुन्होंने सारी पृथ्वी खोद डाली, जिससे अुसमें पानी भर गया। अिसीलिअे यह पानीवाला स्थान सगरके नाम परसे 'सागर' कहलाने लगा। काफी प्रयत्नोंके बाद वे पातालमें पहुंचे। वहां अुन्होंने कपिल मुनिके आश्रममें घोड़ेको

देखा। मुनिको ही चोर मानकर अुन्होंने मुनिका बड़ा अपमान किया। अिस पर मुनिने शाप देकर अुनको भस्म कर डाला। अिसके बाद असमंजस्‌का पुत्र अंशुमान मुनिको प्रसन्न करके घोड़ा ले आया। अिस प्रकार यज्ञ संपन्न हुआ। मुनिने प्रसन्न होकर अुसको अपने साठ हजार पूर्वजोंके अुद्धारका मार्ग भी बतलाया और कहा कि यदि कोअी स्वर्गमें बहनेवाली गंगाको पृथ्वी पर अुतार दे और अुसके जलका अुन्हें स्पर्श करा दे तो अुनका अुद्धार होगा। अिसलिअे अंशुमानने अपना शेष जीवन तपश्चर्यामें बिताया। अंशुमानके पुत्र दिलीपने भी यह तपश्चर्या चालू रखी और अंतमें अुसके पुत्र भगीरथने बड़ी कड़ी तपश्चर्या करके गंगाको पृथ्वी पर अुतारा और अुसका प्रवाह अपने साठ हजार पूर्वजोंकी भस्म परसे बहा कर अुनका अुद्धार किया। यहां अिसीका अुल्लेख है। भगीरथने गंगाको अुतारा, अतः गंगा भागीरथी कहलाअी।

[अिस प्रकार भगीरथको नहर बांधनेमें निष्णात मानकर **Irrigation** के लिअे लेखकने अेक सुन्दर पारिभाषिक शब्द प्रचलित किया है — भगीरथ-विद्या।]

६. यमुना रानी

पृ० २१ भव्यताकी भव्यताको कम करते रहना : अपार भव्यता विखेर कर 'अतिपरिचयाद् अवज्ञा' के न्यायसे भव्यताका महत्त्व कम करना।

अूर्जस्विता : भव्यता।

गगनचुंबी और गगनभेदी : अिन दो शब्दोंके बीचका भेद ध्यानमें लीजिये।

असित अृषि : व्यासजीके अेक शिष्य। देखिये 'हिमालयकी यात्रा' के प्रकरण ३३ का अंतिम भाग। असित = कृष्ण।

देवाधिदेव : महादेव। स्वर्गमें से अुतरी हुअी गंगाको महादेवजीने अपनी जटाओंमें धारण किया था।

पृ० २२ अेक काव्यहृदयी अृषि : लेखकने अुसका नाम रखा है — 'यामुन अृषि'। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ३१।

अंतर्वेदी : पुराने समयमें गंगा और यमुनाके बीचके प्रदेशको अंतर्वेदी कहते थे। अिस परसे आजकल दो नदियोंके बीचके किसी भी प्रदेशको अंतर्वेदी (दो-आब) कहते हैं।

श्रीनगर : काश्मीरका श्रीनगर नहीं। यह स्थान केदार जाते बीचमें आता है। यह सिद्धपीठ कहलाता है। यहां की हुअी साधना व्यर्थ नहीं जाती और शीघ्र फलदायी होती है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २६ और 'जीवनका काव्य' नामक लेखककी दूसरी पुस्तकमें शंकराचार्यसे सम्बन्धित प्रकरण।

ब्रह्मावर्त : कुरुक्षेत्रके समीपका दृपद्वती और सरस्वतीके बीचका प्रदेश। आजकल ब्रह्मावर्तको 'बिठूर' कहते हैं।

हत्यारे भूमिभागको : क्योंकि यहां अनेक भीषण युद्ध हुअे थे।

पृ० २३ सचिववाणी : सचिव=मित्र या मंत्री। यहां दोनों अर्थ लिये जा सकते हैं — मित्रतापूर्ण सलाह और सुलहकी बातें। कौरव-पांडवोंके बीच सुलह हो अिसलिअे भगवान श्रीकृष्णने हस्तिनापुरमें ही सन्धिकी बातचीत की थी।

रोमहर्षण : रोंगटे खड़े कर देनेवाली। 'संवादम् अिमम् अश्रौषम् अद्भुतं रोमहर्षणम्।' गीता, १८–७४।

यमराजकी बहनका भाअीपन : यम तथा यमुना अथवा यमी और अश्विनीकुमार सूर्य और अुसकी पत्नी संज्ञाकी संतान माने जाते हैं। अेक बार संज्ञाको अपने पिता विश्वकर्माके घर जानेकी अिच्छा हुअी, किन्तु सूर्यने अिजाजत न दी। अतः अुसने अपनी मायाके बलसे छाया नामक अेक स्त्रीका सर्जन किया और अुसको सूर्यके पास रखकर स्वयं पीहर चली गअी। छाया संज्ञासे अितनी मिलती-जुलती थी कि सूर्यको पता ही नहीं चला कि वह संज्ञा नहीं है। छायाने ही यमकी परवरिश की। किन्तु बादमें अुसमें सौतेली मांकी भावना जाग्रत हुअी और अुसने यमकी अुपेक्षा शुरू की। अिससे यम गुस्सा होकर अुसे लात मारनेको तैयार हुआ। तब छायाने अुसे शाप दिया, जिससे यमके दोनों पैरोंमें घाव हो गये और अुसमें कीड़े बिलबिलाने लगे।

यमने सारी वात सूर्यसे कही। सूर्यने अुसे अेक कुत्ता दिया, जो अुसके घावमें से पीव व कीड़े चाटने लगा।

कहते हैं कि यमने दक्ष-प्रजापतिकी तेरह कन्याओंके साथ विवाह किया था। अिसमें अुसे श्रद्धासे सत्य, मैत्रीसे प्रसाद, दयासे अभय, शांतिसे शम, तुष्टिसे हर्ष, पुष्टिसे गर्व, क्रियासे योग, अुन्नतिसे दर्प, वुद्धिसे अर्थ, मेधासे स्मृति, तितिक्षासे मंगल, लज्जासे विनय और मूर्तिसे नर और नारायण नामक पुत्र पैदा हुअे।

वह जीवके पाप-पुण्योंका न्याय करता है। अिसमें चित्रगुप्त नामक अुसका अेक मंत्री पाप-पुण्यकी वही रखकर अुसकी मदद करता है। दंड अुसका हथियार है और पाड़ा अुसका वाहन है।

सारी सृष्टि पर शासन करनेवाले अैसे भाअीकी वहन भी अुतनी ही प्रतापी होगी। अिसलिअे अुसका भाअी वननेके लिअे मनुष्यमें असाधारण योग्यता होनी चाहिये। कोअी मामूली आदमी यह स्थान नहीं ले सकता।

पारिजातके फूलके समान : सुंदर और सुकोमल।

ताजवीवी : मुमताजमहल वड़ा भारी नाम मालूम होता है, अिसलिअे यह नाजुक-सा नाम लिया है। आगराके लोगोंमें 'ताज-वीवीका रोजा' नामसे ही यह अिमारत प्रख्यात है।

जमे हुअे आंसू : शुभ्रमूर्ति ताजमहल। लेखकने अपने ताजमहलके वर्णनमें लिखा है: 'यह मकवरा नहीं है, वल्कि अेक अैसा स्थान है जहां अेक रसिक सम्राट्का दुःख जमकर वर्फके जैसा सफेद हो गया है।' कविवर रवीन्द्रनाथने अिसको कालके कपोल (गाल) पर पड़ा हुआ अश्रुविंदु कहा है:

अे कथा जानिते तुमि भारत-अीश्वर शा-जाहान,
कलस्रोते भेसे जाय जीवन यौवन धनमान।
शुधु तव अन्तरवेदना
चिरंतन हये थाक्, सम्राटेर छिल अे साधना।
राजशक्ति वज्रसुकठिन

सन्ध्या-रक्तराग-सम तन्द्रातले हय होक लीन,
केवल अेकटि दीर्घश्वास
नित्य-अुच्छ्वसित हये सकरुण करुक आकाश
अेअि तव मने छिल आश।
हीरा-मुक्ता-माणिक्येर घटा।
जेन शून्य दिगन्तेर अिन्द्रजाल अिन्द्रधनुच्छटा
जाय जदि लुप्त हये जाक,
शुधु थाक
अेकबिन्दु नयनेर जल
कालेर कपोलतले शुभ्र समुज्ज्वल
अे ताजमहल ॥

जिस प्रकार पानी जमकर सफेद बर्फ हो जाता है, या घी जमने पर सफेद हो जाता है, अुसी प्रकार सम्राट्के आंसुओंके जमने पर अुन्होंने सफेद संगमरमरका रूप ले लिया है—अैसा सूचन यहां है।

चर्मण्वती : देखिये प्रकरण ४१।

सिन्धु : मालवा होकर बहनेवाली अिस नामकी छोटीसी नदी। अिसका अुल्लेख 'मेघदूत' के २९वें श्लोकमें आता है।

वेणीभूत-प्रतनु-सलिला सावतीतस्य सिंधुः
पाण्डु-च्छाया तट-रुह-तरुभ्रंशिभिर् जीर्णपर्णैः।
सौभाग्यं ते सुभग विरहावस्थया व्यंजयन्ती
कार्श्यं येन त्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्यः॥

महाकवि भवभूतिके 'मालतीमाधव' के चौथे अंकके अंतिम विभागमें मकरंद माधवसे कहता है: 'अुठो, पारा और सिंधु नदीके संगममें स्नान करके हम नगरमें ही प्रवेश कर लें।'—तदुत्तिष्ठ पारासिंधुसंभेदमवगाह्य नगरीमेव प्रविशावः।

कालिदासके 'मालविकाग्निमित्र' नाटकके पांचवें अंकके १४वें तथा १५वें श्लोकके नीचे अेक पत्र आता है, जिसमें अिस नदीका अुल्लेख है: "योऽसौ राजसूययज्ञदीक्षितेन मया राजपुत्रशतपरिवृतं वसुमित्रं

गोप्तारम् आदिश्य संवत्सरोपावर्तनीयो निरर्गलस्तुरगो विसृष्टः सः सिन्धोर्दक्षिणरोधसि चरन्नश्वानीकेन यवनानां प्रार्थितः।"

[राजसूय यज्ञकी दीक्षा लिये हुअे मैंने सौ राजपुत्रोंसे घिरे वसुमित्रको रक्षण करनेका आदेश देकर अेक वर्षमें वापस लानेकी बात कहकर जो घोड़ा छोड़ा था, वह सिन्धुके दक्षिण तट पर घूम रहा था। वहां यवनोंके अश्वदलने अुसकी अिच्छा की (अुसको रोका)।]

वहांकी मिश्रीसे मुंह मीठा बनाकर : कालपीमें मिश्रीके कारखाने हैं, अिस बातका यहां सूचन है।

अक्षयवट : प्रयाग, भुवनेश्वर, गया आदि तीर्थस्थानोंमें बोये हुअे वटवृक्ष। कहते हैं कि अिस वटकी पूजा करनेसे, अिसे पानी पिलानेसे अक्षय पुण्यकी प्राप्ति होती है, अिसलिअे अुसे अक्षयवट कहते हैं। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

बूढ़ा अकबर : अकबरने यहां किला बनवाया है अिस बातका सूचन। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

पृ० २४ अशोकका शिलास्तंभ : अिस पर अशोकका धर्मलेख खुदा हुआ है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

सरस्वती : वाणी। गुप्तस्रोता सरस्वतीका भी यहां सूचन है।

कादंब : कलहंस।

धवल-शीला : जिसका शील (चारित्र्य) शुभ्र है।

अिन्दीवर-श्यामा : नीलकमलके जैसी श्याम। अिन्दीवर = नील-कमल।

संस्कृत कवियोंकी अेक पुरानी कल्पना है कि अिन्दीवर-श्याम और गौरवर्णके संगमसे अेक-दूसरेकी शोभाके कारण सौन्दर्य अुत्पन्न होता है। देखिये :

अिन्दीवर-श्यामतनुर् नृपोऽसौ त्वं रोचना-गौर-शरीर-यष्टिः।
अन्योन्य-शोभा-परिवृद्धये वां योगस् तडित्तोयदयोर् अिवास्तु॥

— रघुवंश, ६–६५

सुधा-जला : सुधा = अमृत। अमृत जैसे जलवाली। कहते हैं कि अमृतका रंग शुभ्र होता है। अिसलिअे यहां 'शुभ्र जलवाली' अिस

अर्थमें भी यह शब्द लिया जा सकता है। फिर, सुधाका दूसरा अर्थ होता है चूना। और चूनेका रंग सफेद होता ही है। अिस अर्थमें भी 'सफेद जलवाली' ही कह सकते हैं। तुलना कीजिये : सुधाधवल।

जाह्नवी : गंगा। सगरपुत्रोंके अुद्धारके लिअे भगीरथ गंगाको लेकर जा रहा था। मार्गमें जह्नु नामक अेक राजर्षिकी यज्ञ-सामग्री अुसमें बह गयी। अिससे क्रुद्ध होकर ऋषि अपने तपोबलसे गंगाको पी गये। मगर भगीरथने अुनकी बहुत स्तुति की, तब अुन्होंने अपने कानमें से (कअी लोगोंके मतके अनुसार जांघमें से) गंगाको निकाला। अिस परसे गंगाको जाह्नवी नाम भी प्राप्त हुआ।

७. मूल त्रिवेणी

पृ० २५ ब्रह्मकपाल : हिमालयमें बदरीनारायण तीर्थमें अिस नामकी अेक शिला है। शास्त्रोंमें लिखा है कि अिस शिला पर बैठकर श्राद्ध करनेसे मनुष्यके सभी पूर्वज अेकसाथ मोक्ष पाते हैं और वह पितरोंके ऋणसे सदाके लिअे मुक्त होता है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ४२।

पृ० २६ हरिके चरण : हरिकी पैड़ीका सूचन है।

८. जीवनतीर्थ हरिद्वार

पृ० २६ त्रिपथगा : तीन मार्गोंसे बहनेवाली; स्वर्गगामिनी मंदाकिनी, मर्त्यवाहिनी गंगा और पातालगामिनी भोगवती।

पृ० २७ प्रशम-कारी : शांतिदायक। प्रशमका अर्थ निर्वाण और वैराग्य भी है।

पृ० २८ 'महोल्ला' : सिख गुरुओंके भजनोंके अंतमें नानकका ही नाम आता है। अिससे कौनसा भजन किस गुरु द्वारा लिखा गया है, यह नाम परसे मालूम नहीं हो सकता। 'ग्रंथसाहबका' जब संग्रह किया गया, तब ये सब भजन गुरुके क्रमके अनुसार अलग किये गये और हरअेक गुरुके भजनोंका 'महोल्ला' अलग माना गया। अिस परसे अब कौनसा भजन किस गुरुका है यह मालूम किया जा सकता है।

आसा-दि-वार : आसावरी राग।

मुक्तिफौज : 'साल्वेशन आर्मी' नामक फौजी ढंगसे संगठित ख्रिस्ती लोगोंकी अेक संस्था है, जिसके सदस्य गेरुवे वस्त्र पहनते हैं।

पृ० २९ दीपदानका अिसी तरहका काव्यमय वर्णन लेखकने 'हिमालयकी यात्रा' में 'गंगाद्वार' शीर्षक लेखमें किया है। अुसे देखिये।

पृ० ३० वाजिनीवती अुषा : अृग्वेदके अुषा-संबंधी सूक्तमें अुसको वाजिनीवती कहा गया है। वहां अुसका अर्थ 'बलवती' या 'समृद्धिशाली' होता है।

> अुपस् तत् चित्रतमा भर अस्मभ्यं वाजिनीवती।
> येन तोकं च तनयं च धामहे॥

[हे बलवती और समृद्धिशालिनी अुषा, हमें सुन्दर (बल या संपत्ति) दे, जिससे हम पुत्र और प्रपौत्रको धारण कर सकें।] मंडल १, सूक्त ९२-१३

'वाज' का अर्थ है बल, वीर्य, वेग। अिस परसे 'वाजिन्' कहते हैं बलवान, वीर्यवान, वेगवानको। फिर, अिसका अर्थ हुआ — जिसमें ये सब गुण हैं अैसा युद्धके रथका घोड़ा। अिसीका स्त्रीलिंगी रूप है 'वाजिनी' = घोड़ी। अिस परसे 'वाजिनीवत्' कहते हैं वेगवान घोड़ी हांकनेवालेको या अुसके मालिकको। अिसीका स्त्रीलिंगी रूप है —'वाजिनीवती'। जब यह विशेषण सिन्धु या सरस्वतीको लगाते हैं तब अुसका अर्थ होता है — बलवान, वेगवान घोड़ोंसे समृद्ध।

बल और वीर्य समृद्धिका मूल है। अिससे समृद्धिका अर्थ भी अिसमें आ जाता है। और धान्य तो अेक प्रकारकी समृद्धि है ही। अिससे अिस शब्दमें यह अर्थ भी समाया हुआ है। कभी कभी 'वाजिनीवती' का अर्थ 'अन्नवाली' भी होता है।

> स्वश्वा सिन्धुः सुरथा सुवासा हिरण्मयी सुकृता वाजिनीवती।
> अूर्णावती युवतिः सीलमावत्युताधि वस्ते सुभगा मधुवृधम्॥
> मं० १०, सू० ८२-८

[अुत्तम अश्वोंवाली, अच्छे रथोंवाली, सुन्दर वस्त्रोंवाली, हिरण्यवाली, सुघटित, अन्नवती, अूनवाली, सनवाली, युवती और सुभगा सिन्धु मधुवृधको (मधु बढ़ानेवाले पौधेको) धारण करती है।]

कठोपनिपद्में 'वाजस्रवस्' का अुल्लेख है। वहां 'वाज' का अर्थ है अन्न। अुसके दान आदिके कारण जिसको 'स्रवस्'=यश मिला है वह है 'वाजस्रवस्'।

'वाजीकर' औपधि यानी शक्तिवर्धक दवाअी। 'वाजीकरण' प्रयोग यानी शक्ति बढ़ानेका प्रयोग। ये शब्द भी अिसके साथ संबद्ध हैं।

९. दक्षिणगंगा गोदावरी

अुठोनियां० 'प्रातःकालमें अुठकर मुंहसे चंद्रमौली शिवका नाम लो। श्रीविंदुमाधवके पास गंगामें स्नान करो, गोदावरीमें स्नान करो . . . । कृष्णा, वेण्या, तुंगभद्रा, सरयू, कालिंदी, नर्मदा, भीमा, भामा, — अिन सब नदियोंमें गोदावरी मुख्य है, अिस गंगामें स्नान करो।'

श्री रामचंद्रके अत्यंत सुखके दिन: सीता और लक्ष्मणके साथ बिताये हुअे वनवासके दिन।

जीवनका दारुण आघात: सीताके हरणका।

पृ० ३१ वाल्मीकिकी अेक कारुण्यमयी वेदनामें से: क्रौंचवध जैसे अेक छोटेसे प्रसंगमें से करुणाकी भावना जाग्रत होकर जिस प्रकार रामायणके जैसा महाकाव्य पैदा हुआ अुस प्रकार।

पृ० ३२ सहनवीर रामचन्द्र और दुःखमूर्ति सीतामाता: अिन विशेपणोंकी योग्यता ध्यानमें लीजिये। तुलना कीजिये: 'दुःख-संवेदनायैव रामे चैतन्यनम् आहितम्।' — अुत्तररामचरित

कषाय: कसैले।

कल्पांतिक: कल्प=ब्रह्माका अेक दिन=१००० युग=४३२० लक्ष मानवी वर्ष। सृष्टिकी आयु अितनी मानी जाती है। सृष्टिके अंत तक जो बना रहे वह है कल्पांतिक दुःख। (कल्प+अंत+अिक)

जनस्थान: दंडकारण्यका अेक हिस्सा, जहां गोदावरीके तट पर श्री रामचंद्र रहते थे। वहां राक्षसोंका अुपद्रव कम था, अिसलिअे

मनुष्य वहां रह सकते थे। मनुष्योंके रहनेके योग्य स्थान होनेसे वह 'जनस्थान' कहलाता था।

जटायु: अरुणका पुत्र, संपातिका छोटा भाअी, दशरथ राजाका परम मित्र। रावण जब सीताको लेकर जा रहा था, तब सीताके मुंखसे 'राम', 'राम' की पुकार सुनकर जटायुने सीताको छुड़ानेके बहुत प्रयत्न किये। किन्तु वह असफल रहा। अुसको मरणासन्न स्थितिमें डाल कर रावण सीताको लेकर चला गया। अिधर जब राम सीताकी खोज करते हुअे वहां पहुंचे, तो जटायुने अुन्हें खबर दी कि सीताको रावण अुठा ले गया है, और फिर प्राण छोड़े।

पृ० ३३ सीतामाताकी कातर तनु-यष्टि: तुलना कीजिये—

अस्मिन्नेव लतागृहे त्वमभवस्तन्मार्गदत्तेक्षणः
सा हंसैः कृतकौतुका चिरम् अभूद् गोदावरीसीकते।
आयान्त्या परिदुर्मनायितमिव त्वां वीक्ष्य बद्धस्त्वया
कातर्याद् अरविन्दकुड्मलनिभो मुग्धः प्रणामाञ्जलिः॥

—अुत्तररामचरित, ३—३७

पाड़ेके मूंहसे . . . करवानेवाले: महाराष्ट्रके संतकवि ज्ञानेश्वरके पिता विट्ठलपंत शुरूसे ही वैराग्य-परायण वृत्तिके थे। जवानीमें तीर्थयात्रा करते करते वे अेक बार आळंदी पहुंचे। वहांके अेक ब्राह्मणने अुनकी योग्यताको देखकर अपनी लड़की अुन्हें व्याह दी। मगर विवाहके कारण विट्ठलपंतकी वैराग्य-वृत्ति दब नहीं पायी। 'मैं गंगास्नानके लिअे जा रहा हूं' कहकर अुन्होंने घर छोड़ा और काशीमें जाकर 'मेरे स्त्री-पुत्र आदि कुछ नहीं हैं' कहकर रामानंद स्वामीसे संन्यासकी दीक्षा ली। कुछ समयके बाद रामानंद स्वामी रामेश्वरकी यात्राके लिअे जाते हुअे रास्तेमें आळंदी पहुंचे। वहां विट्ठलपंतकी पत्नी पतिके संन्यासकी बात सुनकर व्रतोपासनामें जीवन बिता रही थी। गांवमें रामानंद स्वामीके आनेकी खबर सुनकर वह अुनके पांवोंमें पड़नेके लिअे आयी। संन्यासीने जब अुसको 'पुत्रवती भव' कहकर आशीर्वाद दिया तब वह हंसी। संन्यासीने हंसनेका कारण पूछा। अुसने अपनी कहानी सुना दी। रामानंद आळंदीसे ही वापस काशी गये और

विट्ठलपंतको धमकाकर वापस गृहस्थ-जीवन वितानेके लिअे भेज दिया। अिनके चार संतान हुअीं: निवृत्तिनाथ, ज्ञानदेव, सोपानदेव और मुक्ता-वाअी।

किन्तु शास्त्रोंमें संन्यासीको फिरसे संसारी बननेकी अनुज्ञा नहीं है। अिसलिअे समाज अिस कुटुंबको सताने लगा। अिनके बच्चोंको जनेअू देनेके लिअे कोअी तैयार नहीं हुआ। अंतमें विट्ठलपंत पैठण गये और वहांके ब्राह्मणोंके पांवोंमें पड़कर अुन्होंने कहा, 'मेरे लिअे कोअी भी प्रायश्चित्त बता दो, किन्तु मुझे शुद्ध करो और मेरे बच्चोंको अुपवीत संस्कार देनेकी अनुज्ञा दो।' ब्राह्मणोंको शास्त्रोंमें कोअी आधार नहीं मिला। अुन्होंने कहा, 'तुम्हारा पाप ही अितना बड़ा है कि तुम्हारे लिअे देहत्याग ही अेक अुपाय है। और तुम्हारे बच्चोंको अुपवीत दिया ही नहीं जा सकता।' विट्ठलपंत और अुनकी पत्नीने प्रयाग जाकर गंगामें जल-समाधि ले ली!

अिसके बाद अिन चारों बच्चोंने आळंदीके ब्राह्मणोंसे प्रार्थना की कि 'हम ब्राह्मणके बच्चे हैं; हमें अुपवीत संस्कार मिलना चाहिये।' किन्तु ब्राह्मणोंने जवाब दिया कि पैठणके ब्राह्मणोंसे शुद्धि-पत्र लाने पर अुपवीत दिया जा सकेगा।

बच्चे पैठण गये। वहांके ब्राह्मणोंके सामने अुन्होंने अपनेको समाजमें लेनेकी मांग पेश की। किन्तु ब्राह्मणोंने कहा, 'संन्यासीके बच्चोंको अुपवीतका अधिकार किसी भी शास्त्रमें नहीं है। अिसके लिअे कोअी प्रायश्चित्त भी नहीं है। अतः तुम सर्वत्र अीश्वरभाव रखकर जितेन्द्रिय बनो, विवाह मत करो और सदा हरिभजनमें मग्न रहो।'

निर्णय देकर सभा समाप्त होनेवाली थी, अितनेमें अिन चारों बच्चोंको किसीने अुनके नामोंके अर्थ पूछे। निवृत्तिनाथने कहा, 'मेरा नाम निवृत्ति है। मैं कभी प्रवृत्तिमें पड़नेवाला नहीं हूं।' ज्ञानदेवने कहा, 'मैं ज्ञानदेव हूं। सकल आगमोंको जाननेवाला हूं।' सोपानदेवने कहा, 'मैं भक्तोंको अीश्वर-भजन सिखाकर वैकुंठ प्राप्त करानेवाला सोपान हूं।' मुक्ताबाअीने कहा, 'मैं विश्वकी लीला दिखानेके लिअे प्रकट हुअी अीश्वरकी लीलारूपी मुक्ति हूं।'

यह जवाब सुनकर अुस आदमीने कहा, 'नाम तो चाहे जैसे रखे जा सकते हैं। वह जो पाड़ा जा रहा है अुसका नाम भी ज्ञान-देव है।'

ज्ञानदेव फौरन बोल अुठे, 'बेशक! अुस पाड़ेमें और मुझमें कोअी भी भेद नहीं है। अुसमें भी मेरी ही आत्मा है।'

अुसी समय किसीने अुस पाड़े पर तीन चाबुक लगाये और अिधर अुसी क्षण ज्ञानेश्वरकी पीठ पर चाबुकके निशान अुठ आये!

चारों बच्चे ब्राह्मणोंको नमस्कार करके अपने गांव वापस जानेके लिअे निकले। रास्तेमें गोदावरीके तीर पर वे बैठे थे। वहां कुछ नौ-जवान अिकट्ठे हुअे थे। अुन्होंने मजाकके तौर पर ज्ञानदेवसे कहा: 'तुम यदि शुद्धिपत्र चाहते हो, तो अिस पाड़ेके मुंहसे वेदका पाठ करा दो।' तुरन्त ज्ञानेश्वर पाड़ेके पास गये और अुसके सिर पर हाथ रखकर अुन ब्राह्मणोंसे कहने लगे: 'आप तो भूदेव हैं। आपका वचन कभी निष्फल नहीं जा सकता। देखिये, यह पाड़ा अब वेदोंका पाठ करेगा।'

और सचमुच वह पाड़ा वेदोंकी अृचायें बोलने लगा!!

ज्ञानेश्वरने गीता पर 'भावार्थ दीपिका' लिखी है, जिसको 'ज्ञानेश्वरी' कहते हैं। अिसके अलावा अुनकी अेक स्वतंत्र रचना है, जिसका नाम है 'अमृतानुभव'। ये दोनों भारतीय साहित्यके अनमोल रत्न हैं।

दशग्रंथी: अृक्, यजुर्, साम और अथर्व ये चार वेद तथा शिक्षा (स्वरोच्चारण संबंधी), छंद, व्याकरण, निरुक्त (व्युत्पत्ति और अर्थ संबंधी), ज्योतिष और कल्प (सूत्र) ये छह वेदांग — अिन दस ग्रंथोंको कंठ करनेवाले।

पृ० ३४ शंकराचार्यके अूपर किये . . . अत्याचार: शंकरा-चार्यकी माता अुन्हें संन्यास लेनेकी अिजाजत नहीं देती थी। अेक बार शंकराचार्य नहानेके लिअे नदीमें अुतरे। वहां मगरमच्छने अुनका पांव पकड़ा। शंकराचार्यने पुकार कर मांको कहा, 'अब तो मुझे संन्यास लेनेकी अिजाजत दो।' मांने अिजाजत दी कि शंकराचार्य मगरके जबड़ेमें से मुक्त हुअे। वे पूरे-पूरे मातृभक्त थे। किन्तु संन्यास-

धर्मके अनुसार वे माताके साथ रह नहीं सकते थे, माताका दर्शन तक नहीं कर सकते थे। तो भी अुन्होंने घर छोड़कर जाते समय मातासे कहा, 'संकटके समय मुझे बुलाओगी तो मैं आ जाअूंगा।' और वे चले गये। कुछ समयके बाद मां बीमार पड़ी। अुसे पुत्रसे मिलनेकी अिच्छा हुअी। वचनके अनुसार शंकराचार्य आये और माताके अवसान तक अुन्होंने अुसकी सेवा की। माताने सुखसे प्राण छोड़े।

किन्तु मुसीबत अब शुरू हुअी। शवको स्मशानमें ले जानेके लिअे गांवके ब्राह्मण तैयार नहीं थे। न अपने स्मशानमें अुस शवको जलानेकी अिजाजत देते थे। लकड़ी भी किसीने नहीं दी। ब्राह्मणोंने तय किया कि जो संन्यास लेनेके बाद अपनी पूर्वाश्रमकी मांसे मिलने आता है अुसका वह कार्य शास्त्रविरुद्ध है; अुसका बहिष्कार ही होना चाहिये। शंकराचार्यने अपनी मांके शवके चार टुकड़े किये, केलेके पेड़ काटकर ले आये, अुन पर ये टुकड़े रखकर अुन्होंने अपनी माताके घरके आंगनमें ही योगाग्नि जलायी और अपने तपस्तेजसे अुसको सद्गति दी।

शंकराचार्यका गांव जिस राज्यमें था, वहांका राजा अुनका शिष्य था। अपने पूज्य गुरु पर गुजरे हुअे अिस जुलमकी खबर पाते ही अुसने अपने राज्यके नांबुद्री ब्राह्मणोंको सजा दी कि वे अपने घरके लोगोंके शव स्मशानमें नहीं ले जा सकते, बल्कि घरके आंगनमें ही अुसके चार टुकड़े करके जलावें। राजाने अिस सजाका अमल कठोरताके साथ करवानेका निश्चय किया। ब्राह्मण घबड़ा गये। अुन्होंने माफी मांगी। तब राजाने शवके चार टुकड़े करनेके बदले शवके अूपर चार रेखायें खींचनेकी और बादमें स्मशानमें ले जानेकी अिजाजत दी।

अष्टवक्रा : जिसके आठों अंग टेढ़े हों—खूब मोड़वाली।

पृ० ३५ जीवन-वितरण : जीवन = पानी; वितरण = बांटना।

यानान : गोदावरीके मुखके पास यह स्थान है। फ्रेंच कंपनीने सन् १७५० में अिसका कब्जा लिया था और दो सालके बाद फ्रेंच सरकारको सौंप दिया था। अब यह स्वतंत्र भारतमें मिल गया है।

पृ० ३६ चंचल कमलोंके बीच : कमलोंको गतिमान बनाकर दृश्यकी शोभा बढ़ानेके लिअे।

भवभूतिका स्मरण : भवभूतिने अपने 'अुत्तररामचरित' में गोदावरीके विविध सौंदर्यका वर्णन किया है अिसलिअे। अुदाहरणके तौर पर देखिये :

अेतानि तानि गिरि-निर्झरिणी-तटेषु
वैखानसाश्रित-तरूणि तपोवनानि।
येष्वातिथेयपरमा शमिनो भजन्ते
नीवार-मुष्टि-पचना गृहिणो गृहाणि॥
अुत्तररामचरित १–२५

स्निग्ध-श्यामाः क्वचिद् अपरतो भीषणा भोग-रूक्षाः
स्थाने स्थाने मुखर-ककुभो झांकृतैर्निर्झराणाम्।
अेते तीर्थाश्रम-गिरि-सरिद्-गर्त-कान्तार-मिश्राः
संदृश्यन्ते परिचित-भुवो दण्डाकारण्य-भागाः॥
अु० रा० २–१४

अिह समदशकुन्ताक्रान्तवानीरमुक्त-
प्रसवसुरभिशीतस्वच्छतोया वहन्ति।
फलभरपरिणामश्यामजम्बू-निकुञ्ज-
स्खलनमुखरभूरिस्रोतसो निर्झरिण्यः॥
अु० रा० २–२०

अेते त अेव गिरयो विरुवन्मयूरास्-
तान्येव मत्तहरिणानि वनस्थलानि।
आमञ्जुवञ्जुललतानि च तान्यमूनि
नीरन्ध्रनीपनिचुलानि सरित्तटानि॥
अु० रा० २–२३

मेघमालेव यश्चायमारादिव विभाव्यते।
गिरिः प्रस्रवणः सोऽयं यत्र गोदावरी नदी॥
अु० रा० २–२४

अस्यैवासीन्महति शिखरे गृध्रराजस्य वासस्
तस्याधस्ताद्वयमपि रतास्तेषु पर्णोटजेषु।
गोदावर्याः पयसि विततश्यामलानोकहश्रीर्
अन्तः कूजन्मुखरशकुनो यत्र रम्यो वनान्तः॥

अु० रा० २–२५

गुञ्जत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटाघुत्कारवत्कीचक–
स्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुलः क्रौंचावतोऽयं गिरिः।
अेतस्मिन्प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्वेजिताः कूजितैर्
अुद्वेल्लन्ति पुराणरोहिणतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः।

अु० रा० २–२९

अेते ते कुहरेषु गद्गदनदद्गोदावरीवारयो
मेघालम्बितमौलिनीलशिखराः क्षोणीभृतो दाक्षिणाः।
अन्योन्यप्रतिघातसंकुलचलत्कल्लोलकोलाहलैर्
अुत्तालास्त अिमे गभीरपयसः पुण्याः सरित्संगमाः॥

अु० रा० २–३०

यत्र द्रुमा अपि मृगा अपि बन्धवो मे
यानि प्रियासहचरश्चिरमध्यवात्सम्।
अेतानि तानि बहुकन्दरनिर्झराणि
गोदावरीपरिसरस्य गिरेस्तटानि॥

अु० रा० ३–८

वैदिक प्रभात : वेदकालमें जहां आर्य रहते थे, वहांका प्रभात कुहरेके कारण धूसर होता था अिसलिअे, अितिहासमें वेदकाल अुषःकालके जैसा धुंधले प्रकाशवाला माना गया है अिसलिअे तथा वेदकालमें ही धर्मज्ञानका अुषःकाल हुआ था अिसलिअे भी।

पृ० ३७ कविकी प्रतिभाके समान : प्रतिभाकी व्याख्या अिस प्रकार है: 'प्रज्ञा नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता।'—नये नये स्फुरण जिस प्रज्ञा (बुद्धि)से निकलते हैं, वह प्रतिभा कही जाती है।

चरित्र : [चर् (चलना) + अित्र (साधन) = चलनेका साधन = पैर।] चाल; आचरण। वेदोंमें 'चरित्र' शब्द पैरके अर्थमें आया है। (पैरोंके निशान — चरित्र — देखकर चलनेवालेको यह सूचन मिल जाता है कि बगुला किस दिशामें गया है। दूसरे अर्थमें, चालबाजीसे भरा आचरण करनेवाले बगलाभगतको बगला दिशा बताता है।)

१०. वेदोंकी धात्री तुंगभद्रा

पृ० ४१ 'द्वंद्वः सामासिकस्य च' : समासोंमें मैं द्वंद्व हूं। गीता, १०–३३।

११. नेल्लूरकी पिनाकिनी

पृ० ४२ नेल्लूर : (नेल्ल = धान + अूरु = गांव) धानका गांव। यह गांव मद्रासकी अुत्तर दिशामें है।

१२. जोगका प्रपात

पृ० ४४ होन्नावर : अुत्तर कर्णाटकमें पश्चिम समुद्र-तट पर स्थित अेक शहर।

पृ० ४५ कारकल : दक्षिण कर्णाटकमें मंगलूर और अुडपीके बीच स्थित अेक शहर। यहां हैदरके द्वारा स्थापित हनुमानका मंदिर है। समीपकी टेकरी पर बाहुबलीकी अेक भव्य मूर्ति खड़ी है।

मनसा० मनमें सोचते हैं अेक बात और दैव दूसरी ही बात कर देता है।

चिरसंचित : रवीन्द्रनाथकी यह पंक्ति याद कीजिये :

बहुदिन वंचित अंतरे संचित कि आशा।

शिमोगा सागर : गांवका नाम है।

पृ० ४६ गुजरातमें बाढ़-संकट : सन् १९२७ में गुजरातमें अति-वृष्टिके कारण हजारों मकान टूट गये थे। लोग बिना अन्न-वस्त्रके और आसरेके हो गये थे। अुस समय सरदार वल्लभभाअी पटेलने अपनी विलक्षण व्यवस्था-शक्तिसे और धनिकोंकी मददसे लोगोंको राहत देनेका भगीरथ कार्य सफलतापूर्वक किया था।

श्री गंगाधरराव देशपांडे : कर्णाटकके अेक नेता।

स्थितधीः ० स्थितप्रज्ञ कैसे वोलता है, कैसे वैठता है और कैसे चलता है? गीता, २–५४।

कुलशिखरिणः ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है:

> विरम विरमायासाद् अस्माद् दुरव्यवसायतो
> विपदि महतां धैर्य-ध्वंसं यद् अीक्षितुम् अीहसे।
> अयि जड़मते! कल्पापाये व्यपेत-निजक्रमा
> कुल-शिखरिणः क्षुद्रा नैते न वा जलराशयः॥

[अपनी मर्यादा कभी न छोड़नेवाला सागर और अपने स्थान पर सदा स्थिर रहनेवाले कुलपर्वत भी जव प्रलयकाल आता है तव चलित होते हैं। किन्तु महात्माओंमें अैसी क्षुद्रता नहीं होती। वे तो संकट जितना अधिक होता है अुतने ही अधिक अडिग रहते हैं। अिस तरह समझाते हुअे कवि कहता है:

हे जड़मते! विपद् कालके समय महात्माओंका धैर्यनाश देखना यदि चाहते हो तो यह झूठा प्रयास है। अुसको छोड़ दो। ये महात्मा तुम्हारे क्षुद्र कुलपर्वत नहीं हैं, न पामर सागर हैं, जो प्रलयकाल आते ही अपने स्वधर्म-कर्मके नियमोंको भी तोड़ देते हैं।]

पृथ्वी पर चाहे जितना अुत्पात हो जाय, फिर भी पृथ्वीकी सम-तुला संभालनेवाले कुलपर्वत अपनी जगहसे हटते नहीं हैं। अिसीलिअे किसीके धैर्यकी अुपमा देते समय कहा जाता है कि अिसका धैर्य तो कुलपर्वतके समान है।

अिसी प्रकार नदियोंमें चाहे जितनी वाढ़ आ जाय, तो भी अुनके पानीसे समुद्र या महासागर अुभर नहीं आता। महासागर अपनी मर्यादाको छोड़ते नहीं, अिसलिअे महासागर भी कवियोंकी सृष्टिमें धैर्य और मर्यादाके लिअे आदर्श अुपमान वन गये हैं।

प्रस्तुत श्लोकमें महात्माओंकी अचल स्थिरताका वर्णन करते समय कवि कहता है कि अुनके सामने कुलपर्वत भी क्षुद्र होते हैं और जलराशि महासागर भी तुच्छ हैं। क्योंकि हजारों और लाखों साल तक अपनी मर्यादाका अुल्लंघन न करनेवाली ये विभूतियां प्रलयकालके

समय अपना स्वधर्म-कर्म छोड़ देती हैं। महात्माओंकी बात अैसी नहीं है।

आदर्श अुपमानको तुच्छ मानकर अुपमेय वस्तु अुपमानसे भी श्रेष्ठ है, यह दिखानेवाली पद्धतिको संस्कृतमें प्रतीप अलंकार कहते हैं। अिसमें अत्युक्ति अवश्य होती है।

पृ० ४७ खंडाला घाट : पूना और बम्बअीके बीचका घाट।

पृ० ४८ प्रतीप : [प्रति = विरुद्ध + अिप् = पानी] प्रवाहके विरुद्ध, अुलटी।

पृ० ४९ तमाशा : यहां फजीहतके अर्थमें।

पृ० ५० नमः पुरस्तात् ० हे सर्व! तुम्हें आगेसे, पीछेसे, सभी ओरसे नमस्कार है। तुम्हारा वीर्य अनंत है। तुम्हारी शक्ति अपार है। सब कुछ तुम्हीं धारण कर रहे हो, अतः तुम सर्व हो। गीता, ११–४०

सुदुर्दर्शम् अिदम् ० मेरा जो रूप तुमने देखा है, अुसका दर्शन बड़ा दुर्लभ है। देवता भी अिस रूपके दर्शनकी आकांक्षा रखते हैं। गीता, ११–५२

स्वप्न था ० तुलना कीजिये:

स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु? — शांकुतल, ६–१०

पृ० ५१ व्यपेतभीः ० डर छोड़कर शांतचित्त हो जा और यह मेरा परिचित रूप फिरसे देख ले। — गीता, ११–४९

देवदास : देवदास गांधी।

मणिबहन : सरदार पटेलकी पुत्री।

लक्ष्मी : राजाजीकी पुत्री, बादमें देवदास गांधीकी पत्नी।

पृ० ५२ अण्णा : राजाजी।

पत्रं नैव यदा० वसंत ऋतुमें जब सब वृक्ष-वनस्पतिको नये पत्ते आते हैं, तब यदि केवल करीलके वृक्षको ही पत्ते न हों, तो अुसमें वसंतका भला क्या दोष है? घुग्घू यदि दिनको देखे ही नहीं, तो अिसमें सूर्यका क्या दोष है?

भर्तृहरिके अिस श्लोकके शेष दो चरण अिस प्रकार हैं:

धारा नैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणम् ?
यत् पूर्वं विधिना ललाट-लिखितं तन् मार्जितुं कः क्षमः ?

[चातकके ही मुंहमें यदि पानीकी धारा गिरे नहीं तो अुसमें भला मेघका क्या दोष है? विधिने ललाटमें जो लिख रखा है, अुसको मिटानेके लिअे कौन समर्थ है?]

'अुच्छिष्टः' [अुत्+शिष्ट] जूठा नहीं, बल्कि किसानके फसल काट कर ले जानेके बाद बचा हुआ।

रवीन्द्रनाथ अथर्ववेदके अेक मंत्रका आधार लेकर बताते हैं कि सारी कलाओंका और मनुष्यकी सारी अुच्चतर प्रवृत्तियोंका मूल 'अुच्छिष्ट' है। नीचे अुनके वचन दिये जा रहे हैं:

ऋतं सत्यं तपो राष्ट्रं श्रमो धर्मश्च कर्म च।
भूतं भविष्यत् अुच्छिष्टे वीर्यं लक्ष्मी-बलं बले॥

"Righteousness, truth, great endeavours, empire, religion, enterprize, heroism and prosperity, the past and the future dweil in the surpassing strength of the surplus."

The meaning of it is that man expresses himself through his super-abundance which largely overleaps his absolute need.

The renowned vedic commentator Sayanacharya says :

"The food offering which is left over after the completion of sacrificial rites is praised because it is symbolical of Brahma, the original source of the universal."

According to this explanation, Brahma is boundless in his superfluity which inevitably finds expression in the eternal world process. Here we have the doctrine of the origin of the arts. Of all living creatures in the world man has his vital and mental energy vastly in excess of his need which urges him to work in various lines of creation for

its own sake. Like Brahma himself, he takes joy in productions that are unnecessary to him, and therefore represent his extravagance and not his hand-to-mouth penury. The voice that is just enough can speak and cry to the extent needed for everyday use, but that which is abundant sings; and in it we find our joy. Art reveals man's wealth of life, which seeks its freedom in forms of perfection which are ends in themselves.

भावार्थ :

'ऋत, सत्य, तप, राष्ट्र, श्रम, धर्म, कर्म तथा भूत और भविष्य, वीर्य और लक्ष्मी अुच्छिष्टके बलमें निवास करते हैं।'

अिसका अर्थ यह है कि अपनी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेके बाद मनुष्यके पास जो अतिशय शक्ति अधिक रहती है, अुसीके द्वारा वह अपनेको व्यक्त करता है।

वेदोंके प्रसिद्ध टीकाकार सायणाचार्य कहते हैं:

'यज्ञविधिके बाद, बचे हुअे (अुच्छिष्ट रहे) अन्नबलिको पवित्र अिसीलिअे कहा गया है कि वह अखिल विश्वके मूल कारणरूप ब्रह्मका प्रतीक है।'

अिस धारणाके अनुसार ब्रह्मकी अुच्छिष्ट शक्ति अपरंपार है, और वह सनातन विश्व-प्रक्रियाके रूपमें प्रकट होती है। यहां हमें कलाओंके अुद्‌भवसे संबंध रखनेवाला सिद्धांत देखनेको मिलता है। संसारके सभी जीवोंकी तुलनामें मनुष्यमें प्राण और मनकी शक्ति अुसकी आवश्यकतासे अधिक भरी है, और वह अुसे अनेकविध निर्हेतुक सर्जक प्रवृत्तियां करनेके लिअे प्रेरित करती है। स्वयं ब्रह्मकी तरह, वह भी जो सर्जन अुसके लिअे अनावश्यक हैं, और जो अुसके अकिंचनत्वके नहीं बल्कि अुसके अुड़ाअूपनके सूचक हैं, अुनमें आनन्द लेता है। जो आवाज केवल आवश्यकता भरकी ही है, वह रोजके कामकाजके जितनी ही बोल सकती है या रो सकती है, किन्तु जो आवाज अधिक होती है, वह गाने लगती है — और अिसीमें हमारा आनन्द है। कला मनुष्यके

जीवनकी समृद्धिको प्रकट करती है। यह समृद्धि निर्हेतुक सर्वांग-संपूर्ण स्वरूपोंमें मुक्तिका आनन्द मनानेके लिअे प्रयत्न करती रहती है।

'परिग्रहो भयायैव': परिग्रहमें भय रहता ही है। लेखकका यह अपना सूत्र है।

पृ० ५३ 'निस्' कोटिके: (Gneiss) सतहवाले पत्थर जिनमें अभरक, चकमक वगैराका समावेश होता है।

पृ० ५४ भगिनी निवेदिताकी प्रख्यात तुलना: मूल अिस प्रकार है:

Beauty of place translates itself to the Indian consciousness as God's cry to the soul. Had Niagara been situated on the Ganges, it is odd to think how different would have been its valuation by humanity. Instead of fashionable picnics and railway pleasure-trips, the yearly or monthly incursion of worshiping crowds. Instead of hotels, temples. Instead of ostantatious excess, austerity. Instead of the desire to harness its mighty forces to the chariot of human utility, the unrestrainable longing to throw away the body and realize at once the ecstatic madness of Supreme Union. Could contrast be greater ?

—*The Web of Indian Life* —241

भैरवजाप: "पहाड़ पर जहां अूंचेसे अूंचा शिखर हो और पास ही नीचे अेकदम सीधा कगार हो, अुस स्थानको भैरवघाटी कहते हैं। प्राचीन कालमें और आज भी भैरव संप्रदायके लोग प्राय: अैसे स्थान पर भैरवजीका जाप करते-करते अूपरसे नीचे कूद पड़ते हैं। माना यह जाता है कि अिस तरह आत्महत्या करनेमें पाप नहीं, अपितु पुण्य है। यह मान्यता आजके कानूनके अनुसार गलत भले ही हो, किन्तु मानस-शास्त्री अुसके आधारभूत तत्त्वको सहज ही समझ सकते हैं। दुनियासे सब तरह निराश होकर कायरतावश किसी मनुष्यका आत्महत्या करना और प्रकृतिके विशाल, अुच्च, अुदात्त तथा रमणीय सौंदर्यको देख, तल्लीन होकर प्रकृतिके साथ अेकरूप होनेकी

अिच्छाका प्रबल हो अुठना, किसी तरह प्रकृतिका वियोग सहा ही न जाना, और अैसेमें किसी मनुष्यका अिस क्षुद्र देहके बंधनको भूल कर सात्म्य प्राप्त करनेके लिअे अनन्तमें कूद पड़ना — ये दो बातें नितांत भिन्न हैं। दोनोंका परिणाम चाहे अेक ही हो। हर तरहके विनाशको हम मृत्युके अेक ही नामसे पुकारते हैं; परन्तु वस्तु अेक ही नहीं होती। कअी बार मरण जीवन-रूपी नाटकका विष्कंभक होता है, और कअी बार वह अुस नाटकका भरत-वाक्य — जीवन-साफल्य — होता है।" — 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० १६, पृ० ९१-९२

पृ० ५५ विभव-तृष्णा : देखिये पृ० १४८ पर 'लहरोंका तांडव-योग' शीर्षक लेख।

नाभिनंदेत० न मृत्युका स्वागत करना, न जीवनका।

— मनुस्मृति।

हॉर्स पावर : अिसके लिअे लेखक ''अश्वत्थामा' शब्द पारिभाषिक शब्दके तौर पर सुझाते हैं। [अश्व = घोड़ा + स्थामन् = शक्ति।] समासमें 'स्थामन्' में से 'स्' का लोप हो जाता है।

अुपवन : 'न्यू फॉरेस्ट' नामक प्रदेश।

नीरो : रोमका अेक बादशाह (सन् ५४–६८)। मांके भड़कानेसे पिताका खून होनेके बाद रोमकी गद्दीके अधिकारी ब्रिटेनिकसको हटाकर खुद गद्दी पर बैठा। पांच साल तक अच्छी तरह राज चलानेके बाद वह तानाशाह बन गया। अुसने ब्रिटेनिकसकी, अपनी मांकी और पत्नीकी हत्या की। रोमको जलानेके झूठे अिलजाम पर अुसने ख्रिस्तियोंके अूपर तरह तरहके अत्याचार किये। अपने गुरु और मंत्री सेनेकाकी तथा अपनी दूसरी पत्नीकी भी हत्या की। अिसके बाद रोममें बगावत हुअी, जिससे वह भाग गया और अुसने आत्महत्या कर ली। अैसी दंतकथा है कि अुसने रोमको जलाया था और खुद जलते हुअे रोमको देख कर फिडल बजाता था। किन्तु अितिहासमें अिसके लिअे कोअी समर्थन प्राप्त नहीं है। किन्तु अिसमें कोअी संदेह नहीं कि वह अत्यंत निर्दय था।

पृ० ५६ आर्तिनाश : तुलना किजिये :

न त्वहं कामये राज्यं, न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःख-तप्तानां प्राणिनां आर्ति-नाशनम्॥

[अपने लिअे मैं न राज्य चाहता हूं, न स्वर्गकी अिच्छा करता हूं, और न मोक्ष चाहता हूं। दुःखसे तपे हुअे प्राणियोंकी पीड़ाका नाश हो, बस अितना ही मैं चाहता हूं।]

पृ० ५७ वीरभद्र : दक्ष प्रजापतिके यज्ञका संहार करनेवाले शिवगण।

अंग्रेजोंको हम पहचान गये हैं तो : अंग्रेज भी भारतका खून चूसते हैं, परन्तु मालूम ही नहीं होता कि वे चूस रहे हैं। अंग्रेजोंका यह स्वरूप हम पहचान गये हैं तो—

काकदृष्टि : कौवेके जैसी चकोर दृष्टि। ['काका' की दृष्टि, यह अर्थ भी है।]

पृ० ५८ प्रायः कंदुक ० आर्यजन गिरते हैं तो भी अक्सर गेंदकी तरह गिरते हैं, यानी गिरने पर फिर अूंचे अुछलते हैं।

भर्तृहरिका पूरा श्लोक अिस प्रकार है :

प्रायः कन्दुक-पातेन पतत्यार्यः पतन्नपि।
तथा त्वनार्यः पतति मृत्पिण्ड-पतनं यथा॥

न हि कल्याणकृत् ० कल्याण करनेवाला कोअी भी दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता। गीता, ६–४०

पृ० ६० मानो महादेवजी संहारकारी तांडव-नृत्य . . हों : रावणके शिव-तांडव-स्तोत्रका यहां स्मरण होता है। नीचे दो श्लोक दिये जा रहे हैं :

जटा-कटाह-संभ्रम-भ्रमन्निलिम्प-निर्झरी—
विलोल-वीचि वल्लरी-विराजमान मूर्धनि।
धगद्-धगद्-धगज्ज्वलल्-ललाट-पट्ट-पावकं
किशोर-चंद्र-शेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम॥१॥

[जिनका सिर जटारूपी कटाहमें तेज गतिसे घूमनेवाली सुर-सरिता (गंगा) की चंचल तरंग-लताओंसे सुशोभित हो रहा है, लला-

टाग्नि धग धग धग जल रही है, सिर पर बालचंद्र विराजमान है, अुन (शिवजी) में मेरा निरंतर अनुराग बना रहे।]

जयत्वदभ्र-विभ्रम-भ्रमद्भुजंगम-श्वसद्
विनिर्गमत्क्रम-स्फुरत्कराल-भाल-हव्यवाट्।
धिमिद् धिमिद् धिमिद् ध्वनन्-मृदंग-तुंग-मंगल-
ध्वनि-क्रम-प्रवर्तित-प्रचण्ड-ताण्डवः शिवः ॥१०॥

[सतत हिलते रहनेवाले भुजंगके निःश्वाससे जिनके भालकी कराल अग्नि अुत्तरोत्तर अधिक स्फुरित होती जाती है और धिमिद् धिमिद् धिमिद् जैसी मृदंगकी अुच्च मंगल ध्वनिकी तरह जो प्रचंड ताण्डव खेल रहे हैं, अुन शिवजीकी जय हो।]

पृ० ६१ **देवेन्द्र:** लंकाका दक्षिण छोर। **Dundra Head.**

नारायणका ही सरोवर: सिन्ध और कच्छके बीच स्थित सरोवर।

पृ० ६३ **पुनरागमनाय च:** धार्मिक प्रसंगों पर पूजाके अंतमें देवताका विसर्जन करते समय अिस वचनका प्रयोग होता है। अिसका अर्थ है—'फिर आनेके लिअे।' भाव यह है कि विदाअी हमेशाके लिअे नहीं है, वल्कि फिरसे मिलनेके लिअे ही है।

लेखककी अिस अिच्छाकी या संकल्पकी पूर्ति कअी सालोंके बाद किस प्रकार हुअी, अिसका वर्णन अगले प्रकरणमें देखिये।

१३. जोगके प्रपातका पुनर्दर्शन

पृ० ६४ **अेतावान् अस्य महिमा०** अितनी तो अुसकी महिमा है; पुरुष तो अिससे भी बड़ा है। यह वचन ॠग्वेदके पुरुषसूक्तसे लिया गया है।

पृ० ६६ **अनुदरी:** छोटे पेटवाली। मंदोदरी, कृशोदरीकी तरह।

विश्वजित् यज्ञ: 'सर्ववेदस्', वह यज्ञ जिसमें जीवनकी सारी कमाअी देनी होती है। तुलना कीजिये:

स्थाने भवान् अेक-नराधिपः सन्
अकिंचनत्वं मखजं व्यनक्ति।
पर्याय-पीतस्य सुरैर् हिमांशोः
कला-क्षयः श्लाघ्यतरो हि वृद्धेः॥ रघुवंश, ५–१६

[आप चक्रवर्ती राजा होकर विश्वजित् यज्ञके कारण अुत्पन्न हुआ अकिंचनत्व दर्शाते हैं, यह योग्य है। देवताओंके वारी वारीसे पीनेके कारण चंद्रकी कलाका क्षय वृद्धिसे अधिक वधाओीके योग्य है।]

पृ० ६७ अलकेश्वर: (अलका + औीश्वर) कुबेर।

प्रति-धनुष: आकाशमें अिन्द्रधनुषके कुछ अूपर दूसरा फीका धनुष अक्सर दिखाओी देता है, अुसको प्रति-धनुष कहा गया है। अुसके रंग मूल धनुषके ठीक अुलटे क्रममें होते हैं।

सुरधनु: देवोंका धनुष, 'अिन्द्रधनु'।

सुरधुनी: स्वर्गकी नदी। यहां केवल नदी।

किसी भी नदीको गंगा कहा जाता है अिसलिअे।

प्रतिक्षण हमारा पुण्य . . . है: याद कीजिये:

क्षीणे पुण्ये मर्त्य-लोकं विशन्ति।

—गीता, ९–२१

पृ० ७० रोमें रोलां: (१८६६–१९४४) फ्रान्सके विश्व-विख्यात मानवतावादी साहित्यकार और कला-विवेचक। अुनका अुपन्यास 'जां क्रिस्तॉफ' अुनकी सर्वश्रेष्ठ कृति माना जाता है। सन् १९१६ में अुन्हें अिसके लिअे 'नोबल पारितोषिक' मिला था। अुन्होंने गांधीजी, रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्दकी जीवनियां लिखकर भारतकी विचारधारा पश्चिमके संसारको समभावपूर्वक समझायी थी। गांधीजी जब गोलमेज परिषद्में शरीक होनेके लिअे विलायत गये थे, तब लौटते समय अुनसे खास तौर पर मिले थे। अुनकी भारत-सम्बन्धी डायरी फ्रेन्च भाषामें प्रसिद्ध हुओी है। अुसमें भी गांधीजी, रवीन्द्रनाथ, श्री अरविंद आदिके सम्बन्धमें काफी बातें हैं। वे युद्धके विरोधी थे और मानते थे कि कला सर्व-लोक-गम्य होनी चाहिये।

पृ० ७१ मानवकृत कलाकृति: सृष्टिमें जो सौन्दर्य होता है अुसको कला नहीं कहते। कला तो मानवीय ही होती है। प्रकृतिका सौन्दर्य कलाकी अुत्पत्तिका अेक प्रेरक कारण जरूर है।

'अल्पस्य हेतोः' ० अल्प हेतुके लिअे बड़ी वस्तुका नाश करनेकी अिच्छावाले। कवि कालिदासके 'रघुवंश' में यह वचन है। दिलीप जब

गायके बदलेमें अपना शरीर सिंहको देनेके लिअे तैयार होता है, तब अुसे समझानेके लिअे सिंह कहता है :

अेकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं,
नवं वयः, कान्तम् अिदं वपुश्च।
अल्पस्य हेतोर् बहु हातुम् अिच्छन्
विचारमूढ़ः प्रतिभासि मे त्वम्।। रघुवंश, २–४७

[संसारका अेक-छत्र राज्य, जवान अुम्र और यह सुंदर वपु (शरीर); थोड़ेके लिअे अितना बड़ा त्याग करनेके लिअे तुम तैयार हो गये हो! तुम मुझे विचारमूढ़ मालूम होते हो।]

१४. जोगका सूखा प्रपात

पृ० ७२ राक्षसी दुष्टता : याद कीजिये :

बुभुक्षितः किं न करोति पापम्
क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति।

पृ० ७३ रावणकी तरह : रावण पैदा हुआ तब महारव करता ही पैदा हुआ था। अिस परसे अुसके पिताने अुसका नाम रावण रख दिया था।

तपस्विनी : गरमीका ताप सहती थी अिसलिअे।

संभाजीकी आंखें : १६८९ में संभाजीको गिरफ्तार करनेके बाद औरंगजेबने अुसको अिस्लाम स्वीकार करनेकी बात कही। किन्तु संभाजीने अिस्लाम स्वीकार करनेके बदले बादशाहका अपमान किया। अिसलिअे औरंगजेबने अुसकी जीभ कटवा डाली, आंखें निकलवा डालीं और अुसे मरवा डाला।

पृ० ७४ नदीमुखेनैव समुद्रमाविशत् : नदीके मुखसे समुद्रमें प्रवेश करना। महाकवि कालिदासने 'रघुवंश' में रघुके विद्याभ्यासका वर्णन करते समय लिखा है :

लिपेर् यथावद् ग्रहणेन वाङ्मयं
नदी-मुखेनैव समुद्रम् आविशत्।। रघु० ३–२८

[जिस प्रकार नदीके मुखसे समुद्रमें प्रवेश करते हैं, अुसी प्रकार लिपिके यथावत् ग्रहणके द्वारा अुसने साहित्यमें प्रवेश किया।]

जिस परसे गुजरात विद्यापीठके द्वारा चलनेवाले गुजरात महाविद्यालयकी द्वैमासिक पत्रिका 'सावरमती' के लिअे जब ध्यानमंत्रकी आवश्यकता मालूम हुअी, तब श्री काकासाहबने 'नदीमुखेनैव समुद्रमाविशेत्' वचन दिया था। तबसे शायद अुनके मनमें यह खयाल दृढ़ हो गया होगा कि यही वचन कालिदासका मूल वचन है। मूलमें है 'आविशत्'=अुसने प्रवेश किया। अुस परसे काकासाहबने बना लिया: आविशेत्=प्रवेश करना चाहिये।

पृ० ७५ कालपुरुष: 'कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्धः' कहनेवाला गीताका विराट्-पुरुष।

'तत्रका परिदेवना': अुसमें शोक क्या? याद कीजिये:

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्त-मध्यानि भारत।
अव्यक्त-निधनान्येव तत्र का परिदेवना॥ गीता, २–२८

पृ० ७७ अुष्मपा: गरम गरम पीनेवाले, पितर। अन्न खाकर नहीं, अपितु केवल अुष्णता पीकर रहनेवाले पितर और देवता। गीतामें यह शब्द आया है। ११–१२

१५. गुर्जर-माता सावरमती

पृ० ७९ वनस्पति-अुपासक श्री शिवशंकर: प्रसिद्ध गुजराती लेखक और अनुवादक स्व० श्री चंद्रशंकर शुक्लके छोटे भाअी। आपने वनस्पतिका काफी गहरा अभ्यास किया है। हरिपुरा कांग्रेसके समय आपके अुत्साह और परिश्रमसे वनस्पति-प्रदर्शनका आयोजन किया गया था। आपने 'गुजरातनी लोकमाताओ' नामक गुजराती पुस्तक लिखी है।

पृ० ८० ब्राह्मणोंने तप किया है: कहते हैं कि शौनक, वसिष्ठ, वामदेव, गौतम, गालव, गांगेय, भरद्वाज, अुद्दालक, जमदग्नि, कश्यप, जड़भरत, भृगु, जाबालि आदि ८८ सहस्र ऋषियोंने सावरमतीके किनारे तपश्चर्या की थी।

पृ० ८१ 'वौठा' का मेला: प्रतिवर्ष कार्तिकी पूर्णिमाको गुजरातमें धोलका गांवके पास वौठामें यह मेला लगता है, जिसमें करीब लाख-डेढ़ लाख लोग अिकट्ठे होते हैं। यहां पर मेश्वो, माझम, वात्रक और शेढीसे

वनी हुअी वात्रक नदीका खारी, हाथमती और सावरसे वनी हुअी सावरमतीके साथ संगम होता है।

सावरमतीके पुराने नाम : भिन्न भिन्न युगोंमें सावरमती भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारी गयी है। सत्ययुगमें अुसको कृतवती, त्रेतामें मणि-कर्णिका और द्वापरमें विधुवती या चंदना या चंदनावती कहते थे। कलियुगमें अुसको साभ्रमती कहते हैं।

कश्यपगंगा : अेक कथा अिस प्रकार है :

किसी समय लगातार सात वार जब अकाल पड़ा, तव अृषियोंने कश्यपसे प्रार्थना की और अुसने शंकरजीकी आराधना की। शंकरजी साभ्रमती गंगाको लेकर अर्वुदारण्यमें आये, जहांसे अिसकी धारायें अरण्यमें होकर गुजरातकी ओर वहने लगीं। तब समुद्रने प्रकट होकर कश्यपसे प्रार्थना की : 'भगवन्, कुछ भी करके अिस नदीका पानी मेरे जलमें मिला दीजिये। क्योंकि अगत्स्य अृषिने मेरा सारा पानी पीकर लघुशंकाके रूपमें वह पानी मुझे वापस दिया, अिसलिअे वह अपवित्र हो गया है। अिस नदीके स्पर्शसे वह पावन हो जायगा।'

सावरमती दूसरी नदियोंके साथ समुद्रसे जा मिली और समुद्र पावन हुआ!

दूसरी कथा अिस प्रकार है कि पार्वतीके डरसे गंगा अिधर अुधर भटक रही थी — 'सा भ्रमति'। अुसे कश्यप अपनी जटाओंमें डालकर अर्वुदारण्यमें ले आये। यहां आनेके वाद अुन्होंने अपनी जटायें पछाड़ीं, अिसलिअे अुस गंगामें से सात प्रवाह वहने लगे। अुसका मुख्य प्रवाह सावरमती कहलाया और वाकीके छः प्रवाहोंसे वौठाके पास मिलनेवाली छः नदियां वनीं।

कश्यप अुसको ले आये, अतः वह कश्यपगंगा कहलायी।

पृ० ८२ दधीचिने तप किया : वृत्रासुर यज्ञकुंडमें से पैदा हुआ और क्षण-क्षणमें अितना वढ़ने लगा कि देखते ही देखते अुसने समग्र लोकको ढंक दिया। अिससे भयभीत होकर देवताओंने अुसके विरुद्ध अपने सारे दिव्य शस्त्रास्त्रोंका अुपयोग किया। किन्तु सव व्यर्थ गये। अिसलिअे अिंद्र-सहित सव देवता आदिपुरुष अंतर्यामीकी शरणमें गये।

अंतर्यामीने कहा, 'महर्षि दधीचिके पास तुम जाओ और विद्या, व्रत अेवं तपसे बलवान बने हुअे अुनके शरीरकी मांग करो। वे अिनकार नहीं करेंगे। फिर अुस शरीरकी हड्डियोंसे विश्वकर्मा तुम्हें अेक अुत्तम आयुध बनाकर देंगे। अुसीसे अिस वृत्रासुरका नाश हो सकेगा।'

साबरमती और चंद्रभागाके संगमके पास दधीचि ऋषि तप करते थे। वहां जाकर देवताओंने अुनसे अुनके शरीरकी मांग की। तब अुन्होंने जवाब दिया :

"हे देवो, जो पुरुष अवश्य नाश होनेवाले अपने शरीरसे प्राणियों पर दया करके धर्म तथा यशको प्राप्त करना नहीं चाहता, वह स्थावर प्राणियों द्वारा भी शोक करने योग्य है। दूसरे प्राणियोंके दुःखसे दुःखी होना और दूसरे प्राणियोंके आनन्दसे आनन्द मनाना, यही धर्म अविनाशी है। . . . अिसलिअे मैं अपने क्षणभंगुर तथा कौवे-कुत्तोंके भक्ष्यरूप शरीरको छोड़ता हूं। आप अुसे ग्रहण करें।"

यह निश्चय करके ऋषिने परब्रह्मके साथ आत्माको अेकाग्र किया और शरीरका त्याग किया।

अिसके बाद देवताओंने कामधेनुको बुलाया। वह ऋषिके शरीरको चाटने लगी। चाटते चाटते केवल हड्डियां रह गअीं। अिन हड्डियोंका वज्र बनाकर विश्वकर्माने अिन्द्रको दिया, जिसके द्वारा अिन्द्रने वृत्रासुरका नाश किया।

दधीचि ऋषिने जहां देहार्पण किया था, वहां कामधेनुका दूध गिरा था। अतः वहां दूधेश्वर महादेवजीकी स्थापना हुअी।

खादीकी प्रवृत्ति : गांधीजीने स्वदेशी तथा खादीका प्रचार शुरू किया, अिसलिअे आश्रममें खादी-अुत्पादनका काम भी शुरू हुआ। आज भी यह प्रवृत्ति वहां चल रही है।

खेती और गोशाला : खेतीकी और गायोंकी नस्ल सुधारनेकी प्रवृत्ति आश्रममें शुरू हुअी थी। गोशाला तथा खेतीकी प्रवृत्ति विविध प्रयोगोंकी दृष्टिसे अब भी वहां चल रही है।

राष्ट्रीय शाला : आश्रमकी शाला। अिसमें श्री काकासाहब, नरहरि परीख, किशोरलाल मशरूवाला, विनोबा आदि शिक्षाके

प्रयोग करते थे। अिन प्रयोगोंकी बुनियाद पर ही बादमें गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुअी।

आज 'बुनियादी तालीम' के नामसे पहचानी जानेवाली गांधीजीकी शिक्षा-पद्धतिकी नींव भी अिसी प्रवृत्तिको कह सकते हैं।

राष्ट्रीय त्यौहार : देखिये 'नवजीवन' द्वारा प्रकाशित श्री काकासाहबकी 'जीवनका काव्य' नामक पुस्तक।

लोक-संगीत तथा शास्त्रीय संगीत : आश्रमवासी पंडित नारायण मोरेश्वर खरे संगीतशास्त्री थे। अुन्होंने गुजरातके कुछ लोकगीतोंकी स्वरलिपि तैयार करके 'लोक-संगीत' नामक पुस्तक लिखी थी। शास्त्रीय संगीतके प्रचारके लिअे अुन्होंने 'राष्ट्रीय संगीत मंडल' की भी स्थापना की थी। अहमदाबाद कांग्रेसके समय 'अखिल भारत संगीत परिषद्' का अधिवेशन भी यहीं हुआ था। अुसमें गांधीजीकी प्रेरणा तथा पंडित खरेके प्रयत्न मुख्य थे।

'नवजीवन' तथा 'यंग अिण्डिया' : सन् १९१९ में जब गांधीजीने रौलेट बिलके विरुद्ध आंदोलन चलाया, तब अुन्हें अपने विचारोंके प्रचारके लिअे अखबारोंकी आवश्यकता महसूस होने लगी। श्री अिन्दुलाल याज्ञिक तथा अुनके मित्र गुजरातीमें 'नवजीवन अने सत्य' नामक मासिक चला रहे थे और अुसके द्वारा 'होमरूल' का प्रचार करते थे। गांधीजीने यही पत्र अपने हाथमें ले लिया और अुसको साप्ताहिक बनाकर 'नव-जीवन' के नामसे चलाया। यह पत्र गुजरातीमें चलता था।

फिर, सारे देशमें प्रचार करनेके लिअे अेक अंग्रेजी अखबारकी आवश्यकता महसूस होने लगी। श्री शंकरलाल बैंकर, जमनादास द्वारकादास आदि 'यंग अिण्डिया' नामक अेक अखबार चलाते थे। गांधीजीने अिस पत्रको भी अपने हाथमें ले लिया।

दोनों साप्ताहिक सन् १९३३ तक चले। फिर हरिजन-प्रवृत्तिको चलानेके लिअे गांधीजीने जेलसे पत्र शुरू किये, जिनके नाम थे : 'हरिजन' (अंग्रेजी), 'हरिजनबन्धु' (गुजराती) और 'हरिजनसेवक' (हिन्दुस्तानी)। सन् ४२ से ४५ तकका काल यदि छोड़ दें, तो ये अखबार गांधीजीकी मृत्यु तक अुनके विचारोंके वाहन रहे।

गांधीजीकी मृत्युके बाद ये साप्ताहिक स्व० श्री किशोरलाल मशरूवालाने चलाये। अुनकी मृत्युके बाद श्री मगनभाअी देसाअी अुनके सम्पादक रहे। १९५६ के मार्चसे वे हमेशाके लिअे बंद कर दिये गये।

सत्याग्रह : चंपारन, खेड़ा, नागपुर, बोरसद, बारडोली आदि।

मिल-मालिकोंके साथका मजदूरोंका झगड़ा : यह झगड़ा सन् १९१८ में अहमदाबादके मिल-मालिक तथा मजदूरोंके बीच हुआ था। मजदूरोंका पक्ष न्यायका था, अिसलिअे गांधीजीने अुनका पक्ष लिया था। विशेष जानकारीके लिअे देखिये नवजीवन द्वारा प्रकाशित श्री महादेवभाअी देसाअीकी हिन्दी पुस्तक 'अेक धर्मयुद्ध'।

दांडीकूच : लाहौर कांग्रेसमें 'पूर्ण स्वराज्य' का प्रस्ताव पास होनेके बाद अुसको अमलमें लानेके लिअे गांधीजीने नमकका कानून तोड़नेका निश्चय किया था। भारतके स्वातंत्र्य-संग्रामके अितिहासका यह अेक अुज्ज्वल प्रकरण है।

कूचके लिअे अपने ७९ साथियोंके साथ जब गांधीजी सत्याग्रहाश्रम साबरमतीसे निकले, तब अुन्होंने प्रतिज्ञा ली थी कि 'जब तक स्वराज्य नहीं मिलेगा, मैं आश्रममें वापस नहीं लौटूंगा।' अिस कूचने सारे देशमें बिजलीकी गतिसे नवजीवन और नअी शक्तिका संचार किया था।

गांधीजीके वर्धा और सेवाग्राम जानेका यह भी अेक कारण था।

पृ० ८३ जलियांवाला बाग : रौलेट अेक्टके खिलाफ गांधीजीने जब आन्दोलन छेड़ा, तब अुन्होंने ६ अप्रैल, १९१९ के दिन सारे देशमें हड़ताल करने और अुपवास करनेका आदेश दिया था। सारे देशने अुसका अपूर्व अुत्साहके साथ पालन भी किया था। किन्तु तीन दिनके बाद, १० अप्रैल १९१९ के रोज, अमृतसरके डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटने वहांके कांग्रेसी नेता डॉ० किचलू और सत्यपालजीको गिरफ्तार करके किसी अज्ञात स्थान पर भेज दिया। अिससे शहरमें हुल्लड़ हुआ और शहरको फौजके हाथमें सौंप दिया गया। पंजाबमें अन्यत्र भी अैसी ही घटनायें घटीं, जिनमें जानमालको बड़ी हानि पहुंची। अिसके सिवा

गांधीजीकी गिरफ्तारीके कारण देशके अन्य भागोंमें भी हुल्लड़ हुअे, परन्तु वहां शांति हो गअी। १३ अप्रैल हिन्दुओंका वर्षारंभका दिन था। अुस दिन अमृतसरके जलियांवाला बागमें आम सभा होनेकी घोषणा की गअी थी। यह जगह अैसी थी जिसके चारों ओर मकान ही मकान थे और बागके अन्दर जानेके लिअे केवल अेक ही संकरा रास्ता था। वहां शामके समय वीस हजार स्त्री, पुरुष और बच्चे अिकट्ठे हुअे थे। अितनेमें जनरल डायर १०० देशी और ५० विदेशी फौजी सिपाहियोंको लेकर आया और दो-तीन मिनटके अंदर ही अुसने गोली चलानेका हुक्म दिया। स्वयं डायरके कथनके अनुसार १६०० गोलियां छोड़ी गअी थीं और जब गोलियां खतम हो गअीं तभी गोलियां चलाना बंद किया गया था। करीब ४०० लोग मारे गये और दो हजार घायल हुअे थे।

गुजरात विद्यापीठ : १९२० में जब असहयोगका आंदोलन शुरू हुआ, तब गांधीजीने देशके विद्यार्थियोंको सरकारी स्कूल-कॉलेज छोड़नेका आदेश दिया था। अिस आदेशका पालन करके जिन विद्यार्थियोंने सरकारी शिक्षण-संस्थाओंका बहिष्कार कर दिया, अुनमें से कुछ विद्यार्थी रचनात्मक कार्योंमें लग गये। किन्तु बाकी विद्यार्थियोंके लिअे शिक्षाका स्वतंत्र प्रबंध करना आवश्यक था। अिनके लिअे देशभरमें राष्ट्रीय संस्थायें स्थापित हुअीं — जैसे बिहारमें बिहार विद्यापीठ, काशीमें काशी विद्यापीठ, पूनामें तिलक विद्यापीठ वगैरा। गुजरातके गुजरात विद्यापीठका भी अिसीमें समावेश होता है। अिसकी स्थापना १९२० में हुअी थी। अिसके शिक्षकों और विद्यार्थियोंने गुजरातके सार्वजनिक जीवनमें तथा साहित्यिक और सांस्कृतिक प्रवृत्तियोंमें बड़े महत्त्वका भाग लिया है। आज भी यह संस्था शिक्षा और साहित्य-प्रकाशनका कार्य कर रही है।

१६. अुभयान्वयी नर्मदा

पृ० ८४ **अुभयान्वयी :** भारतके दक्षिण और अुत्तरके दोनों विभागोंको जोड़नेवाली।

अमरकंटक तालाव: विलासपुरके पासके मेखल, मेकल या माञिकाल पर्वतका अेक हिस्सा अमरकंटकके नामसे मशहूर है। अुसकी तलहटीमें जो तालाब है अुसको भी अमरकंटक ही कहते हैं। यहींसे नर्मदा और शोणका अुद्गम हुआ है। अिसी परसे नर्मदाको मेकल-कन्यका भी कहते हैं। अमरकंटक श्राद्धके लिअे अुत्तम स्थान माना जाता है।

पृ० ८५ विन्ध्य : मशहूर पर्वतश्रेणी। अगस्ति ॠषि अिसीको पार करके दक्षिणकी ओर जाकर बसे थे। अिसके अूपर विन्ध्यवासिनीका प्रख्यात मंदिर है। अिसके थोड़े आगे अष्टभुजा योगमायाका मंदिर है, जो शक्तिका पीठ माना जाता है।

सातपुड़ा : नर्मदा और ताप्तीके बीच सात पुड़ों (folds) की पर्वतश्रेणी। ताप्ती यहींसे निकलती है।

भृगुकच्छ : आजकलका भड़ौंच। कच्छ = नदी या समुद्रका किनारा।

पृ० ८६ आदिम निवासी : अिस प्रदेशके मूल निवासी भील आदि लोग, जो आज भी गरीबी और अज्ञानमें डूबे हुअे हैं।

पृ० ८७ सबिन्दु सिन्धु ० ये नर्मदाष्टककी पंक्तियां हैं। यह आद्य शंकराचार्यका लिखा माना जाता है। अिसका प्रारंभ अिस प्रकार है:

सबिन्दु–सिन्धु–स्खलत्–तरंग–भंग–रंजितम्
द्विषत्सु पापजातजातकारिवारि–संयुतम्।
कृतान्तदूत–काल–भूत–भीतिहारि–वर्मदे
त्वदीय पाद-पंकजं नमामि देवि नर्मदे॥

पृ० ८८ गतं तदैव ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है:

गतं तदैव मे भयं त्वदम्बु वीक्षितं यदा
मृकुण्डसूनुशौनकासुरारिसेवि सर्वदा।
पुनर्भवाब्धिजन्मजं भवाब्धिदुःखवर्मदे
त्वदीय पाद-पंकजं नमामि देवि नर्मदे॥ ४॥

पंचगौड़: सरस्वतीके किनारेका प्रदेश, कन्नौज, अुत्कल, मिथिला और गौड़ — यानी बंगालसे लेकर भुवनेश्वर तकका प्रदेश। विन्ध्यके

अुत्तरमें स्थित अिन पांच प्रदेशोंमें रहनेवाले ब्राह्मण। अुन प्रदेशों परसे वे अनुक्रमसे सारस्वत, कान्यकुब्ज, अुत्कल, मैथिल और गौड़ कहलाते हैं।

पंचद्रविड़ : विन्ध्याचलके दक्षिणमें रहनेवाले पांच जातिके ब्राह्मण: महाराष्ट्र, तैलंग, कर्णाट, गुर्जर और द्रविड़।

विक्रम संवत् : विक्रमादित्यके नामसे चलनेवाला संवत्। यह अीस्वी सन्से ५६ साल पूर्व शुरू हुआ था।

शालिवाहन शक : शालि = सिंह। सिंह जिसका वाहन है वह। दंतकथा अैसी है कि अिस नामका अेक मशहूर राजा बचपनमें सिंहके आकारके अेक यक्षका वाहन बनाकर सर्वत्र घूमता था। अिसीलिअे वह शालिवाहन कहलाया। अुसके नामसे चलनेवाली वर्षगणनाको 'शक' कहते हैं। अिसके अनुसार वर्षका आरंभ चैत्र माससे शुरू होता है। विक्रम संवत्से वह १३४–३५ वर्ष और अीस्वी सन्से ७८ वर्ष पीछे है। भारत-सरकारने अब अिसको अपनाया है।

पृ० ९० कबीरवड़ : भड़ौचके पूर्वमें शुक्लतीर्थके पास नर्मदाके प्रवाहके बीचमें अेक टापू है, वहां यह प्रसिद्ध वड़ है। कहते हैं कि कबीरने दातुन करके जो टुकड़ा फेंक दिया था अुससे यह वटवृक्ष पैदा हुआ।

१७. संध्यारस

पृ० ९३ रसवती पृथ्वी और निःशब्द आकाश : यहां जान-बूझकर न्यायशास्त्रकी व्याख्या तोड़ दी गयी है। मूल व्याख्या है: 'गंधवती पृथ्वी' और 'शब्दगुणम् आकाशम्।'

वनेचर : संस्कृतमें 'वनचर' कहते हैं जंगलमें रहने-घूमनेवाले जंगली पशुओंको और 'वनेचर' कहते हैं जंगलमें रहने-घूमनेवाले मनुष्योंको। यह भेद यहां कायम रखा गया है।

सुर-असुरोंके गुरु : बृहस्पति और शुक्राचार्य — यहां आकाशके गुरु और शुक्र नामक ग्रह।

१८. रेणुका का शाप

पृ० ९५ अंतःस्रोता : [अन्तः (अंदर) + स्रोता (प्रवाहवाली)] जिसका प्रवाह भूमिके अंदर है अैसी नदी।

राणकदेवीका शाप : अेक लोककथा कहती है कि गुजरातके राजा सिद्धराज जयसिंहने सोरठ पर चढ़ाअी की और जूनागढ़को घेर लिया। वहांके राणा रा' खेंगारके भानजे ही विपक्षीसे जा मिले। परिणामस्वरूप जूनागढ़का पतन हुआ, खेंगार परास्त हुआ और मारा गया। सिद्धराजने अुसकी रानी राणकदेवी पर अधिकार कर लिया। रानीको लेकर वह पाटण जा रहा था। बीचमें वढवाणके पास रानी सती हो गअी। अितिहासमें अिसके लिअे कोअी समर्थन नहीं है। सिद्धराजने खेंगारको हरा कर कैद कर लिया था, अितना तो निश्चित कहा जा सकता है। यह संभव है कि बादमें अुसने सिद्धराजकी सत्ता स्वीकार की हो, अिसलिअे सिद्धराजने अुसे छोड़ दिया हो और सोरठकी ओर आते समय वढवाणके पास किसी कारणसे अुसकी मौत हो गअी हो और वहां अुसकी रानी सती हुअी हो।

यहां 'राणक' का अर्थ रेणुका नहीं है। 'गयाकी फल्गु' नामक प्रकरणमें 'सीताका शाप' और 'सिकताका शाप' से अिसकी तुलना कीजिये।

योमा : ब्रह्मी भाषामें पहाड़को 'योमा' कहते हैं। जैसे, आराकान योमा, पेगु योमा।

अलस-लुलित : [अलस (आलस्यसे भरा हुआ) + लुलित (थका हुआ) जब 'ललित' पाठ हो तब 'सुन्दर'] धीर गतिसे और थकी-मांदी चालसे चलनेवाली। यह शब्द 'अुत्तररामचरित' के अंक १, श्लोक २४ में आता है:

अलस–लुलित–मुग्धानि अध्व-संजात-खेदात्
अशिथिल–परिरंभैर् दत्त-संवाहनानि।
परिमृदित–मृणाली–दुर्बलानि अंगकानि
त्वम् अुरसि मम कृत्वा यत्र निद्राम् अवाप्ता।।

अन्त्यजोंका शाप लेकर: अुन्हें पानीकी सुविधा न देकर।

पृ० ९६ खंडिता: काव्यशास्त्रमें बताअी गयी मुख्य आठ नायिकाओंमें से अेक। 'अीर्ष्याकषायिता'—अीर्ष्यासे भरी हुअी स्त्री।

यहां खंडिताका यह अर्थ भी है: जिसका प्रवाह खंडित हुआ हो।

१९. अंबा-अंबिका

पृ० ९७ अंबा-अंबिका: महाभारतमें यह कथा है: भीष्म किसी समय काशीराजकी कन्याओंके स्वयंवरमें से अुसकी तीनों पुत्रियोंका — अंबा, अंबिका और अंबालिकाका अपहरण कर लाये। अिसके लिअे जो युद्ध हुआ अुसमें अुन्होंने शाल्वराजको परास्त किया। किन्तु जब कन्याओंका राजा विचित्रवीर्यके साथ विवाह करनेकी बात निकली, तब अिन कन्याओंमें से केवल अेकने — बड़ी कन्या अंबाने — कहा, 'मैं तो मनसे शाल्वराजसे विवाह कर चुकी हूं।' अतः अुसे शाल्वराजके यहां भेज दिया गया। किन्तु शाल्वने अुसे स्वीकार नहीं किया, अिसलिअे अुसने भीष्मके गुरु परशुरामकी शरण ली। किन्तु गुरुके कहने पर भी भीष्म अंबाको स्वीकार करनेके लिअे तैयार नहीं हुअे। अिससे गुरु-शिष्यके बीच दारुण युद्ध छिड़ा, जिसमें गुरु परास्त हुअे और अंबाने वनमें जाकर भीष्मवधके संकल्पसे तपस्या करके अग्नि-प्रवेश किया और शरीर छोड़ा। वही बादमें द्रुपद राजाके यहां शिखंडीके रूपमें पैदा हुअी और भीष्मवधका कारण बनी।

यहां लेखकने पौराणिक कथामें मनमाना फेरफार किया है।

राजा कर्णके दो आंसू: गुजरातके वाघेला वंशका आखिरी राजपूत राजा कर्णदेव अत्यंत क्रोधी और विलासी था। अुसने अपने मंत्री माधवके भाअी केशवको मरवा कर अुसकी पत्नीको अपने अंतःपुरमें रख लिया था। अपमान और अत्याचारसे क्रुद्ध होकर माधवने दिल्ली जाकर अलाअुद्दीनको गुजरात पर चढ़ाअी करनेके लिअे प्रेरित किया। अुसने अपने दो सरदारोंको गुजरात पर चढ़ाअी करनेके लिअे भेजा। अुन्होंने गुजरातको जीता, राजधानी पाटणको लूटा और राजा कर्णकी रानियों और बच्चोंको पकड़ कर दिल्ली पहुंचा दिया। कर्ण देवगढ़के

राजाके आश्रयमें गया। कहते हैं कि अुसने अपने अंतिम दिन अज्ञात-वासमें, आबूके जंगलोंमें अिन नदियोंके आसपासके प्रदेशमें, भटककर शोक-विह्वल दशामें विताये थे। यहां अुसीका सूचन है।

गुजराती भाषाका पहला अुपन्यास सन् १८६७ में अिसी वृत्तांतके आधार पर लिखा गया था।

२०. लावण्यफला लूनी

पृ० ९८ लावण्यफला: लवण = नमक; लवण-प्रधान, लवण-समृद्ध होनेसे यह नाम दिया गया है।

२१. अुंचळ्ळीका प्रपात

पृ० १०० 'नागमोड़ी': यह मराठी शब्द है। अर्थ है नागकी तरह टेढ़ामेढ़ा, सर्प-सदृश।

पृ० १०१ 'कोयता': हंसिया।

पृ० १०२ घनघोर: [घन = गाढ़ा + घोर = भयावना] गाढ़ा और भयावना।

पृ० १०४ अितने शुभ्र पानीमें: नदीके नाम परसे यह सूझा है।

पदक्रम: तुलना कीजिये:

भयो त्रिविक्रम, कियो पदक्रम
अेक मही पर, वीजेको अंबर, वैजुके प्रभु
त्रीजेको सिर पर।

जीवनावतार: पानीका नीचे अुतरना।

पृ० १०५ कटक: संस्कृतमें 'कटक' का अर्थ है कंकण। अिस परसे आभूषण, गहनेका अर्थ करके श्लेप बनाया गया है।

सोनेके ढक्कनसे: तुलना कीजिये:

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्। अीशावास्य, १५

अिस जगतको.... ढंकना ही चाहिये: मूल मंत्र अिस प्रकार है:

अीशावास्यम् अिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

हरी नीलिमा : नीलका अर्थ काला, आसमानी, हरा, चमकीला आदि किया जाता है। यहांकी नीलिमा हरे रंगकी थी। अंजीर या मखमलमें जिस प्रकार दो रंगोंकी छटायें दिखाअी देती हैं, अुसी तरहकी छटायें पानीमें भी कअी बार दिखाअी देती हैं—अैसा भी यहां सूचन है।

पृ० १०६ युयोधि अस्मत्० यह अीशावास्य अुपनिषद्का अंतिम मंत्र है।

२२. गोकर्णकी यात्रा

पृ० १०८ कपिलाषष्ठी : भादों वदी छठ, हस्त नक्षत्र, व्यतिपात और मंगलवार—अिनके योगका दिन। यह अेक दुर्लभ दिन है, जो हर ६० सालके बाद आता है।

पृ० ११० कृतार्थ कर दिया : नहला दिया।

२३. भरतकी आंखोंसे

पृ० ११७ अद्य मे सफला० आज मेरी यात्रा सफल हुअी। मैं पानीके प्रसादसे धन्य हुआ। मूलमें 'त्वत् प्रसादतः' था, जो यहां बदल दिया गया है।

पृ० ११८ श्री रामचंद्रजीके प्रबंधक : रामके बदले भरत अयोध्याका राज्य संभालते थे असलिअे। 'भरणात् भरतः'।

२४. वेळगंगा—सीताका स्नान-स्थान

पृ० ११९ वेरूळग्रामका हरा कुंड : अंग्रेजीमें वेरूळको 'अिलोरा' कहते हैं। अिसलिअे वह अिसी नामसे अधिक प्रख्यात है। यह गांव शिवाजीके पुरखोंका है। यहां अेक सुन्दर कुंड है। अिस कुंडके विषयमें अैसी दंतकथा प्रचलित है कि अिलिचपुरके येलु नामक राजाको कोअी अैसा रोग हुआ था, जिसके कारण अुसके शरीरमें कीड़े पड़ गये थे। कअी अुपाय किये गये, किन्तु सब व्यर्थ गयें। रोग वैसा ही रहा। अंतमें अुसे अिस कुंडके बारेमें आकाशवाणी सुनायी दी : "तुम जाकर अुस तीर्थमें स्नान करो। तुम्हारा शरीर अच्छा हो जायगा।"

राजाने स्नान किया और अुसका रोग मिट गया!

कहते हैं कि अुसी राजाने बादमें वेरूळकी गुफायें खुदवानेका काम शुरू किया। जाड़ोंमें हरी काओीके कारण कुंडका पानी भी हरा मालूम होता है। कुंडके चारों ओर सुन्दर सीढ़ियां बनी हुअी हैं।

पृ० १२० प्राकृतिक सौंदर्यके प्रति सीताका पक्षपात: सीताको राजमहलमें रखकर राम जब वनवास जानेकी बातें करते हैं, तब सीताजी भी वनमें जानेके लिअे और वहांके कष्ट सहनेके लिअे तैयार हो जाती हैं। वे कहती हैं:

फलमूलाशना नित्यं भविष्यामि न संशयः।
न ते दुःखं करिष्यामि निवसन्ती त्वया सह ।।१६।।
अग्रतस्ते गमिष्यामि भोक्ष्ये भुक्तवति त्वयि।
अिच्छामि परतः शैलान्पल्वलानि सरांसि च ।।१७।।
द्रष्टुं सर्वत्र निर्भीता त्वया नाथेन धीमता।
हंसकारण्डवाकीर्णाः पद्मिनीः साधुपुष्पिताः ।।१८।।
अिच्छेयं सुखिनी द्रष्टुं त्वया वीरेण संगता।
अभिषेकं करिष्यामि तासु नित्यमनुव्रता ।।१९।।
सह त्वया विशालाक्ष रंस्ये परमनंदिनी।
अेवं वर्षसहस्राणि शतं वापि त्वया सह ।।२०।।

अयोध्याकांड — २७: १६–२०

[मैं हमेशा फलमूल खाकर ही रहूंगी। आपके साथमें रहकर मैं आपको कभी कष्ट नहीं दूंगी। मैं आपके आगे-आगे चलूंगी और आपके खानेके बाद ही खाअूंगी। आपके साथ निर्भयतासे सर्वत्र घूमकर पर्वत, सर और सरोवरोंको देखनेकी मेरी बड़ी अिच्छा है। आपके साथ रहकर हंस और कारंडवोंसे भरे हुअे सुन्दर पुष्पोंवाले सरोवर देखनेकी और आनंद मनानेकी मेरी अिच्छा है। अुन पद्मपूर्ण सरोवरोंमें मैं स्नान करूंगी और आपके साथ अुनमें रोज खेलूंगी। अिस तरहके सैकड़ों नहीं, बल्कि हजारों वर्ष भी मुझे आपके साथ क्षणके समान मालूम होंगे।]

'अुत्तररामचरित' में चित्र-दर्शनके बाद सीता अपना दोहद कहती हैं: 'मन करता है कि प्रसन्न और गंभीर वनराजियोंमें विहार

करूं और जिसका जल पावनकारी, आनंददायक और शीतल है अुस भगवती भागीरथीमें स्नान करूं।'

दूसरे अंकमें राम जनस्थान आदि प्रदेशोंको देखकर कहते हैं: 'सचमुच वैदेहीको वन पसन्द थे। ये वे ही अरण्य हैं! अिससे अधिक भयानक और क्या होगा?'

तीसरे अंकमें भी सीताके पाले हुअे हाथी, मोर, कदंब और हिरनोंका वर्णन आता है। देखिये:

सीतादेव्या स्वकर-कलितैः सल्लकीपल्लवाग्रैर्–
अग्रे लोलः करि-कलभको यः पुरा वर्धितोऽभूत्।
वध्वा सार्धं पयसि विहरन्सोऽयमन्येन दर्पाद्
अुद्दामेन द्विरदपतिना संनिपत्याभियुक्तः॥ ६॥

अनुदिवसम् अवर्धयत् प्रिया ते
यमचिरनिर्गतमुग्धलोलबर्हम्।
मणिमुकुट अिवोच्छिखः कदम्बे
नदति स अेप वधूसखः शिखण्डी॥१८॥

भ्रमिपु कृतपुटान्तर्मण्डलावृत्तिचक्षुः
प्रचलित-चटुल-भ्रू-ताण्डवैर्मण्डयन्त्या।
कर-किसलय-तालैर्मुग्धया नर्त्यमानं
सुतमिव मनसा त्वां वत्सलेन स्मरामि॥१९॥

कतिपयकुसुमोद्गमः कदम्बः
प्रियतमया परिवर्धितो य आसीत्।
स्मरति गिरिमयूर अेप देव्याः
स्वजन अिवात्र यतः प्रमोदमेति॥२०॥

नीरन्ध्र-बाल-कदली-वन-मध्यवर्ति
कान्तासखस्य शयनीय-शिलातलं ते।
अत्र स्थिता तृणमदाद् बहुशो यदेभ्यः
सीता ततो हरिणकैर् न विमुच्यते स्म॥२१॥

करकमल-वितीर्णैर् अम्बु-नीवार-शष्पैस्
तरु-शकुनि-कुरंगान् मैथिली यान् अपुष्यत्।
भवति मम विकारस् तेषु दृष्टेषु कोऽपि।
द्रव अिव हृदयस्य प्रस्तरोद्भेदयोग्यः ॥२५॥

सुवर्णमय बना देती है: फसलकी समृद्धि और अुसका पीला रंग, दोनोंका यहां सूचन है।

पृ० १२२. जीवनमय: 'जीवन' का अर्थ पानी भी होता है।

पृ० १२३ रामरक्षा-स्तोत्र: बुध कौशिक ऋषि द्वारा रचित अत्यंत मनोहर और लोकप्रिय स्तोत्र।

शिरो मे राघवः पातु, भालं दशरथात्मजः ॥४॥
कौसल्येयो दृशौ पातु, विश्वामित्रप्रियः श्रुती ।
घ्राणं पातु मखत्राता, मुखं सौमित्रिवत्सलः ॥५॥
जिह्वां विद्यानिधिः पातु, कंठं भरतवन्दितः ।
स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु, भुजौ भग्नेशकार्मुकः ॥६॥
करौ सीतापतिः पातु, हृदयं जामदग्न्यजित् ।
मध्यं पातु खरध्वंसी, नाभिं जाम्बवदाश्रयः ॥७॥
सुग्रीवेशः कटिं पातु, सक्थिनी हनुमत्प्रभुः ।
अूरू रघूत्तमः पातु, रक्षःकुल-विनाशकृत् ॥८॥
जानुनी सेतुकृत् पातु, जङ्घे दशमुखान्तकः ।
पादौ विभीषणश्रीदः, पातु रामोऽखिलं वपुः ॥९॥

२५. कृपक नदी घटप्रभा

पृ० १२४ हमारी ओरके: दक्षिण महाराष्ट्रको छूनेवाले।
बालकोंका: किसानोंका।

२६. कश्मीरकी दूधगंगा

सरोवरको तोड़कर: "आज जहां कश्मीरका रमणीय प्रदेश है, वहीं पुराणकालमें सतीसर नामक अेक सुदीर्घ सरोवर था, जो हरमुख पर्वत और पीरपुंजालके बीच फैला हुआ था। स्वयं पार्वती अिस सरोवरमें विहार करती थी। किन्तु बादमें अुसमें कअी राक्षस आ

घुसे। अिसलिअे देवताओंने सतीसरका नाश करनेकी बात सोची। भगवान कश्यपने वराहकी अुपासना की। वराहने संतुष्ट होकर अपने हंसियेसे पहाड़में घाटी बना दी और सतीसरका पानी 'वराहमूलम्' की घाटीमें से वितस्ता नदीके रूपमें बहने लगा। वितस्ता ही झेलम है और 'वराहमूलम्' आजका बारामुल्ला है।"

—लेखककी गुजराती पुस्तक 'जीवननो आनंद' में से।

अुपत्यका: घाटी। (अिसी प्रकार अधित्यका का अर्थ है अुच्च प्रदेश — **tableland**।)

पृ० १२५ सती-कन्या: सतीके प्रदेशमें पैदा हुअी अिसलिअे।

२७. स्वर्धुनी वितस्ता

पृ० १२६. 'संसारमें अगर ... यहीं है': मूल फारसी पंक्तियां अिस प्रकार हैं:

अगर फिरदौस वर्रूअे जमीनस्त,
हमीनस्तो, हमीनस्तो, हमीनस्त।

पृ० १२७ अुसके किनारे अेक बड़ी वैभवशाली संस्कृति . . . हुआ: अनंतपुरके समीप अेक पहाड़ीके नीचे अेक प्राचीन शहरके अवशेष दवे हुअे थे, जो अभी अभी खोदे गये हैं।

चिनार: ये महावृक्ष सिर्फ कश्मीरमें ही होते हैं।

बुतशिकन: [बुत = मूर्ति + शिकन = तोड़नेवाला] मूर्तिभंजक।

गाजी: धर्मके लिअे युद्ध करनेवाला मुसलमान। यह शब्द अरवी है।

पृ० १२८ सर्वतः संप्लुतोदके: चारों ओर पानीकी बाढ़ आयी हो तव। गीता, २–४६

सूअरके दांतके जैसा: मालूम होता है 'वराहमूलम्' परसे यह अुपमा सूझी है।

पृ० १२९ निर्माल्य: देवताको चढ़ानेके बाद जो फेंक दिये जाते हैं।

पृ० १३० स्वर्धुनी: [स्वर् = स्वर्ग + धुनी = नदी] स्वर्गकी नदी।

२८. सेवाव्रता रावी

पृ० १३१ **स्वामी रामतीर्थ:** आधुनिक भारतके निर्माणमें स्वामी रामतीर्थका महत्त्वका हाथ है। श्री काकासाहबने मराठीमें स्वामीजीकी जीवनी लिखी थी तथा अुनके कुछ लेखोंका अनुवाद करके मराठीमें अेक संग्रह प्रकाशित किया था। यह अुनकी पहली साहित्य-कृति थी। अिसीसे काकासाहबके लेखक-जीवनका आजसे तीस वर्ष पहले आरंभ हुआ था।

अर्जुनदेव: (१५६३–१६०६) सिखोंके पांचवें गुरु। आदिग्रंथके रचयिता। अिसमें अुन्होंने पहलेके गुरुओंकी और अन्य संतोंकी वाणी संगृहीत की है। कहते हैं कि अुनके दुश्मनोंने अकबर बादशाहके पास जाकर अुनके खिलाफ शिकायत की थी कि अर्जुनदेवने अिस ग्रंथमें हिन्दूधर्म तथा अिस्लामकी निन्दा की है। किन्तु अकबरने अुनका ग्रंथ देखकर अुनको छोड़ दिया और अुनका बड़ा सम्मान किया। जहांगीरके समयमें अुनके दुश्मनोंने फिरसे शिकायत की। जहांगीर अपने लड़के खुसरोको कैद करना चाहता था। खुसरो भागता हुआ अर्जुन-देवके पास आश्रय मांगने आया। अर्जुनदेवने अुसको आश्रय दिया। बादशाहने अिसको राजद्रोह मानकर अुन पर दो लाख रुपयोंका जुर्माना किया। अर्जुनदेवने न खुद जुर्माना दिया, न दूसरोंको देने दिया। अिसलिअे बादशाहने जेलमें अुन पर बहुत अत्याचार करवाये और आखिर अुनकी हत्या करवा डाली। यों मानकर कि तलवारके बिना अपना पंथ कायम रहना असंभव है, अुन्होंने अपने पुत्रको सशस्त्र बन कर गद्दी पर बैठनेका और पर्याप्त फौज रखनेका आदेश भेज दिया था। अिससे सिखोंके अितिहासको नयी ही दिशा प्राप्त हुअी।

रणजितसिंह: (१७८०–१८३९): सिखोंके राजा। अहमदशाह अब्दालीके बाद पंजाबका सूबा फिरसे सिखोंके हाथमें आया था। किन्तु अुसके छोटे-छोटे टुकड़े हो गये और वे आपसमें लड़ने लगे। रणजित-सिंह तेरह सालकी अुम्रमें गद्दी पर बैठे। और १९ सालकी अुम्रमें अुन्होंने सिखोंके सभी राज्योंका आधिपत्य अपने हाथमें ले लिया।

अंग्रेज भी अुनसे डरते थे। जब सन् १८२३ में अुन्होंने पेशावर प्रांत जीत लिया, तब अुसे वापस दिलवानेके लिअे दोस्त महंमदने अंग्रेजोंसे बहुत कहा। किन्तु अंग्रेजोंने कुछ भी नहीं किया। ४० साल तक सतत परिश्रम करके रणजितसिंहने सिखोंमें फौजी ताकत पैदा की। कहते हैं कि जब वे अटक नदीको पार करना चाहते थे, तब अुनके गुरुने अुनसे कहा कि हिन्दुओंको अटक पार करनेकी आज्ञा नहीं है। अुन्होंने जबाबमें कहा:

सबै भूमि गोपालकी, तामें अटक कहां?
जाके मनमें अटक है, वो ही अटक रहा।

और सारा अफगानिस्तान जीत लिया।

पृ० १३३ अप्सरा: [अप् = पानी + सृ = आगे जाना = पानीमें तैरनेवाली, विहार करनेवाली।] गंधर्वोंकी स्त्री। अप्सराओंको पानीमें खेलना बहुत पसन्द है, अिसलिअे अुनको यह नाम दिया गया है। रामायणमें अुनकी अुत्पत्तिके बारेमें अिस प्रकार लिखा है:

अप्सु निर्मथनाद् अेव रसात् तस्माद् वरस्त्रियः।
अुत्पेतुर्मनुजश्रेष्ठ! तस्माद् अप्सरसोऽभवन्॥

परोपकाराय० यह शरीर परोपकारके लिअे है।

२९. स्तन्यदायिनी चिनाब

पृ० १३५ मेरी जीवन-स्मृति: सन् १८९१-९२ में।

३०. जम्मूकी तवी अथवा तावी

पृ० १३६ विग्रह: युद्ध। अलग करना।

संधि: सुलह। मिलाना।

राजनीतिमें कार्यसिद्धिके छह मार्ग बताये गये हैं:

(१) संधि, (२) विग्रह, (३) यान (चढ़ाअी), (४) स्थान अथवा आसन (मुकाम करना), (५) संश्रय (आश्रय लेना), (६) द्वैध या द्वैधीभाव—फूट डालना।

'आत्मरति, आत्मक्रीड़'० श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञका वर्णन करते हुअे मुंडकोपनिषद्‌में कहा गया है:

आत्मक्रीड़ आत्मरतिः क्रियावान् अेष ब्रह्मविदां वरिष्ठः॥

मुण्डक, ३–१–४

आत्मामें खेलनेवाला, आत्मामें रमनेवाला, क्रियावान पुरुष ब्रह्मज्ञोंमें श्रेष्ठ है।

आत्मन्येव० देखिये गीता, ३–१७

यस्त्वात्मरतिरेव स्यात् आत्मतृप्तश्च मानवः।
आत्मन्येव च संतुष्टः तस्य कार्यं न विद्यते॥

[जो मनुष्य आत्मामें ही रमा रहता है, जो अुसीसे तृप्त रहता है और अुसीमें संतोष मानता है, अुसे कुछ करनेको बाकी नहीं रहता।]

३१. सिंधुका विषाद

पृ० १३७ मानदण्ड: नापनेका दण्ड। महाकवि कालिदासके 'कुमारसंभव' के पहले श्लोकमें हिमालयके लिअे अिस शब्दका प्रयोग किया गया है:

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्या अिव मानदण्डः।

[अुत्तर दिशामें जिस पर देवोंका वास है अैसा हिमालय नामक पर्वतराज पृथ्वीको नापनेके गजकी तरह पूर्व और पश्चिम सागरमें स्नान करता हुआ खड़ा है।]

पंजाबकी पांच नदियां: झेलम, चिनाब, रावी, व्यास और सतलज।

युक्तप्रांतकी पांच नदियां: गंगा, यमुना, गोमती, सरयू, चंबल।

अति-भारतीय: केवल भारतमें ही नहीं, बल्कि भारतकी सीमाके बाहर भी बहनेवाली ये दोनों नदियां भारतवर्षके बाहरसे भारतमें आती हैं, यानी भारतवर्षकी सीमाका अतिक्रमण करके बहती हैं, अिसलिअे अिन्हें अति-भारतीय कहा गया है।

पृ० १३८ वैदिक . . . सप्तसिंधु : वेदोंमें जिनका जिक्र है, वे सात नदियां : वितस्ता (झेलम), असिक्नी या चंद्रभागा (चिनाव), परुष्णी या अिरावती (रावी), शतद्रु (सतलज), विपाशा (वियास, व्यास), सिंधु और सरस्वती। क्रुमु या कुर्रम अिनमें नहीं गिनी गअी है।

प्राचीन आर्य . . . खतरेमें आ पड़े : भारत पर जितने आक्रमण हुअे, लगभग सभी अिसी ओरसे हुअे।

परोपनिसदी : अफगान। ग्रीक भाषामें अफगानिस्तानको 'परोपनिसद' कहते हैं।

यवन : Ionian Greeks के प्रथम शब्द परसे यह शब्द बना है।

वाल्हीक : बल्ख, बैक्ट्रिया। वाल्हीक शब्द वेदमें आया है।

रानी सेमीरामिस : [अी० स० पूर्व ८०० के आसपास] : असीरियाकी पुराण-प्रसिद्ध रानी। कहते हैं कि बेबिलोनकी स्थापना अिसीने की थी। और यह भी माना जाता है कि निनेवेहकी स्थापना करनेवाले अुसके पति नीनससे भी वह अधिक पराक्रमी थी। छुटपनमें अुसकी मांने अुसको छोड़ दिया था और कबूतरोंने अुसकी परवरिश की थी। प्रथम वह नीनसके अेक सेनापतिके साथ विवाह-बद्ध हुअी थी, किन्तु बादमें जब नीनसकी नजर अुस पर जमी तब अुसके पतिने आत्महत्या कर ली। अिसके बाद वह नीनससे विवाह-बद्ध हुअी और नीनसके पश्चात् गद्दी पर बैठी। अुत्तर-वयमें अुसने अपने पुत्रको गद्दी पर बिठाया था।

सुवर्ण-करभार : अी० स० पूर्व छठी सदीमें अीरानके बादशाह पहले दरायसने सिंध प्रदेश अपने कब्जेमें ले लिया था और अुससे सालाना १८५ हंडरवेट (=५१५॥ मण) सुवर्ण-करभार लेना शुरू किया था। अुसीका यहां अुल्लेख है।

युअेची : अीस्वी सन् पूर्व पहली सदीके आसपास अुत्तर भारतसे शकोंको दक्षिणमें भगाकर वहां अपने साम्राज्यकी स्थापना करनेवाले मध्य अेशियाके कुशान लोग। अिनमें से कअियोंने बौद्ध और कुछ लोगोंने हिन्दूधर्म अपना लिया था। विख्यात बौद्ध सम्राट् कनिष्क कुशान

था। कुशान साम्राज्यके वैभवके दिनोंमें अुसका विस्तार अितना था कि अुसमें पश्चिम अेशियाके बुखारा और अफगानिस्तान, मध्य अेशियाके काशगर, यारकंद और खोतान, अुत्तर भारतके कश्मीर, पंजाब और बनारस तथा दक्षिणमें विन्ध्य तकके सारे प्रदेशका समावेश होता था।

हूण : अी० सन्‌की पांचवीं या छठी सदीमें भारत पर लगातार आक्रमण करके मालवा, सिंध और सीमाप्रांतमें अपना राज्य जमानेवाले श्वेत हूण। युरोपमें भी अिन्हीं लोगोंने अेटिलाकी सरदारीके नीचे रहकर बड़े अत्याचार किये थे। यहां पर भी अुनके अत्याचारोंसे अूबकर अंतमें आर्यावर्तके सभी राजाओंने बालादित्य और यशोधर्माके नेतृत्वमें अिकट्ठे होकर हूण राजा मिहिरगुलको हराया और अुसे गिरफ्तार किया था। अिसके बाद अुनका आक्रमण फिर नहीं हुआ। भारतमें हूणोंका राज्य आधी सदी तक रहा।

गिलगिट : श्रीनगरकी वायव्य दिशामें १२५ मील दूर ४८९० फुटकी अूंचाअी पर अिसी नामके जिलेका मुख्य केन्द्र। अिसके आस-पास बौद्ध अवशेष फैले हुअे हैं।

पृ० १३९ चित्राल : वायव्य सरहद प्रांतके अिसी नामके अेक राज्यका मुख्य शहर।

स्वात : पंजकोरासे मिलनेवाली अेक छोटीसी नदी।

सफेद कोह : पहाड़का नाम। कोह=पहाड़। तुलना कीजिये : कोह-अि-नूर=तेजका पहाड़।

बैक्ट्रिया : बल्ख

कर्नल यंगहसबंड : सर फ्रांसिस अेडवर्ड यंगहसबंड १८६३ में पंजाबमें पैदा हुअे। जातिसे अेंग्लो-अिंडियन। १८८२ में फौजमें भरती हुअे। १८९० में पोलिटिकल डिपार्टमेंटमें बदली हुअी। १८८६ में मंचूरियामें खोज की। १८८७ में चीनी तुर्किस्तानके रास्ते पेकिंगसे भारत तककी यात्रा की। १८९३–९४ में चित्रालमें पोलिटिकल अेजंटके तौर पर रहे। १८९५ में चित्रालकी लड़ाअी हुअी, तब 'टाअिम्स'के संवाददाताके तौर पर काम किया। १९०३–४ में ब्रिटिश-मंडलके

साथ ल्हासा गये। पूर्वके देशोंके बारेमें आपने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। रॉयल ज्यॉग्राफिकल सोसायटीके प्रमुख १९१९। विस्तृत जीवनीके लिअे पढ़िये: 'फ्रांसिस यंगहसबंड — अेक्स्प्लोरर अेंड मिस्टिक' — लेखक जॉर्ज स्वीवर।

अमीर अमानुल्ला: भारतमें रौलेट बिलके खिलाफ जब प्रचंड आंदोलन चला, अुसी समय १९१९ के अप्रैलमें अफगानिस्तानके अमीरने भारत पर आक्रमण किया था। दस दिनोंके अंदर ही अफगान परास्त हो गये थे। लम्बी बातचीतके पश्चात् ८ अगस्तको रावलपिंडीमें संधिपत्र पर दस्तखत किये गये थे।

गरमीका पागलपन: अुस समय गरमीके दिन थे और काम अविचारी था अिसलिअे। अमीरका खयाल था कि गरमीके दिनोंमें अगर आक्रमण करेंगे तो अंग्रेज परास्त हो जायेंगे। किन्तु यह गलत खयाल था। अंग्रेजोंने अिस साहसको 'मिड-समर मैडनेस' का नाम दिया था।

परसों: यह मराठी प्रयोग है।

कोहाटकी क्रूरता: सन् १९२४ में ९-१० सितम्बरको कोहाटमें घटी हुअी घटनाका यहां जिक्र है। धर्मान्तर तथा अपहरणोंके कारण वहांका वातावरण पहले ही गरम हो चुका था। अितनेमें वहांकी सनातन धर्मसभाके मंत्रीने अेक पुस्तिका प्रसिद्ध की, जिससे मुसलमानोंकी भावनायें अुत्तेजित हो अुठीं। हिन्दुओंने फौरन दुःख प्रगट किया और पुस्तिकाकी बाकी रही नकलें सार्वजनिक रूपमें जला दीं। फिर भी मुसलमानोंको संतोष नहीं हुआ और अुन्होंने हिन्दुओंके खिलाफ सख्त कार्रवाअी करनेकी मांग सरकारके सामने पेश की। रातको मसजिदमें जमा होकर अुन्होंने बदला लेनेकी प्रतिज्ञा ली। ९ सितंबरको सनातन धर्मसभाके मंत्री जमानत पर रिहा किये गये और दंगे शुरू हुअे। ये दंगे कैसे शुरू हुअे, अिस बारेमें मतभेद है; किन्तु शुरू होनेके बाद दो पक्षोंमें आमने-सामने गोलियां चलीं। सारे हिन्दू मोहल्लेको आग लगा दी गयी। पुलिस और फौजने भी गोली चलाअी। परिणामस्वरूप अपार हानि हुअी। सभी हिन्दुओंको सरकारी रक्षाके नीचे

केन्टोनमेन्टमें रखा गया। वहांसे अुनकी मांगके अनुसार अुन्हें रावल-पिंडी भेज दिया गया। बेलगांव कांग्रेसमें अिस संबंधमें जो प्रस्ताव पास किया गया था, अुसमें हिन्दुओंको यह सलाह दी गयी थी कि कोहाटके मुसलमान अुन्हें सम्मानपूर्वक वापस न बुलायें और जानमालकी सलामतीका विश्वास न दिलायें, तब तक वे वापस न लौटें।

कुरम: सुलेमान पर्वतसे निकल कर सिन्धुसे मिलनेवाली नदी। अिसका वैदिक नाम है क्रुमु।

डेरा अिस्माअिलखां: लाहौरके पश्चिममें १२५ मीलकी दूरी पर स्थित सीमाप्रान्तका अेक शहर। यहांसे गोमलघाटके द्वारा अफगानिस्तानके साथ तिजारत चलती है। सूती कपड़े और बेलबूटेके कामके लिअे प्रसिद्ध है।

डेरा गाजीखां: भावलपुरकी वायव्य दिशामें ७० मीलकी दूरी पर स्थित पंजाबका अेक शहर। सिंधुकी बाढ़से अिसकी काफी हानि हुआ करती थी, अिसलिअे १८९१ में यहां पत्थरका अेक बांध बांधा गया था। यहांकी कुछ मसजिदें मशहूर हैं।

लाहौरका वैभव: अकबर और अुसके वंशजोंके जमानेमें लाहौरका वैभव बहुत बड़ा था। वजीरखांकी मसजिद, जामा मसजिद, शीशमहल, रणजितसिंहके महल और शहरके बाहर शाहदरेमें स्थित बादशाह जहांगीरकी कब्र और शालीमार बाग आज भी अुसके वैभवके साक्षी हैं।

व्यास: बियास, विपाशा। वसिष्ठ मुनिके सौ पुत्रोंको राक्षस खा गये तब पुत्रशोकसे विह्वल होकर वे देहत्याग करनेके अिरादेसे अिस नदीमें कूद पड़े थे। किन्तु नदीने अुन्हें विपाश यानी पाशमुक्त किया, अिसलिअे यह 'विपाशा' कहलाअी।

त्यागाय संभृतार्थानाम्: 'रघुवंश' के प्रारंभमें महाकवि कालिदास रघुओंका वर्णन करते समय अुनकी अनेक विशेषतायें बताते हैं। अुनमें अेक विशेपता यह है। जो त्याग=दानके लिअे संभृत अर्थ=धन अिकट्ठा करनेवाले हैं, अुन रघुओंके वंशकी कीर्ति मैं गाना चाहता हूं।

पृ० १४० अुसमें से मनमाना . . चाहे : नहरके रूपमें।

अुदारता : चौड़ाअी ?

जयद्रथके समयमें : महाभारतके समयमें। जयद्रथ सिंधु देशका राजा था।

दाहिर : [६४५–७१२] सिन्धका अेक ब्राह्मण राजा। जच्चका पुत्र। सिन्ध प्रान्तको छूनेवाले खिलाफतके प्रान्तके सूबेदार हज्जाजको अुसने कअी बार हराया था। अिसके पश्चात् मुहम्मद बिन कासिम नामक सत्रह वर्षकी अुम्रके सेनापतिको अुसके खिलाफ युद्ध करनेके लिअे भेजा गया; अिस युद्धमें दाहिरका हाथी भड़क अुठा, जिसकी वजहसे वह मारा गया। अुसकी फौज भाग गअी। तबसे मुसलमानोंको हिन्दुस्तानमें प्रवेश मिला। मुहम्मदने अुसकी रानीके साथ शादी की और अुसकी दो लड़कियोंको नजरानेके तौर पर खलीफाके पास भेज दिया।

जच्च : [४९७–६३७] दाहिरका पिता। अिसका अितिहास फारसीमें 'चचनामा' नामक किताबमें दिया गया है। वह बड़ा शूर था। अुसने अपने राज्यकी सीमा ठेठ कश्मीर तक फैलायी थी। वह सिंधके आरोर नामक गांवके अग्निहोत्री ब्राह्मण शैलजका पुत्र था। प्रथम वह सिंधके राजाके मंत्रीका कारकुन था; बादमें प्रधान मंत्री बना; आखिर राजा बना और रानीके साथ अुसने शादी की। ब्राह्मणाबादके बौद्धधर्मी लोगों पर अुसने काफी जुल्म ढाये थे।

पृ० १४१ अनाचार : सिन्धके अेक ब्राह्मण राजाको अेक ज्योतिषीने कहा था कि तुम्हारी बहनका लड़का तुम्हारा राज्य छीन लेगा। अिसके अिलाजके तौर पर राजाने अपनी बहनके साथ ही शादी कर ली। दूसरे अेक राजाने अेक सती पर अत्याचार किये थे। अिन ब्राह्मण राजाओंके अत्याचारोंसे लोग अितने परेशान हो गये थे कि मुहम्मद बिन कासिमको जाट और मेड़ लोगोंने ही सबसे अधिक मदद की थी।

मुहम्मद बिन कासिम : सिन्ध प्रान्तको जीतकर खिलाफतमें शामिल करनेवाला किशोर सेनापति। दाहिरके खिलाफ युद्ध करनके बाद अुसने

दाहिरकी दो लड़कियोंको खलीफाके पास नजरानेके तौर पर भेज दिया था। जब खलीफाने अिनमें से अेक लड़कीके साथ शादी करनेकी अिच्छा व्यक्त की, तब अिन लड़कियोंने कहा कि मुहम्मदने अुन्हें भ्रष्ट कर दिया है, अिसलिअे वे अिस सम्मानके लायक नहीं हैं। अिस पर खलीफाने गुस्सा होकर मुहम्मदको हुक्म दिया कि गायके चमड़ेमें अपनेको सीकर वह खलीफाके सामने हाजिर हो। मुहम्मदने खलीफाकी आज्ञाका पालन किया, जिससे दूसरे ही दिन अुसकी मृत्यु हो गअी। जब मुहम्मदका शव अिस हालतमें हाजिर किया गया, तब लड़कियोंने खलीफाको सत्य कह डाला कि अुन्होंने बदला लेनेकी दृष्टिसे झूठ बात कही थी! खलीफाने अिन दोनों लड़कियोंकी गरदन अुड़ा दी।

सर चार्ल्स नेपियर : [१७८२–१८५३] १८०८ में स्पेनमें फ्रेंच लोगोंके खिलाफ अिसने लड़ाअी की, और कोरुनामें गिरफ्तार हुआ। १८१३ में अमरीकाके खिलाफ युद्ध किया। १८१५ में नेपोलियनके खिलाफ युद्ध किया। वह कवि बायरनका मित्र था। १८४१ में भारत आया। १८४२ में सिन्धकी फौजका नेतृत्व किया और अिसी वर्षके अन्तमें अिमामगढ़का किला कब्जेमें लिया। १८५४ के मियाणीके युद्धमें विजयी हुआ। मीरपुरके शेरमुहम्मदको परास्त करके भगा दिया। १८४४–४५ में सिन्धकी पहाड़ी जातियों पर विजय प्राप्त की। डलहाअुज़ीके साथ मतभेद होने पर अिस्तीफा देकर घर लौट गया। १८५३ में मृत्यु। अन्यायसे सिन्ध पर अधिकार करनेके बाद अिसने रिपोर्ट दी: "**I have sinned (sind)**"—मैंने सिन्ध पर कब्जा कर लिया है।

सुहिणी : अेक धनवान कुम्हारकी लड़की। बुखाराका अेक खानदानी मुगल नौजवान मेहार अुसकी मुहब्बतमें फंस गया था और अुससे मिलनेमें कोअी कठिनाअी न हो अिसलिअे वेश बदलकर अुसके पिताके घर नौकर बन कर रहा था। दोनोंके बीच प्रेमका नाता दृढ़ होने लगा। किन्तु लड़कीके पिताको वह पसंद नहीं आया। अिसलिअे अुसने मेहारको नौकरीसे हटा दिया। वह सिन्धुके अुस पार जाकर रहा। सुहिणी हमेशा रातके समय मिट्टीके अेक बरतनका

सहारा लेकर सिन्धु नदी पार करती थी और मेहारसे मिलने जाती थी। जब अिस बातका पता अुसके पिताको चला, तब अुसने पक्के घड़ेके बदलेमें कच्चा घड़ा वहां रख दिया। सुहिणी तो प्रेमकी मस्तीमें थी। वह कच्चा घड़ा लेकर ही नदीमें कूद पड़ी। जरा आगे गअी कि घड़ा पिघलने लगा। अुसने मेहारको पुकारा। सामनेके किनारेसे वह अुसे बचानेके लिअे दौड़ा, किन्तु बचा नहीं सका। अंतमें दोनोंने साथ ही जल-समाधि ली।

३२. मंचरकी जीवन-विभूति

पृ० १४२ दिशो न जाने० न मैं दिशा जानता हूं, न शान्ति प्राप्त करता हूं। गीता, ११–२५

अिदानीम्० अब मैं शांत हो गया हूं और स्वस्थ बन गया हूं। गीता, ११–५१

पृ० १४४ स्वप्नसृष्टि पर राज्य किया: लोक-कथाओंमें 'खाया, पिया और राज्य किया' कहनेका प्रयोग चलता है। यहां पर 'स्वप्न-सृष्टि पर राज्य किया' का मतलब है 'नींद ली।'

अजगरोंकी अुपासना कर रहे थे: अजगर बड़े आलसी होते हैं। अिसलिअे यहां अर्थ होगा आलस्यकी अुपासना करते थे।

रैहानाबहन: श्री अब्बास तैयबजीकी पुत्री। भक्त-हृदय और सुकण्ठ गायिका। अिनकी 'Heart of a Gopi' नामक किताब बड़ी मशहूर है। अिस किताबके फ्रेंच तथा पोलिश भाषामें भी अनुवाद हुअे हैं। हिन्दीमें 'गोपी-हृदय' नामसे अनुवाद प्रकाशित हुआ है। अिनकी कुछ मौलिक हिन्दी किताबें भी हैं: 'सुनिये काकासाहब!', 'नाश्तेसे पहले', 'कृपा-किरन' वगैरा। अिनकी हिन्दी या हिन्दुस्तानी शैली अपने ढंगकी निराली है।

पृ० १४७ मंघ: मकानमें हवा आनेके लिअे छत पर जो चौरस आकारकी चिमनी जैसी रचना होती है अुसको मंघ कहते हैं।

'ढंढ': यह सिन्धी शब्द है।

३३. लहरोंका तांडवयोग

पृ० १४९ वप्रक्रीड़ा: सींग या लम्बे दांतोंके सहारे जमीन खोदनेका खेल। 'मेघदूत' में अिसका प्रयोग किया गया है :

तस्मिन्नद्री कतिचिद् अबला-विप्रयुक्तः स कामी
नीत्वा मासान् कनक-वलय-भ्रंश-रिक्त-प्रकोष्ठः।
आषाढस्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानुं
वप्रक्रीड़ापरिणतगजप्रेक्षणीयं ददर्श ॥

पृ० १५० अमर्ष: तिरस्कार या अपमानसे पैदा हुआ स्थिर क्रोध। काव्यशास्त्रमें अुसकी व्याख्या अिस प्रकार की गअी है: 'अधिक्षेपापमाना-देरमर्षोऽभिनिविष्टता।' भारवि कविके 'किरातार्जुनीय' काव्यमें दुर्योधनकी राजनीतिकी प्रशंसा सुनकर द्रौपदी नाराज होती है और युधिष्ठिरसे कहती है: "अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादरः॥ १,३३ [जिसमें अमर्ष नहीं है अुसका न स्नेहीजन आदर करते, न शत्रु आदर करते]

शिव-तांडव-स्तोत्र: कवि रावणका लिखा प्रसिद्ध स्तोत्र। देखिये, 'जोगका प्रपात' की टिप्पणियां।

प्रमाणिका और पंचचामर: ये दो संस्कृतके लोकप्रिय और अत्यंत सरल छंद हैं। प्रमाणिकाके दो पद मिलने पर अेक पंचचामर बनता है। अुसको नाराच भी कहते हैं।

प्रमाणिकापदद्वयम् वदेत पंचचामरम्।

पुष्पदंत: अेक गंधर्व और शिवगण। शिवमहिम्न-स्तोत्रका रचयिता। वायव्य दिशाके दिग्गजका नाम भी पुष्पदंत है। पुष्पदंतकी कथा 'कथासरित्सागर' में है।

गोमूत्रिकाबंध: चित्रकाव्यका अेक प्रकार।

श्रावण-भादोंकी धारायें: राजमहलमें जब पानीका प्रवाह बहाया जाता है और बीचमें छोटेसे पत्थर परसे बहता अुसका प्रपात बनाया जाता है, तब अिस प्रपातको श्रावण-भादोंकी धारायें कहते हैं।

३४. सिंधुके बाद गंगा

पृ० १५३ सौवीर देश : सिन्ध और मारवाड़की सीमाका प्रदेश।

पृ० १५५ सदाकत आश्रम : [सदाकत = सत्य + आश्रम] विहारके प्रसिद्ध देशभक्त मजहरुल हकने अिसकी स्थापना सन् १९२०–२१ के अर्सेमें की थी।

पृ० १५८ 'रसो वै सः' : निश्चय ही वह रस है। तैत्तिरीयोपनिषद्में ब्रह्मका वर्णन करते समय यह वचन कहा गया है। देखिये तैत्तिरीय० २–७।

पृ० १५९ कैंकर्य : [किंकर (= नौकर) + य] नौकरपन, नौकरी।

पृ० १६० ॐ पूर्णम् अदः ० यह (जगत्) पूर्ण है, वह (ब्रह्म) भी पूर्ण है। पूर्णमें से पूर्ण ही प्रकट होता है। पूर्णमें से यदि पूर्णको निकाल लें तो पूर्ण ही शेष रहता है।

अीशावास्योपनिषद्के प्रारंभ तथा अंतमें यह शांतिमंत्र है।

३५. नदी पर नहर

पृ० १६१ कलौ आद्यन्तयोः स्थितिः दक्षिणमें यह वात फैलायी गयी है कि कलिकालमें सिर्फ दो ही वर्णोंका अस्तित्व है – ब्राह्मण और शूद्र; क्योंकि संस्कार-लोपके कारण क्षत्रिय और वैश्य भी अब शूद्र जैसे वन गये हैं।

द्विजत्व : जिन्हें जनेअू लेकर अिसी जन्ममें दूसरा जन्म लेनेंका अधिकार है, अुन ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीनों वर्णोंको द्विज कहते हैं।

जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज अुच्यते।

भगीरथ : भगीरथने हिमालयसे गंगाको अुतारकर बंगालके अुप-सागर तकके प्रदेशको अुपजाअू बनाया था। अुस परसे जल-सिंचनकी विद्यामें कुशल।

पृ० १६२ निम्नगा : नीचेकी ओर वहनेवाली।

परिवाह : अतिरिक्त जलके वहनेके लिअे रखा गया मार्ग। overflow.

३६. नेपालकी वाघमती

पृ० १६३ अतिमानुषी: अलौकिक। अंग्रेजी superhuman.

भगिनी निवेदिता: स्वामी विवेकानंदकी अंग्रेज शिष्या मिस मार्गरेट नोवल। निवेदिता नाम गुरुका दिया हुआ था।

पृ० १६५ गोरक्षनाथ: अयोध्याके समीप जयश्री नामक नगरीमें सद्वोध नामके किसी ब्राह्मणकी सद्वृत्ति नामक अेक स्त्री थी। अेक वार भिक्षा मांगते हुअे मत्स्येन्द्रनाथ वहां आ पहुंचे। साधु पुरुष जानकर अुनको अुस स्त्रीने संतान न होनेकी वात वताओ। मत्स्येन्द्रनाथने भस्म दी, किन्तु अुसका प्रसादके तौर पर स्वीकार करनेके वदले अुसने अुसे घूरे पर फेंक दिया। ठीक वारह सालके वाद मत्स्येन्द्रनाथ फिर पधारे और अुन्होंने पूछा, "लड़का कहां है?" सद्वृत्तिने सच वात वता दी। अिस पर मत्स्येन्द्रनाथने घूरेके पास जाकर पुकारा 'अलख'। तुरन्त सामनेसे 'आदेश' कहकर गोरक्षनाथकी वालमूर्ति खड़ी हो गअी। अिसी कारणसे गोरक्षनाथको अयोनिज कहते हैं। गुरुके पास रहकर गोरक्षनाथने सव विद्या प्राप्त की। मत्स्येन्द्रनाथ योगी भी थे और भोगी भी थे। किन्तु गोरक्षनाथका वैराग्य अग्निके समान प्रखर था। मत्स्येन्द्र-नाथको सिंहल द्वीपकी प्रमिलारानीके मोहपाशसे गोरक्षनाथने ही मुक्त किया था। वे योगी, शिवोपासक, अद्वैतवादी और कीमियागरके रूपमें प्रसिद्ध हैं। वंगाल, पंजाव, नेपाल, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, सिंहल द्वीप आदि सभी स्थानोंमें अुनके मठ हैं।

मत्स्येन्द्रनाथ और गोरक्षनाथ नेपालके गुरखा लोगोंके देवता हैं। गोरक्षनाथ परसे ही अिनको 'गुरखा' कहते हैं। नेपालमें वौद्धोंका महायान पंथ चलता था। अुसकी पराजय करके गोरक्षनाथने वहांके लोगोंमें शिवकी अुपासना प्रचलित की थी। गोरक्षनाथका समय अव तक निश्चित नहीं हो सका है।

३७. विहारकी गंडकी

पृ० १६५ गंडकी: विहारमें दो नदियोंका नाम गंडकी है। लेखकने मुजफ्फरपुरके पास जो गंडकी देखी थी वह है वृद्ध या छोटी गंडकी। दूसरी गंडकी वड़ी है।

पृ० १६६ **बौद्ध जगतके दो छोर:** नर्मदा और गंडकीके बीच बौद्ध जगत समाया हुआ था।

मांडलिक नदियां: पानी-रूपी करभार देनेवाली नदियां; अुससे मिलनेवाली नदियां।

अष्टांगिक मार्ग: भगवान बुद्धके बताये हुअे आर्य अष्टांगिक मार्गके आठ अंग अिस प्रकार हैं: (१) सम्यक् दृष्टि; (२) सम्यक् संकल्प; (३) सम्यक् वाचा; (४) सम्यक् कर्मान्त; (५) सम्यक् आजीव; (६) सम्यक् व्यायाम; (७) सम्यक् स्मृति; और (८) सम्यक् समाधि।

मार: मनुष्यकी सद्वासनाओंका नाश करनेवाला। बौद्धधर्ममें आसुरी संपत्तिके अधिष्ठाता व्यक्तिको 'मार' कहते हैं।

३८. गयाकी फल्गु

पृ० १६७ **सीताका शाप:** कहते हैं कि अेक समय राम, सीता और लक्ष्मण घूमते-घूमते फल्गुके किनारे आ पहुंचे। वहां पहुंचते ही रामको स्मरण हुआ कि आज मेरे पिताजीके श्राद्धका दिन है। अिसलिअे सामान लानेके लिअे अुन्होंने लक्ष्मणको शहरमें भेजा। लक्ष्मण गये; किन्तु बड़ी देर तक वापस नहीं लौटे। अिससे रामको चिंता हुअी और वे स्वयं अुन्हें ढूंढ़नेके लिअे निकल पड़े। अिधर श्राद्धका मुहूर्त चूकने लगा; अिसलिअे सीताजीने नहा-धोकर जो कुछ था अुसीसे अपने पतिके बदले स्वयं अुनके पितरोंको पिंडदान दिया। पितरोंने संतोषपूर्वक पिंडका स्वीकार किया। वे पिंड लेकर जाने लगे, तब सीताजीने अुनसे पूछा: 'आप स्वयं आकर पिंड ले गये हैं, यह मेरे पतिको कैसे मालूम होगा?' तब आकाशवाणी हुअी: 'तुम साक्षी रखो।' सीताजीने फल्गु नदी, गाय, अग्नि और केवड़ेको साक्षी रखा।

राम-लक्ष्मण सारी सामग्री लेकर आये और अुन्होंने सीताको चरु (पिंडका भात) तैयार करनेको कहा। किन्तु सीताने न तो कोअी अुत्तर दिया, न चरु तैयार किया। अंतमें रामने पूछा, तब सीताने सारी बात बता दी। किन्तु राम-लक्ष्मणको विश्वास नहीं हुआ। अिसलिअे सीताने

फल्गु आदि सब साक्षियोंसे पूछनेके लिअे कहा। मगर अिन सबने कहा, 'हम कुछ मालूम नहीं है।' अतः सीताने लाचारीसे दुबारा चरु तैयार किया और रामने पिंडके लिअे पितरोंका आवाहन किया। तब आकाशवाणी हुअी कि जानकीने हमें तृप्त किया है। किन्तु रामको विश्वास नहीं हुआ। अिसलिअे फिरसे आकाशवाणी हुअी। अिससे भी रामको संतोष नहीं हुआ। अिस पर स्वयं सूर्यने आकर साक्षी दी, तब रामको विश्वास हुआ।

साक्षी होते हुअे भी अुन्होंने बात नहीं बताअी, अिसलिअे सीताने अुन चारोंको शाप दिया। फल्गुको कहा, 'तुम पातालमें रहोगी।' केवड़ेको कहा, 'तुम शिवजीको अग्राह्य होगे।' गायको कहा, 'तेरा मुंह अपवित्र माना जायगा और पूंछ पवित्र मानी जायगी।' अग्निको कहा, 'तुम सर्वभक्षक होगे'।—शिवपुराण, अध्याय ३०।

३९. गरजता हुआ शोणभद्र

पृ० १६८ अयं शोणः ० "स्वच्छ जलवाला, अगाध, पुलिन-मंडित, अैसा यह शोण है। हे ब्रह्मन्, हम किस रास्तेसे पार अुतरेंगे?" श्री रामचंद्रके पूछने पर विश्वामित्रने जवाब दिया, "जिस रास्तेसे महर्षि जाते हैं, वह मेरे द्वारा बताया हुआ मार्ग यह है।"

क्षत्रिय गुरुशिष्य: क्षत्रियोंके गुरु अक्सर ब्राह्मण ही होते हैं। किन्तु यहां गुरु विश्वामित्र भी मूलतः क्षत्रिय थे।

पीवरकाय: पुष्ट शरीरवाला।

गजेन्द्र और ग्राह: हाहा और हुहु नामक दो गंधर्व थे। किसी दिन अिन दोनोंके बीच विवाद चला—'संगीत-विद्यामें हममें कौन बड़ा है?' वे अिन्द्रके पास गये और अुसके सामने अपनी कला दिखाअी। अिन्द्रने कहा, 'तुम दोनोंमें कौन बड़ा है, यह तो देवल अृषिके सिवा और कोअी नहीं बता सकेगा।' अिसलिअे वे देवल अृषिके पास गये और गाने लगे। अृषि अुस समय ध्यानमग्न थे। वे कुछ बोले नहीं। अिसलिअे यह मानकर कि वे जड़ हैं, कुछ समझते नहीं हैं, गंधर्वोंने अुनका अपमान किया। अिससे अृषिने अुनको शाप दिया कि 'तुम अब

मृत्युलोकमें जन्म लोगे।' किन्तु बादमें अुनकी प्रार्थना सुनकर शापके निवारणके लिअे कहा कि 'हरि तुम्हारा अुद्धार करेंगे।'

अिस प्रकार वे दोनों मृत्युलोकमें गजेन्द्र और ग्राहके रूपमें पैदा हुअे। अेक बार गजेन्द्र जलक्रीड़ाके लिअे पानीमें अुतरा, तब ग्राहने अुसका पांव पकड़ लिया और अुसे अंदर खींचने लगा। बाहर आनेके लिअे गजेन्द्रने काफी प्रयत्न किया, किन्तु कुछ नहीं हुआ। और वह गहरे पानीमें खिचता चला गया। जब वह पूराका पूरा पानीमें चला गया, सिर्फ सूंड़ ही बाकी रही, तब अुसने अीश्वरकी स्तुति की। स्तुति सुनकर अीश्वरने आकर अुसे बचाया और दोनोंका अुद्धार किया।

यह कथा पंचरत्न-गीताके 'गजेन्द्र-मोक्ष' में है।

[बरसों पहले **Tug of War** के लिअे श्री काकासाहबने गुजरातीमें 'गजग्राह' शब्द प्रचलित किया था।]

ब्रह्मपुत्र : ब्रह्मपुत्राका सही नाम है 'ब्रह्मपुत्र'। शायद रोमन लिपिके कारण गड़बड़ हुअी है। लेखकने अिस पुस्तकमें दोनों रूपोंका प्रयोग किया है।

पृ० १६९ कहां जाअूं ० महाकवि कालिदासने शोणका यह भाव बहुत सुन्दर ढंगसे व्यक्त किया है। अिन्दुमतीके स्वयंवरके बाद निराश हुअे राजा लोग अजका मार्ग रोकते हैं, तब अज अुनकी सेना पर टूट पड़ता है। कालिदासने अिसकी तुलना भागीरथी पर अपनी अुत्ताल तरंगोंसे टूट पड़नेवाले शोणसे की है।

तस्याः स रक्षार्थम् अनल्पयोधं
आदिश्य पित्र्यं सचिवं कुमारः।
प्रत्यग्रहीत् पार्थिव-वाहिनीं तां
भागीरथीं शोण अिवोत्तरंगः।

—रघुवंश ७–३६

नाल्पे सुखमस्ति . . . तत् सुखम् : 'अल्पमें सुख नहीं है। जो भूमा है—सारे विश्वको समा ले अितना विशाल है, वही सुखरूप है।' (छांदोग्य, ७–२३)

४०. तेरदालका मृगजल

जमखंडी: दक्षिण महाराष्ट्रका अेक शहर।

४१. चर्मण्वती चंबल

पृ० १७२ रंतिदेव: भरतकी छठी पीढ़ीमें हुआ सूर्यवंशी राजा। महाभारतमें अिसकी कथा दो बार आयी है। मेघदूतमें भी अिसका जिक्र आता है।

हेकॅटॉम: [शत अुक्ष यज्ञ] ग्रीक (यूनानी) लोगोंका अेक यज्ञ जिसमें सौ बैलोंकी आहुति दी जाती थी।

भूदेव: ब्राह्मण। अग्नि और ब्राह्मण देवताओंके मुख माने जाते हैं। वे जो खाते हैं वह सीधा देवताओंको मिल जाता है।

४२. नदीका सरोवर

पृ० १७३ बेलाताल: ताल=तालाब। जैसे नैनीताल, भीमताल।

पृ० १७४ हिमालयसे मांफी मांगकर: हिमालयमें केदारनाथके पास मंदाकिनी नामक अेक नदी है, अिसलिअे।

महाराज पुलकेशी: वातापी वंशका राजा। छठी सदीके मध्य भागमें अुसने महाराष्ट्रके छोटे छोटे सब राज्योंको अेकत्र करके अेक साम्राज्यकी स्थापना की थी और अश्वमेध यज्ञ भी किया था। अुसके पुत्र कीर्तिवर्माने पिताके साम्राज्यका विस्तार किया और अुसमें अंग-वंग और मगधका भी समावेश किया। सन् ६०९ में जब दूसरा पुलकेशी गद्दी पर बैठा तब यह चालुक्य साम्राज्य विन्ध्यसे लेकर दक्षिणमें पल्लव साम्राज्य तक फैला हुआ था। अुसने मालव, गुर्जर, और कलिंगोंको भी अधीन कर लिया था। अुसका सबसे बड़ा पराक्रम तो यह था कि महाराज हर्षने जब दक्षिण पर आक्रमण किया, तब पुलकेशीने अुनको रोका और पराजित किया (औ० स० ६३६)। पुलकेशी=पुलिकेशी। दक्षिणकी भाषामें पुलि=हुलि=बाघ। जिसके बाल (केश) बाघकी अयालके जैसे हों, वह है पुलकेशी।

पृ० १७५ अनाविला: जिसमें कीचड़ नहीं है, अैसी। स्वच्छ।

पृ० १७६ दशार्णः विन्ध्याचलके दक्षिण-पूर्वमें स्थित प्रदेश। दश +अृण (दुर्ग) जिसमें हैं वह। नदीका नाम है 'दशार्णा'। मेघदूतमें अिसका अुल्लेख अिस प्रकार आता है:

पाण्डुच्छायोपवनवृतयः केतकैः सूचिभिन्नैर्-
नीडारम्भैर् गृहबलिभुजाम् आकुलग्रामचैत्याः।
त्वय्यासन्ने परिणतफलश्याम-जम्बूवनान्तः
संपत्स्यन्ते कतिपयदिनस्थायिहंसा दशार्णाः ॥२३॥

वेत्रवतीः मालवाकी अेक नदी, वेतवा। मेघदूतमें अिसका भी अुल्लेख है:

तेषां दिक्षु प्रथित-विदिशा-लक्षणां राजधानीं
गत्वा सद्यः फलम् अविकलम् कामुकत्वस्य लब्ध्वा।
तीरोपान्त-स्तनित-सुभगं पास्यसि स्वादु यस्मात्।
सभ्रूभंगं मुखम् अिव पयो वेत्रवत्याश् चलोर्मि ॥२४॥

४३. निशीथ-यात्रा

पृ० १७७ सबिन्दु-सिन्धु० श्री शंकराचार्य विरचित 'नर्मदास्तोत्र' में ये वचन हैं। अिसी स्तोत्रमें निम्नलिखित श्लोक है, जिसमें नर्मदाको 'शर्मदा' कहा गया है:

त्वदम्बुलीन दीनमीन दिव्य संप्रदायकं
कलौ मलौघभारहारि सर्वतीर्थनायकम्।
सुमत्स्य-कच्छ-नक्रचक्र-चक्रवाक-शर्मदे
त्वदीयपादपंकजं नमामि देवि नर्मदे ॥

पृ० १७९ मेरी जाति है कौवेकी: कौवा कभी अकेला नहीं खाता। दूसरे कौवोंको पुकार कर ही खाता है।

लेखकका नाम 'काका' है, यह भी नहीं भूलना चाहिये।

पृ० १८६ नान्तःप्रज्ञं० मांडुक्योपनिषद्में तुरीय रूपके वर्णनमें ये शब्द आते हैं। अिनका अर्थ है—'वह न अंतःप्रज्ञ है, न बहिष्प्रज्ञ है। वह न अुभयतःप्रज्ञ है, न प्रज्ञानघन है। वह न प्रज्ञ है, न अप्रज्ञ है।'

४४. घुवांधार

पृ० १९३ पूपन्नेकर्षे० और ॐ क्तो स्मर, कृतं स्मर: ये अीशावास्योपनिषद्‌के श्लोक हैं। पूरे श्लोक अिस प्रकार हैं:

पूपन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य! व्यूह रश्मीन्, समूह।
तेजो, यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि
योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि ॥ १६ ॥
वायुर् अनिलम् अमृतम् अथेदं भस्मान्त्ँशरीरम्।
ॐ क्तो स्मर कृतँस्मर; क्तो स्मर कृतँस्मर ॥१७॥

[हे जगत्पोषक सूर्य, हे अेकाकी गमन करनेवाले, हे यम (संसारका नियमन करनेवाले), हे सूर्य (प्राण और रसका शोषण करनेवाले), हे प्रजापतिनंदन, तू अपनी रश्मियां समेट ले। तेज अेकत्र कर ले। तेरा जो अत्यन्त कल्याणमय रूप है, अुसे मैं देखता हूं। सूर्यमंडलमें रहनेवाला वह जो परात्पर पुरुष है, वह मैं ही हूं।

अब मेरे प्राण सर्वात्मक वायुरूप सूत्रात्माको प्राप्त हों और यह शरीर भस्मीभूत हो जाय। हे मेरे संकल्पात्मक मन, अब तू स्मरण कर, अपने किये हुअे कर्मोंका स्मरण कर; अब तू स्मरण कर, अपने किये हुअे कर्मोंका स्मरण कर।]

पृ० १९४ चन्द्रगुप्त और समुद्रगुप्त: चंद्रगुप्तकी पुत्री प्रभावतीका विवाह वाकाटक वंशमें हुआ था। अुसने कअी बरस तक शासन-तंत्र संभाला था। चंद्रगुप्तने अुस समय खास लोग वहां भेज दिये थे, अिस बातका यहां अुल्लेख है। समुद्रगुप्तकी विजय-यात्रामें अिस प्रदेशका भी समावेश होता था।

कलचुरी: वाकाटक साम्राज्यके पतनके बाद अनेक छोटे छोटे स्वतंत्र राज्य पैदा हुअे थे। अुनमें अुत्तर महाराष्ट्रके कलचुरी लोगोंका भी अेक राज्य था। अुनकी राजधानी थी त्रिपुरी, जहां सन् १९३९ में कांग्रेसका अधिवेशन हुआ था।

वाकाटक: सन् २२५ से ५४० के आसपास मध्यप्रान्तके बरार प्रदेशमें वाकाटकोंका साम्राज्य था। छठी सदीके पहले दस वर्षोंका समय अिनके

सर्वोच्च वैभवका काल था। अिसमें सारा हैदरावाद, वम्बअीका महा-राष्ट्र, वरार और मध्यप्रान्तका वहुतसा हिस्सा समा जाता था। अिसके अलावा, अुत्तर कोंकण, गुजरात, मालवा, छत्तीसगढ़ और आंध्र प्रदेश पर भी अिसका प्रभुत्व था। अुस समय अितना विशाल और अितना बलवान साम्राज्य भारतमें दूसरा कोअी नहीं था।

४५. शिवनाथ और औव

पृ० १९४ मलिक काफूर: अलाअुद्दीन खिलजीका प्रीतिपात्र खोजा। अिसने दक्षिणके राज्य जीतकर वहांकी प्रजा पर वड़ा अत्याचार किया था।

काला पहाड़: वंगालके नवाव सुलेमान किराणीका तथा वादमें अुसके पुत्र दाअूदका सेनापति। असम, काशी और अुड़ीसामें जितने हिन्दू देवालय थे, अुनमें से अेक भी अिसके हाथसे नहीं वचा था। किसीको अिसने तोड़ डाला, किसीको खंडित कर दिया, तो किसीको जमींदोज कर दिया। जगन्नाथकी मूर्तिको अुसने जलाकर समुद्रमें फेंक दिया था। हिन्दुओं पर अुसने वहुत जुल्म ढाये थे। कुछ लोग कहते हैं कि वह पहले ब्राह्मण था, किन्तु किसी नवावकी कन्याकी मुहव्वतमें फंसकर मुसलमान वन गया था। मुसलमानोंके अितिहासमें अुसको पठान जातिका वताया गया है। १५६५ में अुसने अुड़ीसा जीता था। १५८० में अुसकी मृत्यु हुअी थी।

पृ० १९७ नामरूपका त्याग करनेसे ही: मुंडकोपनिषद्में निम्नलिखित श्लोक (३–२–८) है:

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः परात्परं पुरुषम् अुपैति दिव्यम्।

[जिस प्रकार निरंतर वहनेवाली नदियां अपना नामरूप छोड़-कर समुद्रसे जा मिलती हैं, अुसी प्रकार विद्वान भी नामरूपसे मुक्त होकर परात्पर दिव्य पुरुषको प्राप्त कर लेता है।]

सर्वे महत्त्वम् अिच्छन्ति० जिस कुलमें सभी लोग महत्त्व चाहते हैं, अुस कुलका नाश होता है; अुसी प्रकार जिस देशमें सभी लोग नेता वन जाते हैं, अुस देशका भी नाश निश्चित है।

४६. दुर्दैवी शिवनाथ

पृ० १९९ राक्षस-पद्धतिका विवाह: विवाहके आठ प्रकार बताये गये है: (१) ब्राह्म, (२) दैव, (३) आर्ष, (४) प्राजापत्य, (५) गांधर्व, (६) आसुर, (७) राक्षस और (८) पिशाच। अिनमें से जिस विवाहमें लड़कीके रिश्तेदारोंको मारकर या परास्त करके जबरन् लड़कीसे विवाह किया जाता है, अुसको राक्षस-पद्धतिका विवाह कहते हैं।

४७. सूर्याका स्रोत

पृ० २०० कासा: बम्बअी राज्यके थाना जिलेका अेक गांव। आचार्य शंकरराव भिसेके मार्गदर्शनमें यहां अेक सर्वोदय-केंद्र चलता है, जिसके कार्यकर्ता यहांके आदिम निवासी 'वार्ली' लोगोंके बीच बहुत अच्छा काम करते हैं।

४८. अबरी औव

पृ० २०५ कवियोंको जितना . . . देता था: बहुत कम और अस्पष्ट।

४९. तेंडुला और सुखा

पृ० २०७ व्यंजन: शाक, चटनी।

पृ० २०९ यद् भावि० जो कुछ होनेवाला हो, सो होने दो।

५०. अृषिकुल्याका क्षमापन

पृ० २११ सरित्पिता: पर्वत।

सरित्पति: समुद्र।

पृ० २१३ अचलोंका अुपस्थान . . . देगी: श्री काकासाहबने अब पहाड़ोंके वर्णन लिखना शुरू कर दिया है, अिस बातका यहां अुल्लेख है।

५१. सहस्रधारा

पृ० २१४ आचार्य रामदेवजी: स्वामी श्रद्धानंदजीके सहायक। हरिद्वार गुरुकुलके आचार्य।

पृ० २१६ धबधवाता हुआ : धब्-धब् आवाज करता हुआ। लेखकका बनाया हुआ यह नाम-क्रियापद है।

५२. गुच्छुपानी

पृ० २२२ चंदन : श्री काकासाहबकी पुत्रवधू सौ० चंदन कालेलकर।

५३. नागिनी नदी तीस्ता

पृ० २३० यंत्रका जीन कसकर : पावर हाअुस खड़ा करके।

५४. परशुराम कुंड

पृ० २३२ नहि वेरेन वेरानि ० धम्मपदका यह पूरा श्लोक अिस प्रकार है :

नहि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचनं।
अवेरेन च सम्मन्ति अेस धम्मो सनन्तनो॥ ५॥

[वैर वैरसे कभी शांत नहीं होता; अवैरसे ही वैर शांत होता है — यही संसारका सनातन नियम (धर्म) है।]

५५. दो मद्रासी बहनें

पृ० २३६ : नागमोड़ी : नागकी तरह जिसके मोड़ हों। सर्प-सदृश। यह शब्द मराठीका है।

५६. प्रथम समुद्र-दर्शन

पृ० २३९ मुरगांव : गोवाका अेक शहर जिसको अंग्रेजीमें 'मार्मागोवा' कहते हैं। यह पश्चिमी किनारेका अेक सुन्दर बंदरगाह है। फौजी दृष्टिसे अिसका बड़ा महत्त्व है।

पृ० २४० दूध-सागर : पानी पहाड़की चोटी परसे नीचे अिस तरह कूदता है कि अुसका दूधके समान काव्यमय सफेद प्रपात बन जाता है। अिसलिअे अुसका नाम ही 'दूध-सागर' पड़ गया है।

केशू : = केशव, श्री काकासाहबके भाअी।

पृ० २४१ दत्तू : श्री काकासाहबका पूरा नाम दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर है। दत्तात्रेयका छोटा रूप है दत्तू।

गोंदू : = गोविंद, काकासाहबके दूसरे भाअी।

५७. छप्पन सालकी भूख

पृ० २४७ सरोके पेड़ः कारवारमें सरोका अेक सुन्दर वन है। अिसका वर्णन पढ़िये 'स्मरण-यात्रा' के 'सरोपार्क' नामक लेखमें — पृ० २०१।

५८. मरुस्थल या सरोवर

पृ० २५४ मरजाद-वेलः समुद्रका पानी ज्वारके समय अधिकसे अधिक जहां तक पहुंचता है, वहां अेक तरहकी वेल अुगती है। समुद्र कितना भी तूफानी क्यों न हो, वह कभी अपनी अिस मर्यादाका अुल्लंघन नहीं करता। अिसलिअे अिस वेलको मरजाद-वेल कहते हैं। खलासी लोगोंके अनुसार वह समुद्रकी मौसी है। अतः समुद्र अुसका भानजा हुआ।

पृ० २५५ सर्वं समाप्नोषि० 'आप सारे संसारको व्याप्त किये हुअे हैं; अतः आप सर्व हैं।' गीता, ११–४०

५९. चांदीपुर

पृ० २५७ महाश्वेताः वाणकी विख्यात कथा 'कादम्बरी' की नायिका कादम्बरीकी सखी।

कादंबरीः वाणकी कथाकी नायिका। कादम्बरीका मूल अर्थ हैः मद्य, सुरा।

पृ० २५९ मदालसाः श्री जमनालाल बजाजकी पुत्री।

आपो नारा० पानीको 'नारा' कहा है। और वह नर अर्थात् परमात्मासे पैदा हुआ है। यह पानी पहले अुसका (परमात्माका) अयन (निवासस्थान) था। अिसीलिअे परमात्माको नारायण (पानीमें जिसका निवासस्थान है अैसा) कहा है। मनुस्मृति, १–१०

पृ० २६० प्रथम प्रभातः रवीन्द्रनाथका विख्यात राष्ट्रगीत 'अयि भुवन-मनोमोहिनि' में से ये पंक्तियां ली गअी हैं। पूरा गीत अिस प्रकार हैः

अयि भुवन-मनोमोहिनि
अयि निर्मल-सूर्य-करोज्ज्वल-धरणि
जनक-जननी-जननि — अयि०

नील-सिंधु-जल-धौत-चरणतल
अनिल-विकंपित-श्यामल-अंचल
अंबर-चुंबित-भाल-हिमाचल
शुभ्र-तुपार-किरीटिनि — अयि०

प्रथम प्रभात-अुदय तव गगने
प्रथम साम-रव तव तपोवने
प्रथम प्रचारित तव वन-भवने
ज्ञान-धर्मकत काव्य-काहिनि — अयि०

चिर कल्याणमयी तुमि धन्य,
देशविदेशे वितरिछ अन्न,
जाह्नवी-जमुना-विगलित-करुणा
पुण्य-पीयूप-स्तन्य-वाहिनि — अयि०

६०. सार्वभौम ज्वार-भाटा

पृ० २६३ सु-गत : भगवान बुद्धका अेक नाम। अेक खास 'मिशन' लेकर जो आये वे तथागत। सब संकल्पों और संस्कारोंका नाश करके जो निर्वाण तक पहुंचे वे सु-गत।

६१. अर्णवका आमंत्रण

पृ० २६३ अर्णव : अर्णव शब्दमें धातु 'ॠ' है। अुसका अर्थ है अुथल-पुथल होना, फेनसे भर आना। जिस परसे जिसमें अुथल-पुथल होती है, जो फेनसे भर आता है, जो अशांत है, अुसको अर्ण = पानी कहते हैं। और जिसमें अिस तरहका पानी है अुसको अर्णव कहते हैं। 'ॠणोत्यर्णः। अर्णांसि अुदकानि अत्र सन्ति अिति अर्णवः'।

अघमर्षण सूक्त : ॠग्वेदके १० वें मंडलका १९० वां सूक्त। अुसके ॠषिका नाम भी अघमर्षण ही है। संध्यावंदनके समय सुबह-शाम यह सूक्त बोला जाता है। काकासाहब लिखते हैं : "अघमर्षणका

अर्थ है पापको धो डालना। किन्तु अिस सूक्तमें पापका अुल्लेख तक नहीं है। अुसमें ऋषि कहता है: बाह्य विश्वकी विशालताका अनुभव करो, हृदयकी गहराअीकी जांच करो। यह सारी आंतर-बाह्य सृष्टि किसके सहारे टिकी हुअी है, यह देख लो। काल और सृष्टिकी अनन्तताका खयाल करो। अिससे तुम्हारा मन अपने-आप विशाल हो जायगा। विशाल मनमें पापके लिअे स्थान नहीं होता।

"अिस अनादि अनंत सृष्टिमें 'ऋतम्' और 'सत्यम्' ही स्थायी हैं। 'ऋतम्' का अर्थ है विश्वका सार्वभौम नियम; चराचर सृष्टिका सनातन धर्म। अिसीके सहारे अनादि अनंत सृष्टि चलती है (ऋ=चलना)। अिस 'ऋतम्' के अंदर जो परम तत्त्व है, जो शाश्वत है और जिसका नाश कभी नहीं होता, अुसको सत्य कहते हैं। यह सत्य सर्वव्यापी है। अतः अिसे विष्णु (सर्वत्र प्रवेश पानेवाला, फैलनेवाला) भी कहते हैं। 'सत्यम्' और 'ऋतम्' के द्वारा ही यह संसार अुत्पन्न होता है, विलीन होता है और फिरसे अुत्पन्न होता है। विश्वचक्र तपसे चलता है। यह विश्व तो परमात्माकी केवल महिमा है। परमात्मा अिससे भी बड़ा है। वह सुखका धाम है, आनंदका निधान है। अुसकी कल्पना ज्यों ज्यों हृदयमें फैलती जायगी, त्यों त्यों हृदय स्वच्छ होता जायगा। जैसे जैसे तुम हृदयसे बड़े होते जाओगे, वैसे वैसे पापसे तुम्हें घृणा होती जायगी। पापके लिअे स्थान ही नहीं होगा। 'यो वै भूमा तत् सुखम्। नाल्पे सुखम् अस्ति।' अितना समझ लो। यही पाप-नाशक मंत्र है।"

वरुण: वेदोंमें वरुणको पश्चिम दिशाका और सागरका अधीश्वर कहा गया है। वृ (घेर लेना)+अुन (कृतार्थे प्रत्यय)। जिसने पृथ्वीको घेर लिया है।

भुज्यु: ऋग्वेदमें अिसकी कथा है। कहते हैं कि भुज्यु अपने पुत्र तुग्र पर अेक बार गुस्सा हुअे। अिससे अुन्होंने तुग्रको दूसरे टापू पर बसे हुअे दुश्मनोंके खिलाफ लड़नेके लिअे भेज दिया। रास्तेमें अुसके जहाजमें सुराख हो गया, जिससे वह बड़ी कठिन परिस्थितिमें आ पड़ा। किन्तु अश्विनीकुमारोंने सौ पतवारोंवाली नौकामें आकर अुसे सुरक्षित किनारे पर पहुंचा दिया।

पृ० २६४ जलोदर: अेक रोग, जिसमें पेटमें पानी भर जाता है। लेखकने यहां अिस शब्दका प्रयोग जलरूपी अुदरके अर्थमें किया है।

पृ० २६५ सिंदबाद: 'अरेबियन नाअिट्स' में अिसकी सात यात्राओंकी रोचक कथा है।

पृ० २६६ सिंहपुत्र विजय: सिलोनकी प्राचीनतम परंपराके अनुसार अि० स० पूर्व छठी शताब्दीके मध्यमें सौराष्ट्रके सिंहपुरका राजकुमार विजय साहसपूर्ण यात्रा करके सिलोन पहुंचा था। विद्वानोंके कथनानुसार वह पौराणिक नहीं, बल्कि अैतिहासिक व्यक्ति है। देखिये: ('भारतीय आर्यभाषा और हिंदी'—लेखक: श्री सुनीतिकुमार चट्टोपाध्याय।)

भृगुकच्छ: आजका भड़ौंच।

सोपारा: प्राचीन शूर्पारक।

दाभोळ: पश्चिम तट पर स्थित अेक अतीव मनोहर और बड़े महत्त्वका बंदरगाह।

मंगलपुरी: आजका मंगळूर या मंगलोर।

ताम्रद्वीप: सिलोन, लंका।

जावा और बालिद्वीप: सिंगापुरके दक्षिणमें ये दो द्वीप हैं। वहांका धर्म अिस्लाम है, लेकिन हिन्दू संस्कृतिका असर आज भी वहां निश्चित मालूम होता है।

ताम्रलिप्ति: आजका तामलुक।

दसों दिशाओंमें: महावंशमें लिखा है कि "बौद्ध धर्मका प्रचार करनेवाले मोग्गलीपुत्त (तिस्स) स्थविरने संगीतिका कार्य पूरा करनेके बाद भविष्यत् कालके बारेमें सोचकर और यह ध्यानमें रखकर कि मध्य देशके बाहर बौद्ध धर्मकी स्थापना होनेवाली है, कार्तिक मासमें कुछ स्थविरोंको अलग अलग स्थानोंमें भेज दिया: कश्मीर और गांधारमें मज्झंतिकको, महिष मंडलमें महादेव स्थविरको, वनवासीमें रक्खितको, महाराष्ट्रमें महाधम्म रक्खितको और योन (यवन) लोगोंके देशमें महारक्खित स्थविरको भेजा।

"'मज्झिम स्थविरको हिमवंत (हिमालय) प्रदेशमें तथा सोण और अुत्तर अिन दो स्थविरोंको सुवर्णभूमि (ब्रह्मदेश) में भेजा। महा-महिन्द, अिष्ठिय, अुत्तिय, संवल और भद्दसाल अिन पांच स्थविर शिष्योंको 'तुम सुंदर लंकाद्वीपमें जाकर मनोरम बुद्धधर्मकी स्थापना करो' कहकर अुस द्वीपमें भेज दिया।" १–८

पृ० २६७· धर्म-विजय: कलिंगकी विजयके बाद मनमें अुत्पन्न हुअे पश्चात्तापका वर्णन करनेवाला जो शिलालेख अशोकने खुदवाया, अुसमें अुसने कहा है कि "महाराजके मतके अनुसार धर्मके द्वारा प्राप्त हुअी विजय ही श्रेष्ठ विजय है।"

गैंडेकी तरह अकुतोभय: मूल बौद्ध ग्रंथोंमें गैंडेकी नहीं बल्कि गैंडेके अकेले सींगकी अुपमा है। सब प्राणियोंके दो सींग होते हैं, किन्तु गैंडेकी नाक पर सिर्फ अेक ही सींग होता है।

धम्मपदमें अिसी संदर्भमें अकेले हाथीकी अुपमा दी गअी है:

नो चे लभेथ निपकं सहायं सद्धिचरं साधु विहारिधीरं।
राजा व रट्ठं विजितं पहाय अेको चरे मातंगरञ्ञे व नागो॥

[यदि निपुण, साथ चलनेवाला, साधु विहारवाला धीर पुरुष मित्रके रूपमें न मिले, तो जैसे हारे हुअे राज्यको छोड़कर राजा अकेला चला जाता है, या मातंग अरण्यमें हाथी अकेला घूमता है, वैसे अकेले ही घूमना चाहिये।]

अेकस्स चरितं सेय्यो नत्थि बाले सहायता।
अेको चरे न च पापानि कयिरा अप्पोस्सुक्को मातंगरञ्ञे व नागो॥

[अेकाकी चर्या श्रेय है, बालक (अज्ञानी) से कोअी सहायता नहीं मिलती। मातंग अरण्यमें अेकाकी हाथीकी तरह अल्पोत्सुक होकर अेकाकी चर्या करना चाहिये; पाप नहीं करना चाहिये।]

सोपारा, कान्हेरी, घारापुरी: बम्बअीके आसपासकी बौद्ध गुफायें।

खंड-गिरि, अुदय-गिरि: अुड़ीसाके दो पहाड़। यहां बौद्ध गुफायें हैं। सम्राट् खारवेलका प्रख्यात शिलालेख भी यहीं है।

महिन्द और संघमित्ता : अशोकने अपने पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संघमित्राको बौद्ध धर्मका प्रचार करनेके लिअे लंका भेजा था।

पृ० २६८ वािअिकिंग : युरोपके अुत्तर समुद्रमें ८ वीं से १० वीं शताब्दी तक लूट मचानेवाले अिस नामके डाकू।

लक्ष्मीका पिता : लक्ष्मी समुद्रमें पैदा हुअी, अिसलिअे पुराणोंमें समुद्रको लक्ष्मीका पिता कहा गया है। यहां पर लेखकने अिस कहानीसे फायदा अुठाकर समुद्रमें यात्रा करनेसे प्राप्त होनेवाली लक्ष्मीके अर्थमें अिन शब्दोंका प्रयोग किया है।

पृ० २६९ सर्वे सन्तु निरामयाः ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है :

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखम् आप्नुयात्॥

[सब सुखी रहें, सब निरामय = नीरोग रहें। सब भद्र देखें। किसीको दुःख प्राप्त न हो।]

६२. दक्षिणके छोर पर

पृ० २७१ धनुष्कोटी : धनुष्कोटीमें दो समुद्रोंके बीच भूमिका जो हिस्सा फैला हुआ हैं, वह धनुषकी कोटी जैसा कमानदार है। अिस परसे अिस स्थानका नाम धनुष्कोटी पड़ा है।

रत्नाकर और महोदधि : दोनोंका अर्थ तो अेक ही है — समुद्र।

प्रशस्त : मूल अर्थ है कल्याणमय, शुभ, कुशल। प्रशंसापात्र भी हो सकता है। यहां दोनों अर्थोंमें अिसका प्रयोग किया गया है। बंगला और मराठीमें अिस शब्दका दूसरा भी अेक अर्थ है : चौड़ा, विशाल। यहां पर अिस अर्थमें भी लिया जा सकता है।

आत्मनि अप्रत्यय : जिसका आत्मामें यानी अपनेमें विश्वास नहीं है। 'बलवदपि शिक्षितानां आत्मनि अप्रत्ययं चेतः।' — शाकुंतल

भूमिका पर स्थिर रहकर : दो समुद्रोंके बीच खड़े रहनेके लिअे जो भूमि थी अुस पर खड़े रहकर। अल्पार्थमें 'क' प्रत्यय लगता है, अिसका भी यहां लाभ अुठाया गया है।

'रघुवंशमें' लिखा हुआ वर्णन: १३ वें सर्गमें रावण-वधके पश्चात् सीताको लेकर राम पुष्पक विमानमें बैठकर अयोध्या वापस लौटते हैं, तब लंकासे निकल कर सागर पार करते हुअे कुछ श्लोकोंमें सागरका वर्णन करते हैं:

वैदेहि पश्यामलयाद्विभक्तं मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिम्।
छायापथेनेव शरत्प्रसन्नम् आकाशमाविष्कृतचारुतारम्॥२॥
गर्भं दधत्यर्कमरीचयोऽस्माद् विवृद्धिमत्राश्नुवते वसूनि।
अविन्धनं वह्निमसौ बिभर्ति प्रह्लादनं ज्योतिरजन्यनेन॥४॥
तां तामवस्थां प्रतिपद्यमानं स्थितं दश व्याप्य दिशो महिम्ना।
विष्णोरिवास्यानवधारणीयम् अीदृक्तया रूपमियत्तया वा॥५॥
ससत्वमादाय नदीमुखाम्भः संमीलयन्तो विवृताननत्वात्।
अमी शिरोभिस्तिमयः सरन्ध्रैरूर्ध्वं वितन्वन्ति जलप्रवाहान्॥१०॥
मातङ्गनक्रैः सहसोत्पतद्भिर्भिन्नान्द्विधा पश्य समुद्रफेनान्।
कपोलसंसर्पितया य येषां व्रजन्ति कर्णक्षणचामरत्वम्॥११॥
वेलानिलाय प्रसृता भुजंगा महोर्मिविस्फूर्जथुनिर्विशेषाः।
सूर्यांशुसंपर्क-समृद्धरागैर्व्यज्यन्त अेते मणिभिः फणस्थैः॥१२॥
तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु पर्यस्तमेतत्सरसोर्मिवेगात्।
अूर्ध्वांकुरप्रोतमुखं कथंचित् क्लेशादपक्रामति शंखयूथम्॥१३॥
प्रवृत्तमात्रेण पयांसि पातुम् आवर्तवेगभ्रमता घनेन।
आभाति भूयिष्ठमयं समुद्रः प्रमथ्यमानो गिरिणेव भूयः॥१४॥
दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी तमालतालीवनराजिनीला।
आभाति वेला लवणाम्बुराशेर्धारानिबद्धेव कलङ्करेखा॥१५॥
वेलानिलः केतकरेणुभिस्ते संभावयत्याननमायताक्षि।
मामक्षमं मण्डनकालहानेर्वेत्तीव बिम्बाधरबद्धतृष्णम्॥१६॥
अेते वयं सैकतभिन्नशुक्ति-पर्यस्तमुक्तापटलं पयोधेः।
प्राप्ता मुहूर्तेन विमानवेगात् कूलं फलावर्जितपूगमालम्॥१७॥

पृ० २७४ पर्वते परमाणौ च० जिसका पूर्वपद अिस प्रकार है: 'कवयः कालिदासाद्याः कवयो वयमप्यमी।' पूरे श्लोकका अर्थ अिस

प्रकार है: "कालिदास आदि भी कवि हैं, हम भी कवि हैं। पर्वत और परमाणुमें पदार्थत्व समान है।"

वानर-यूथ-मुख्य: रामरक्षा-स्तोत्रमें हनुमानकी स्तुतिका श्लोक अिस प्रकार है:

मनो-जवं मारुत-तुल्य-वेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठं।
वातात्मजं वानर-यूथ-मुख्यं
श्रीराम-दूतं मनसा स्मरामि।।

साम्पराय: मृत्युके बादकी स्थिति। कठोपनिषद्में नचिकेताने यमराजसे साम्परायके बारेमें पूछा था।

पृ० २७७ अुदये सविता० अुदयके समय सूर्य लाल होता है और अस्तके समय भी लाल होता है। बड़े लोग संपत्ति और विपत्तिके समय अेकरूप रहते हैं।

पृ० २७८ अब अिस त्रिविध पूर्णतामें से . . . होगी: याद कीजिये:

पूर्णम् अदः पूर्णम् अिदं पूर्णात् पूर्णम् अुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णम् आदाय पूर्णम् अेवावशिष्यते।।

पृ० २८० ब्राह्म-मुहूर्त: सुबह करीब साढ़े तीन बजेका समय। आत्म-चिन्तनके लिअे यह समय अच्छा माना गया है। 'ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय चिन्तयेत् हितम् आत्मनः।'

पृ० २८१ अुदर-भरण नामक यज्ञकर्म: तुलना कीजिये:

वदनीं कवळ घेतां नाम घ्या श्रीहरिचें
सहज हवन होतें नाम घेतां फुकाचें।
जीवन करि जिवित्वा अन्न हें पूर्णब्रह्म
अुदरभरण नोहे जाणिजे यज्ञकर्म।।

[मुंहमें कौर लेते हुअे हरिका नाम लो। मुफ्तका नाम लेनेसे सहज ही हवन होता है। अन्न पूर्ण ब्रह्म है और वह जीवन

कहते ही आयुको जीवन बनाता है। यह अुदर-भरण नहीं है, परन्तु अिसे यज्ञकर्म जानना चाहिये।]

कन्याकुमारीकी कथा: बंडासुर नामक अेक दानवने शंकरजीकी आराधना की और हिरण्यकशिपुकी तरह 'मैं अिससे न मरने पाअूं, अुससे न मरने पाअूं' आदि वरदान मांग लिये। किन्तु अिस लंबी-चौड़ी सूचीमें कुमारी कन्याका नाम दर्ज करनेकी बात अुसको नहीं सूझी। वरदानसे निर्भय बना हुआ यह दानव संसार पर भारी जुल्म ढाने लगा। सारा संसार त्रस्त हो गया। अतः शिवजीने पार्वतीको कुमारी कन्याका रूप लेकर संसारमें जानेकी बात कही। पार्वतीने ललिता देवीका अवतार लिया और दानवको मार डाला। फिर हाथमें कुंकुम और अक्षत लेकर विवाहके लिअे शिवजीकी राह देखने लगी, क्योंकि पहलेसे वैसा तय हुआ था। शिवजी निकले तो सही, किन्तु रास्तेमें क्रोधमूर्ति दुर्वासासे अुनकी भेंट हो गअी। अुनके स्वागतमें कुछ देर लग गअी। अितनेमें कलियुग बैठ गया! और कलियुगमें विवाह नहीं हो सकता था।

अतः पार्वतीने हाथके कुंकुम-अक्षत फेंक दिये और कलियुगकी समाप्तिकी राह देखती हुअी वहीं खड़ी रही।

पार्वतीके फेंके हुअे अक्षत अब भी समुद्र-तट पर रेतीके रूपमें पाये जाते हैं। श्रद्धालु लोग मानते हैं कि ये चावल मुंहमें डालनेसे खानेसे प्रसूतिकी वेदना कम होती है। कुंकुमके समान लाल रेतका तो वहां पार ही नहीं है।

६३. कराची जाते समय

पृ० २८३ अनुराधा, कृष्णचंद्र: अनुराधा नक्षत्र। कृष्णचंद्र = कृष्णपक्षका चांद। राधा और कृष्ण अिन दो शब्दोंका लेखकने यहां अच्छा लाभ अुठाया है।

६४. समुद्रकी पीठ पर

पृ० २८५ गिरधारी: आचार्य कृपालानीजीका भतीजा। अुस समय लेखकके साथ शांतिनिकेतनमें रहता था।

आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे: पूरा गीत अिस प्रकार है:

आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे
अे जीवन पुण्य करो दहन-दाने।
आमार अेअि देहखानि तुले धरो,
तोमार अै देवालयेर प्रदीप करो,
निशिदिन आलोक-शिखा ज्वलुक गाने।
आंधारेर गाये गाये परश तव
सारा रात फोटाक तारा नव नव
नयनेर दृष्टि हते घुचवे कालो
जेखाने पडवे सेथाय देखवे आलो
व्यथा मोर, अुठवे ज्वले अूर्ध्व पाने।

आकाशमें जिस प्रकार चांद चलता है: रवीन्द्रनाथके दूसरे अेक गीतमें अिसी तरहका चित्र है:

आजि शुक्ला अेकादशी, हेरो निद्राहारा शशी
अै स्वप्न पारावारेर खेया अेकला चालाय बसि।

पृ० २८७ ध्येयः सदा० सूर्यमंडलके मध्यमें स्थित, कमलासन पर विराजमान तथा केयूर, मकरकुंडल, किरीट और हार धारण करनेवाले, सुवर्णमय शरीरवाले, शंख-चक्रधारी नारायणका सदा ध्यान करना चाहिये।

जीवतराम: आचार्य कृपालानी।

भयंकर दिव्य: दिव्य = कसौटी, परीक्षा। मराठीमें 'भयंकर दिव्य' नामक अेक अुपन्यास काफी मशहूर है।

पृ० २९० आत्मन्येव संतुष्ट: आत्मामें ही संतुष्ट। गीता, ३-१७
पूरा श्लोक अिस प्रकार है:—

यस्त्वात्म-रतिर् अेव स्याद् आत्म-तृप्तश् च मानवः।
आत्मन्येव च संतुष्टस् तस्य कार्यं न विद्यते॥

६५. सरोविहार

पृ० २९२ अुसका काव्य तो दूरसे ही खिलता है: 'Tis distance lends enchantment to the view.

शकुंतलाकी तरह: शांकुतलके तीसरे अंकके अंतमें शकुंतला दुष्यन्तके साथ विश्रंभालाप करती है, अितनेमें वहां आर्या गौतमी पहुंचती हैं। अिसलिअे शकुंतला राजासे लताओंके पीछे जानेको कहती है और जाते समय लताओंसे कहती है:

'लतावलय, संतापहारक, आमंत्रये त्वां भूयोऽपि परिभोगाय।' और अिस प्रकार लतामंडपके वहाने राजासे अिजाजत लेकर जाती है।

पृ० २९३ ययातिको भी जीवनका आनन्द छोड़ना पड़ा: राजा ययाति भोग-विलासमें फंसा रहता था। अिसके लिअे अुसने अपने लड़कोंका यौवन भी ले लिया था। किन्तु वादमें अुसे विरति पैदा हुअी और समझमें आया कि:

न जातु कामः कामानाम् अुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव पुनरेवाभिवर्वते॥

[भोगोंके अुपभोगसे कामनाओंका शमन नहीं होता। वल्कि वलिसे वढ़नेवाली अग्निकी तरह वे वढ़ती ही जाती हैं।]

अनन्नासोंके फव्वारे: अुसके पेड़का आकार अैसा होता है मानो फव्वारा अुड़ता हो।

६६. सुवर्ण देशकी माता अैरावती

पृ० २९७ कृपाका अुत्पात: वाढ़। दूसरा भी अेक अर्थ है। नील नदीमें जव वाढ़ आती है, तव वह अपने साथ मिट्टी वहाकर लाती है, जिससे खेतोंमें फसल अच्छी होती है। अिजिप्शियन लोग अिसे 'नीलकी कृपा' कहते हैं।

शतरंज खेलनेवाले कालिदास: कहते हैं कि भवभूतिने 'अुत्तर-रामचरित' लिखनेके वाद पूरा ग्रंथ कालिदासको पढ़ कर सुनाया था। कालिदास शतरंजके वड़े शौकीन थे। वे शतरंज खेलते-खेलते पुस्तक सुन रहे थे। कालिदास ध्यानपूर्वक नहीं सुन रहे हैं, यह देखकर भवभूतिको वुरा लगा। किन्तु अन्तमें जव कालिदासने अेक सूक्ष्म और रसिक सुधार सुझाया, तव भवभूति आश्चर्यचकित हो गये। पूरा ग्रंथ सुननेके वाद कालिदासने कहा, 'नाटक अच्छा है; सिर्फ अेक अनुस्वार अधिक है।'

राम और सीताकी गपशपका वर्णन करते हुअे भवभूतिने लिखा था :

अविदित-गत-यामा रात्रिरेवं व्यरंसीत् ।।

[अिस प्रकार (अेवं) (अिधर-अुधरकी गपशप करते करते) प्रहर कैसे बीतते गये यह मालूम ही नहीं हुआ और सारी रात बीत गअी ।]

कालिदासने अनुस्वार निकालनेकी बात कही और पूरा अर्थ बदल गया। अुसमें चमत्कृति पैदा हो गअी :

अविदित-गत-यामा रात्रिरेव व्यरंसीत् ।।

[(अिधर-अुधरकी गपशप करते करते) प्रहर कैसे चले गये अिसका पता चले बिना मात्र रात्रि ही पूरी हो गअी (हमारी बातें पूरी नहीं हुअीं)।]

यह अेक दंतकथा ही है, क्योंकि कालिदास और भवभूति समकालीन नहीं थे।

शान-राज्य : ब्रह्मदेशके चीनकी सीमाके पासके आधे स्वतंत्र राज्य। शान लोग ब्रह्मदेश, आसाम, सियाम और दक्षिण चीनमें रहते हैं। वर्णसे गौर तथा धर्मसे बौद्ध। बड़े मेहनती। अुनमें बहुपत्नी-प्रथा चलती है।

जहाजका पक्षी : 'जैसे अुड़ि जहाजको पंछी, फिरि जहाज पै आवे।' —सूरदास।

अनिच्चा वत० 'अनित्या बत संस्कारा अुत्पत्ति-व्ययधर्मिणः।'

[अुत्पत्ति और नाश यही जिनका धर्म है, अैसे संस्कार (सृष्ट पदार्थ) अनित्य ही हैं।]

श्रांत : थकेमांदे लोगोंका तत्त्वज्ञान।

चिरन्तन : चिरकाल तक टिकनेवाला। सम्पूर्ण ज्ञानवाले लोगोंका तत्त्वज्ञान।

सुवर्ण देश : ब्रह्मदेशका बौद्धकालीन नाम।

६७. समुद्रके सहवासमें

पृ० २९९ कच्ची छींककी तरह : अुपमाकी नवीनता और औचित्य ध्यानमें लीजिये ।

पृ० ३०१ त्रिकांड : तीन कांड यानी तीन भागवाला। श्रवणके तीन तारे होते हैं। मृग नक्षत्रके पेटमें तीन तारोंका अिपु त्रिकांड नक्षत्र होता है। अुसीके जैसा श्रवण होता है, अतः अुसे त्रिकांड कहा गया है।

खस्वस्तिक : हम जहां कहीं खड़े रहते हैं वहांका सिर परका आकाशका भाग या बिन्दु। अंग्रेजीमें अिसको 'झेनिथ' कहते हैं।

पृ० ३०२ प्रकाश चमकाकर : जिस प्रकार तार-विभागमें 'कट्ट' और 'कड़' अिन दो ध्वनियोंसे सारी लिपि तैयार की गयी है, अुसी प्रकार रातमें प्रकाश चमकाकर दूर तक संदेश भेजे जाते हैं। दिनमें सूर्यप्रकाशसे भी अैसे संदेश भेजे जाते हैं। अुसे 'हेलियोग्राफ' कहते हैं।

पृ० ३०५ त्रिखंड सहकार : अफ्रीकामें मूल काले बाशिंदोंके अलावा (जो गुलाम या मजदूर होते हैं), राज्य करनेवाले गोरे युरोपियन लोग भी हैं और तिजारतके लिअे पूर्वसे आये हुअे गेहुंअे रंग या पीले रंगके अरब, हिंदुस्तानी और चीनी लोग भी हैं। तीनों खंडोंके अिन लोगोंके बीच जो सहयोग चलता है, अुसको त्रिखंड सहकार कहा गया है। अलबत्ता, यह सहयोग विषम है।

६८. रेखोल्लंघन

पृ० ३०६ रेखोल्लंघन : भूमध्य-रेखाका अुल्लंघन।

शांतादुर्गा : शुभंकरी शांता और भयंकरी दुर्गा। शांतादुर्गाका देवालय गोवामें है।

६९. नीलोत्री

पृ० ३०८ श्री अप्पासाहब : औंधके अंतिम राजाके दूसरे पुत्र श्री अप्पासाहब पंत। आप भारत-सरकारके कमिश्नरके नाते अफ्रीकामें थे, तब वहांके लोगों पर आपका अच्छा असर हुआ था।

पृ० ३१० ओशोपनिषद् : अठारह मंत्रोंका अेक छोटासा अुपनिषद्। श्री विनोबाने अिसको वेदोंका सार और गीताका बीज कहा

है। गांधीजी कहते थे कि अिसमें हिन्दूधर्मका सारा निचोड़ आ जाता है। अिसका पहला मंत्र अुन्हें विशेष प्रिय था और अुस पर अुन्होंने कअी बार विवेचन किया था। अीशोपनिषद्का पहला मंत्र यह है:

अीशावास्यमिद ँ सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृध: कस्यस्विद्धनम् ।।

अिस अुपनिषद्को अीशावास्योपनिषद् भी कहते हैं।

मांडुक्य अुपनिषद्: अीशोपनिषद्से भी छोटा है। अिसमें सिर्फ बारह मंत्र हैं। अिसमें ॐकारके द्वारा सारे अद्वैत सिद्धान्तका विवेचन किया गया है। गौड़पादाचार्यने अिस पर जो कारिका लिखी है, वह अद्वैत सिद्धान्तका प्रथम निबंध मानी जाती है। अिसीकी बुनियाद पर श्री शंकराचार्यने अपने मतकी स्थापना की है।

अघमर्षण सूक्त: अिसकी जानकारी 'अर्णवका आमंत्रण' नामक प्रकरणकी टिप्पणियोंमें दी जा चुकी है।

मैं यदि संस्कृतका कवि होता: संस्कृत कवि वाल्मीकिने गंगाष्टकमें कहा है:

त्वत् तीरे तरुकोटरान्तरगतो गंगे! विहंगो वरं
त्वन्नीरे नरकान्तकारिणि! वरं मत्स्योऽथवा कच्छप:।
नैवान्यत्र मदान्ध-सिंधुर-घटा-संघट्ट-घंटा रणत्-
कार-त्रस्त-समस्त-वैरि-वनिता-लब्ध-स्तुतिर् भूपति: ।।

पृ० ३१२ मि० स्पीक: (Speke) जॉन हॅनिंग (१८२७–१८६४) नील नदीका अुद्गम खोजनेवाला। हिन्दुस्तानी फौजमें भरती हुआ। पंजाबकी लड़ाअीमें मशहूर हुआ। अुसे छुट्टियोंमें हिमालय, तिब्बत आदि प्रदेशोंमें घूमनेका शौक था। अफ्रीकाके भूगोलमें रस पैदा होते ही १८५४ में बर्टनके साथ वह अफ्रीका गया। सोमालीलैंडमें घूमा। अुनका वर्णन अुसने अपनी 'What led to the Discovery of the Source of the Nile' (१८५४) नामक पुस्तकमें लिखा है। अिसके बाद वह अफ्रीकाके मध्यमें स्थित सरोवरोंकी खोज करने निकला। अुसकी मान्यता थी कि अिनमें से अुत्तरकी

ओरके विक्टोरिया न्यांज़ा सरोवरमें ही नीलका अुद्गम है। अुसने अपनी यह मान्यता सप्रमाण 'The Journal of the Discovery of the Source of the Nile' नामक पुस्तकमें सिद्ध की। वर्टनने अुसका विरोध किया। वर्टनके अनुसार टांगानिका सरोवरमें नीलका अुद्गम था। दोनोंके बीच सार्वजनिक चर्चा रखी गअी। चर्चाके पहले ही दिन स्पीक शिकार खेलने गया था, जहां वह अपनी ही बंदूककी गोलीका शिकार हो गया।

पृ० ३१३ चंद्रगिरि: रामायणके अनुसार सिन्धु और सागरके संगम-स्थान पर स्थित शतशृंग पर्वत। यहां 'रुवेन ज़ोरी' पर्वत।

मेरु पर्वत: भागवतके अनुसार जंबुद्वीपमें अिलावृत्तके मध्यमें स्थित सोनेका पर्वत। यहां मध्य अफ्रीकाका अुमी नामका अेक पर्वत, किलीमांजारोका पड़ोसी।

अच्छोद सरोवर: वाणभट्टकी कादंबरीसे यह नाम लिया गया है।

'शुभ-संदेश': सुवार्ता। अंग्रेजी 'गॉस्पेल'।

पृ० ३१४ स्टेन्ली: सर हेनरी मार्टन (१८४०–१९०४) अेक मामूली किसानका लड़का। मूल नाम जॉन रोलांड। वचपन वड़ी कठिनाअीमें बीता। मदरसेमें शिक्षकको पीटकर भाग गया था। सुअी-धागा वेचनेवालेके यहां काम किया। कसाअीके यहां भी काम किया। बादमें न्यू ऑर्लियन्स (अमेरिका) जानेवाले अेक जहाजमें कैंबिन वॉयकी हैसियतसे काम किया। वहांके स्टेन्ली नामक अेक व्यापारीने अुसकी मदद की। बादमें अुसको गोद लिया। तवसे वह स्टेन्लीके नामसे पुकारा जाने लगा। पालक पिताके अवसानके बाद फौजमें भर्ती हुआ। युद्धके दरमियान गिरफ्तार हुआ। मुक्त होनेके बाद जब वापस घर लौटा, तव मांने घरमें रखनेसे अिनकार किया। अिससे अुसके दिलको बड़ी चोट लगी। रोटीके लिअे अुसने खलासीका जीवन स्वीकार किया। अमेरिकाके नौकादलमें भर्ती हुआ। बादमें अखबारोंमें लेख लिखने लगा। अुसकी वर्णन-शक्ति अच्छी थी। कअी युद्धोंमें संवाददाताके तौर पर काम किया। १८६९ में 'न्यूयॉर्क हेरल्ड' के संचालकने अुसको

तार देकर पेरिस बुलाया, और अफ्रीकाकी खोजके लिअे निकले हुअे लिविंग्स्टनकी खोज करनेका आदेश दिया। करीब अेक सालकी कड़ी दौड़धूपके बाद वह १० नवम्बर, १८७१ को अुजीजीमें लिविंग्स्टनसे मिला। अिस प्रवासका वर्णन अुसने 'How I found Livingstone' (१८७२) नामक पुस्तकमें किया है। शुरू शुरूमें अुसकी कहानी पर लोगोंका विश्वास नहीं बैठा। मगर अुसने लिविंग्स्टनकी डायरियां दिखाअीं, तब जाकर लोगोंका विश्वास बैठा। रानी विक्टोरियाने अुसे नासकी रत्नजड़ित ड़िब्बी भेंटमें दी। किन्तु अिस प्रसंगमें लोगोंने अुस पर जो अविश्वास दिखाया और जो गालियां बरसायीं, अुससे अुसका मन हमेशाके लिअे खट्टा हो गया।

सन् १८७४ में लिविंग्स्टनकी मृत्युके बाद अुसका अपूर्ण कार्य पूर्ण करनेके लिअे 'डेली टेलिग्राफ' के मालिकने चंदा अिकट्ठा करके स्टेन्लीको दिया और अिसके नेतृत्वमें अेक टुकड़ी अफ्रीकामें भेजी। तीन साल यात्रा करनेके बाद अुसने सिद्ध किया कि लिविंग्स्टनने जिसे 'लुआबाबा' कहा था, वह और कांगो नदी अेक ही है। और अुसका पूरा जलमार्ग अुसने निश्चित कर दिया। अिस काममें अुसने जो कष्ट अुठाये, अुसका कोअी हिसाब नहीं है। अुसने विक्टोरिया न्यांज़ाका क्षेत्रफल निश्चित किया। टांगानिकाकी लंबाअी और क्षेत्रफल निश्चित किया। ड्वेरु नामक नये सरोवरकी खोज की। अिस यात्राका वर्णन अुसने 'Through the Dark Continent' नामक अपनी पुस्तकमें किया है। अुसकी अिस यात्राके कारण नील नदीके अुद्गमके आसपासका सारा प्रदेश अंग्रेजोंके संरक्षणमें आ गया।

कांगो नदी अफ्रीकाके मध्य प्रदेशको चीरकर जानेवाला जलमार्ग है, यह अुसकी महत्त्वकी खोज है। अिसका महत्त्व बेल्जियमके राजा लियोपोल्ड द्वितीयने अच्छी तरह समझ लिया था। अुसने अपने कुछ लोगोंको अफ्रीकासे वापस लौटनेवाले स्टेन्लीसे मिलनेके लिअे मार्सेल्स भेजा था। अुन्होंने राजाकी ओरसे स्टेन्लीको वापस कांगो जानेकी सूचना की। किन्तु स्टेन्ली अुस समय आराम करना चाहता था। अतः अुसने अिस सूचनाको स्वीकार नहीं किया। १८७९ में लिओपोल्डने अुसे फिरसे जानेकी सूचना

की। स्टेन्लीने तब तक अंग्रेज व्यापारियोंमें कांगोके बारेमें दिलचस्पी पैदा करनेकी काफी कोशिश की। किन्तु अिसमें अुसको सफलता नहीं मिली। अिसलिअे ब्रुसेल्स जाकर लियोपोल्डकी सूचना और योजनाका अुसने स्वीकार किया। वह फिरसे कांगो गया। पांच वर्षकी मेहनतके बाद अुसने लियोपोल्डके आधिपत्यके नीचे कांगोके स्वतंत्र राज्यकी स्थापना की। अिसका वर्णन अुसने अपनी 'The Congo and the Founding of its Free State' (१८८५) नामक पुस्तकमें किया है।

१८८४ में वह फिरसे युरोप लौटा। अुसके भाषणोंकी वजहसे जर्मनीमें अफ्रीकाके बारेमें रस अुत्पन्न हुआ। युरोपके राष्ट्रोंमें अफ्रीकाको कब्जेमें लेनेके लिअे होड़ शुरू हुआी। स्टेन्ली अिंग्लैंडमें रहा, किन्तु बेल्जियमके राजाके प्रति अुसकी निष्ठा भी अुसे खींचती थी। दोनोंका हित सिद्ध करनेके लिअे वह फिरसे अफ्रीका गया। भूमध्य-रेखाके आस-पासके प्रदेशोंमें घूमते हुअे अुसके करीब दो-तिहाअी साथी मर गये, कुछ साथी मारे गये। किन्तु वह हिम्मत नहीं हारा। अुसने अपना काम जारी रखा, और अंग्रजोंके लिअे अुसने वहांके अमीनसे काफी रिआयतें प्राप्त कर लीं। अिस भयानक यात्राका वर्णन अुसने 'In Darkest Africa' नामक ग्रंथमें (१८९०) किया है।

अिस यात्राके बाद जब वह वापस अिंग्लैंड लौटा, तब अुस पर विविध सन्मान बरसाये गये। ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयोंने अुसको ऑनरेरी डिग्रियां प्रदान कीं। अुसने अेक कलाकार स्त्रीसे शादी की। अुसके आग्रहके कारण वह पार्लियामेण्टमें चुना गया। किन्तु अिसमें अुसको कोअी दिलचस्पी नहीं मालूम हुअी। अपनी जवानीके समयके यात्रा-वर्णन अुसने 'My Early Travels and Adventures' नामक ग्रंथमें दिये हैं। सन् १८९७ में वह आखिरी बार अफ्रीका गया। अुसका वर्णन अुसने 'Through South Africa' नामक ग्रंथमें किया है (१८९८)। सन् १८९९ में अिंग्लैंडके राजाने अुसे 'नाअिट' का खिताब दिया। जीवनके अंतिम दिन निवृत्तिमें बिताकर सन् १९०४ में अुसकी मृत्यु हुअी।

मिसर संस्कृति : मिस्रमें पुरोहित, राज्यकर्ता वर्ग, किसान और कारीगर, मजदूर या ग़ुलाम अिन चार वर्गोंकी समाज-व्यवस्था चलती थी।

पृ० ३१५ अफलातूनकी 'समाज-रचना : अफलातूनने 'रिपब्लिक' नामक अपने ग्रंथमें आदर्श नगर-राज्यका चित्र खींचा है, जिसमें अुसने लोगोंको चार वर्णोंमें बांटा है : (१) राज्यकर्ता तत्त्वज्ञ, (२) लड़नेवाले, (३) किसान, कारीगर और व्यापारी तथा (४) गुलाम।

पृ० ३१६ अश्वत्थामा : अश्व + स्थामन्। स्थामन् = बल। यहां 'स्थामन्' के 'स' का लोप होता है।

७०. वर्षा-गान

पृ० ३१६ कालिदासका श्लोक : यह है वह श्लोक —

नवजलधरः संनद्धोऽयं न दृप्तनिशाचरः।
सुरधनुर् अिदं दूराकृष्टं न नाम शरासनम्॥
अयम् अपि पटुर् धारासारो न बाण-परंपरा।
कनक-निकष-स्निग्धा विद्युत् प्रिया न ममोर्वशी॥

— विक्रमोर्वशीयम्, अंक ४ : श्लोक ७

यह निश्चय अलंकारका अुदाहरण है। श्लोकका अर्थ मूलमें दिया ही है।

पृ० ३१७ चिर-प्रवासी : हमारे लोग चिर-प्रवासको मरणतुल्य मानते थे। 'रोगी, चिर-प्रवासी . . . यज्जीवति तन्मरणम्।'

जीवन-प्रवाहको परास्त करनेवाले पुल : जीवन-प्रवाह, पानीका प्रवाह। पानीका प्रवाह मनुष्यको आगे अुस पार जानेसे रोकता है। नदी पर पुल बननेसे नदीकी यह रोकनेकी शक्ति परास्त होती है।

सेतु : सेतुका अर्थ है बांध।

पृ० ३१८ छोटेसे घोंसलेका रूप : यह अुपमा अुपनिषद्के अेक वचनसे सूझी है।

यत्र भवति विश्वं अेकनीडम्।

जहां सारा विश्व अेक छोटासा घोंसला बन जाता है। स्वयं भगवान ही अैसे घोंसलेमें रहनेवाले जीवोंको गरमी देनेवाला पक्षी है।

कारवार: बम्बअी राज्यके पश्चिमी समुद्र-तटका अतीव सुन्दर बन्दरगाह, जहां लेखकने अपने बचपनके कअी वर्ष व्यतीत किये थे। लेखककी पुस्तक 'स्मरण-यात्रा' में कारवारका जिक्र कअी बार आता है।

पृ० ३१९ **जीवनचक्र:** गीतामें अध्याय ३, श्लोक १६ में अिस प्रवर्तित जीवन-चक्रका जिक्र आता है। लेखकका 'जीवन-चक्र' नामक निबंध अिस सिलसिलेमें खास पढ़ने लायक है।

परस्परावलंबन द्वारा सधा हुआ स्वाश्रय: व्यक्तिगत जीवनके लिअे स्वाश्रय अच्छा है। सामाजिक जीवनकी बुनियादमें परस्परावलंबन ही प्रधान है। अैसे परस्परावलम्बनमें जब आदान-प्रदान सम-समान या तुल्यबल होता है, तब जीवनका बोझ किसी पर न बढ़नेसे अुसमें स्वाश्रयकी निष्पापता आती है।

यज्ञ-चक्र: जीवन-चक्रको ही गीताने यज्ञ-चक्र कहा है। देखिये, 'सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा अि०' गीता—अध्याय ३, श्लोक १० से १६।

अवतार-कृत्य: अवतारका शब्दार्थ है नीचे अुतरना। बारिशका पानी अूपरसे नीचे अुतरता है। भगवान भी जब नीचे अुतरकर मनुष्यरूप धारण करते हैं, तब अुसे अवतार कहते हैं।

कुरुक्षेत्र: भारतीय युद्धकी रणभूमि।

मखमलके कीड़े: अिन्हें अिन्द्रगोप कहते हैं।

दोहरी शोभा: मखमलके कपड़ेमें जैसी शोभा होती है वैसी। अेक ओरसे देखनेसे गहरा रंग मालूम होता है; दूसरी ओरसे वही फीका या दूसरे रंगका मालूम होता है। अंग्रेजीमें अिसे 'Shot' कहते हैं।

पृ० ३२१ **आकाशके देव:** सितारे।

'मधुरेण समापयेत्': भोजनमें आखिरी चीज मीठी हो।

'अृतु-संहार': कालिदासका अेक नितांत सुन्दर काव्य, जिसमें छहों अृतुओंका वर्णन आता है।

'अृतुभ्यः': विवाहके समय सप्तपदी द्वारा गृहस्थाश्रमके लिअे जो जीवन-दीक्षा ली जाती है, अुसमें से छठी प्रतिज्ञा है 'अृतुभ्यः'। 'जीवनमें हम दोनों अृतु-परिवर्तनके साथ साथ जीवन-परिवर्तन भी करेंगे'— यह है अुस प्रतिज्ञाका भाव।

सूची

ख

ग

त

थ

द

ल

व

श

स

भ

म